महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय

## समर्पण

महामना श्रद्धेय श्री पण्डित मदनमोहन
मालवीय जी के आदेशानुसार
इस ग्रन्थ की रचना आरम्भ
की गई थी। उन पूज्य-
पाद की स्मृति में।

लेखक

# प्रकाशकीय

भारत धर्म प्रधान देश है। ऐसे देश में, जहाँ आध्यात्मिक भावना को अधिक महत्व प्रदान किया जाता है, जिसकी संस्कृति अत्यन्त पुरानी और सुविस्तृत है—'तपोभूमि' जैसी पुस्तक की परम आवश्यकता थी। इस प्रकार के ग्रन्थों से धार्मिक स्थानों का परिचय प्राप्त होता है, साथ ही पाठक को भारत की प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति का भी सम्यक् ज्ञान हो जाता है तथा भारतीय सदाचार एवं परंपराओं से भी परिचय हो जाता है। संक्षेप में यह पुस्तक इतिहास, पुराण, गाथा भूगोल सब कुछ है। निःसंदेह श्रीरामगोपाल मिश्र तपोभूमि जैसी उपादेय और रोचक पुस्तक लिखने के कारण बधाई के पात्र हैं। सम्मेलन को विश्वास है कि धार्मिक वृत्ति के पाठक विशेष रूप से और भारतीय सभ्यता के प्रेमी सामान्य रूप से इस ग्रंथ का समादर करेंगे।

अक्षय तीज, २००७

साहित्य मंत्री

# विषय-सूची

# दो शब्द

पचीस साल से अधिक हुआ जब भारतवर्ष के सब प्रान्तों के प्रमुख पत्रों में निकला था:—

भारतवर्ष के उन प्राचीन स्थानों पर जो सनातन, बौद्ध, जैन, सिक्ख अथवा अन्य मतों के द्वारा पवित्र माने जाते हैं, मैं एक पुस्तक लिख रहा हूँ जिससे उन स्थानों के वर्तमान नाम, जगह और उनके महत्व का परिचय हो सके। इस विषय पर जो सज्जन मुझे सूचनाएँ भेज सकेंगे उनका मैं कृतज्ञ होऊँगा। देखने से पता चलता है कि बहुतेरे स्थान जिनका सम्बन्ध पूर्व काल के महापुरुषों से है या जो किसी अन्य कारण से श्रद्धा योग्य हैं उनको वहाँ के लोग जानते हैं, पर बाहर वाले उनसे अपरिचित हैं। सूचना के साथ यदि सप्रमाण संक्षिप्त वर्णन भी लिखा आवेगा तो बड़ी कृपा होगी क्योंकि बिना उसके उस स्थान की पहचान सम्बन्धी सत्यता का निश्चय न हो सकेगा। आशा है कि जिन सज्जनों के पास ऐसी सूचना देने को होगी वे कृपया लिखेंगे। यह न विचार करें कि कोई सूचना निरर्थक होगी, क्योंकि उसके बहुत कुछ उपयोगी होने की सम्भावना हो सकती है।

राम गोपाल मिश्र

अक्टूबर १०, १९२१] बी० एस० सी०, एम० आर० ए० एस०

डिप्टी कलेक्टर, सीतापुर

इस पर कुछ पत्रों, जैसे "लीडर" इलाहाबाद (अक्टूबर १४, १९२१) ने अपना मत प्रकट किया कि यह 'History of Sacred Places in India' (अर्थात् भारतवर्ष के पवित्र स्थानों का इतिहास) होगा; और कुछ पत्रों, जैसे "हिन्दू", मद्रास (अक्टूबर, १९२१), ने कहा था कि यह 'Dictionary of Ancient Indian Cities' (अर्थात् भारतवर्ष के प्राचीन नगरों का कोष) होगा।

अध्ययन और संग्रह समाप्त करके अब यह ग्रन्थ देश बन्धुओं की सेवा में उपस्थित किया जाता है। प्रयत्न यह किया गया है कि यह इतिहास और कोष

दोनों से अधिक हो, और पवित्र स्थानों के महाकोष (Encyclopaedia) का काम दे। इसी से जो प्राचीन स्थान खोज से निकले उनके सम्बन्ध में जिन-जिन पुराने ग्रन्थों में उनका वर्णन है उनसे उद्धृत वाक्य (quotations) भी लिख दिए गए हैं, और जिन महात्माओं का उनसे सम्बन्ध है उनका संक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है। स्थानों की वर्तमान दशा का भी उल्लेख कर दिया गया है।

लेखक.
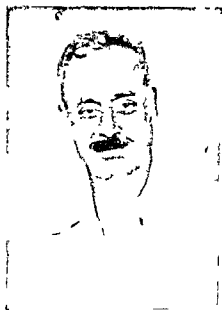
लेखक

# भूमिका

## उन्नति-चक्र

आर्य जाति के रहने के कारण हमारा देश आर्यावर्त कहलाता था। इसमे स्थान स्थान पर आर्यों की बस्तियाँ फैली थी जिनमे एक स्थान से दूसरे स्थान का जाना दूरी, घने जगलो और नदियो के कारण कठिन था। जब शकुन्तला के पुत्र दौष्यन्ति भरत ने देश को एक शासन प्रणाली मे बाँधा तब देश का नाम भरत के नाम पर 'भारत' और 'भारतवर्ष' हो गया। कुछ काल बीतने पर इन्दु—Indus (जो सिन्धु से इन्दु कही जाने लगी थी)—के पूर्व की हरी भरी भूमि 'इन्दु' कहलाने लगी। वहा के निवासी 'इन्दू' कहलाते थे, और पीछे इन्दु नदी के पूर्व का सारा ही देश इन्दु नाम से पुकारा जाने लगा। बाहर वाले इन्दु को हिन्द और इसके निवासियो को हिन्दू कहने लगे। विलायत वालो ने इन्दु वा हिन्द से इसे 'इण्डिया' कर दिया है। और आजकल यह पुण्यभूमि प्राय इसी नाम से पुकारी जाने लगी है।

ससार जानता है कि जिस समय भारतवर्ष के ज्ञान विज्ञान का सितारा चमक रहा था और जब यहाँ के ऋषियो और मुनियो ने ब्रह्म ज्ञान की निर्मल सलिल धारा से भूमण्डल को पवित्र किया था उस समय शेष पृथिवी के अधिकांश लोग पशुओं की भाँति जीवन व्यतीत किया करते थे। केवल चीन सभ्य हो चुका था।

काल की गति से उन्नति का चक्र पश्चिम की ओर चला और सातवी शताब्दी ई० पू० मे ईरान मे जागृति हुई। भारतवर्ष का तारा पूर्ववत् ज्योतिर्मय न रहा। ईरान से और पश्चिम चलकर उन्नति चक्र यूनान मे पहुँचा और ईरान शिथिल पड़ गया। कुछ समय तक यूनान का भाग्य उदय रहा। चक्र और पश्चिम रोम पहुँचा तथा कुछ काल के लिए रोम का प्रभाव ससार के एक बड़े भाग पर छा गया। वहाँ से उन्नति चक्र और पश्चिम चलकर स्पेन आदिक देशो मे होता हुआ इङ्गलैण्ड पहुचा। जिस जिस प्रदेश से यह आगे बढ़ता गया उस-उस प्रदेश मे वह क्रमश उत्थानता छोड़ता गया

श्रौर जितना जिस देश से दूर होता गया उतना ही वहाँ का पतन अधोगति को पहुँचता गया।

इङ्गलैण्ड से भाग्य चक्र और पश्चिम, अमेरिका पहुँच चुका है। आज कल अमेरिका के उदय का समय है। इसके पश्चात् फिर चीन और भारतवर्ष के भाग्योदय की बारी है। ऐसा इस चक्र की गति से प्रतीत होता है। भारतवर्ष का खोई हुई स्वतन्त्रता को प्राप्त करना इसका लक्षण है।

यह एक विचित्र बात है कि जब कोई देश उन्नतिशील होता है तो वह ईश्वर के आगे सिर झुकाने और अपनी जिम्मेदारी निबाहने के बदले कुछ समय के बाद कपटाचारी हो जाता है और अपने आप को संसार का भाग्य विधाता समझने लगता है। मानो वह सदा उन्नति के शिखर पर ही बैठा रहेगा उसका कभी पतन ही न होगा। यह मनोवृत्ति उसमें सैकड़ों अवगुण उत्पन्न कर देती है और यही चरित्र हीनता उसके पतन का कारण होती है। जब तक उसमें यह बात नहीं आती उसका उदय स्थिर रहता है। कारण यह है कि जब तक किसी से संसार का उपकार होता है तभी तक दैवी शक्ति उसकी सहायक रहती है।

एक प्रभावशाली जाति चरित्रहीन हो जाती है तब भी दूसरे दबे हुए देश जो स्वभावत उसकी नक़ल करते हैं उसके बिगड़े हुए चरित्र की बुरी बातों की ही नक़ल करते रहते हैं। ऐसी अवस्था में उस उन्नतिशील जाति से संसार को भारी हानि पहुँचने लगती है। एक तो वह जाति स्वार्थवश धोखा, झूठ और कपट से सब को हानि पहुँचाती है, और दूसरे अन्य जातियाँ इन सब बातों के होते हुए भी उसको उन्नतिशील देख इन्हीं बातों को आदरणीय समझती और उनका अनुकरण करने लगती हैं। इस दशा में उस प्रभावशाली जाति का पतन ही संसार का कल्याण कर सकता है और इससे चक्र उस स्थान को छोड़कर आगे बढ़ता रहा है। बड़ी विचित्र बात यह है कि ऐसे काल चक्र को देखकर भी संसार की जातियाँ अपनी बारी पर मदान्ध होती गईं और आप अपने पतन का कारण बनीं।

इस समय भारतवासियों की यह दशा हो गई है कि हमको यह जानने की भी चिन्ता नहीं कि जिन प्राचीन स्थानों से हमारे पुरातन स्वर्ण-युग का सम्बन्ध है व अब कहाँ हैं। इस पुस्तक में यह प्रयत्न किया गया है कि महर्षियों, ऋषियों, मुनियों तथा महात्माओं से महान भारत के जिन स्थानों का सम्बन्ध है और जिनका वर्णन वेद, पुराण, महाभारत, रामायणादि में

आया है, तथा जो स्थान पीछे के महात्माओं द्वारा पवित्र किये गये हैं उनका वर्तमान नाम, पता और इतिहास जनता के सम्मुख रक्खा जावे जिससे यह जानकारी हो सके कि इस पुण्य भूमि पर प्राचीन पवित्र क्षेत्र कहां हैं और उनका इतिहास क्या है। आर्यावर्त में और अन्य देशों में यह अन्तर है कि यहाँ के उन्नति-काल में भारतीय परम ज्ञान और आनन्दमय शान्ति की ओर प्रवृत्त हुए थे। यद्यपि पीछे उनमें बुराइयां आ गई। परन्तु अन्य देश इस ओर प्रयत्नशील न होकर सदा केवल ऐहिक उन्नति के प्रयत्न में रहे। भारतीय ऋषियों की ही वह शिक्षा है जो सनातन है, सत्य है, अमर है, और जिससे आत्मा को शान्ति और मोक्ष की प्राप्ति होती है। इसलिए जिन प्रमुख स्थानों से यह शिक्षा गूंजी थी अपने उन पवित्र स्थानों का ज्ञान समुचित है और इन महान क्षेत्रों की रज माथे चढ़ाने योग्य है।

---

# ग्रन्थों का मर्म

जो ग्रन्थ हमारे आधार हैं उनके तत्व के जानने के लिए थोड़े विचार की जरूरत है। साधारण जनता को बताने को इन ग्रन्थों में बहुत सी बातें रूपक (allegory) में कही गई हैं। बहुत सी बातें ऐतिहासिक हैं, पर व दूसरे ही रूप में लिखी गई हैं। इस प्रकार प्राचीन साहित्य में रूपकों का चलन सा हो गया था।

जहाँ रागों की शाखाओं और उपशाखाओं का कथन करना था वहाँ स्कन्द पुराण में कहा गया है कि "श्री महादेव जी ने छः रागों को उत्पन्न किया। एक-एक राग की पाँच-पाँच स्त्रियाँ और आठ आठ पुत्र तथा आठ आठ पुत्र बधुएँ हुई।"

जहाँ कहना था कि घटाओं के सहित पवन वेग से चली और देवयानी तथा शर्मिष्ठा के वस्त्र अनायास मिल गये, वहाँ महाभारत में दिया है कि "इन्द्र ने वायु रूप होकर उनके वस्त्रों को एक दूसरे से मिला दिया।"

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कहता है कि "केदार की वृन्दा नामक पुत्री कमला के अंश से थी। उसने किसी से विवाह नहीं किया और गृह को छोड़ वन में जाकर तपस्या करने लगी। सहस्र वर्ष तपस्या करने के उपरान्त भगवान प्रकट हुए। वृन्दा ने यही वर माँगा कि मेरे पति आप होइए। वृन्दा ऐसा वरदान पाकर भगवान् के सहित गोलोक में गई।" इसमें विवाह कोई सच्ची घटना नहीं है इसका यही अर्थ है कि वृन्दा ने संसार को त्याग केवल ब्रह्म से नाता जोड़ा था, और ब्रह्मज्ञान को प्राप्त किया।

इसी प्रकार महाभारत में दिया है कि "हिमाचल के पुत्र अर्बुदगिरि हैं।" तात्पर्य यह है कि दोनों एक ही वस्तु अर्थात् पत्थर के बने हैं और छुटाई-बड़ाई में पिता पुत्र के समान हैं।

शिव पुराण कहता है कि "शिव पार्वती के पुत्र कार्तिकेय और गणेश दोनों कुमार अपना विवाह पहले करने के लिए विवाद करने लगे। उनके माता पिता उनसे बोले कि 'तुम दोनों में से सम्पूर्ण पृथिवी की प्रदक्षिणा करके जो पहले लौट आएगा उसी का विवाह प्रथम होगा।' यह सुनकर

कार्तिकेय पृथिवी की परिक्रमा करने के लिए वहाँ से चले गए। गणेश जी ने माता पिता की परिक्रमा करके कहा कि 'लीजिए पृथिवी की परिक्रमा हो गई।' शिव-पार्वती ने गणेश जी की चतुरता देखकर उनकी बहुत सराहना की और शिव रूप की कन्याओं सिद्धि और बुद्धि से उनका विवाह कर दिया। कार्तिकेय जी जब एक काल के पश्चात् लौटे तो रुष्ट होकर शिव जी से दूर रहने लगे।"

ऊपर की कथा का केवल यह अर्थ है कि जो लोग ससार भर में एक ही आत्मा समझते हैं और यह जानते हैं, कि जो एक रूप में है वही सब ससार में व्यापक है उनको परम पिता से बुद्धि और सिद्धि प्राप्त है। जो लोग यह न समझकर सबको पृथक्-पृथक् समझते हैं वे परमब्रह्म से दूर रहते हैं। इस प्रकार की लेख शैली से धार्मिक ग्रन्थ भरे पड़े हैं।

पद्म पुराण में कहा गया है कि "महादेव जी सब देशों में पर्यटन करते हुए काञ्चीपुरी में गए।" इसका मतलब यह हुआ कि शैव-मत और स्थानों में फैलता हुआ काञ्चीपुरी पहुँचा, यह नहीं कि शिव जी स्वय घूमते हुए वहाँ पहुँचे।

जहाँ लिखा गया है कि "शिवजी विराजमान हैं" उससे मतलब है, कि वहाँ शैव-मत फैला है, और शैव-मत के प्रवीण उपदेशक, लोगों की शका निवारण करने को मौजूद हैं। इसी प्रकार जहाँ लिखा गया है कि "विष्णु विराजते हैं", वहाँ यह मतलब है कि वैष्णव मत का प्रचार है और वैष्णव आचार्य पधार रहे हैं। जहाँ कहा गया है कि "शिव और विष्णु में घोर सग्राम हुआ" (जैसे तेज पुर, आसाम, में), वहाँ तात्पर्य है कि शैव और वैष्णव मतों में भारी धर्मयुद्ध हुआ। प्राय सभी जगह जहाँ ऐसा 'युद्ध' लिखा है वहाँ यह भी लिखा है कि एक ने दूसरे के बड़प्पन को मान लिया अर्थात् आपस में मिलकर रहने का समझौता हो गया। जब कहा गया है कि "धर्म ने तप किया" वहाँ मतलब है कि धर्मात्मा और धर्म प्रचारक उस जगह हुए।

*वर्णन है कि "राजा रुक्माङ्गद अप्सरा विश्वमोहिनी पर आसक्त हो गये* थे, और उसके नाम से विश्वनगर ( बेस नगर, भूपाल राज्य ) बसाकर उसके साथ वहाँ निवास करते थे। एक दिन विष्णु भगवान का विमान वहाँ काटों में फस गया और यह कहा गया कि जिसने एकादशी का व्रत किया हो वही उसे काटों से छुड़ा पाएगा। वह दिन एकादशी का था। एक तेलिन जो

अपने पति से लड़ कर भूली रह गई थी उस विमान को छुड़ा सकी, और विष्णु की आज्ञा से विमान का एक पाया पकड़ कर उनके साथ स्वर्ग को चलने लगी। इस पर राजा रुक्माङ्गद और समस्त नगरवासी विमान के पायों को पकड़कर स्वर्ग को चले गये"।

इस कथा से ऐसा जान पड़ता है कि वैष्णव मत यहाँ पहले न था और न लोग एकादशी का व्रत रखते थे। एक तेलिन द्वारा यह प्रचलित हुआ और बाद को राजा और प्रजा सब वैष्णव हो गये और वैष्णवों के मतानुसार स्वर्ग के भागी हुए।

जहाँ कहा गया है कि शिवजी ने या विष्णु भगवान् ने किसी स्थान पर अमुक दैत्य या दानव को मारा—जैसे लिखा है कि माही नदी के मुहाने पर शिवजी ने अन्धक दैत्य का वध किया। यहाँ मतलब है कि शैव या वैष्णव मत के फैलाने से वहाँ का अन्धकार दूर हुआ, और जो उस अन्धकार व अज्ञान का कारण था वह मिट गया। यह अर्थ नहीं है कि भगवान् शिव या विष्णु किसी के प्राण लेते थे। ऐसा करते तो उनमें व आजकल के मनुष्य में अन्तर ही क्या होता।

महाभारत के आदि पर्व में लिखा है कि "चेदिराज वसु की सेवा सारे गन्धर्व और अप्सरायें करती थीं। उनके पाँच पुत्र थे जिनमें बृहद्रथ (जरासन्ध के पिता) मगध देश में प्रसिद्ध थे। उनके नगर के समीप शुक्तिमती नदी बहती थी कोलाहल नाम के पर्वत ने काम वश होकर उसका मार्ग रोक लिया। जब राजा वसु ने इस व्यवहार का समाचार सुना तो पर्वत में एक ठोकर मारी जिससे वह फट गया और उसमें से शुक्तिमती बह निकली। शुक्तिमती और कोलाहल के समागम से जो पुत्र वसुप्रद उत्पन्न हुआ था उसे राजा ने अपना सेनापति बना लिया और जो कन्या गिरिका उत्पन्न हुई उससे ब्याह कर लिया।"

राजा वसु के द्वारा शुक्तिमती नदी और कोलाहल पर्वत की पुत्री गिरिका से ब्याह करने का अर्थ यह हुआ कि नदी के आगे पर्वत के आ जाने से नदी की एक शाखा दूसरी तरफ़ को भी बह निकली जिससे राजा की खेती में पानी मिलने की सुविधा हो गई और इस प्रकार पर्वत और नदी के मिलने से जो धारा बनी थी वह राजा वसु की होकर उनका कार्य साधन करने लगी, मानो उनसे विवाहित हो गई, और जो पर्वत का एक खण्ड हुआ वह

ऐसे मौके से हुआ कि उससे राजा ने अपने राज्य की रक्षा मे सहायता का काम लिया। इसी से कहा गया है कि उसको सेना पति बना दिया गया।

उपर्युक्त कतिपय उदाहरणों से विदित होगा कि अपने धर्म ग्रन्थों के तत्व को समझने में दृष्टि को संकुचित रखना धोखा देगा। शुद्ध तार्किक दृष्टि से विचार करने पर ही इन ग्रन्थों के मर्म को समझा और जाना जा सकता है।

---

# धार्मिक पुस्तकों में इतिहास के रत्न

प्राचीन काल के आर्य इतिहास तथा भूगाल सम्बन्धी पुस्तकें लिखने की अपेक्षा तत्व ज्ञान में अधिक दत्तचित्त थे। सांसारिक वस्तुओं में बहुत कम मन लगा कर विद्वान लोग आत्म ज्ञान तथा तद्विषयक साहित्य पर ध्यान देते और उसी के सम्बन्ध में रचना करते थे। वे सामाजिक प्रतिष्ठा और विभूति को तुच्छ समझते थे जिसका यही प्रमाण है कि बहुत से धार्मिक ग्रन्थों के लेखकों ने अपना नाम तक नहीं दिया है जिससे विदित हो सकता कि वे किस महापुरुष की रचनाएं हैं।

जिस संस्कृत ग्रन्थ को वाल्मीकीय रामायण के नाम से पुकारा जाता है और जिसको भारतवर्ष के सर्वोत्तम ग्रन्थों में से माना जाता है उसके भी लेखक ने अपना नाम नहीं दिया है। आगे चल कर 'कालपरिचय' के पढ़ने से विदित होगा कि आदि-कवि श्री वाल्मीकि जी की बनाई हुई यह आदि-कविता नहीं है। इसकी भाषा महाभारत से भी पीछे की है। इसमें बुद्ध और बौद्ध भिक्षुओं तक का वर्णन है। यदि कहा जावे कि गौतम बुद्ध से पहले भी कई बुद्ध हुए हैं तो इसका उल्लेख हमारी किसी पुस्तक में नहीं है, यह भी केवल गौतम बुद्ध की कही हुई बात है। ऐसा प्रतीत होता है कि महर्षि वाल्मीकि का बनाया हुआ कोई छोटा मूल ग्रन्थ था जो अब लोप है और जिसके आधार पर वर्तमान पुस्तक लिखी गई है, जैसे कि अब उस पुस्तक के आधार पर तुलसीकृत रामायण की रचना हुई है।

जो लोग ऐसे ऐसे ग्रन्थों को लिख कर भी अपना नाम छिपाकर प्रतिष्ठा से बचते थे उनकी दृष्टि में इतिहास या भूगोल का क्या मूल्य हो सकता था? परन्तु कहीं-कहीं हमें ऐतिहासिक वार्ताएं धार्मिक पुस्तकों में छिपी हुई मिल जाती हैं और छान-बीन करने पर अन्य बहुत सी बातें मिलेंगी जिनके आधार पर अच्छी खोज की जा सकती है। उदाहरणार्थ यहाँ कुछ का उल्लेख किया जाता है।

### ( १ ) ब्रह्मा की वेदी किसे कहते हैं

वामन पुराण कहता है कि "ब्रह्मा की पाँच वेदियाँ हैं जिनमें उन्होंने यज्ञ किया। इनमें से मध्यवेदी प्रयाग ( इलाहाबाद ) है, पूर्व वेदी गया,

दक्षिण वेदी विरजा ( जाजपुर-उड़ीसा में ), पश्चिमी वेदी पुष्कर ( अजमेर) और उत्तर वेदी समन्त पचक ( कुरुक्षेत्र ) है।"

जान पड़ता है कि ये पाँच स्थान प्राचीन आर्यसभ्यता के केन्द्र थे। इनको ब्रह्मा की वेदी इसलिए कहा गया है कि आर्यों ने कठिनाइयों को झेल कर इन स्थानों को आर्य संस्कृति से परिपूर्ण किया था। ब्रह्मा का काम निर्माण करने का है और क्योंकि इन स्थानों की संस्कृति से पूर्ण करके उनकी कायापलट की गई थी इसलिए उनको ब्रह्मा की वेदी कहा गया कि ब्रह्मा की तपस्या से इनका निर्माण इस प्रकार हुआ। कदाचित् यह आर्यावर्त ( जहाँ तक आर्य फैल गये थे ) की उस समय सीमाएं थीं, और मध्य में उनका केन्द्र-स्थल प्रयागराज था जो इसी कारण तीर्थों का राजा माना गया है।

वामन पुराण में उत्तर वेदी का वर्णन है जिससे पता चलेगा कि ब्रह्मा की वेदी की पवित्रता का क्या अर्थ है। यह पुराण कहता है कि "राजा सवरण के पुत्र कुरु ब्रह्मा की उत्तर वेदी को गए, वहां बीस-बीस कोस चारों ओर समन्त पचक नामक क्षेत्र है। राजा कुरु ने उस क्षेत्र को उत्तम माना और कीर्ति के लिए सोने का हल महादेव जी के वृष और धर्मराज के भैंसे को हल में लगाया। वह प्रति दिन उसी हल से पृथिवी को सात कोस चारों तरफ वाहने लगे। इसके अनन्तर राजा कुरु ने विष्णु के प्रसन्न होने पर वरदान माँगा कि जहाँ तक मैंने यह पृथिवी वाही है वह धर्मक्षेत्र हो जाय। यज्ञ, दान, उपवास, स्नान, जप, होम आदि शुभ और जो भी अशुभ काम इस क्षेत्र में किए जाय वे अक्षय हो जायें और आप तथा महादेव सब देवताओं के साथ यहाँ वास करें।"

इस कथा से प्रतीत होता है कि पहले यह स्थान बसने योग्य न था, पीछे बसने योग्य हो पाया। भैंसों और बैलों को जोत कर खेती की गई, देव स्थान बनाए गये। आर्य्य संस्कृति का यह निवास स्थान बना और इस कारण पुण्य क्षेत्र हुआ। ऐसा ही इतिहास अन्य वेदियों के विषय में है।

ब्रह्मा की पुष्कर वेदी ( अजमेर ) की कथा बड़ी रुचिकर है। सबसे श्रेष्ठ और बड़ी वेदी यही है। पौराणिक वर्णन से प्रतीत होता है कि इस स्थान के समीप की भूमि जल से डूबी हुई थी और पृथिवी में उथल पुथल होने से यह जल से ऊपर आई है। पद्म पुराण में इसकी कथा इस प्रकार है :—

"ब्रह्मा जी ने विचार किया कि हम सबसे आदि देव हैं। इससे अपने यज्ञ करने के लिए एक अपूर्व तीर्थ बनावें। इसके उपरान्त ब्रह्मा जी पुष्कर

तीर्थ में आए और सहस्र वर्ष पर्यन्त वहाँ रहे। उन्होंने अपने हाथ का कमल वहीं फेंक दिया। उस पुष्प की धमक से सब पृथिवी काँप उठी। समुद्र में लहरें बड़े वेग से उठने लगीं। ब्रह्मा के मुख से वाराह जी उत्पन्न हुए और उन्होंने ब्रह्मा के हित के लिये प्रलय के जल के भीतर से पृथिवी को लाकर जहाँ पुष्कर तीर्थ बना है वहाँ स्थापित किया और फिर अन्तर्धान हो गए।"

इससे भली भाँति विदित होता है कि किसी काल में यह भूमि समुद्र के नीचे थी और कोई ऐसी भारी और भयङ्कर घटना हुई है कि जिससे पृथिवी का रूप बदल गया और यह भूमि जल के भीतर से पानी के ऊपर हो गई। पौराणिक शब्दों में ब्रह्मा ने यहाँ रह कर इसके समीप के देश का निर्माण किया। आर्य सभ्यता के पुष्कर क्षेत्र तक फैलने के पश्चात यह घटना हुई प्रतीत होती है। यह वही राजपूताने की भूमि है जिसकी बालू अब तक इस बात की साक्षी है कि यह स्थल समुद्र के नीचे से निकल कर आया है। ऐसा भास होता है कि भारतवर्ष में सबसे पीछे जो भूमि समुद्र से ऊपर आई है वह यही है। इसलिये यही ब्रह्मा की सबसे प्रतिष्ठित वेदी भी है।

### (२) रावण की लङ्का का स्थान कहाँ प्रतीत होता है

'ज्ञान संहिता' की कथा है कि "चारों ओर से १६ योजन विस्तीर्ण दारुका नामक राक्षसी का वन था। उसमें वह अपने पति दारुक सहित रहती थी। यह दोनों वहाँ के लोगों को कष्ट देते थे। इसपर वे लोग दुखी होकर और्व ऋषि की शरण में गए। उन्होंने शाप दिया कि यदि राक्षस लोग प्राणियों को दुख देंगे तो प्राण रहित होंगे। देवता लोग राक्षसों से युद्ध की तैयारी करने लगे। दारुका को पार्वती का वरदान था कि जहाँ वह जावे की इच्छा करे वहाँ उसका वन, महल और सब सामग्री सहित चला जावे। दारुका ने इस वरदान के प्रभाव से स्थल सहित अपने वन को पश्चिम के समुद्र में स्थापित किया। राक्षस लोग स्थल पर न आते थे परन्तु जो मनुष्य नौका से समुद्र में जाते उन्हें पकड़ ले जाते थे और दण्ड देते थे। एक बेर इसी प्रकार एक वैश्य के नेतृत्व में बहुत से लोग नौकाओं में जाते थे और उन सब को राक्षसों ने कारागार में बन्द कर दिया। वैश्य बड़ा शिव भक्त था और बिना शिव का पूजन किये भोजन नहीं करता था। कारागार में बन्द हुए इन लोगों को छः मास व्यतीत हो गए। राक्षसों ने एक दिन शिव जी का सुन्दर रूप वैश्य के सामने देख कर अपने राजा से सब समाचार कह सुनाया। राजा ने आकर वैश्य को मारने की आज्ञा दी।

भयभीत होकर वैश्य ने शङ्कर को स्मरण किया। शिवजी अपने ज्योतिर्लिङ्ग और सब परिवार के सहित प्रकट हुए। शिव जी ने वहाँ के राक्षसों को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला और वैश्य को वर दिया कि इस वन में अपने धर्म के सहित विद्यमान रहेगा। दारुका ने पार्वती से अपने वंश की रक्षा के निमित्त प्रार्थना की। पार्वती जी के कहने से शिवजी ने स्वीकार किया कि कुछ काल तक दारुका वहाँ रह कर राज्य करे, और पार्वती का वचन स्वीकार करके उन्होंने कहा कि मैं इस वन में निवास करूँगा। जो पुरुष अपने वर्णाश्रम में स्थित रह कर यहाँ मेरा दर्शन करेगा वह चक्रवर्ती राजा होगा। ऐसा कह कर पार्वती जी सहित महादेव जी नागेश नाम से यहाँ स्थित हो गये"।

इस कथा से ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में यह स्थान (नागेश और दारुका का वन) एक टापू था। राक्षस लोग आर्यों से निकाले जाकर यहाँ आ बसे थे। कोई वैश्य वहाँ व्यापार के लिए पहुँच गया और राक्षसों से उसे कष्ट पहुँचा। परन्तु उसने दृढ़ता पूर्वक वर्ण और धर्म का प्रचार किया और उसकी उन्नति की। राक्षसों का राज्य वहाँ कुछ दिनों स्थिर रहा और फिर जाता रहा, अन्त में शैव धर्म की प्रतिष्ठा स्थापित हो गई।

शिवपुराण में लिखा है कि "१२ ज्योतिर्लिंगों में नागेश लिंग दारुका वन में स्थित है।" यह दारुका का स्थान और नागेश ज्योतिर्लिङ्ग आज कल 'नागेस' नाम से ही प्रसिद्ध है और हैदराबाद राज्य के अन्तर्गत है।

इसके साथ विचारने योग्य बात यह भी है कि वाल्मीकीय रामायण के अनुसार हनुमान जी सीता जी की खोज में पम्पापुर से उत्तर की ओर गए थे। वहाँ विंध्य पर्वत से कूद कर वे लङ्का में पहुँचे थे। इधर ज्ञान-संहिता की यह कथा बताती है कि इस भाग में समुद्र था। बीच में टापू भी थे। तो रावण की लङ्का को यहीं कहीं होना चाहिए। रावण का नासिक आदि के समीप के स्थानों में बराबर पहुँचते रहना, जैसा कि वाल्मीकीय रामायण से स्पष्ट सिद्ध है, यह अनुमान दृढ़ करता है कि रावण का स्थान मध्य प्रदेश के समीप ही रहा होगा। उसकी स्त्री मन्दोदरी भी मयराष्ट्र (मेरठ) के मयदानव की पुत्री थी। यदि लङ्का दक्षिण में होती तो हनुमान जी सीता की खोज में उत्तर को आकर विन्ध्या पर्वत से कूद कर उसको वहाँ कैसे पाते? समय के हेर फेर से इस ओर की भूमि पर समुद्र न रहा, लङ्का टापू का समुद्र में होना ज़रूरी था, अतः जो सब से नजदीक का टापू लोगों ने

समुद्र में पाया उसको लङ्का समझ लिया। अन्य स्थान भी फिर उसी के अनुसार मान लिए गये। यह तो सम्भव ही नहीं है कि ये रामचन्द्र जी के समय से अटूट वैसे ही माने जा रहे हैं क्योंकि अयोध्या कालांतर में स्वयं लुप्त हो गई थी, और महाराज विक्रमादित्य ने नपवा नपवा कर उसके वर्तमान स्थान को नियत किया।

### (३) द्वारिकापुरी का निर्माण और विनाश कैसे हुआ

महाभारत सभापर्व कहता है कि "कृष्ण ने मथुरा से भागने का विचार किया। सब मथुरावासी अनन्त ऐश्वर्य को आपस में बाँट कर स्वल्प भार ले लेकर पश्चिम दिशा में भाग गये। वे लोग भारतवर्ष के पश्चिमी भाग में रैवत पर्वत की चोटियों से सुशोभित कुशस्थली अर्थात् द्वारिका में जा बसे।"

देवी भागवत के सातवें स्कन्ध में है कि "राजा रैवत द्वारिका में आए और रेवती नामक अपनी कन्या बलदेवजी को समर्पण करके बद्रिकाश्रम चले गए।" आदि ब्रह्म पुराण के सातवें अध्याय का कहना है कि "राजा आनर्त का रैवत नामक पुत्र आनर्त देश का राजा हुआ। कुशस्थली उसकी राजधानी थी।"

इन सबके मिलाने से पता चलता है कि जिस देश में श्रीकृष्ण और यदुवंशियों ने जाकर द्वारिका बसाई वह स्थान आनर्त देश में कुशस्थली या उसके समीप था, और वहाँ का पुराना राजा रैवत था। उसको इन लोगों ने हराकर निकाल दिया। और वह वहाँ से चला गया। उसकी पुत्री रेवती को बलदेव जी ने ब्याह लिया।

श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध का कहना है कि "कुछ प्यासे मनुष्यों ने जल को ढूढते हुए द्वारिका के एक स्थान में तृण लताओं से परिपूर्ण एक बड़ा कूप पाया। उसमें उन्होंने एक बड़ा गिरगिट देखा जिसको वे उद्योग करने पर भी कूप से बाहर न निकाल सके। यह समाचार श्रीकृष्ण को पहुचा और उनके वहां पहुँच जाने पर गिरगिट ने कहा कि मैं यथार्थ में राजा नृग हूं। एक पाप के कारण इस अवस्था को प्राप्त हुआ हूँ। धर्मराज ने मुझसे कहा था कि सहस्र वर्ष पूर्ण होने पर तुम्हारा पाप कर्म नष्ट होगा और कृष्ण-भगवान तुम्हारा उद्धार करेंगे। ऐसा कह राजा नृग गिरगिट रूप छोड़ दिव्य विमान में बैठ सुरलोक में चले गए।"

इससे प्रतीत होता है कि जब श्रीकृष्ण यहाँ आए थे उन दिनों यह स्थान झाड़ झंखाड़ और कीड़े मकोड़ों से भरा था और कुश आदि के आधिक्य के कारण इसे कुशस्थली कहते थे। इस देश को साफ और आबाद करते समय एक स्थान पर यदुवंशियों को कीड़ों और जन्तुओं से भरी जगह मिली। वेलोग वहाँ से एक गिरगिट के समान बहुत बड़े विचित्र जीव को न निकाल सके और उनके नेता श्रीकृष्ण चन्द्र ने आकर उसका परलोक-गमन करा दिया।

इस प्रकार इस स्थान को साफ करके जो द्वारिकापुरी बसाई गई थी उसके चारों ओर एक तरह की चहार दीवारी थी जिसमें द्वार लगे थे। स्कन्दपुराण का काशीखण्ड कहता है कि "द्वारिका के चारों ओर चारों वर्णों के प्रवेश करने के लिये द्वार बने हुए थे। इसी कारण तत्त्ववेत्ताओं ने इसे द्वारावती कहा है।"

यह नगर बड़ा सुन्दर और प्रसिद्ध होगया था और 'सप्त पुरियों' में गिना गया है। पर द्वारिका का वैभव बहुत दिनों नहीं रहा।

महाभारत के शान्ति पर्व में लिखा है कि "प्रभास में द्वारिका के क्षत्रियों के विनाश होने के पश्चात् द्वारिका वासियों के अर्जुन के साथ जाने के लिए नगर से बाहर होने पर समुद्र ने समस्त नगरी को अपने जल में डुबो दिया।" पता चलता है कि किसी ज्वालामुखी दुर्घटना के कारण द्वारिका नगरी का विनाश हुआ है क्योंकि श्रीमद्भागवत् में लिखा है कि "मृत्यु सूचक घोर उत्पातों को देख श्री कृष्ण जी ने यादवों से कहा कि अब हम लोगों को दो घड़ी भी द्वारिका में रहना उचित नहीं है। सभी स्त्री, बालक और वृद्ध शंखोद्धार को चले जाओ।" इससे यह ज्ञात होता है कि कोई इस प्रकार की घटनाएं हुई थीं जिनसे मालूम होगया था कि वह स्थान शीघ्र ही नष्ट होने जा रहा है। ऐसी घटना ज्वालामुखी फटने के कुछ पूर्व आभासित होती है। महाभारत के वन पर्व में लिखा मिलता है कि "प्रभास तीर्थ में भगवान अग्नि अपने आप निवास करते हैं।"

यह प्रभास तीर्थ द्वारिका से मिला हुआ है और यहाँ 'अग्नि का निवास' प्रतीत करता है कि ज्वालामुखी था। जब ज्वालामुखी समुद्र में या उसके तट पर फटता है तो समुद्र की लहरें वेग के साथ उठती और बढ़ती हैं और उन्हीं लहरों ने इस नगर को नष्ट कर दिया।

## (४) गंगाजी क्या साधारण नदी हैं

श्री महाभारत, मत्स भागवत और वाल्मीकीय रामायण के देखने से मालूम होता है कि गंगा जी एक विशाल नहर हैं जिसको राजा भगीरथ और उनके पूर्वजों ने तैयार किया था। श्रीमद्भागवत में लिखा है कि "भगवान कपिल देव अपने पिता के आश्रम (सिद्धपुर) से माता की आज्ञा लेकर ईशान कोण की ओर गए। वहाँ समुद्र ने उनका पूजन कर उनको रहने का स्थान दिया"। यह स्थान वर्तमान गंगा सागर है।

महाभारत की कथा है कि "राजा सगर का यज्ञ अश्व उनके ६० हजार पुत्रों से रक्षित होकर जल रहित समुद्र के तट पर आने पर अन्तर्धान हो गया। सगर के पुत्रों ने एक स्थान पर पृथिवी को फटा हुआ देखा। वे खोदने लगे और खोदते खोदते पाताल तक चले गये। वहाँ उन्होंने देखा कि कपिल जी के पास घोड़ा घूम रहा है। कपिल जी के तेज रूपी अग्नि से सब लोग जल कर भस्म हो गए"। इस कथा से यह विदित होगा कि राजा सगर के साठ हजार वंशज या आदमी बहुत दूर से भूमि खोदते हुए समुद्र के तट तक पहुँचे और उसी में काम आए।

राजा सगर के पुत्र असमञ्जस, और असमञ्जस के अंशुमान्, अंशुमान् के दिलीप, और दिलीप के पुत्र राजा भगीरथ हुए। महाभारत फिर कहती है कि "भगीरथ ने जब सुना कि हमारे पितरों को महात्मा कपिल ने भस्म कर दिया था इस कारण उनको स्वर्ग नहीं मिला तब हिमाचल पर जाकर उन्होंने घोर तप किया। गंगा जी प्रकट होकर बोलीं कि हे राजन्! तुम क्या चाहते हो? भगीरथ बोले कि कपिल के क्रोध से जले हुए हमारे पुरुषों को तुम अपने जल में स्नान करा कर स्वर्ग में पहुँचाओ। गंगा ने कहा कि हे राजन्! तुम शिवजी को प्रसन्न करो स्वर्ग से गिरती हुई हमको वे ही अपने सिर पर धारण करेंगे। भगीरथ ने कैलाश में जाकर घोर तपस्या करके शिवजी को प्रसन्न किया और उनसे वरदान मांगा कि आप गंगा को अपने सिर पर धारण करें। तब भगवान् शिव ने राजा के वचन को स्वीकार किया तो हिमाचल की पुत्री गंगा बड़ी धारा से स्वर्ग से गिरी। उन्होंने राजा से कहा कि कहो अब मैं किस मार्ग से चलूँ? राजा भगीरथ जिधर राजा सगर के ६० हजार पुत्र मरे पड़े थे उधर ही चले। उन्होंने गंगा को समुद्र तक पहुँचा दिया।"

इसका यह अर्थ हुआ कि अपने पूर्वजों के परिश्रम का निष्फल देख राजा भगीरथ इस खुदे हुए मार्ग द्वारा जल ले जाने का उद्योग करने लगे और अन्त में उन्हें वह धारा प्राप्त हुई कि जिसको पाकर उनका मनोरथ सफल हुआ। परन्तु उसको पहाड की इतनी ऊँची चोटी से गिराने के लिए ऐसे स्थान की आवश्यकता थी जो महा घने जगल से ऐसा परिपूर्ण हो कि उस विशाल धारा के गिरने को सह सके। सम्भव है कि उनके इष्ट देव से भगीरथ को इस योग्य स्थान का परिचय मिला हो। ऐसे ही स्थान पर भगीरथ ने उस धारा को गिराया और फिर जो मार्ग बना दिया था उससे समुद्र तक उसे लेगए।

वाल्मीकीय रामायण में लिखा है कि "गगा ने यह विचारा था कि मैं अपनी धारा के वेग से शिव को लिए हुए पाताल को चली जाऊँगी। गगा के गर्व को जान शिवजी ने उन्हें अपनी जटा में छिपाने की इच्छा की और गगा जी अनेक उपाय करने पर भी भूमि पर न जा सकीं, और अनेक वर्षों तक उसी जटा मण्डल में घूमती रह गईं। जब भगीरथ ने कठोरतप करके शिवजी को फिर प्रसन्न किया तब शिवजी ने हिमालय के विन्दु सरोवर के निकट गगा को छोड़ा और उनकी धारा भगीरथ के रथ के पीछे पीछे चली"। इसका यह आशय हुआ कि उस भयकर वन और घाटी में धारा का जल जब तक पूरा न भर गया तब तक वह बाहर न बह सका और वहाँ से बाहर निकालने को भगीरथ को पुन उद्योग करना पड़ा, फिर जो मार्ग भगीरथ ने बना दिया था उस मार्ग से होकर वह बह निकला।

रुड़की के इञ्जिनियरिंग कालेज के एक पूर्व प्रिंसिपल महोदय ने गगा जी के निकलने के स्थान (जो गगोत्री से बहुत ऊपर है) तक की यात्रा की थी और कालेज में लाकर वहाँ के अनेक चित्र रक्खे। उनमें एक चित्र ऐसा है जिससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि दूर तक घाटी को काट कर वहाँ से जल लाया गया है। तीस साल हुए मैंने रुड़की में सुना था कि उन प्रिंसिपल महोदय का भी गगा जी के सम्बन्ध में मेरे जैसा विश्वास था कि वे पहाड़ काट कर बनाए हुए मार्ग से लाई गई हैं। कुछ धार्मिक लोग गगाजी का आना आकाश से मानते हैं पर हमारे ही प्राचीन ग्रन्थ कहते हैं कि गगाजी की उत्पत्ति आकाश से नहीं बल्कि हिमालय से है, क्योंकि वाल्मीकीय रामायण का कहना है कि "हिमाचल पर्वत की पहली कन्या गगा है। जब देवताओं ने अपना कार्य सिद्धि के लिये हिमवान् से गगा को माँगा तब उसने त्रैलोक्य की कामना के

हित से गंगा को देदिया। गंगा आकाश को गई"। अर्थात् गंगा जी की उत्पत्ति हिमालय से है, पर बहुत ऊपर ( अर्थात् आकाश ) से भगीरथ उनको नीचे लाए हैं। उनके आने से अन्य लाभों के अतिरिक्त लोक का यह भी हित स्पष्ट हुआ कि सारा उत्तरी भारत हरा-भरा हो गया।

## ( ५ ) पूर्व काल में मनुष्य-कृत जलाशय

प्राचीन काल के आर्य खेती को बहुत प्रधान समझते थे और उसके लिये जल प्राप्ति के नाना उपाय करते थे। शिवपुराण के एक स्थल से पता चलता कि वे जलाशय ( Reservoirs ) बनाकर भी खेती के लिये पानी एक त्रित करके रखते थे। शिवपुराण की कथा इस प्रकार है कि "एक समय सौ वर्ष तक वर्षा नहीं हुई। उस समय बहुतेरे जीव मर गए और बहुत से भागकर देशान्तरों में चले गए। तब गौतम जी ने जो इस स्थान पर रहते थे, वरुण देवता की तपस्या की। वरुण प्रसन्न हो प्रकट हुए। गौतम जी ने वरुण से यह वर माँगा कि यहाँ वर्षा होवे और मेघ का जल मुझको प्राप्त हो। उस समय वरुण की आज्ञानुसार गौतम ने एक गड्ढा खोदा। वरुण ने उसको अक्षय जल से परिपूर्ण कर दिया। वरुण जा के चले जाने पर गौतम भी अपना नित्य नैमित्यक कर्म करने लगे। उस स्थान पर अनेक प्रकार के वृक्ष, फल, फूल और धान्य उत्पन्न होने लगे। गौतम ने वहाँ खेती भी की"। इन कथाओं से ज्ञात होगा कि जिन दिनों अन्य देश खेती करना भी न जानते थे उन दिनों इस देश में नहरें और जलाशय तक बना करते थे।

## ( ६ ) जनमेजय का सर्प-यज्ञ क्या था

महाभारत का कहना है कि पाण्डव लोग अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को राज्य देकर महा यात्रा को चले गए थे। कुछ काल उपरान्त तक्षक नाग ने, जो एक स्थान पर छिपा हुआ बैठा था, राजा परीक्षित को डस लिया। उनकी चिकित्सा को धन्वन्तरि जी आरहे थे, उनको भी रोकने के लिये उसने रास्ते में डस लिया। राजा परीक्षित के पुत्र जनमेजय ने नागों से बदला लेने को सर्प यज्ञ किया जिसमें सम्पूर्ण नागों को भस्म कर दिया गया।

इस कथा में नाग का अर्थ सर्प नहीं है। नाग एक मनुष्य जाति थी जो पंजाब में रहती थी वह महर्षि कश्यप के द्वारा उनकी पत्नी कद्रू से उत्पन्न हुई थी। कितनी ही जगह पर नाग राजाओं की कथा है। पुराणों में नाग राजाओं की राजधानी कान्ता पुरी ( वर्तमान कुतवार, ग्वालियर

राज्य ) का वर्णन है । कितने ही स्थानों पर नाग कन्याओं से आर्यों के विवाह का उल्लेख है । अर्जुन ने उलूपी नामक नाग कन्या के साथ हरद्वार में विहार किया था । अहि क्षेत्र ( राम नगर ) में भगवान् बुद्ध ने नागराज को सात दिन तक उपदेश दिया था । राम ग्राम ( रामपुर देवरिया ) से नाग लोग भगवान बुद्ध का दाँत ले गये थे जो अब अनिरुद्धपुर (लङ्का) में है । इस नाग जाति के, सम्भवत तक्षशिला के समीप के किसी व्यक्ति ने जिस कारण उसको तक्षक कहा गया है, छिपकर राजा परीक्षित का वध किया था और फिर उनकी चिकित्सा के लिए आने वाले को भी छिपकर मार डाला । इस पर जनमेजय ने उस जाति के जितने आदमी उसकी पकड़ में आ सके सबका वध करवा दिया था ।

## ( ७ ) दधीचि ऋषि की मृत्यु का कारण

महात्मा दधीचि अपने समय के सबसे बड़े शैव आचार्य थे । जब दक्ष प्रजापति ने अपने यज्ञ में शिवजी की निन्दा की थी तो वह रुष्ट होकर वहाँ से चले आए थे । लिङ्गपुराण का कथन है कि "जिस युद्ध में शिव भक्त दधीचि से राजा क्षुप और विष्णु परास्त हुए उस स्थान का नाम स्थानेश्वर है ।"

महर्षि दधीचि का आश्रम मिश्रिक ( जिला सीतापुर ) में था । देवताओं ने वहां जाकर उनकी हड्डियां उनसे माँगी । इसका कारण पुराणों में यह दिया है कि देवासुर संग्राम में महात्मा दधीचि की हड्डियों ही के अस्त्र से देवता असुरों को मार सकते थे, अन्यथा असुरों ने उन्हें हरा दिया था । दधीचि ने कहा कि उनका प्रण सब तीर्थों में स्नान करने के बाद प्राण छोड़ने का है । इस पर देवताओं ने सब तीर्थों का जल लाकर महर्षि के तालाब में मिला दिया और उन्होंने उसमें स्नान करके देवताओं की इच्छा पूरी करने को अपना शरीर छोड़ दिया ।

यथार्थ बात यह प्रतीत होती है, जैसा लिङ्गपुराण में भी लिखा है, कि महर्षि दधीचि इतने भारी आचार्य थे कि 'विष्णु' ( अर्थात् बड़े से बड़े वैष्णव तक ) उनसे हार गए थे । इतने बड़े शैव आचार्य के रहते वैष्णव किसी प्रकार कहीं शैवों से पार नहीं पा रहे थे । उनकी एकमात्र आशा यही थी कि किसी प्रकार महात्मा दधीचि संसार से उठ जायें । देवता सदा वैष्णव रहे हैं । उन्होंने, अर्थात् वैष्णव आचार्यों ने, यह युक्ति निकाली कि

दधीचि को संसार से विदा किया जावे। इसमें सफल-मनोरथ होकर उन्होंने शैवों से जाकर मुकाबिला किया। इसी को कहा गया है कि दधीचि की हड्डियों ही के अस्त्र से देवता असुरों को परास्त कर सके थे अन्यथा नहीं।

शैव भी अवसर पाकर नहीं चूकते थे। स्कन्द-पुराण कहता है कि "पूर्व काल में शिवजी पार्वती के सहित अपने ससुर हिमालय के गृह में निवास करते थे। एक दिन उस नगर की कई स्त्रियों ने उपहास के साथ पार्वती से कहा कि हे देवि! तुम्हारे पति अपने ससुर के गृह में अनेक भाँति के सुख-भोग करते हैं। पार्वती ने लज्जित होकर महादेव जी के पास जाकर कहा कि हे स्वामिन्! आपको ससुराल में रहना उचित नहीं है। आप दूसरे स्थान में चलें। शिव जी पार्वती की बात का कारण समझ कर चलदिये और भागीरथी के उत्तर तट पर वाराणसी नगरी बसा कर उसमें रहने लगे।"

परन्तु आरम्भ में वहाँ बहुत कठिनाई से उनको सफलता प्राप्त हुई क्योंकि शिवपुराण कहता है कि "काशी में उन दिनों राजा दिवोदास राज्य करता था। शिवजी ने राजा दिवोदास को काशी से विरक्त करने के लिए ब्रह्मा को काशी में भेजा। ब्रह्मा ने काशी में जाकर दिवोदास की सहायता से १० अश्वमेध यज्ञ किये"। अर्थात् वैष्णव धर्म का प्रभाव और भी बढ़ा। फिर शिवपुराण का कहना है कि "शिवजी ने दिवोदास राजा से काशी छुड़ाने के निमित्त ६४ योगनियों को भेजा। जब योगनियों की युक्ति न चली तब वे मणिकर्णिका के आगे स्थित हो गईं।"

स्कन्द-पुराण कहता है कि "शिवजी ने राजा दिवोदास को काशी से विरक्त करने के लिए सूर्य को वहाँ भेजा। परन्तु उनसे भी कार्य सिद्ध न हुआ।" देवताओं के नाम आने से ऐसा जान पड़ता है कि कुछ बड़े वैष्णवों को बीच में डाल कर समझौते के प्रस्ताव भेजे गए। पर दिवोदास ने उन्हें स्वीकार नहीं किया।

शैवों के लगातार उद्योग ने किसी प्रकार दिवोदास को काशी से निकाल दिया। क्योंकि शिव-पुराण फिर लिखता है कि "राजा दिवोदास के काशी छोड़ने पर शिवजी काशी में पहुँचे।" इस प्रकार शैवों और वैष्णवों में पूर्वकाल में काफी लड़ाई रही है।

आरम्भ में वैष्णव और शैवों का समन्वय महा विकट रूप धारण किये रहता था। दक्ष प्रजापति के यज्ञ की कथा प्रसिद्ध है। यज्ञ में शिवजी की निन्दा होने पर सती ने अपने प्राण छोड़ दिये थे। सती हिमालय ही की पुत्री थीं। ज्ञात होता है पर्वतगामियों ने दक्ष के उद्योग से शैव-मत का परित्याग किया। शैवों ने यज्ञ ही विध्वंस कर डाला और दक्ष का सिर काट कर उसी में डाल दिया। उसी क्रोध और जोश में उन्होंने भारतवर्ष में नए नए स्थानों पर शैव और शाक्त मत के प्रचार के अड्डे बना डाले और वहाँ से उस मत का खूब प्रचार किया। ये वही स्थान हैं जिनके लिये कहा जाता है कि शिवजी सती के मरने पर क्रोध और क्षोभ के दुःख-सागर में डूब कर उनके लाश को अपने शरीर में लपेट घूमते फिरे और इन स्थानों में सती के शरीर के भिन्न भिन्न अंग कट कर गिरे। ये ही स्थान पीठ कहलाये।

एक युग बीतने पर इन मतों के मतावलम्बियों के इस व्यवहार में परिवर्तन हो गया और उनमें आपस में मिल कर रहने की इच्छा होने लगी। द्वारिका की कथा इस परिवर्तन की साक्षी है। रणछोड़ जी के मन्दिर से दक्षिण त्रिविक्रम जी का शिखर द्वार मन्दिर है। पश्चिम में कुशेश्वर महादेव का मन्दिर है। पण्डे लोग कहते हैं कि जब कुश नामक दैत्य द्वारिका के लोगों को क्लेश देने लगा तब दुर्वासा ऋषि त्रिविक्रम भगवान् को राजा बलि से माँग लाए। जब कुश दैत्य किसी भाँति से नहीं मरा तब त्रिविक्रम जी ने उसको भूमि में गाड़ कर उसके ऊपर शिवलिङ्ग स्थापित कर दिया, जो कुशेश्वर नाम से प्रसिद्ध हुआ। उस समय कुश ने कहा कि जो द्वारिका के यात्री कुशेश्वर की पूजा न करें उनकी यात्रा का आधा फल मुझको मिले तब मैं इसके भीतर स्थिर रहूँगा। त्रिविक्रम जी ने कुश को यह वर दे दिया। कुश भूमि में स्थित हो गया।

इससे यह सिद्ध होता है कि श्रीकृष्णचन्द्र के द्वारिका में रहने से वहाँ और उसके समीप देश में वैष्णव मत स्थापित हो ही चुका था पर पीछे शैवों ने उसे दबाना चाहा। वैष्णवों ने वैष्णव मत को बचाने का बड़ा प्रयत्न किया। वे बाहर से बड़े बड़े वैष्णवों को लाए। अन्त में आपस में समझौता हो गया कि दोनों मत आपस में बिना एक दूसरे से लड़े, रहें। वैष्णव लोग शैवों का आदर करें, यहाँ तक कि जो द्वारिका को आवें वे शिवजी का भी दर्शन करें। यात्रियों को कहा गया कि यदि वे ऐसा न करेंगे तो उनकी यात्रा का फल आधा रह जावेगा। यह भी निश्चित हो गया

कि शैव लोग अपनी जगह पर रहें, वैष्णवों का पीछा न करें। वे एक स्थान पर स्थित कर दिए गए।

आगे चल कर शैव और वैष्णव अपने भेद भाव को भूल गए। विष्णु ने शिव की वन्दना की तो शिव ने विष्णु को मस्तक नवाया। स्वामी शङ्कराचार्य शैव थे, पर वैष्णव भी श्रद्धा और भक्ति की पुष्पांजलि उन्हें चढ़ाते हैं। और हम देखते हैं कि शैव और वैष्णव एक घर में भी आजकल हिलमिल कर आनन्द से रहते हैं। एक काल तक आपस में जो कलह थी उसका क्रमशः नाम तक मिट गया।

## (८) अर्जुन ने पाशुपतास्त्र कहाँ से पाया

महाभारत का कहना है कि अर्जुन हिमालय पर जाकर रहे। वहाँ उनसे एक दिन भील-रूपधारी महाशिव से भारी युद्ध हुआ और लड़ाई बराबर की छूटी। इस पर प्रसन्न होकर शिव जी ने अर्जुन को पाशुपतास्त्र प्रदान किया। अर्जुन की अस्त्र विद्या में यह अस्त्र सब से प्रबल था।

जान यह पड़ता है कि जहाँ अर्जुन गए थे उस पहाड़ के निवासी योद्धा सरदार से अर्जुन की लड़ाई हो गई। अर्जुन वहाँ उसके देश में चले गए थे। सरदार भी जबरदस्त था, और दोनों का जोड़ बराबर का रहा। एक सरदार का यह घमण्ड कि उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता दूर हो गया। उसे नीचा देखना पड़ा कि उसके देश में जबरदस्ती घुस आए हुए एक व्यक्ति को वह निकाल न सका। जिस अस्त्र के द्वारा जङ्गल के भयङ्कर पशुओं पर भील योद्धा अपना पूरा प्रभुत्व जमाए रहता था वह अस्त्र अर्जुन ने पाया और सीख लिया। इसी को कहा गया है कि भील रूपधारी शिव ने अन्त में अर्जुन को पाशुपतास्त्र दिया। अब इस काल में वह शस्त्र लुप्त है।

महाभारत से पहले भारतवर्ष में ऐसी चमत्कार की बातें और भी बहुत थीं कि जिनका अनुमान करना कठिन है। महाभारत में भारतवर्ष की विद्या स्वाहा हो गई और धीरे धीरे सब उसको भूल गए। अग्निबाण जिसका महाभारत आदि में वर्णन है बारूद जैसी वस्तु का अस्त्र था, पर बन्दूक बनने से पहले लोगों को उसका गुमान भी न था। विमान, जिसका रामायण में उल्लेख है, केवल एक कल्पित वस्तु समझी जाती थी। यारोपियन लोग उस पर हँसते थे पर अब वायुयान ( aeroplane ) बन गया है तब वह हँसी जाती रही।

इस देश की पुरानी विद्या की महत्ता का एक छोटा उदाहरण यह है कि यद्यपि आजकल के अपने देश के पण्डित इतना तक नहीं जानते कि पृथिवी, सूर्य, चन्द्रमा घूमते हैं या नहीं, पर केवल अपने पूर्वजों के बनाए हुए गणित से सारे नक्षत्रों का किसी भी समय का बिलकुल सही स्थान बता देते हैं। कब ग्रहण पड़ेगा, कितना पड़ेगा आदि को इतना ठीक बताते हैं कि वैसा वर्तमान काल के बड़े से बड़े ज्योतिष यन्त्रालय वाले अपने यन्त्रों द्वारा भी नहीं बता पाते।

कुछ लोग विचार करते हैं कि जो हुनर, विद्या, एक बार आ गई वह कैसे लोप हो सकती है। उनके समझने को दो मोटे उदाहरण काफी होंगे।

जौनपुर शहर के मध्य में गोमती नदी पर सम्राट अकबर के समय का बनवाया हुआ एक पुल है। पुल पर दुकानें भी बनी हैं। बीसियों बार इस पुल पर होकर गोमती नदी बही है परन्तु पुल में तिनके की बराबर भी कभी फ़र्क नहीं आया। बिहार के पिछले भयङ्कर भूकम्प में उसमें एक दराज आ गई। उसकी महा परिश्रम और खर्च से मरम्मत की गई। पर मरम्मत क्या है मानो पुल को नासूर हो गया। जब देखिये फिर वही मरम्मत चाहिये! जो कहीं आजकल के पुलों के ऊपर से नदी बह जावे, तब तो यह भी जानना कठिन हो कि पुल था कहाँ पर। तीन ही सौ वर्ष में वह मसालों का ज्ञान, जो एक साधारण बात थी, कहाँ चला गया?

दूसरा उदाहरण विलायत ही का लीजिये। वहाँ की खोज और उन्नति दोनों ही सराहनीय है। पर वहाँ के लोग देखिये क्या लिख रहे हैं। पुराने चित्रों के सुधारने का प्रश्न था, उस पर कहा गया है—

"He (restorer of old paintings) removes the dirt with a mixture of turpentine & spirits, and the original paints shine out as no new paints can ever shine to day, for the art of mixing them is lost."

अर्थात्—पुराने चित्रों का सुधारक तारपीन के तेल और स्प्रिट से चित्रों पर का केवल मैल हटा देता है और वे चित्र ऐसे चमक उठते हैं जैसे आज कल के कोई चित्र नहीं चमक सकते क्योंकि रङ्गों के मिलाने की वह विद्या अब लोप हो गई है।

जब कुछ शताब्दियों के अन्दर यों लोप हो गये तो भारतवर्ष के सहस्रों वर्ष की पुरानी विद्या का लोप हो जाना कौन आश्चर्य की बात है? कैसे कोई कह सकता है कि वह विद्या थी ही नहीं, जब कि उसका वर्णन तक उपस्थित है।

अभी द्वितीय योरोपियन महाभारत हो रहा था। सम्भव था योरोप की विद्या उसमें भस्म हो जाती और एक समय ऐसा ही आ जाता जब आज कल की कला को लोग भूल जाते। कुछ काल में तीसरा योरोपियन महायुद्ध होगा। क्योंकि युद्ध समाप्त होते ही विजयी संसार की बेईमानी, झूठ और कपट फिर नीचतापूर्वक नङ्गे नाचने लगे हैं, और सम्भव है अबकी बार वहां की कला नष्ट हो जावे। पर इसकी आशंका कम है क्योंकि यह विद्या अब संसार व्यापी हो गई है और योरोप के नाश होने पर भी रह जायेगी। पहले का अनुपम विद्या केवल भारतवर्ष में थी और यहाँ भी ऊँची कोटि के इने गिने आदमी ही उसे जानते थे, इससे उनके साथ साथ उसका उठ जाना आश्चर्य की बात नहीं है।

आज भी स्पष्ट देखने में आता है कि साँप आदि का विष उतारने को हमारे यहाँ ऐसे मन्त्र हैं कि मृत प्राय मनुष्य जीवित हो जाता है। पर विरले ही कोई इन मन्त्रों को जानता है, और जानने वालों के साथ यह विद्या भी लोप हो जाय तो आश्चर्य नहीं। साँप के विष के इस प्रकार मन्त्र द्वारा दूर होने से विस्मित होकर सिकन्दर अपने साथ यहाँ से कई आदमियों को यूनान ले गया था।

अपने ग्रन्थों को देख कर, अपने पूर्व काल का स्मरण करके हमें स्वाभिमान और उत्साह होना चाहिये। अपने पूर्वजों के समान अपना स्थान संसार में पाने का प्रयत्न करना चाहिये। हमको चाहिये विचार शक्ति और ऐक्य।

# नाना मत

देखा जाता है कि धार्मिक विचार लोगों को अलग अलग कर देता है। एक धर्म का मानने वाला अपने को दूसरे धर्म के मानने वालों से पृथक समझने लगता है। जो लोग धर्मों के तत्त्वों को समझते हैं वे जानते हैं कि सृष्टि का कर्ता समय समय पर महापुरुषों को भिन्न भिन्न देशों में वहाँ की आवश्यकतानुसार उपदेश और ज्ञान शिक्षा देने को भेजता है, और भेजता रहेगा। निर्बुद्धि लोग उन महापुरुषों के जीवन काल में उनके विरोधी रहते हैं, और उनके मरने पर उनके नाम से नयामत निकाल कर उपद्रव मचाते हैं, और दूसरों से लड़ने का नया उपाय खड़ा कर लेते हैं।

भारतवर्ष के सारे महापुरुष तो एक ही मिट्टी से उठे हैं, एक ही वायु मण्डल में पले हैं। वे केवल अपने दिव्य विचारों को भिन्न भिन्न प्रकार से प्रकट करते रहे हैं।

श्रीकृष्ण चन्द्र, महात्मा बुद्ध, श्री ऋषभदेव, आदि शङ्कराचार्य, श्रीरामानुजाचार्य, सन्त ज्ञानेश्वर, श्रीवल्लभाचार्य, बाबा गोरखनाथ, श्री माध्वाचार्य श्रीकबीर दास, गुरुनानक देव, राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, चैतन्य महाप्रभु, श्रीसमर्थ रामदास, स्वामी जी महाराज, अनेक ऋषि, अगणित मुनि और असंख्य महात्मा सब इसी जाति की उज्ज्वल ज्योति हैं। विष्णु ने शम्भु की और शम्भु ने विष्णु की प्रशंसा की। देवी महाशक्ति को सारे ही हिन्दू सिर नवाते हैं।

श्रीकबीर दास स्वामीरामानन्द जी के शिष्य थे। अन्तिम सिक्ख गुरु, शेर गोविन्द सिंह जी अपने "विचित्र नाटक" ग्रन्थ में अपने विषय में कहते हैं कि पूर्व जन्म में योग करके वे परमात्मा में लीन हो चुके थे। किन्तु परमात्मा ने फिर उन्हें संसार में आकर धर्म प्रचार की आज्ञा दी इससे गुरु गोविन्द सिंह के रूप में उनका अवतरण हुआ। वे कहते हैं —

"अब मैं अपनी कथा बखानों, तप साधन जेहिविधि मुहि आनों।
हेमकुट पर्वत है जहाँ। सप्त श्रृंग सोभित है तहाँ॥
सप्त श्रृंग तिह नामु कहावा। पडुराज जह जोग कमावा॥
तहँ हम अधिक तपस्या साधी। महाकाल काल का अराधी॥

इहि विधि करत तपस्या भयो। द्वै ते एक रूप ह्वै गयो॥
तिन प्रभु जब आइसु मुहिँ दीया। तब हम जन्म कलू महिँ लीया॥
चित न भयो हमरो आवन कहि। चुभी रही श्रुति प्रभु चरनन महि॥
जिउँ तिउँ प्रभु हमको समझायो। इमि कहिके इहि लोक पठायो॥
याही काज धरा हम जनमँ। समझ लेहु साधू सब मनमँ॥
धरम चलावन सन्त उबारन। दुष्ट सभन को मूल उपारन॥"

( विचित्र नाटक श्री दशम ग्रन्थ )

यह सम्बन्ध तो सिक्ख और सनातन धर्म में हुआ। अब जैन मत को लीजिये।

सनातन धर्म के भगवान् ऋषभ देव जी जो विष्णु के २४ अवतारों में से एक हैं, जैन मत के आदि-प्रवर्तक आद्याचार्य और प्रथम तीर्थङ्कर हैं। श्रीरामचन्द्र व कृष्णचन्द्र जिनको सनातनी लोग अवतार मानते हैं वे जैनियों के "बलिभद्र" और "नारायण" हैं। बलदेव जी भी "बलिभद्र" और लक्ष्मण जी भी "नारायण" हैं। हनुमान जी, वसुदेव जी ( श्रीकृष्ण चन्द्र के पिता ) और प्रद्युम्न (श्रीकृष्ण-चन्द्र के पुत्र) जैनियों के "कामदेवों" में से हैं। नारद-मुनि और सुग्रीव उनके "प्रति नारायण" हैं भगवान रुद्र जैनियों के "महापुरुष" हैं। बाईसवें जैन तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ और भगवान् कृष्ण चन्द्र सगे चचेरे भाई थे। गिरनार पर्वत पर जिस चरण-चिन्ह को जैन नेमि नाथ जी-का चरण चिन्ह करके पूजते हैं। उसे सनातनी श्री भगवान दत्तात्रय जी का चरण चिह्न करके पूजते हैं। दोनों एक ही थे।

बौद्ध मत में भगवान् बुद्ध हिन्दुओं के मुख्य दस अवतारों में से हैं। पुराणों में उनके लिए लिखा है :—

मत्स्य पुराण, ४७ वाँ अध्याय : विष्णु ने बारम्बार मनुष्य के हित के लिये और धर्म की स्थापना तथा असुरों के संहार के लिए पृथिवी पर अवतार लिया उनमें से एक अवतार कमल-नयन बुद्ध का था।

पद्म पुराण पाताल-खण्ड, ६८ वां अध्याय : भगवान बुद्ध ने जेठ शुक्ल द्वितीया को अवतार लिया।

ब्रह्म वैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड, ६ वां अध्याय :—बुद्ध का अवतार विष्णु के अंश से है।

श्रीमद्भागवत् प्रथम स्कन्ध, तृतीय अध्याय :—कलियुग को बढ़ते देख कर बुद्ध ने असुरों के मोहने को अवतार लिया।

**भविष्य-पुराण उत्तरार्ध, ७३ वाँ अध्याय :** भगवान बुद्ध ने शुद्धोधन के पुत्र रूप में प्रकट होना स्वीकार किया। शुद्धोधन ने बहुत काल तक राज्य करके मोक्ष लाभ किया। श्रावण शुक्ल द्वादशी को भगवान् बुद्ध की सोने की मूर्ति बनाकर कलश पर रख कर पूजन करना चाहिये। और तब उस कलश को ब्राह्मण को दे देना चाहिए।

**वाराह पुराण, प्रथम अध्याय** विष्णु ने बुद्धावतार ले कर ससार को मोह लिया।

**शिव-पुराण, पाचवा खण्ड, १५ वाँ अध्याय** ' जब समस्त पृथिवी पर म्लेच्छ छा गये तब विष्णु ने बुद्ध का अवतार लिया।

**अग्नि पुराण, १६ वाँ अध्याय**—एक समय देवासुर सग्राम हुआ जिसमें असुरो की जय हुई तब देवों ने विष्णु की शरण ली और विष्णु ने उनके हित के लिये शुद्धोधन के पुत्ररूप बुद्ध का अवतार लिया।

सारांश यह कि इस पवित्र भूमि के सारे मत एक हैं। किसी महात्मा ने किसी विषय पर और किसी ने किसी विषय पर जोर दिया है। सबने मिलकर ब्रह्म-ज्ञान का एक ऐसा सुन्दर उपवन रचा है कि यहीं आकर आत्मा को आनन्द और चित्त को शान्ति प्राप्त होती है। उसके आगे जो दूसरे लोग अपने मतों का बखान करते हैं तो ऐसा जान पड़ता है मानो नाना प्रकार के फल-फूलों से परिपूर्ण उपवन के आगे कोई मुट्ठी भर घास दिखाता हो। सारे मत श्रद्धा और भक्ति के योग्य हैं और उनका समुचित आदर आवश्यक है। पर जब उनके अनुयायी महान ज्ञान के सरोवर के आगे लोटा भर जल दिखावें तो उन्हें बताना ही होगा कि जिन देशों में उन मतों का प्रचार हुआ था वे उन दिनों असभ्य थे। वहाँ के निवासी एक परिमित ज्ञान से ऊँची शिक्षा समझने के योग्य न थे, इससे वहाँ उतनी ही ज्ञान शिक्षा दी गई थी। इसका यह अर्थ नहीं था कि उससे ऊँचा ज्ञान ही नहीं था, अथवा यह कि शिक्षा देने वाला ही उससे ऊँचा ज्ञान नहीं जानता था। यह सभी को मानना चाहिये कि सब मत केवल एक परब्रह्म की ओर ले जाने वाले विभिन्न मार्ग हैं। इससे उनको लेकर आपस में मन-मुटाव करना महान मूर्खता है।

भारतभूमि में शैव, वैष्णव, शाक्त, जैन, बौद्ध, सिक्ख और अनेकों समुदाय, जैसे रैदासी, ब्रह्मसमाजी, आर्यसमाजी, कबीरपन्थी, राधास्वामी इत्यादि सभी इस पवित्र भूमि के धार्मिक उपवन के तरुवर हैं। सब एक हैं, उनके अनुयायी अपनी अपनी प्रकृति के अनुसार अपनी शान्ति के लिये

इच्छानुसार मार्ग ग्रहण किये हुए हैं। कर्म और पुनर्जन्म सबका मूल मन्त्र है। इस मूल-मन्त्र के मानने वाले सभी व्यक्तियों को, आपस में एकता प्रकट करने के लिये अपने को एक नाम से पुकारना चाहिये। केवल हिन्दू कहना चाहिये। ऐसा न होने से ऐक्य नहीं होता और राजनैतिक क्षेत्र में अंग्रेजों ने हजारों चालें चली थीं। कुटिल नीति द्वारा एक एक करके हिन्दुओं का विनाश करने की सोची जारही थी। उदाहरण के लिये जन-संख्या ( मर्दुम शुमारी ) को लीजिए। यह युक्ति निकाली गई कि नाना मत होने के कारण हिन्दुओं का वर्ग-विच्छेद कर दिया जावे। कितने ही उपाय भाग करने के किये गये और यह कहा गया कि 'हिन्दू' की कोई परिभाषा (definition) ही नहीं है। यह निर्विवाद सत्य है कि "हिन्दू" की परिभाषा सदा से चली आरही है। वह यह है कि 'जो कर्म और पुनर्जन्म में विश्वास करे' वह हिन्दू है।

एक बार सन् १९२२ ई० में जब महामना पण्डित मदनमोहन जी मालवीय से मुजफ्फर नगर में मुझसे बात चीत हुई थी, उस समय मैंने निवेदन किया था कि हिन्दुओं ने जो बौद्धों को अपने से पृथक समझ रक्खा है उनको उन्हें अपनाना चाहिये। हमारे विष्णु के एक अवतार ने उस मत को चलाया है। उस मत के भारतवर्ष में इस समय प्रचलित न होने से बौद्धों को हमें अपने से अलग न समझना चाहिये। श्रद्धेय मालवीय जी ने कहा कि "जो भारतवर्ष में हमारे नाना मत हैं वे तो मिल जुल लें बाहर की बात पीछे रही।" उनका कहना सत्य ही था। पर मैंने सितम्बर ३, १९२२ के "लीडर" में एक लेख लिखा जिसका अनुवाद नीचे दिया जाता है:—

### 'क्या बौद्ध हिन्दू हैं ?

'इसका उत्तर देने के पूर्व यह जानना अनिवार्य है कि "हिंदू" किसे कहते हैं ? कई साल हुए यह प्रश्न उठा था और उस पर विभिन्न अनुमतियाँ प्रकट की गई थीं। राव बहादुर के० रामानुजचार्य ने तो जैनियों और सिक्खों को भी हिन्दू धर्म के घेरे से बाहर कर दिया था। पर यह विचार बिलकुल ही गलत है। और यद्यपि राजनैतिक कारणों से सिक्खों ने हाल ही में अपने को हिन्दुओं से अलग करने का प्रयत्न किया परन्तु वे दोनों दलों की सामाजिक प्रौढ़ता का विच्छेद करने में पूर्णतया सफल नहीं हो सके। सिक्खों के

गुरु ( श्रीगुरुगोविन्द सिंह जी सहित ) हिन्दू नहीं थे तो और क्या थे? यदि सिक्ख मत का प्रादुर्भाव भारत वर्ष में इसलाम के आने के पूर्व हुआ होता तो अब तक सिक्ख मत सर्वग्रगीग्राही हिन्दू धर्म में इतना मिश्रित हो चुका होता की उसके पृथक् होने के विचार तक की सम्भावना न रह जाती।

'रही जैनियों की बात, तो जैसा बाबू ( अब डाक्टर ) भगवान दास जी लिखते हैं —'उनके हिन्दू होने में कौन सवाल कर सकता है। वे वैष्णवों के उसी वर्ग में अन्तर्विवाह भी करते हैं।'

'भारतीय उद्गम के सारे मत हिन्दू धर्म में आ जाते हैं और इन सब मतों की विशेषता है कर्म और पुनर्जन्म में विश्वास रखना। जो कोई इनमें विश्वास करता है वह हिन्दू है और निस्सन्देह बौद्ध इन में विश्वास करते हैं। स्वामी विवेकानन्द ने कांग्रेस ऑफ रिलीजन्स ( भिन्न धर्मों की सभा ) में कहा था कि 'वैदान्तिक दर्शन के उच्च आध्यात्मिक विचारों से लेकर, जिन के आगे आजकल की वैज्ञानिक निरलेपणाएँ अन्तर्नाद भी हैं, और बौद्धों के शून्यवाद तथा जैनियों की नास्तिकता से लेकर मूर्ति पूजन और अनगिनत पौराणिक कहानियों के ( mythologies ) के दलित विचार तक हिन्दू धर्म में स्थान रखते हैं।' यह सत्य भी है।

'बौद्ध मत का जन्म भारतवर्ष में हुआ है। जहाँ उसका पोषण हुआ वह हिन्दू धर्म पर ही स्थित है तथा हिन्दू धर्म का एक अंश है। उसने एक समय भारतवर्ष से दूसरे प्रकार के हिन्दू आराधना के साधना को हटा दिया था और अन्य प्रदेशों में भी फैल गया था, इससे लोग उसे एक दूसरा मत समझने लगे हैं। यह भ्रम दूर होना चाहिये। डाक्टर डेविड्स के शब्दों में 'बौद्ध मत हिन्दू धर्म की शाखा और उसी धर्म का फल है। बुद्ध सबसे महान, सब से उत्तम, और सबसे बुद्धिमान हिन्दू थे।'

'बुद्ध विष्णु भगवान् के अवतार थे और उन्होंने धर्म के चक्र को पवित्र काशी क्षेत्र में चलाया था। दुनिया के सारे बौद्ध भारतवर्ष को अपनी पवित्र भूमि मानते हैं और ब्राह्मणों का अपने देश में आदर की दृष्टि से देखते हैं। फिर भी भगवान् बुद्ध और अन्य अवतारों के अनुयायी अपनी धार्मिक एकता पर गम्भीरता पूर्वक विचार नहीं करते। हिन्दू और बौद्ध यह समझें कि वे एक हैं तब उनकी शक्ति अतिशय, अनुपम अभेद्य हो जावेगी। उनकी

सँख्या विश्व की आधी जन-संख्या से अधिक है। वे पृथिवी की आबादी में ५४ प्रतिशत गिनती में हैं।

'हिन्दू प्रचारकों को बौद्ध प्रदेशों में जाकर स्वामी विवेकानन्द के कथन को प्रमाणित करना चाहिये। काट छाँट बहुत हो चुकी। अब पुनर्मिलन होना चाहिये।

'यह सामाजिक और धार्मिक कर्तव्य है जो हिन्दू सभा (अब हिन्दू महासभा) के अनुकूल है। क्या वह इस योग्य अपने को साबित कर सकेगी?

—रामगोपाल मिश्र'

इस लेख के छपने के कुछ ही दिन पश्चात—हिन्दू महासभा का अधिवेशन होने वाला था। उसको यह बात जच गई और अधिवेशन में बौद्धों को अपनाने का प्रस्ताव बड़े जोरों से पास हुआ। क्योंकि यह बात प्रथम मुझसे उठी थी, अत महासभा ने मुझे इस विचार को बर्मा, सीलोन, चीन और जापान में फैलाने को लिखा।

महासभा के प्रधान मन्त्री ऑनरेबिल लाला सुखवीर सिंह जी ने नवम्बर ३०, १६२२ में मेरे ३ सितम्बर के लेख का उत्तर "लीडर" में छापा जिसका अनुवाद निम्नलिखित है —

'क्या बौद्ध हिन्दू हैं?

प० राम गोपाल मिश्र के "क्या बौद्ध हिन्दू हैं" लेख के विषय में, जो ३ सितम्बर को छपा था मैं जनता को यह विदित करना चाहता हूँ कि यह प्रश्न मेरे और अन्य हिन्दू नेताओं के मस्तिष्क में घूम रहा है। हिन्दू जाति के लिए यह प्रश्न बड़े महत्त्व का है और उसका परिणाम बहुत दूर तक जावेगा।

'जैसा कि उस लेख के लेखक ने दिखाया है, यह निर्विवाद है कि बौद्ध हिन्दू हैं। अखिल भारतीय हिन्दू सभा के अधिवेशन में बौद्धों को हिन्दू मान लिया गया है। और उनमें और अपने में भ्रातृभाव स्थापित करने का प्रयत्न आवश्यकीय है। मैं चीन और जापान के बौद्धों से, जो सारनाथ के पवित्र विहार के उद्घाटन के सम्बन्ध में आए हुए हैं, पत्र व्यवहार कर रहा हूँ। और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यदि आवश्यकता हुई तो भारतवर्ष के बाहर भी जाने को तैयार हूँ।

'जैसा कि प० राम गोपाल मिश्र ने दिखाया है हिन्दू और बौद्ध ससार की मनुष्य-गणना म ५४ की सदी हैं। और इसका यह अर्थ है कि बौद्ध ४० करोड़ से कम नहीं हैं। इन दोनों को एक होना ही पड़ेगा और उस ओर प्रयत्नशील होना जरूरी है। श्रीमान मिश्र जी लिखते हैं 'यह सामाजिक और धार्मिक कर्त्तव्य हिन्दू सभा के अनुकूल है। क्या वह इस योग्य अपने को साबित कर सकेगी'' मैं इसके उत्तर मे यह कहूगा कि हिन्दू सभा ने ठीक दिशा में क़दम उठाया है। क्या हिन्दू जनता अपना कर्तव्य पूरा करेगी? यदि करेगी तो मैं इस मामले मे पूरी कोशिश करने को तैयार हूँ।

मुखबीर सिन्हा<br>प्रधान मन्त्री अखिल भारतीय<br>हिन्दू सभा'

मुजफ्फरनगर<br>२५ नवम्बर

यह बात पत्रों म भी चल निकली। खासा वाद विवाद लोगों म हो गया और कितने ही लेख निकले। इनमे से एक, दिसम्बर ११, १६२२ के "लीडर" में छापे गये पत्र का अनुवाद नीचे दिया जाता है। एक सज्जन ने 'ऐन्टी हमबग' (anti humbug) के नाम से बौद्धों के हिन्दू होने का विरोध किया था इस पर किन्हीं दूसरे सज्जन ने "एक हिन्दू" (A Hindu) के नाम से यह पत्र निकाला था—

'क्या बौद्ध हिन्दू हैं?—एक प्रतिरोध

'महाशय,—आपके सवाददाता जो अपने आपको "ऐन्टी हमबग" कहते हैं और जिन्होंने हिन्दू सभा के प्रधान मन्त्री तथा पण्डित राम गोपाल मिश्र को इस प्रश्न के उठाने पर कि "क्या बौद्ध हिन्दू हैं" ? भला बुरा कहा है, विदित होता है कि हिन्दू धर्म का दर्शन, उसकी विशाल हृदयता और सर्व व्यापकता को नहीं समझते। वे इतिहास को तिलाञ्जलि देना चाहते हैं और भूल जाना चाहते हैं कि बौद्ध मत हिन्दू दर्शन से निकला है और भारत में जन्मा है जो हिन्दुओं की भूमि है। एक समय था जब हमारे देश का बहुत बड़ा भाग बौद्ध धर्म को मानता था। बहुत से ऐसे राजा और उनकी करोड़ों प्रजा थी जिनको बौद्ध धर्म में विश्वास था, और यह धर्म इसी देश से चीन और जापान मे फैला था। अतएव इसमें कोई शका नहीं कि धर्म के विचार से बौद्ध उतने ही हिन्दू हैं जितने आर्यसमाजी और राधास्वामी। यह हिन्दू धर्म की विशाल-हृदयता को सकुचित करना और अपनी आँखा

का अस्तित्व ही नष्ट करना होगा यदि हम लोग भी, विशेष कर हिन्दू, ऐसा विचार करें जैसा कि "ऐन्टी हम्बग" करते हैं।

'सब कोई जानता है कि इस काल में जापान एक बहुत बड़ा चढ़ा देश है और एक से अधिक बातों में विलायत तथा अमेरिका से समता रखता है। जो लाभ हिन्दुस्तान को, और विशेषकर हिन्दुओं को, जापान से धार्मिक और सामाजिक नाता जोड़ने में होगा उसका अनुमान नहीं किया जा सकता। जापान हिन्दुस्तानियों को औद्योगिक उन्नति में भी मदद दे सकता है, और हमारी नक सरकार ने कई हिन्दुस्तानी युवकों को रङ्ग व दूसरी कलाओं में शिक्षा प्राप्त करने जापान भेजा। चीन भी अपनी निद्रा वेग से त्याग रहा है। अतएव हिन्दुओं और बौद्धों को एक सामाजिक और धार्मिक सूत्र में बँध जाने से हमारा लाभ ही लाभ है, हानि कोई नहीं है। इस लिए हम आपके संवाददाता "ऐन्टी हम्बग" से यही प्रार्थना करेंगे कि वह ऐसी 'हम्बग' ( ऊल जलूल ) बातें "ऐन्टी हम्बग" की आड़ में लिख कर हिन्दू जाति को क्षति न पहुँचावें।

एक हिन्दू,

मामला आगे चलता चला और सन् ६३६ की हिन्दू महासभा के सभापतित्व के लिये बौद्ध धर्म के प्रसिद्ध नेता भिक्षु उत्तम को चुन कर हिन्दुओं ने दिखा दिया कि वे और बौद्ध अलग अलग नहीं हैं, एक ही हैं। और इस प्रवीण बौद्ध नेता ने इस सभापतित्व का स्वीकार करके जता दिया कि बौद्ध भी इस विषय में यही विचार रखते हैं और हिन्दू हैं।

# अपना कर्त्तव्य

पृथिवी पर भारत वर्ष ही एक स्थान है जहाँ आत्म ज्ञान का निर्मल सरोवर अनन्त काल से बहता रहा है, जहाँ विशाल हृदय और महन शीलता है, सूक्ष्म दृष्टि नहीं है। आत्मज्ञानी सांसारिक लोभ को तुच्छ समझता है और अपने संसर्ग में आने वाला को भी वैसी ही शिक्षा देता है। इससे इस देश के निवासियों के हृदय में वैराग, संतोष और अहिंसा के भाव समा गए हैं। परिणाम यह हुआ कि पिशाच वृत्ति वालों के लिए, जिनकी वृद्धि कालयुग के साथ साथ होती रही है, यह देश हलवा बन गया है। इसी बुराई को दूर करने को चार वर्णों की रचना हुई थी, जिनमें क्षत्रियों का धर्म बलप्राप्ति और शासन द्वारा देश की रक्षा करना था। क्षत्रिय संसार के किसी भी देश वाले का मुँह अपनी वीरता से मोड़ दे सकता है। मेवाड़ का इतिहास इसका साक्षी है। पर धर्म युक्त देश म धर्म युद्ध ही की शिक्षा उसकी नसों में भरी जाती थी, कपट, झूठ और दगा वह नहीं कर सकता था, और दूसरों द्वारा उसी का शिकार हो गया। विदेशियों ने कपट और छल से आपस में खूब फूट डाली और लाभ उठाया। अपना संगठन नष्ट भ्रष्ट हो गया। परिणाम स्वरूप भारतवर्ष उथल पुथल हो गया। मार्ग नहीं सूझता। उधर पुराने धर्म के विचार हृदय से नहीं निकले हैं और इधर हिंसा मक्कारी और कूट के बिना सफलता नहीं होती दिखाई देती।

हिन्दू का चित्त मक्कारी करता है तब भी पुराने संस्कार के कारण, दबता है, और बुराई की मात्रा बढ़ने देने से खिंचा रहता है। वह हाथ उठाता है पर अहिंसा का भाव हाथ पकड़ लेता है। उधर दूसरी जाति वाला पूर्ण मक्कारी, निर्दयता और चालबाज़ी द्वारा दाँव मार ले जाता है।

इस कशमकश ( संघर्ष ) के समय परमात्मा ने एक ऐसा दृश्य सामने रख दिया है जिससे हृदय को सान्त्वना हो सकती है। वह दृश्य है पिछले महायुद्ध का, जो साबित करता है कि कुटिल प्रकृति की माया थोड़े दिन चलती है, फल फूल नहीं सकती। भूलोक और परलोक कहीं वह कल्याण नहीं कर सकती। एक कुटिल प्रकृति वाला ही दूसरे कुटिल प्रकृति वाले का भक्षक बनता रहता है और बनता रहेगा। इसलिये धर्म का आधार ही ठीक

है। वहाँ शान्ति है। सत्धर्मी जीवन और धर्म को अलग अलग नहीं कर सकता। उसके जीवन का प्रत्येक कार्य धर्ममय होगा। वह समझता है कि सब स्वरूपों में एक ब्रह्म है। पुरुष और प्रकृति के समागम से गुण और अवगुण उत्पन्न हो गए हैं यह नाशवान हैं क्योंकि यह बदलते रहते हैं और एक समय आवेगा जब बुद्धि के प्रकाश में यह नष्ट हो जावेंगे और ब्रह्म-स्वरूप रह जावेगा। इस ज्ञान को रखते हुए कर्मयोगी किसी से द्वेष नहीं रख सकता पर अवगुण का वह परम शत्रु होगा और उसको जहाँ देखेगा दूर करेगा। यही देवासुर संग्राम है।

पूर्व काल में भगवान् श्री कृष्ण ने अर्जुन को इसी कर्मयोग और सत्कर्म की शिक्षा प्रदान की थी। और पीछे गुरु गोविन्दसिंह जी ने वह शिक्षा खालसा को दी। इस काल में हम उस शिक्षा से गिर गये हैं। उसे ग्रहण करना होगा। उसमें हृदय की शान्ति और कल्याण दोनों हैं। सत्कर्मी असत्य और अत्याचार को नहीं देख सकता। इन्हीं से उसका युद्ध है।

सत्कर्मी चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलान और चाहे ईसाई, अन्याय की बात सहन नहीं करेगा। केवल सत्याग्रह ही एक मार्ग है जिससे दुनिया से विकार दूर किया जा सकता है। अन्याय को सह लेना उस विकार की वृद्धि कराना है, अर्थात् स्वय दुष्कर्म करना है।

हम आज असत्य को भी सहते हैं। मानो देवासुर संग्राम में देव बन कर असुर का काम करते हैं। कुछ लोग कह लेते हैं कि अंग्रेजों ने मुसलमानों से भारतवर्ष का राज्य पाया था। क्या यह सत्य है? पर लोग उसे सुन लेते हैं और मौन रहते हैं मानो उसे सत्य मान लेते हैं। बम्बई प्रान्त, मध्य प्रदेश, मध्य भारत, दक्षिण मद्रास प्रान्त पर तो मरहठों का साम्राज्य छाया ही हुआ था और निज़ाम हैदराबाद उनके अधीन उन्हें चौथ देते थे। पर बङ्गाल (जिसमें बिहार, उड़ीसा सम्मिलित थे) पर भी मरहठों का प्रभाव जम चुका था, नहीं तो अंग्रेजों ने मरहठों से अपना बचाव करने के लिये अपनी कलकत्ते की फ़ैक्टरी और फोर्ट विलियम के चारों ओर 'मरहटा डिच' क्यों खोदी थी। यदि बङ्गाल के नवाब में ज़रा भी दम बाकी था तो अंग्रेजों को बङ्गाल के एक कोने में मरहठों से अपने बचाव की इतनी फ़िक्र क्यों पड़ गई थी? पञ्जाब, काश्मीर और काबुल पर सिक्खों का साम्राज्य था। राजपूताना सदा हिन्दू नरेशों के पास रहा है और है। राजपूताना में मारवाड़ के वीर दुर्गादास

और मेवाड़ के महाराणा राजसिंह ने औरङ्गज़ेब के छक्के छुड़ा दिये थे। औरङ्गजेब के उत्तराधिकारी किस गिनती में थे? मुगल साम्राज्य की राजधानी आगरा पर भरतपुर नरेश महाराज सूरजमल चढ़ आए थे और उसे लूट तक ले गये। दिल्ली में बादशाह बहादुरशाह महाराजा सिंधिया के वश में उनके आधीन थे और वहाँ ग्वालियर की सेना रहती थी। अब कौन सा हिन्दुस्तान था जो अंग्रेज़ों ने मुसलमानों से पाया? इसका यह आशय नहीं है कि मुसलमानों और हिन्दुओं में द्वेष हो। द्वेष करना मूर्खता है, पर हिन्दुओं के *असत्य और अन्याय को सहन करके पाप के भागी बनने का कारण क्या* है? उनमें ऐक्य, भुजबल और स्वाभिमान का न होना।

यह अवश्य है कि कर्म व्यक्तिगत है, पर एक से दूसरे को सहायता मिलती है, हिम्मत बढ़ती है, और सङ्गठित असत्य और अत्याचारिक क्रूरता का मुकाबिला करने का धर्म सङ्गठन अत्यन्त आवश्यक है।

स्वतन्त्र भारत की सरकार का कर्तव्य है कि प्रत्येक बड़े गाँव में, और छोटे गाँव हों तो कुछ को एक में मिलाकर, अखाड़े खोले। नवयुवकों को कसरत और लाठी के खेल के अतिरिक्त स्थानानुकूल कर्तव्य की शिक्षा दे जिसका वे लोग अपने अपने गाँव में प्रचार करें। यह केवल कागजी शिक्षा न हो। इस प्रकार गाँव की नींव पर जो सङ्गठन खड़ा होकर फैलेगा वही जन समाज का उपकार कर सकेगा। चरित्र परायणता बिना स्वतन्त्रता का उपभोग नहीं हो सकता।

हमारे यहाँ लाखों सन्यासी और वैरागी हैं जिनका संसार से कोई नाता नहीं है। उनको इस काम में लगाना चाहिए। जनता में उनके प्रति श्रद्धा पहिले ही से उपस्थित है, और इनको अपने आगे या पीछे किसी के लिये चिन्ता करना नहीं है। सारे देश में उनकी सहायता से सहज में एक ऐसा विशाल सङ्गठन बन सकता है जिससे जनता का उपकार हो सके, वह अपने बल पर आप खड़ी हो सके और पग पग पर अपनी रक्षा के लिये सरकार का मुँह न तके। स्वतन्त्र भारत की सरकार को स्वयम् अपने हित के लिए इसे तुरन्त करना आवश्यक है। पशुबल होना उचित है जिससे कोई दुर्व्यवहार का साहस न कर सके, पर उस पशुबल का पशु के समान प्रयोग करना अनुचित है। शक्तिहीन होना पाप है पर शक्ति पाकर उसका सदुपयोग न जानना महापाप है। हममें चाहिये यह शक्ति, और जानना चाहिये हमें इस शक्ति का उपयोग। समाज की नींव दृढ़ नहीं है तो उसके नीचे पोल रह जायेगा।

सबसे पहिले देशवासी के हृदय में उसका कर्तव्य ज्ञान जमाना चाहिए—हरिजनों को सच्चे जी से हृदय से लगाना, स्त्रियों को शिक्षित करके उनको साथ साथ चलाना, अपने पूर्वजों की कीर्ति का स्मरण करना, कर्मवीर बनना—फिर किसी क्षेत्र में उसके आगे कौन बाँध बाँध सकेगा ?

जन-समूह में जान फूँकने के लिये विद्वानों को उचित है कि विक्रमादित्य, चन्द्रगुप्त, अशोक, हर्षवर्धन, शालिवाहन, समुद्रगुप्त आदि के इतिहास को उपन्यास रूप में लिखें। जिन वीरों ने कठिनाइयाँ झेल कर सफलता प्राप्त की है—जैसे छत्रपति शिवाजी, पञ्जाब केसरी रणजीत सिंह, क्षत्रिय कुल तिलक राणा प्रताप सिंह—उनकी जीवनी लोगों के सन्मुख रखें।

बालकों के पढ़ने के लिये छोटी-छोटी शिक्षाप्रद धार्मिक कहानियों की जरूरत है जिस से बालकों का अपने धर्म और कर्त्तव्य का बचपन से ही परिचय होने लगे। ईसाई लोग जैसे छोटी छोटी कहानियाँ धार्मिक पुस्तकों से बच्चों के लिये लिखते हैं उसका हमें अनुकरण करना चाहिये। इसी उद्देश से मैंने एक पुस्तक "बाल शिक्षा माला" ( Moral Tales from the Mahabharat with Couplets from the Ramayan ) लिखी थी। उसका तीसरा संस्करण में जाना प्रतीत कराता है कि उससे कुछ लाभ हुआ। पर मेरा मतलब लिखने से केवल यह था कि वैसी और पुस्तकें लिखी जावें। इसी प्रकार स्त्रियों की दशा का चित्र खींचने को मैं "चन्द्र भुवन" लिख चुका हूँ। यह निवेदन जरूर है कि उसको पढ़ा जावे, क्योंकि आशा है कि स्त्रियों के प्रति जिन अन्यायों पर हमारा ध्यान नहीं जाता, इस उपन्यास को पढ़ कर हमारे जी में वे आपसे आप चुभेंगे। अपने में कौन से अवगुण हैं जिनको दूर करना होगा और हिंदू मुसलमानों का मेल कैसे होगा इसके जताने को एक नाटक "भारतोदय" में लिख चुका हूँ। कदाचित् सब इस बात को स्वीकार करेंगे कि मेल होने का यही एक तरीका है जो 'भारतोदय' में दिया है, और यह भी निश्चय है कि बिना अपने अवगुणों को दूर किये हम पनप नहीं सकते। देश भाइयों को "चन्द्रभवन" और "भारतोदय" दोनों ही की बातों पर विचार करना उपयुक्त होगा। हम अपने जीवन के आरम्भ में महान उद्देश लेकर उठते हैं, पर उस पर स्थिर नहीं रह पाते अपितु उससे नीचे आ जाते हैं। यह दुर्भाग्य है। अपने को ऊँचा रखने का उपाय करना चाहिए। इसका दृश्य यदि कोई सज्जन देखना चाहेंगे तो मेरे "माया" नामक उपन्यास में मिल जायगा। यह ग्रन्थ और अन्य जो

मेरी लेखनी से निकले हैं उन सब के लिखने का कोई न कोई उद्देश है। जैसे साधारणतः पुस्तक बिकने के लिए लिखी जाती हैं वैसे यह नहीं लिखे गये हैं। मेरी इच्छा है कि उन ग्रन्थों के समान और ग्रन्थ निकले जिनसे मनोरञ्जन और उतना ही लाभ भी हो।

इन सारे ग्रन्थों का द्वितीय संस्करण निकल चुकना विदित करता है कि यदि विद्वान सज्जन इस प्रकार की पुस्तकें लिखेंगे तो समाज-सेवा के अतिरिक्त उनको और भी लाभ होगा।

"Shivaji the robber" (शिवाजी डाकू) हमें स्कूल में पढ़ाया गया था। यह अंग्रेजों की राजनीति थी। हमारे वे दिन भी बीत गये! अब Shivaji the great (शिवा जी महान) पढ़ने का समय है। इसी उद्देश से एक नाटक "महाराजा छत्रपति" भी सिनेमा (Cinema) के लिए लिख कर मैं सेवा में उपस्थित कर चुका हूँ।

हमें अपने त्यौहारों और उनके वैज्ञानिक गुणों को भली भाँति जानना चाहिये। यह प्रत्येक हिन्दू के लिये उतना ही आवश्यक है जितना अपने प्राचीन स्थानों का जानना। "तपोभूमि" को समाप्त करके मेरा विचार "व्रतावली" को हाथ में लेने का है। देवताओं, ऋषियों, महात्माओं और महापुरुषों के चित्र एकत्रित करके "हिन्दू एलबम" भी बनाने का विचार है।

अपने पवित्र स्थानों की रक्षा अपना पहला कर्त्तव्य है। यह हमारे मानसिक और शारीरिक बल, दोनों की कसौटी है। यदि उनकी रक्षा हमसे न हुई तो हम अपने मन में चाहे जो समझें, पर अपने किसी हक़ की रक्षा कभी नहीं कर सकते। महाराज अशोक ने पवित्र बौद्ध स्थानों पर स्तम्भ व स्तूप बनाकर अमरत्व प्राप्त कर लिया है। क्या कोई वर्तमान नरेश, अवतारों, महर्षियों, महात्माओं के स्थानों पर स्मारक स्तम्भ खड़े करके यह अमरत्व न पाना चाहेगा? इसमें अधिक धन की आवश्यकता नहीं। ऐसे लाखों रुपये प्रतिवर्ष इधर से उधर होते हैं पर यह अवसर किसी को सदा नहीं मिलता। उसका नाम भारतवर्ष के पत्थरों में स्वर्णाक्षर में सदा के लिए जगमगा जाएगा।

---

# काल परिचय

वेद भगवान आदि हैं और उनकी रचना का कोई समय नहीं कहा जा सकता। रामायण, महाभारत तथा पुराण की रचना का भी कोई निश्चित समय नहीं है। परन्तु कलियुग के आरम्भ में महाभारत का युद्ध हुआ था और उसे (विक्रमी सम्वत् २००६ में) आज से ५०५० वर्ष हो गए। यह युग-परिवर्तन का समय था। महर्षि व्यास उन दिनों जीवित थे और युद्ध के थोड़े ही दिन पश्चात् उन्होंने इस ग्रन्थ की रचना की थी। व्यास जी ने उसे अपने पुत्र शुकदेव तथा वैशम्पायन को पढ़ाया। वैशम्पायन ने पाण्डवों के प्रपौत्र जनमेजय की सभा में उसे सुनाया। वहाँ लोमहर्षण ऋषि ने उसे जाना और अपने पुत्र उग्रश्रवा को पढ़ाया, और उग्रश्रवा ने नैमिषारण्य (नीम सार, जिला सीतापुर) में उसे ऋषियों को सुनाया। यह ऋषि गण शौनक कुल पति के यज्ञ में जो बारह वर्ष तक जारी रहा था, एकत्रित हुए थे। उस समय इस ग्रन्थ का नाम "जय" था और इसमें ८८०० श्लोक थे।

समय बीतने पर "जय" में नए नए अंश जुड़ते गए और यह २४,००० श्लोकों का एक बड़ा ग्रन्थ बन गया। उस समय उसका नाम "भारत" था।

आगे चल कर इन श्लोकों में और भी वृद्धि होती गई और वर्तमान 'महाभारत' की विभिन्न प्रतियों में ९८,५४५ तक श्लोक मिलते हैं, अर्थात् वर्तमान पुस्तक महर्षि व्यास के लिखे हुए ग्रन्थ से ग्यारह गुने से भी अधिक होगई है।

वर्तमान पुराण इतने पुराने नहीं जितना महाभारत है परन्तु इनसे पहले दूसरे पुराण थे। उनके लोप होजाने पर उनके आधार पर नए पुराणों की रचना हुई है। पर वे पुराने पुराण बहुत प्राचीन थे और वेद के समकालीन कहे जा सकते हैं, अथर्व वेद तक में पुराणों का अनेक उल्लेख है, और ब्राह्मण ग्रन्थों में तो इतिहास पुराण का साफ उल्लेख है। लोमहर्षण ऋषि के समय में एक पुराण संहिता थी जिसका उन्होंने संग्रह किया था। उन्होंने उसे अपने तीन शिष्यों को पढ़ाया और उन्होंने अपनी अपनी अलग संहिता तैयार कर ली। फिर यह तीन से छः हुईं और अब १८ पुराण और २६ उप-पुराण हैं।

रामायण का वर्तमान ग्रन्थ महाभारत के भी पीछे का लिखा हुआ है। उसकी भाषा ही यह बताती है। उसमें भगवान बुद्ध, बौद्ध मन्दिर तथा बौद्ध भिक्षुओं तक का उल्लेख है। पर महाराज रामचन्द्र जी के समकालीन महर्षि वाल्मीकि का लिखा हुआ एक अति प्राचीन काव्य ग्रन्थ था जिसे महाराज रामचन्द्र के दरबार में उनके पुत्र लव और कुश ने उन्हें सुनाया था। उस प्राचीन काव्य के आधार पर वर्तमान वाल्मीकीय रामायण लिखी गई है, जैसे इस वर्तमान ग्रन्थ के आधार पर अब रामचरित मानस की रचना हुई है। प्रतीत होता है कि महर्षि वाल्मीकि का काव्य ग्रन्थ सदा के लिये लुप्त होगया है। वह संसार का प्रथम काव्य था। उसी ग्रन्थ के आधार पर जान पड़ता है, महाराज रामचन्द्रजी की कथा महाभारत में लिखी गई है।

**भगवान गौतम बुद्ध** का जन्म ईसवी सम्वत् से ६२४ साल पहले कपिल वस्तु ( भुइलाडीह, बस्ती ) के महाराज शुद्धोधन के यहाँ हुआ था। बोध गया में ३५ साल की अवस्था में बोधि प्राप्त करके भगवान ने ४५ साल धर्मोपदेश दिया और ईसवी से ५४४ साल पहले कुशीनरा (कसिया, गोरखपुर) में शरीर छोड़ा। इसी भगवान बुद्ध के महा परि निर्वाण के वर्ष से बौद्ध सम्वत आरम्भ होती है।

**साम्राट अशोक** जिन्हें पृथिवी का सबसे महान और श्रेष्ठ सम्राट माना गया है, भारतवर्ष की गद्दी पर पाटलिपुत्र ( पटना ) में ईसवी सम्वत से २६६ वर्ष पहले बैठे थे। और सवत २३२ बी॰ सी॰ में शरीर छोड़ा था। बौद्ध महात्मा उपगुप्त की परामर्श से उन्होंने पवित्र बौद्ध स्थानों पर स्मारक, स्तूप और स्तम्भ बनवाए थे जिनके कारण आज भी उन स्थानों का पता चल रहा है।

अन्तिम जैन तीर्थङ्कर **श्री महावीरस्वामी** का जन्म ईसवी सम्वत से ५६६ वर्ष पूर्व कुण्डल पुर ( जिला पटना ) में हुआ था और उन्होंने पावा-पुरी में ५२७ बी॰ सी॰ में शरीर छोड़ा। अन्य तीर्थंकरों का समय, अन्य बुद्धों व शेष अवतारों व महर्षियों और ऋषियों के समय के स्थान इतना पुराना है कि अनन्त काल में उसका खोजना असम्भव है।

सिक्ख **गुरुओं** के जन्म, गद्दी ग्रहण करने और चोला छोड़ने की सम्वतें निम्न लिखित हैं :—

| | जन्म | सिक्खधर्म का आरम्भ | परलोक गमन |
|---|---|---|---|
| गुरु नानक जी | १४६६ ई० | १४६७ ई० | १५३६ ई० |
| | | गद्दी ग्रहण करने का साल | |
| गुरु अंगद देव | १५०४ ई० | १५३६ ई० | १५५२ ई० |
| गुरु अमरदास | १४७६ ई० | १५५२ ई० | १५७४ ई० |
| गुरु रामदास | १५३४ ई० | १५७४ ई० | १५८१ ई० |
| गुरु अर्जुन देव | १५६३ ई० | १५८१ ई० | १६०६ ई० |
| गुरु हरि गोविन्द | १५६५ ई० | १६०६ ई० | १६४४ ई० |
| गुरु हरि राय | १६३० ई० | १६४४ ई० | १६६१ ई० |
| गुरु हरि कृष्ण | १६५६ ई० | १६६१ ई० | १६६४ ई० |
| गुरु तेगबहादुर | १६२१ ई० | १६६५ ई० | १६७५ ई० |
| गुरु गोविन्द सिंह | १६६६ ई० | १६७५ ई० | १७०८ ई० |

**विक्रमी संवत्** जो महाराज विक्रमादित्य से चली, ईसवी संवत् से ५७ वर्ष पहिले आरम्भ हुई है। इसमें विक्रमी संवत् में से ५७ घटाने से ईसवी संवत् निकल आती है। और इसी तरह ईसवी संवत् में ५७ जोड़ देने से विक्रमी संवत् बनजाती है।

**जैनी संवत** महावीर स्वामी के निर्वाण से आरम्भ हुई है और विक्रमी संवत के ४७० वर्ष पहिले शुरू हुई है। विक्रमी संवत में ४७० जोड़ने से जैन संवत निकल आती है और इसी प्रकार जैन संवत में से ४७० घटाने से विक्रमी संवत बन जाती है। जैन संवत् व ईसवी में ५२७ वर्ष का अन्तर है।

**शक संवत्** कुशाण सम्राट कनिष्क की राज्यारोहण तिथि से शुरू होती है और इसका आरम्भ ईसवी सन् ७८ से होता है। अतः ईस्वी सन् से ७८ वर्ष घटाने तथा विक्रमी संवत् से १३५ वर्ष घटाने से, शक संवत निकल आती है। इसका प्रयोग पहले दक्षिण भारत में अधिक होता था।

तपोभूमि में पुराने समय के **चीनी** यात्रियों की तथा और पश्चिमी विद्वानों की पुस्तकों का भी जगह जगह पर उल्लेख है। उनकी यात्रा व पुस्तकों का समय निम्नलिखित है :—

(१)—**फाहियान (Fa-huan)** ने अपनी यात्रा ३६६ ई० में आरम्भ की, और ४०० ई० के शुरू में पश्चिम दिशा से भारतवर्ष में प्रवेश किया था। ४११ ई० में उनकी यात्रा समाप्त हुई।

(२)—सुंग-युन ( Sung yun ) व हुई सेन ( Hwuiseng Seng ) इन दोनों चीनी यात्रियों ने काबुल व पश्चिमी पञ्जाब का भ्रमण ५०२ ई० में किया था।

(३)—प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वांन चांग ( Hieun Tsang ) ने ६२६ ई० में चीन को छोड़ा और ६४५ ई० में फिर वहां लौट कर पहुँचे। इन्होंने ६३१ ई० में पश्चिम दिशा से सिन्धु नदी को पार किया था और पञ्जाब व कश्मीर का भ्रमण करके ६३५ ई० में सतलज पार किया। छः साल तक पूर्व के देशों में बिहार तक घूम फिर कर वह मुल्तान लौट गए और फिर वहाँ से चल कर चार मास नालन्दा ( राजगृह के समीप ) महाविद्यालय में अपनी रही सही शंकाओं का निवारण करने को ठहरे। ६४३ ई० में वे सम्राट हर्षवर्धन के साथ बौद्धों के विशाल सम्मेलन में प्रयाग में शरीक हुए और उसी साल जालन्धर जाकर तक्षशिला ( शाह ढेरी, जिला रावलपिण्डी ) होते हुए ६४४ ई० में भारतवर्ष से बाहर चले गये। भारत के चक्रवर्ती सम्राट, हर्षवर्धन, जिनके राज्य काल में ह्वांन चांग ने भारत भ्रमण किया था और जिन्होंने ह्वान चांग का भारी स्वागत किया था, सन् ६०६ ई० में कन्नौज की गद्दी पर बैठे थे और ६४८ ईसवी में उन्होंने शरीर छोड़ा था। यह सम्राट हर पाँचवे साल अपना सारा धन प्रयागराज में बाँट दिया करते थे।

(४)—सिकन्दर आजम ने ३२७ बी० सी० इन्दु नदी के पश्चिम में बिताई थी। ३२६ बी० सी० में उन्होंने इन्दु नदी पार की और तक्षशिला में निवास किया। उसी साल उनका महाराज पुरु से युद्ध हुआ और साल के अन्त में पहली अक्टूबर ३२६ बी० सी० को जल द्वारा व अपने देश को लौट पड़े।

(५)—यूनानी तत्वज्ञानी अपोलोनियस ऑफत्याना (Appolonius of Tyana) ने ४२ ई० से ४५ ई० तक पञ्जाब का भ्रमण किया था।

(६)—सुप्रसिद्ध यूनानी भूगोल लेखक टालिमी (Ptolemy) की पुस्तक की रचना १४० ई० से १६६ तक हुई है। इन्होंने भारतवर्ष के बहुत से स्थानों का वर्णन किया है।

# आवश्यक सूचना

(१) जिस स्थान के नाम के आगे ब्रैकेट मे दूसरा नाम दिया गया है उस स्थान का वर्णन ब्रैकेट वाले नाम मे देखना चाहिये।

(२) स्थानों के प्राचीन नामो की सूची मे प्राचीन स्थान के आगे जो नाम दर्ज है वह उस स्थान का वर्तमान नाम है।

(३) महापुरुषो की सूची में नाम के आगे वे स्थान दिये हैं जिनमे उन महानुभावों का नाम आता है। और जो स्थान नाम के आगे पहले लिखा है उसमे उन महापुरुष का सम्भवतः थोड़ा जीवन परिचय मिलेगा।

(४) पुस्तक मे जहाँ 'प्रा० क०' लिखा है उसमे मतलब प्राचीन कथा है, और जहाँ 'व० द०' लिखा है उसमे मतलब वर्तमान दशा है।

———

# स्थान सूची

| नं० | नाम |
|---|---|
| | **अ** |
| १ | अगल्हा (नासिक) |
| २ | अगस्त्यआश्रम (कुल) (नासिक) |
| ३ | अगस्त्य कुटी (नासिक) |
| ४ | अगस्त्य कुट (नासिक) |
| ५ | अगस्त्यपुरी (नासिक) |
| ६ | अगस्त्य मुनि (नासिक) |
| ७ | अग्नि तीर्थ (रामेश्वर) |
| ८ | अजन्ता |
| ९ | अजमेर |
| १० | अद्यार (मद्रास) |
| ११ | अनन्तनाग (कश्मीर) |
| १२ | अनरुद्धपुर (लङ्का) |
| १३ | अनहिल पट्टन या अनहिलवाड़ा |
| १४ | अनुसुइया (चित्रकूट) |
| १५ | अविचल नगर |
| १६ | अमरकण्टक |
| १७ | अमरनाथ (कश्मीर) |
| १८ | अमिन |
| १९ | अम्रकूट (अमरकण्टक) |
| २० | अमृतवाहिनी नदी तीर्थ (नासिक) |
| २१ | अमृतसर |
| २२ | अम्बर |
| २३ | अम्बाला |
| २४ | अयोध्या |
| २५ | अरौरा (खुपुआडीह) |

| नं० | नाम |
|---|---|
| २६ | अलवर |
| २७ | अलीगढ़ |
| २८ | अवधपुरी (अयोध्या) |
| २९ | अवानी |
| ३० | अविचलकूट (सम्मेद शिखर) |
| ३१ | अश्वकान्ता पर्वत (गोहाटी) |
| ३२ | अष्ट तीर्थ (नासिक) |
| ३३ | अष्टावक्र आश्रम(कुल) (श्रीनगर) |
| ३४ | अष्टा वक्र पर्वत (श्रीनगर) |
| ३५ | असरूर |
| ३६ | असीर गढ |
| ३७ | अहमदाबाद |
| ३८ | अहरौली (त्र्यम्बक) |
| ३९ | अहल्याकुण्ड तीर्थ |
| ४० | अहार(नाहर पुर व कुण्डिन पुर) |
| | **आ** |
| ४१ | आगरा |
| ४२ | आदि बद्री (ऊर्जम गाँव) |
| ४३ | आनन्दपुर |
| ४४ | आनन्दपुर |
| ४५ | आनागन्दी |
| ४६ | आनन्दकूट (सम्मेद शिखर) |
| ४७ | आबू पर्वत |
| ४८ | आरा |
| ४९ | आलन्दी |

| न० | नाम |
|---|---|
| | इ |
| ५० | इन्द्रपाथ |
| ५१ | इन्द्र प्रयाग |
| ५२ | इमनाबाद |
| ५३ | इलाहाबाद |
| | उ |
| ५४ | उजैन (काशीपुर) |
| ५५ | उज्जैन |
| ५६ | उड्डपीपुर |
| ५७ | उत्तर काशी |
| ५८ | उत्तर गोकर्ण तीर्थ (गोला गोकर णनाथ) |
| ५९ | उदयपुर |
| ६० | उद्‌वादा |
| ६१ | उन्नाव (रतनपुर) |
| ६२ | उमरकण्टक |
| ६३ | उरई (महियर) |
| | ऊ |
| ६४ | ऊरल (नौ) (कड़ा) |
| ६५ | ऊखी मठ |
| ६६ | ऊर्जम गांव |
| | ऋ |
| ६७ | ऋण तापूर |
| ६८ | ऋद्धि पुर (काठ सुरे) |
| ६९ | ऋषिकुण्ड (मकॅनपुर) |
| ७० | ऋषि शृङ्ग (श्रृङ्गेरी) |
| ७१ | ऋष्यमूक (आनागन्दा) |
| ७२ | ऋष्य श्रङ्ग आश्रम (कुल) (मकॅन पुर) |
| | ए |
| ७३ | एडैयालम |

| न० | नाम |
|---|---|
| | ओ |
| ७४ | ओंकारपुरी (मान्धाता) |
| ७५ | ओड़छा |
| ७६ | ओपियन |
| ७७ | ओग्यिन |
| | औ |
| ७८ | औंधासेडा (बटेश्वर) |
| | क |
| ७९ | कटाक्ष राज |
| ८० | कड़ा |
| ८१ | कणकाली |
| ८२ | कण्वआश्रम (कुल) (मन्दावर) |
| ८३ | कनकपुर (खुपुआडीह) |
| ८४ | कनखल (हरद्वार) |
| ८५ | कनहट्टी |
| ८६ | कनारक |
| ८७ | कनिष्ट पुष्कर |
| ८८ | कन्धार |
| ८९ | कनौज |
| ९० | कपिल धारा |
| ९१ | कपिल वस्तु (भुइलाडीह) |
| ९२ | कम्पिला |
| ९३ | करतारपुर |
| ९४ | करन बेल (तेवर) |
| ९५ | करवीर (कोल्हापुर) |
| ९६ | कर्ण प्रयाग |
| ९७ | कर्दम आश्रम (सिद्धपुर) |
| ९८ | कर्नाल |
| ९९ | कलकत्ता |

## स्थान सूची

न० नाम

१०० कलपेश्वर (केदार नाथ)
१०१ कलाप ग्राम
१०२ कलियानी (कल्याणपुर)
१०३ कल्पिनाक (कस्गावा)
१०४ कल्याणपुर
१०५ कश्मीर
१०६ कसिया
१०७ कसूर (लाहौर)
१०८ कहसान (गिरनार पर्वत)
१०९ काँगना
११० काकन्दी (खुखुन्धो)
१११ काञ्ची
११२ काटली
११३ काठ मांडू
११४ काटसुरे
११५ कातवा
११६ कामरूप ( गोहाटी )
११७ कामाँ
११८ कामाख्या
११९ कामार पुकुर
१२० कामाद
१२१ कारों
१२२ कालिञ्जर
१२३ कालीदह ( मथुरा )
१२४ काल्पी
१२५ काशी ( बनारस )
१२६ काशीपुर
१२७ किरीट कोण
१२८ किष्किन्धा ( आनागन्दी )
१२९ कीर्तिपुर ( देहरा पातालपुरी )

न० नाम

१३० कुडकी ग्राम
१३१ कुण्डलपुर
१३२ कुडापुर ( कुण्डलपुर )
१३३ कुण्डिनपुर
१३४ कुतवार
१३५ कुदरसाल
१३६ कुदवा नाला ( महाथानडीह )
१३७ कुनिन्द
१३८ कुनाल गिरि ( रामकुड )
१३९ कुमायू वगढवाल
१४० कुमार स्वामी ( मल्लिकार्जुन )
१४१ कुमारी तीर्थ
१४२ कुम्भकोणम
१४३ कुर किहार
१४४ कुरुक्षेत्र
१४५ कुलुहा पहाड़
१४६ कुशीनगर वा कुशीनारा ( कसिया )
१४७ केदार नाथ
१४८ केन्दुली
१४९ केशी तीर्थ ( मथुरा )
१५० केसगढ ( आनन्दपुर )
१५१ केसरिया ( विझाढ )
१५२ कैलास गिरि
१५३ कोड़ँवीर ( कुण्डिनपुर )
१५४ कोग्राम
१५५ काटवा
१५६ कोटि तीर्थ ( चित्रकूट व रामेश्वर )
१५७ कोरूर

| न० | नाम |
|---|---|
| १५८ | कोल गाव ( गोलगढ़ ) |
| १५६ | कोलर |
| १६० | कोल्हापुर |
| १६१ | कासम |
| १६२ | कोसम इनाम ( कोसम ) |
| १६३ | कोसम खिराज ( कोसम ) |
| १६४ | कौत्रा कोल पहाड़ |
| १६५ | कौशाम्बी ( कोसम ) |
| १६६ | क्रौंच पर्वत ( मल्लिकार्जुन ) |
| | **ख** |
| १६७ | खड्डर साहेब |
| १६८ | खरोद ( नासिक ) |
| १६६ | खीर ग्राम |
| १७० | खुखुन्दो |
| १७१ | खुखुन्आडीह |
| १७२ | खेमराजपुर ( नगरा ) |
| १७३ | खेराडीह ( जमनिया ) |
| १७४ | खैराबाद |
| १७५ | ग्वोजरी पुर ( बिठूर ) |
| | **ग** |
| १७६ | गगासो |
| १७७ | गङ्गा सागर |
| १७८ | गंङ्गेश्वरी घाट |
| १७६ | गङ्गोत्री |
| १८० | गजपन्था |
| १८१ | गण्डकी ( मुक्तिनाथ ) |
| १८२ | गया |
| १८३ | गर्ग आश्रम ( कुल )( गगासो ) |
| १८४ | गलता |
| १८५ | गढ़मर |
| १८६ | गालव आश्रम (कुल) (गलता) |
| १८७ | गिरनार पर्वत |
| १८८ | गिरिगढ़ |
| १८६ | गिरि व्रज ( राजगृह ) |
| १६० | गुजरा वाला ( लाहौर ) |
| १६१ | गुटावा ( नगरा ) |
| १६२ | गुन गाव |
| १६३ | गुणावा |
| १६४ | गुप्तेश्वर महादेव ( तीर्थपुरी ) |
| १६५ | गुरपा पहाड़ ( कुर्किहार ) |
| १६६ | गृद्धकूट पर्वत ( राजगृह ) |
| १६७ | गाडा ( अयोध्या ) |
| १६८ | गाहँद घाल |
| १६६ | गोकर्ण |
| २०० | गोकुल ( मथुरा ) |
| २०१ | गोदना |
| २०२ | गोपेश्वर |
| २०३ | गोमती द्वारिका ( द्वारिका ) |
| २०४ | गोमन्त गिरि |
| २०५ | गोरखपुर |
| २०६ | गोलकुण्डा (उडूपीपुर) |
| २०७ | गोलगढ़ |
| २०८ | गोला गोकर्णनाथ |
| २०६ | गोवर्धन (मथुरा) |
| २१० | गोहाटी |
| २११ | गौ (लखनौती) |
| २१२ | गौतम आश्रम (कुल)(ब्रह्मपुर) |
| २१३ | गौरी कुण्ड (त्रियुगीनारायण) |
| २१४ | ग्वालियर |
| | **घ** |
| २१५ | घुसमेश्वर |

न० नाम

२६५ टङ्कारा (मोरवी)
२६६ टापनी (जाम गाँव)

## ड

२६७ डरामऊ
२६८ डल्ला सुलतानपुर
२६९ डेहरा

## त

२७० तख्तेभाई
२७१ तपवद्री (भविष्य बद्री)
२७२ तपोवन (भविष्यबद्री व राजगृह)
२७३ तमलुक
२७४ तरन तारन
२७५ तरी गाँव (बिठूर)
२७६ तलवण्डी (राइ भोई की तलवण्डी)
२७७ तक्षशिला (शाहढेरी)
२७८ तानेश्वर (महाथान डीह)
२७९ ताम्रा
२८० तालवड़ी
२८१ तालवन (मथुरा)
२८२ ताहरपुर
२८३ तिरवाँपुर
२८४ तिलपत
२८५ तिलौरा (गुदराडीह)
२८६ तीर्थपुरी
२८७ तुङ्गनाथ (केदार नाथ)
२८८ [illegible]पुलिया (नासिक)
२८९ तुल[illegible]पुर
२९० तुलजापुर
२९१ [illegible] विहार

न० नाम

२९२ तेजपुर (शोणितपुर)
२९३ तेवर

## द

२९४ दण्ड बिहार (बिहार)
२९५ दर्भशयन (रामेश्वर)
२९६ दक्षिण गोकर्ण तीर्थ (वैद्यनाथ)
२९७ दिल्ली (इन्द्र पाथ)
२९८ दिनग
२९९ दुर्वासा आश्रम(कुल) (गोलगढ़)
३०० दुबाउर (गोलगढ़)
३०१ दूँदिया (अभार)
३०२ देव कुण्डा (बक्सर)
३०३ देवगढ़ (वैद्यनाथ)
३०४ देवघर (वैद्यनाथ)
३०५ देवदारु वन (जागे)
३०६ देवपट्टन (सोमनाथ पट्टन)
३०७ देव प्रयाग
३०८ देवबन्द
३०९ देवयानी
३१० देवल वाड़ा (कुण्डिनपुर)
३११ देवीकोट (शोणितपुर)
३१२ देवीपत्तन (रामेश्वर)
३१३ देवीपाटन (तुलसीपुर)
३१४ देहरा पाताल पुरी
३१५ देहू
३१६ दोदगी
३१७ द्रोणागिरि (गँदपा)
३१८ द्वारिका
३१९ [illegible] कूट (गणेश शिखर)

न० नाम

### ध

३२० धनुष्कोटि ( रामेश्वर )
३२१ धनुषा ( सीतामढ़ी )
३२२ धरणीकोटा
३२३ धवलकूट ( सम्मेद शिखर )
३२४ धाड
३२५ धाम ( चारों )
३२६ धोपाप
३२७ धासो ( चौसा )

### न

३२८ नगर
३२९ नगर खास ( भुइलाडीह )
३३० नगरा
३३१ नगरिया
३३२ नगरावा ( चन्देरी )
३३३ नदिया
३३४ नन्द प्रयाग
३३५ नन्दिग्राम ( अयोध्या )
३३६ नरवार
३३७ नरसी ब्राह्मणी ( पण्ढरपुर )
३३८ नवल
३३९ नागार्जुनी पर्वत
३४० नागोरा
३४१ नागोर
३४२ नाटक कूट ( सम्मेद शिखर )
३४३ नाथ द्वारा
३४४ नाथ नगर
३४५ नानकाना साहेब
३४६ नाथुर ( सातवा )
३४७ नारायण सर
३४८ नालन्दा ( बड़गाँवा )
३४९ नासिक
३५० निकुम्भिला ( लङ्का )
३५१ निगलीवा ( भुइलाडीह )
३५२ निधिवन ( मथुरा )
३५३ निम्बपुर ( आनागन्दी )
३५४ निर्जरा कूट ( सम्मेद शिखर )
३५५ नीमसार
३५६ नूरलिया ( लङ्का )
३५७ नेवाँसे ( आलन्दी )
३५८ नैनागिरि
३५९ नोलास ( सरहिन्द )
३६० नौराही

### प

३६१ पञ्चनद
३६२ पञ्चसरोवर ( पुष्कर )
३६३ पटना
३६४ पडरौना
३६५ पण्ढरपुर
३६६ पपोसा ( पफोसा )
३६७ पप्पौर ( पडरौना )
३६८ पम्पासर ( आनागन्दी व पवित्र सरोवर )
३६९ परणी ग्राम ( वैद्यनाथ )
३७० परली ( जाम्ब गाँव )
३७१ परसा गाँव ( भुइलाडीह )
३७२ पराशन ( काल्पी )
३७३ पवित्र सरोवर ( कुल )

| नं० | नाम |
|---|---|
| ३७४ | पशुपतिनाथ ( काठमाँडू ) |
| ३७५ | पाँडुआ |
| ३७६ | पाटन |
| ३७७ | पाटन गिरि (गङ्गोत्री ) |
| ३७८ | पाण्डुकेश्वर |
| ३७९ | पाण्डरीक क्षेत्र ( पढर पुर ) |
| ३८० | पानीपत ( करनाल ) |
| ३८१ | पारवती |
| ३८२ | पारश रामपुर |
| ३८३ | पार्श्वनाथ (सम्मेद शिखर ) |
| ३८४ | पावा गढ |
| ३८५ | पावापुरी |
| ३८६ | पिण्डार्क तीर्थ ( गालगढ ) |
| ३८७ | पिहोवा ( कुरुक्षेत्र ) |
| ३८८ | पुन डडा ( सीता मढी ) |
| ३८९ | पुराना खेडा ( बिठूर ) |
| ३९० | पुष्कर |
| ३९१ | पेशावर |
| ३९२ | पैठण या पैठन |
| ३९३ | पोन्नुर |
| ३९४ | पोर बन्दर |
| ३९५ | प्रभास कूट ( सम्मेद शिखर ) |
| ३९६ | प्रभास पट्टन ( सोमनाथ पट्टन ) |
| ३९७ | प्रभास क्षेत्र ( पफोसा ) |
| ३९८ | प्रमोदवन ( चित्रकुट ) |
| ३९९ | प्रवर्षण गिरि ( अानागन्दी ) |
| ४०० | प्रह्लाद पुरी ( मुल्तान ) |

फ

| नं० | नाम |
|---|---|
| ४०१ | पफोसा |
| ४०२ | फाज़िल नगर ( पडरौना ) |

ब

| नं० | नाम |
|---|---|
| ४०३ | बँदरपुच्छ ( यमुनोत्री ) |
| ४०४ | बकरोर |
| ४०५ | बकेश्वर तीर्थ ( नागोर ) |
| ४०६ | बक्सर |
| ४०७ | बक्सर घाट |
| ४०८ | बखर ( बसाढ ) |
| ४०९ | बटद्रवा |
| ४१० | बटेश्वर |
| ४११ | बडगाँवाँ |
| ४१२ | बड वानी ( चूल गिरि ) |
| ४१३ | बडागाँव ( बडगाँवाँ ) |
| ४१४ | बदरिया ( सोरों ) |
| ४१५ | बद्रिकाश्रम या बद्रीनाथ |
| ४१६ | बनारस |
| ४१७ | बनौली |
| ४१८ | बयाना ( शोणितपुर ) |
| ४१९ | बरनावा |
| ४२० | बरसाना ( मथुरा ) |
| ४२१ | बरहट ( बिठूर ) |
| ४२२ | बरामुला ( कश्मीर व वाराह क्षेत्र ) |
| ४२३ | बरुआ गाँव ( बिठूर ) |
| ४२४ | बलरामपुर ( अयोध्या ) |
| ४२५ | बलिया |
| ४२६ | बसाढ |
| ४२७ | बसुधारा तीर्थ ( बद्रीनाथ ) |

न० नाम

४८३ मखौड़ा ( अयोध्या )
४८४ मगहर
४८५ मङ्गल गिरि
४८६ मणि चूड़ा
४८७ मण्डल गाँव ( ऊर्जम गाव )
४८८ मत्ते की गराइ
४८९ मथुरा
४९० मदन पल्ली
४९१ मदिया गांव ( मँदापुर )
४९२ मदुरा
४९३ मद्रास
४९४ मध्यमेश्वर ( केदार नाथ )
४९५ मनार गुड़ी
४९६ मन्दार गिरि
४९७ मन्दावर
४९८ मल्लिकार्जुन
४९९ मसार ( शोणितपुर )
५०० महरालीनाला
५०१ महाथान गौर व महाथान टीह
५०२ महावन ( मथुरा )
५०३ महानदी ( [illegible] )
५०४ महा स्थान ( [illegible] )
५०५ महास्थान [illegible] ( [illegible] )
५०६ महियर
५०७ महेन्द्र पर्वत
५०८ महेश्वर ( [illegible] )
५०९ महोबा ( [illegible] )
५१० [illegible]

न० नाम

५११ माँडल पुर ( गुग )
५१२ माणिक याला
५१३ मातङ्ग आश्रम ( कुल ) (गया)
५१४ मायापुर ( कुण्डिनपुर )
५१५ मानसरोवर झील ( कैलाश व पवित्र सरोवर )
५१६ मान्धाता
५१७ माया पुरी ( हरद्वार )
५१८ मार्कण्ड
५१९ मार्कण्डेय तीर्थ ( सालग्राम )
५२० मार्तण्ड ( कश्मीर )
५२१ मालवा
५२२ माल्यवान पर्वत ( अनागन्दी)
५२३ माहती क्षेत्र ( जाम्ब गाँव )
५२४ माही नदी का मुहाना
५२५ मिथिलापुरी ( सीता मढ़ी )
५२६ मिश्रिक ( नीम सार )
५२७ मित्रधर कूट ( सम्मेद शिखर)
५२८ मीरा की ढेरी (माणिक याला)
५२९ मुक्ता गिरि
५३० मुक्ति नाथ
५३१ मुङ्गेर
५३२ मुचकुन्द
५३३ [illegible] ( [illegible] )
५३४ [illegible]
५३५ मुल्तान
५३६ [illegible]
५३७ [illegible] ( [illegible] )

न० नाम

५३८ मेडगिरि (मुक्तागिरि)
५३९ मेरठ
५४० मैल काटा
५४१ मैसूर
५४२ मोग
५४३ मोहन कूट (सम्मेद शिखर)
५४४ मोहरपुर
५४५ मोरवी
५४६ मौंगावाँ (रतनपुर)

## य

५४७ यकलिङ्ग
५४८ यमुनोत्री
५४९ यलोग (सुलमेरगर)
५५० यादवस्थल (सोमनाथ पट्टन)

## र

५५१ रङ्ग नगर (श्री रङ्गम)
५५२ रङ्गपुर (गोहाटी)
५५३ रङ्गून
५५४ रतन पुर
५५५ रत्नपुरी (नौराही)
५५६ रत्नापुर (लङ्का)
५५७ रंगा माटी
५५८ राइ मोई की तलवंडी (नान काना साहेब)
५५९ राजगढ़ गुलरिया (सहेट महेट)
५६० राज गिरिवा
राज गृह

न० नाम

५६१ राजापुर (सोरों)
५६२ रानिम
५६३ राधा नगर
५६४ राम की ढेरी (माणिक याला)
५६५ राम कुण्ड
५६६ राम गढ़ (चित्रकूट)
५६७ राम गढ़ (बनारस)
५६८ राम टेक
५६९ राम नगर
५७० रामपुर (सोरों)
५७१ रामपुर देवरिया
५७२ रामेश्वर
५७३ रावण काटा (लङ्का)
५७४ रावण हृद
५७५ रावल
५७६ रीवाँ
५७७ रुआल सर
५७८ रुद्रनाथ (केदारनाथ)
५७९ रुद्र प्रयाग
५८० रेडी ग्राम (सालग्राम)
५८१ रैला (हरद्वार)
५८२ रोमिन देई (भुइलाडीह)
५८३ रोहताम

## ल

५८४ लखनऊ
५८५ लखनौती
५८६ लङ्का
५८७ ललित पुर (सम्मेद शिखर)
५८८ लावन अथवा लाउन (नासिक)

## स

| नं० | नाम |
|---|---|
| ६६६ | सेदँप्पा |
| ६६७ | सेमर खेरी |
| ६६८ | सेनगी नारायण ( नासिक ) |
| ६६९ | सोन पत ( कुरुक्षेत्र ) |
| ७०० | सोनपुर |
| ७०१ | सोनागिरि |
| ७०२ | सोमनाथ पट्टन |
| ७०३ | सोरय्या ( शाहडेरो ) |
| ७०४ | सोरान |
| ७०५ | सोरो |
| ७०६ | स्वयम्भू कूट ( सम्मेद शिखर ) |
| ७०७ | स्यालकोट |
| ७०८ | स्वर्गारोहिणी ( गङ्गोत्री ) |
| ७०९ | स्वर्णभद्रकूट ( सम्मेद शिखर ) |

ह

| नं० | नाम |
|---|---|
| ७१० | हत्याहरण ( नीमसार ) |
| ७११ | हरद्वार |
| ७१२ | हरिपर्वत ( कश्मीर ) |
| ७१३ | हरिहरक्षेत्र (सोनपुर ) |
| ७१४ | हस्तिनापुर |
| ७१५ | हाजीपुर |
| ७१६ | हारित आश्रम ( एकलिङ्ग ) |
| ७१७ | हिंडोन ( मुल्तान ) |
| ७१८ | हिङ्गुलाज |
| ७१९ | हुगला पीर ( ढाका ) |
| ७२० | हुसैन जात ( गढ़ेद मढ़ेद ) |
| ७२१ | हृषीकेश |

त्र

| नं० | नाम |
|---|---|
| ७२२ | त्र्यम्बक |
| ७२३ | त्रिचिनापल्ली |
| ७२४ | त्रियुगी नारायण |

ज्ञ

| नं० | नाम |
|---|---|
| ७२५ | ज्ञान धर कूट |

## अ

१ अकोल्हा—( देखिए नासिक )

२ अगस्त्य आश्रम (कुल)—( देखिए नासिक )

३ अगस्त्य कुटी—( देखिए नासिक )

४ अगस्त्य कूट—( देखिए नासिक )

५ अगस्त्य पुरी—( देखिए नासिक )

६ अगस्त्यमुनि—( देखिए नासिक )

७ अग्नितीर्थ—( देखिए रामेश्वर)

८ अजन्ता—( हैदराबाद राज्य में एक प्रसिद्ध स्थान )

अजन्ता का पुराना नाम अचिन्ता है।

यहाँ एक संघाराम में आर्य असङ्ग का निवास था जिन्होंने बौद्ध धर्म में योगाचार्य चलाया।

अजन्ता अपनी गुफाओं के लिए जो पाँचवी और छठी शताब्दी ईस्वी में पहाड़ काट कर बनाई गई हैं, जगत् प्रसिद्ध है।

९ अजमेर—( राजपूताने में एक नगर )

स्वामीदयानन्द सरस्वती का यहां देहान्त हुआ था।

अजमेर के समीप तारागढ़ पहाड़ है और इसके पश्चिम पुराने अजमेर के खण्डहर हैं। यह पुराना अजमेर सुप्रसिद्ध महाराज पृथ्वीराज के पिता की राजधानी था और तारागढ़ उस का पहाड़ी किला था।

१० अदयार—( देखिए मद्रास )

११ अनन्त नाग—( देखिए कश्मीर )

१२ अनुरुद्धपुर—( देखिए लङ्का )

१३ अनहिल पट्टन—(उत्तरी गुजरात में एक नगर )

प्रसिद्ध विद्वान हेमचन्द्राचार्य, कुमार पाल के दरबार में यहीं रहे थे।

इस नगर की नींव विक्रमीय सम्वत् ८०२ ( ७४६ ई० ) में पड़ी थी। वल्लभी के ध्वंस के बाद यह नगर गुजरात का सर्व प्रधान नगर हुआ और कई शताब्दियों तक इसे चालुक्य सम्राटों की राजधानी होने का गौरव प्राप्त रहा। इस का दूसरा नाम अनहिल वाड़ा भी है।

१४ अनुसुइया—( देखिए चित्रकूट )

१५ अबिचल नगर—( हैदराबाद राज्य में नदेड़ के समीप एक स्थान। )

इस नगर को सिक्ख गुरु वीर गोविन्द सिंह ने बसाया था और यहीं उन्होंने शरीर छोड़ा था।

सिक्खों के चार तख्तों में से एक तख्त 'श्री हजूर साहबी' यहाँ है। ( तख्तों के विवरण के लिये देखिए अमृतसर )

१६ अमरकण्टक—( मध्य प्रदेश में रीवाँ राज्य के अन्तर्गत पहाड़ का शिखर )

इस स्थान से पवित्र नर्मदा नदी निकली है।

इसका दूसरा नाम आम्रकूट पर्वत है।

प्राचीन कथा ( गरुड़ पुराण, ८१ वाँ अध्याय ) अमरकण्टक उत्तम तीर्थ है।

(शंख स्मृति—१४वाँ अध्याय ) अमरकण्टक और नर्मदा का दान अनन्त फल देता है।

( महाभारत, वन पर्व—८९वाँ अध्याय ) ब्रह्मा के सहित सम्पूर्ण देवता नर्मदा के पवित्र जल में स्नान करने आते हैं।

( मत्स्यपुराण—१८५वाँ अध्याय ) कनखल में गंगा और कुरुक्षेत्र में सरस्वती प्रधान है। नर्मदा नदी ग्राम अथवा वन में सर्वत्र उत्तम है। सरस्वती का जल ५ दिनों में, यमुना का जल ७ दिनों में, और गंगा जल तत्काल ही पवित्र करता है। परन्तु नर्मदा के दर्शन मात्र से मनुष्य पवित्र हो जाता है। ( कूर्म और अग्निपुराण में भी यह वर्णन है। )

( शिव पुराण—ज्ञान संहिता ६८वाँ अध्याय ) नर्मदा नदी शिव का रूप है। इसके तट पर असंख्य शिवलिंग स्थित हैं।

( पद्मपुराण—सृष्टि खण्ड ६वाँ अध्याय ) शिव की कन्या नर्मदा नदी भरत खण्ड में बहती हुई पश्चिम समुद्र में जा मिली है।

( भूमि खण्ड, २०वाँ व २१वाँ अध्याय ) सोम शर्मा नर्मदा के तट पर कपिला संगम पुण्य तीर्थ ( मान्धाता के समीप ) में स्नान करके तप करने लगा। जब विष्णु भगवान् उसको वरदान देकर चले गए तब वह नर्मदा के तीर पुण्यदायक तीर्थ में जिसका नाम अमरकण्टक है, दान पुण्य करने लगा।

वर्तमान दशा—विन्ध्याचल के अमरकण्टक शिखर पर बहुत से पुराने देव मंदिर हैं। इसी शिखर से नर्मदा नदी निकली है। मंदिरों से घिरा हुआ एक कुंड बना हुआ है जिसमें पश्चिम की ओर एक छिद्र में से पानी गिरता है। यही नर्मदा नदी का आरम्भ है। एक मंदिर में नर्मदा माई की मूर्त्ति विराजमान है। यह शिखर समुद्र के जल से लगभग ३४०० फीट ऊँचा सुन्दर वृक्ष लताओं से परिपूर्ण है। इस स्थान से थोड़ी दूर पर शोण ( सोन ) नदी भी निकली है। रीवाँ दरबार की ओर से मंदिरों का भोग राग का प्रबंध रहता है। बहुतेरे यात्री नर्मदा के निकास स्थान से मुहाने तक (७५० मील ) जाकर इस पवित्र नदी की परिक्रमा करते हैं।

१७ अमरनाथ—( देखिए कश्मीर )

१८ अमिन—(पंजाब प्रांत में थानेसर से ५ मील दक्षिण पूर्व एक स्थान) इसका पुराना नाम अभिमन्यु खेड़ा था। इसे चक्रव्यू भी कहते हैं।

महाभारत में यहाँ चक्र व्यूह की रचना, और अभिमन्यु का वध हुआ था।

अदिति ने यहाँ तप किया था और सूर्य को जन्म दिया था।

प्रा० क०—महाभारत युद्ध में कौरवों की सेना के विनाश से दुर्योधन घबड़ा उठा था और अपने महारथियों को धर्म युद्ध छोड़ अधर्म युद्ध के लिये उकसाता था। एक दिन अर्जुन दूसरी ओर युद्ध कर रहे थे इस अवसर को पाकर चक्रव्यूह की रचना कौरवों ने की जिसको सिवाय अर्जुन के कोई नहीं भेद सकता था। अर्जुन का १६ वर्ष का पुत्र अभिमन्यु अपने पक्ष को संकट में देख व्यूह में घुस गया। अकेले उसने व्यूह को तोड़ लिया होता, पर ऐसा होते देख सात महारथियों ने मिल उस बालक से लड़ कर उसका वध किया था।

[ अभिमन्यु का जन्म श्रीकृष्ण की बहिन सुभद्रा के गर्भ से हुआ था। ये अर्जुन की ब्याही थीं। विराट की राजकुमारी उत्तरा से अभिमन्यु का

का विवाह हुआ था। राजा परीक्षित इन्हीं के पुत्र थे, जिनको राज्य देकर पांडव लोग महायात्रा को चले गये थे। १६ वर्ष की अवस्था में द्रोणाचार्य, कर्ण आदि सात महारथियों से अकेले अभिमन्यु ने युद्ध करके वीर गति पाई थी।]

व० द०—अमिन २००० फीट लम्बा और ८०० फीट चौड़ा एक खेड़ा है, जिसकी ऊँचाई २५ से ३० फीट तक है। खेड़े के ऊपर एक छोटा सा गाँव बसा हुआ है। यहाँ अदिति और सूर्य के मंदिर तथा सूर्यकुंड बने हुए हैं। कहा जाता है सूर्यकुंड उस स्थान पर है जहाँ सूर्य का जन्म हुआ था। जो स्त्रियाँ पुत्र प्राप्ति की इच्छा रखती हैं वे इतवार को अदिति के मंदिर में पूजन करके सूर्यकुंड में स्नान करती हैं।

१९ अम्रकूट—(देखिए अमरकण्टक)

२० अमृत वाहिनी नदी तीर्थ—(देखिए नासिक)

२१ अमृतसर—(पंजाब में एक जिले का सदर स्थान)

यह सिक्ख धर्म का केन्द्र स्थान है। सिक्ख धर्म के चार तख्तों में से एक तख्त 'श्री अकाल तख्त साहिब' यहाँ है। यहाँ अन्तिम सिक्ख गुरु शेर गोविन्द सिंह जी की तलवार है।

(सिक्ख धर्म के अन्य तीन तख्त निम्नलिखित हैं —

'श्री पटना साहिबी' जहाँ गुरु गोविन्द सिंह जी का जन्म हुआ था।

'श्री आनन्दपुर साहिबी' जहाँ उन्होंने खालसा स्थापित की था और पांच 'प्यारे' बनाये थे।

'श्री हजूर साहिबी' अबिचल नगर, जहाँ उन्होंने शरीर छोड़ा था।)

चौथे गुरु रामदास जी, पाँचवें गुरु अर्जुन जी तथा छठ, सातवें और आठवें गुरु हर गोविन्द सिंह जी, हरिराय जी तथा हरि कृष्ण जी ने अमृतसर में निवास किया था।

अमृतसर नगर से ३ मील दूर पर छहरटा मौजे में 'गुरु द्वारा साहिब जी' है। यहाँ छठे गुरु श्री हरगोविन्द सिंह जी का जन्म हुआ था।

अमृतसर के रामदासपुरा में गुरु द्वारा 'गुरु के महल साहिब' के स्थान पर नवें सिक्ख गुरु तेगबहादुर जी का जन्म हुआ था।

मा० प०—अमृतसर का पुराना नाम 'चक' है। सिक्खों के चौथे गुरु रामदास जी ने इसको बसाया। तब इसका नाम रामदासपुर हुआ। फिर

उन्होंने उसके भीतर बड़ा तालाब बनवा कर उसका नाम 'अमृतसर' रक्खा।" महाराजा रणजीतसिंह के समय में यह पंजाब में अद्वितीय होगया, और आज सिक्ख धर्म का केन्द्र स्थान है। महाराजा रणजीतसिंह ने मन्दिर पर सोने के पत्तर जड़वा दिये, और जहांगीर के तथा अन्य मुसलमानी मकबरों से सामान ला लाकर मन्दिर तालाब, तथा अन्य २ स्थानों को सजाया।

(सिक्खों के दस गुरु इस प्रकार हैं —

गुरु नानक, गुरु अङ्गद, गुरु अमरदास, गुरु रामदास, गुरु अर्जुन, गुरु हरगोविन्द सिंह, गुरु हरिराय, गुरु हरिकृष्ण, गुरु तेगबहादुर और गुरु गोविन्द सिंह।)

[गुरु हरगोविन्दसिंह जी— पाँचवें सिक्ख गुरु अर्जुनदेव जी के इकलौते पुत्र थे। आपका जन्म माता गङ्गा जी के उदर से १४ जून १५९५ ई० में हुआ था। आपके पिता अर्जुनदेव जी के शहीद हो जाने पर २५ मई १६०६ ई० को आपको गुरु आई का कार्य सँभालना पड़ा।

मुगलों के कोप की वृद्धि सिक्खों पर होती जाती थी, इससे आपने सब सिक्खों को शस्त्र धारण करने की आज्ञा दी, और अपने गले में दो खड्ग धारण किये एक मीरी का दूसरा पीरी का। १६६५ ई० में आपने श्री हरि मन्दिर साहेब (अमृतसर का सुनहरा सिक्ख गुरुद्वारा) के सम्मुख एक राज सिंहासन बनाया और अपना ठाठ बाट पूरा राजाओं का सा बना लिया। यह स्थान अब भी अकाल तख्त के नाम से प्रसिद्ध है। अमृतसर को सुरक्षित करने को आपने एक किला बनवाया जो अब लोहगढ़ कहलाता है। आपकी बढ़ती ताकत को देखकर जहाँगीर ने आपको ग्वालियर के क़िले में बन्द कर दिया पर पीछे छोड़ दिया। उस किले में ६० और राजा बन्दी थे। गुरु जी ने बिना उनके छूटे बाहर आने से इन्कार किया। इसपर जहाँगीर ने उनको भी छोड़ दिया। गुरु हरगोविन्द जी ने ६० पल्लों का एक जामा बनवा कर पहिना और प्रत्येक आदमी एक एक पल्ला पकड़ कर उनके साथ बाहर निकल आया। तभी से गुरु हरगोविन्द जी का नाम 'बन्दीछोर' प्रसिद्ध होगया। शाहजहाँ के गद्दी पर बैठने पर तीन बार गुरु जी को उसकी सेना से युद्ध करना पड़ा और अन्त में करतारपुर में उन्होंने अपना निवास बनाया। ३ मार्च १६४४ ई० को वहाँ से आपने परलोक गमन किया। वह स्थान पातालपुरी के नाम से विद्यमान है। कहते हैं कि इस स्थान से गुरु जी अपने घोड़े सहित पातालपुरी को सिधार गये।]

[गुरु तेगबहादुर का जन्म गुरु हरगोविन्द जी के घर माता नानकी जी के उदर से पहिली एप्रिल १६२१ ई० को हुआ। २० मार्च १६६५ ई० से आपने गुरुआई का भार सँभाला। आपके भाई गुरु दित्ता के लड़के धीरमल ने इसका विरोध किया और एक आदमी आपको मार डालने को भेजा। उसने गोली से आपको घायल कर दिया और आपका सारा सामान लूट ले गया। पर सिक्ख लोग उसको और धीरमल दोनों को पकड़ लाये। आपने उन्हें क्षमा कर दिया।

सन् १६६६ ई० में आपने सतलज के किनारे पहाड़ी राजाओं से भूमि लेकर आनन्दपुर नगर बसाया। धर्मप्रचार के लिए आसाम तक आपने यात्रा की। औरङ्गजेब के अत्याचार से पीड़ित हिन्दू गुरु तेगबहादुर के पास रक्षा के लिए गये। उन्होंने कहा कि आप लोगों की रक्षा तभी हो सकती है जब कोई महान तथा पवित्र आत्मा प्रसन्नता पूर्वक अपना शीश निछावर करे। नौ साल के बालक गोविन्द सिंह ने कहा पिता जी आपसे बढ़कर महान और पवित्र आत्मा कौन है। गुरु जी बालक की बात पर बहुत प्रसन्न हुए और हिन्दुओं से कहा कि औरङ्गजेब से कह दें कि यदि गुरु तेगबहादुर मुसलमान हो जावें तो वे सब मुसलमान हो जावेंगे। औरङ्गजेब ने गुरु जी को बुला भेजा। नाना प्रकार के प्रलोभन मुसलमान होने को दिये, और न होने पर ११ नवम्बर १६७५ ई० को उनका वध दिल्ली में करवा डाला। गुरु जी के अन्तिम स्थान का नाम शीशगंज है जोकि दिल्ली के चाँदनी चौक में विद्यमान है।]

य० द०—शहर के मध्य भाग में अमृतसर नामक पवित्र तालाब है जो ४७५ फीट लम्बा और इतना ही चौड़ा है। तालाब के चारों ओर ऊपर से नीचे तक सफेद संगमरमर की सीढ़ियाँ हैं और बीच में गुरुद्वारा और स्वर्ण मन्दिर है जिसे 'दरबार साहेब' भी कहते हैं। तालाब के पश्चिम *किनारे से मन्दिर तक २०० फीट लम्बा सुन्दर पुल है जिसके दोनों ओर* सुनहरे खम्भों पर लालटेन हैं। भारतवर्ष के किसी मन्दिर में इस मन्दिर के समान सोना नहीं लगा है। मन्दिर के ऊपर की मन्जिल में एक छोटा परन्तु उत्तम प्रकार से सँवारा हुआ शीशमहल है जहाँ गुरू बैठते थे।

मन्दिर के एक चाँदी के पत्तर से जड़े हुए दरवाज़े से खज़ाने को सीढ़ियाँ गई हैं जिसमें ६ फीट लम्बे ४½ इन्च व्यास के चाँदी के ३१ चोब, ४ इनसे

भी बड़े चोर, सुनहले डाट लगे हुए मुलम्मेदार ३ साटे, १ पगा, १ चँवर, पाँचखालिस सोने के शेर, एक चाँदनी (जिसम लाल, हीरे और पन्ने जड़े हैं) और एक सोने के डब्बे के अतिरिक्त मोतिया की झालर लगा हुआ हीरा का एक सुन्दर मुकुट है जिसको गुरु नवनिहालसिंह पहनते थे।

अमृतसर तालाब के पश्चिम किनारे पर पुल के पास पाँचवें गुरु अर्जुन के समय का एक सुनहले गुम्बद का मन्दिर है जिसम सुनहले सिंहासन पर वस्त्र से छिपाये हुए कई असबाब, गुरु गोविन्द सिंह की चार फीट लम्बी तलवार और एक गुरु का साटा है।

अमृतसर तालाब के दक्षिण १३१ फीट ऊँचा सुन्दर 'अटल मीनार' है। जिसको लोग 'राजा अटल' भी कहते हैं। यह मीनार छठे गुरु हरगोविन्द सिंह जी के छोटे पुत्र 'अटल राय' के समाधि मन्दिर के स्थान पर बना है।

अमृतसर में कार्तिक की दीवाली के समय विशेष उत्सव होता है। यह नगर पंजाब का परम प्रसिद्ध धनशाली नगर है।

७८ अम्बर—( जयपुर राज में एक स्थान )

अम्बर को मान्धाता के पुत्र अम्बरीष ने बसाया था और यह उनकी राजधानी था। मान्धाता ने दूँढ़िया में अश्वमेध यज्ञ किया था।

प्रा० क०—[ भक्तवर अम्बरीष एक विशाल साम्राज्य के अधीश्वर थे और न्यायपूर्वक राज्य का पालन करते थे। भारतवर्ष के प्राचीन काल के परम प्रसिद्ध चक्रवर्ती राजाओं में से अम्बरीष एक हैं। यह वैवस्वत मनु के प्रपौत्र थे। ]

[ सूर्य वंश मे एक युवनाश्व नाम के बड़े पराक्रमी राजा हो गये हैं। संतान न होने से वे दुखी थे और ऋषियों ही के आश्रम में निवास किया करते थे। ऋषियों ने एक पुत्रेष्टि यज्ञ का आयोजन किया। एक घड़े में यज्ञ पूत जल अभिमन्त्रित करके उसमें उन्होंने ऐसी शक्ति स्थापित कर दी कि जो उस जल को पीवे उसके परम पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हो। धोखे से राजा स्वयम् उसे पी गये और उनकी कोख फाड़कर एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका पालन इन्द्र ने "माँ धाता" कहकर अपने ऊपर ले लिया। इससे उस बालक का नाम मान्धाता पड़ गया। अपने बाहुबल से इन्होंने पृथिवी पर अपना एकाधिपत्य स्थापित कर लिया और पृथिवी का नाम "मान्धाता क्षेत्र" हो गया। अम्बरीष, मुचकुन्द और पुरुकुत्स महाराज मान्धाता के पुत्र थे। ]

य० व०—जयपुर कायम होने से पहिले आम्बर जयपुर राज्य की राजधानी था। जयपुर राज्य का पुराना किला और खजाना अब भी आम्बर में है और यह देखने योग्य स्थान है। आजकल इसे आमेर कहते हैं। बूँदिया जहाँ मान्धाता ने अश्वमेध यज्ञ किया था चित्तौड़ के दक्षिण में है।

२३ अम्बाला—(पंजाब प्रांत में एक ज़िले का सदर स्थान)

यहाँ राधास्वामियों के पाँचवें गुरु 'साहिब जी महाराज' सर आनन्द स्वरूप का जन्म हुआ था।

[ ६ अगस्त १८८१ ई० को सर आनन्द स्वरूप का जन्म अम्बाला में खत्री परिवार में हुआ था, आपने राधास्वामी सम्प्रदाय के तीसरे गुरु श्री महाराज साहब से आगरा में दीक्षा ली थी और ७ १२ १९१३ ई० को चौथे गुरु श्री सरकार साहब के देहान्त के बाद गुरुआई प्राप्त की। आपने २० १ १९१५ ई० को आगरा में दयाल बाग की स्थापना की जो उद्योग का एक बड़ा केन्द्र है। २४ ६-१९३७ ई० को मद्रास में आपने शरीर छोड़ा। ]

२४ अयोध्या—(संयुक्त प्रदेश के फ़ैज़ाबाद ज़िले में प्रसिद्ध नगर)

अयोध्यापुरी को वैवस्वत मनु ने बसाया था। भारत की सप्त पुरियों में से यह एक पुरी है। इसको साकेत, विशाख, कोशलपुरी, अपराजिता, विदेहा, विनिता और अवधपुरी भी कहते हैं।

वैवस्वतमनु, इक्ष्वाकु, निराकु, हरिश्चन्द, सगर, भगीरथ, दिलीप, रघु, अम्बरीष, ययाति, दशरथ, रुक्मांगद यहीं हुए हैं।

महाराज रामचन्द्र ने यहीं राज्य किया है। उनकी, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न की यह जन्मभूमि है।

राजा दशरथ ने यहाँ राम के वियोग में प्राण छोड़े थे, और राम लक्ष्मण भी यहीं से स्वर्ग को गए थे।

महर्षि ऋषि शृङ्ग ने चिरौंदक नामक स्थान में दशरथ का यज्ञ कराया था और दशरथ की पुत्री शान्ता को ब्याहा था। विश्वामित्र अयोध्या आकर राम लक्ष्मण को ले गए थे।

अगस्त्य मुनि यहाँ पधारे थे।

राजा नल ने अयोध्या में आकर रथ हाँकने की नौकरी की थी।

कथा है कि एक जन्म में काग भुशुण्डि जी अयोध्या में शूद्र थे।

श्री भगवान आदिनाथ (प्रथम तीर्थङ्कर), अजितनाथ (द्वितीय तीर्थङ्कर), अभिनन्दन नाथ (चतुर्थ), सुमतिनाथ (पंचम) और अनन्तनाथ (१४ वें) के

यहाँ गर्भ और जन्म कल्याणक हुए थे। इसी भूमि पर सहस्र भ्रमण में आदिनाथ को छोड़कर बाकी चारों तीर्थङ्करों ने दीक्षा भी ली थी और कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था। (आदिनाथ ने प्रयाग में दीक्षा ली थी और वहीं कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था।)

भगवान बुद्ध ने यहाँ छः चौमास निवास किया था।

चार और पहिले के बुद्धों ने भी यहाँ निवास किया था।

बौद्ध ग्रंथों की सुप्रसिद्ध स्त्री विशाखा यहाँ विवाह के पहले रहती थीं।

स्वामी श्री रामानन्दाचार्य ने यवनों के अत्याचार से पीड़ित हिन्दुओं की रक्षा यहाँ की थी।

विशिष्टाद्वैत स्वामीनारायण सम्प्रदाय के स्थापित कर्ता श्री स्वामीनारायण बाल्यकाल में अयोध्या में रहते थे।

पल्टूदास जी का जन्म यहाँ हुआ था।

प्रा० क०—(वाल्मीकीयरामायण-बालकाण्ड) सरयू नदी के तीर पर लोक विख्यात महाराजा मनु की बनाई हुई १२ योजन लम्बी, ३ योजन चौड़ी अयोध्या नगरी है। उसमे महाराजा दशरथ प्रजापालन करते थे। महाराज पुत्र के लिए यज्ञ का विचार कर ऋषि शृंग को अयोध्या ले आए।

चैत्र मास, नवमी तिथि, पुनर्वसु नक्षत्र मे महारानी कौशिल्या से श्रीरामचन्द्र, उनके पीछे कैकेई से भरत, और उनके पीछे सुमित्रा से लक्ष्मण और शत्रुघ्न जन्मे। विश्वामित्र ने अयोध्या मे आकर अपनी यज्ञ रक्षा के लिये राजा दशरथ से रामचन्द्र को मॉगा। राजा दशरथ ने पहिले तो अस्वीकार किया परतु वशिष्ठ के समझाने पर लक्ष्मण के सहित रामचन्द्र को विश्वामित्र के साथ कर दिया।

अयोध्या सूर्यवंशियों का केन्द्र था। प्राचीनकाल के समस्त सूर्यवंशियों ने यहीं से अपने गौरव और पराक्रम की छटा चारों ओर फैलाई थी।

जैन मतावलम्बियों का भी यह बड़ा तीर्थस्थान है और पाँच जैन मंदिर यहाँ आजकल मौजूद हैं।

महाभारत के बृहद्बल की मृत्यु के पश्चात् पुरानी अयोध्या नगरी नष्ट हो गई थी। महाराजा विक्रमादित्य ने उसे फिर से बसाया और लक्ष्मण घाट से नाप नाप कर पुराने पवित्र स्थानों की जगहों को निकाला था। जिन पवित्र स्थानों का सम्बन्ध राम, लक्ष्मण और जानकी से था उन उनपर महाराज

विक्रमादित्य ने ३६० मंदिर बनवा दिये थे पर ह्वानचाँग के समय ( लगभग ६३४ ई० ) में घटते घटते इनकी संख्या ५० रह गई थी। ह्वानचाँग ने जब इस नगर का भ्रमण किया था तब यहाँ २० बौद्ध धर्मशालायें था जिसमें एक बहुत बड़ी थी। जिस स्थान पर भगवान् बुद्ध ने छ चौमासे बिताये थे वहाँ महाराज अशोक का बनवाया हुआ २०० फीट ऊँचा स्तूप था। इसी के समीप कुछ और इमारतें थीं जो चारपूर्व बुद्धों के बैठने और टहलने के स्थानों पर बनाई गई थीं। एक दूसरा स्तूप था जिसमें भगवान बुद्ध के नख और शिखा के बालकखे हुए थे। नगर के बाहर एक सात फुट का वृक्ष था जो न घटता था न बढ़ता था। जिन दिनों भगवान् बुद्ध यहाँ रहते थे उन दिनों उनकी दतौन के गाड़ देने से यह वृक्ष उत्पन्न हो गया था।

*बौद्धग्रन्थों की सर्व श्रेष्ठ स्त्री ( भगवान बुद्ध की माता और पत्नीको* छोड़ कर ) विशाखा है जिनका जन्म भदिया ( भागल पुर से ८ मील दक्षिण ) में एक भारी सौदागर धनञ्जय के यहाँ और विवाह श्रावस्ती ( सहेट महेट ) के धनामानी सौदागर पूर्ण वर्धन के साथ हुआ था।

छोटी अवस्था में यह विशाखा (अयोध्या ) में आकर रहने लगी थीं और इन्हीं देवी ने भगवान् बुद्ध के लिये श्रावस्ती में प्रसिद्ध 'पूर्वा राम विहार' बनवाया था। लंका के ग्रन्थ कहते हैं कि भगवान् बुद्ध ने साकेत ( अयोध्या ) के पूर्वाराम विहार में १६ चौमासे निवास किया। पर ह्वानचाँग का कहना है कि उन्होंने वहाँ छ चौमासे बिताये थे। ह्वानचाँग का कहना ही सही प्रतीत होता है। साकेत का पूर्वाराम भी संभवत देवी विशाखा का बनवाया हुआ था।

अयोध्या को कभी कभी अवध भी कहते हैं पर अवध साम्राज्य दो भागों में बटा था। सरयू नदी के उत्तर का देश उत्तरी कौशल और दक्षिण का देश दक्षिणी कौशल, महाकौशल व बनौधा कहलाता था। बनौधा के भी दो भाग थे, पूर्ववाले को पूर्वीय राष्ट्र और पश्चिमी वाले को पश्चमीय राष्ट्र कहते थे। इसी प्रकार उत्तरा कौशल के दो भाग थे। राप्ती नदी के उत्तरी देश को गौड़ा और दक्षिणीय देश को कोशल कहते थे। इसी आधार पर अवध प्रांत के ज़िला गोंडा का पुराना नाम 'गौड़ा' और बलरामपुर का पुराना नाम 'रामनगर गौड़ा' था।

[वैवस्वत मनु की श्रद्धा नामक पत्नी से महाराज इक्ष्वाकु का जन्म हुआ था। इनके शील स्वभाव व सदाचारप्रियता आदि गुणों को देख कर

महाराज मनु ने इन्हें न केवल अपने राज्य का उत्तराधिकारी बनाया वरन गुह्यतम योग का रहस्य भी बताया। पहिले पहिल इन्होंने ही अयोध्या में राजधानी बनाई थी। इनके कई यज्ञ भी बड़े प्रसिद्ध हैं।]

[सूर्यवंश में त्रिशंकु नाम के एक प्रसिद्ध चक्रवर्ती सम्राट हुए हैं जिन्हें महर्षि विश्वामित्र ने अपने योगबल से सशरीर स्वर्ग भेजने का प्रयत्न किया था।]

[हरिश्चन्द्र त्रिशंकु के पुत्र थे। हरिश्चन्द्र ने सत्य के लिये अपनी स्त्री शैव्या को एक ब्राह्मण के हाथ, और अपने को चाण्डाल के हाथ काशी में बेच डाला था। परीक्षा में पूरे उतरने पर इन्हें भगवान ने दर्शन दिये थे और यह फिर अपनी राजधानी अयोध्या को वापस आये थे।]

[महाराजा सगर अयोध्या के चक्रवर्ती सम्राट थे। इन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया था। यज्ञ का अश्व भ्रमण करता हुआ गंगासागर के पास लो गया। इनके साठ हजार पुत्र उसके पीछे पीछे जा रहे थे। उन्होंने एक जगह भूमि को फटा देखा, उसमें चले गये। वह भगवान कपिल देव का आश्रम था और अश्व वहां घूम रहा था। पर कपिल देव जी के कोप से महाराज सगर के साठों हजार पुत्र भस्म हो गये। इसी वंश में राजा भगीरथ हुए, वे प्रयत्न और तपस्या करके भागीरथी को हिमालय से गंगा सागर तक ले गये और उनके जल से सगर के उन साठ हजार पुत्रों का उद्धार हो गया।]

[इक्ष्वाकु वंश में महाराज दिलीप बड़े प्रसिद्ध राजर्षि हो गये हैं। वे बड़े ही धर्मात्मा और प्रजापालक राजा थे। इन्होंने एक गौ के बदले अपने को एक सिंह के अर्पण कर दिया। वह केवल परीक्षा थी। महाराज के कोई पुत्र न था। गौ ने अपना दूध रानी के पीने को दिया। महाराज उसे लेकर अपनी राजधानी चले आये और रानी उसको पीकर गर्भवती हो गई। यथा समय उनको पुत्र उत्पन्न हुआ। यही बालक रघु नाम से विख्यात हुआ। सूर्यवंश में जैसे इक्ष्वाकु प्रसिद्ध हुये हैं उसी प्रकार महाराज रघु भी बड़े प्रसिद्ध पराक्रमी और प्रतापी हो गये हैं। इन्हीं के नाम से रघुवंश प्रसिद्ध हुआ, और इनके प्रपौत्र महाराज रामचन्द्र राघव, रघुपति, रघुनाथ, कहलाये। महाराज रघु अपने पुत्र अज को राज्य देकर तपस्या करने चले

गये। अज के पुत्र दशरथ और दशरथ के पुत्र महाराज रामचन्द्र, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न हुए।]

[महाराज दशरथ बड़े प्रतापी थे। देवता भी उनकी सहायता के इच्छुक रहते थे। एक बार देवासुर संग्राम में इन्होंने दैत्यों को हराया। इनकी तीसरी पत्नी कैकेयी भी साथ थीं। उन्होंने इनकी बड़ी सहायता की। महाराज ने प्रसन्न होकर इन्हें दो वर दिये और कहा कि जब इच्छा हो माँग लेना। इन्हीं वरों को माँग कर कैकेयी ने राम को वनवास और भरत को राज्य दिलाया था। राम के साथ सीता और लक्ष्मण भी वनवास को चले गये। महाराज दशरथ ने उनके वियोग में शरीर छोड़ दिया, और भरत ने सिंहासन पर स्वयं न बैठ कर राम की चरण पादुकाओं को सिंहासन पर रक्खा, और राम के वनवास से लौटने पर उनके चरणों पर गिर कर उन्हें राज्य वापस दे दिया।]

[श्री आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ और अनन्तनाथ के माता पिता के नाम, चिन्ह जन्मादि के स्थान निम्नलिखित हैं।

| | माता | पिता | चिन्ह | जन्म | दीक्षा | कैवल्य ज्ञान | निर्वाण |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| श्री आदिनाथ- | मरुदेवी, | नाभिराजा, | बैल, | अयोध्या, | अयोध्या, | प्रयाग, | कैलाश |
| अजितनाथ— | सिद्धार्था, | सवर, | बंदर, | ,, | ,, | अयोध्या, | अयोध्या |
| अभिनन्दन नाथ | विजया, | शत्रुजित, | हाथी, | ,, | ,, | ,, | पार्श्वनाथ |
| सुमतिनाथ | मंगला, | मेघ प्रभु, | चक, | ,, | ,, | ,, | अयोध्या |
| अनन्तनाथ | सुरजा, | हरसैन, | सेही, | ,, | ,, | ,, | ,,] |

य० द०—अयोध्या इस समय मन्दिरों से परिपूर्ण है और सरयू नदी (घाघरा) के ऊपर बसा है। रामघाट, लक्ष्मणघाट, स्वर्गद्वार घाट, गुप्तारघाट सरयू नदी के तट पर हैं। रामघाट महाराज रामचन्द्र, और लक्ष्मणघाट लक्ष्मण जी के स्नान के स्थान हैं। महाराज रामचन्द्र का दाहकर्म स्वर्ग द्वार पर हुआ था, और गुप्तारघाट पर लक्ष्मण जी सरयू जी में ? हो गये थे। कहा जाता है कि पुरानी अयोध्या भरत कुण्ड (अयोध्या से १२ मील) से रामघाट और गुप्तारघाट तक फैली हुई थी। इसी के भीतर में यात्रा के सब स्थान आ जाते हैं।

वर्तमान अयोध्या पुरानी राजधानी का पुनर्निर्माण होना है। गुप्तार घाट फैजाबाद शहर के समीप है जो [illegible] स्थान है। [illegible]

स्थान' के नाम से जो स्थान यहाँ प्रसिद्ध है वहाँ महाराज रामचन्द्र का जन्म हुआ था। बाबर बादशाह ने वहाँ मसजिद बनवा दी है पर उसी हाते में छोटा सा मन्दिर बना है जहां पर धूम धाम से बराबर आरती पूजन होता रहता है। अयोध्या में रामनौमी का भारी मेला लगता है और यहाँ वैरागियों के कई बड़े धनी अखाड़े भी हैं। हनुमान जी के मन्दिर हनुमानगढ़ी की यहाँ बड़ी प्रतिष्ठा है। इस वर्तमान मन्दिर को नवाब अवध के वजीर राजा टिकैत राय ने बनवाया था।

अनेक राजा-महाराजाओं ने यहाँ मन्दिर बनवाए हैं जिनमें अयोध्या नरेश का मन्दिर 'राजराजेश्वर', ओरछाधीश का 'कनक भवन' महाराजा बिजावर का 'काँचन भवन' और अमावाँ-रियासत राज्य का राममन्दिर, अति सुन्दर और विशाल हैं।

भूत पूर्व अयोध्याधिपति महामहोपाध्याय महाराजा सरप्रताप नारायण सिंह ने सत्तर हजार रुपया वार्षिक आय की जायदाद अपने राज्य मन्दिरों के नाम वक्फ करदी है जिस से राग भोग और उत्सवों का प्रबन्ध होता रहता है।

भारतीय नैपोलियन सम्राट समुद्र गुप्तने पाटलिपुत्र को छोड़ कर अयोध्या को अपनी राजधानी बनाया था और महाराज हर्षवर्धन स्थानेश्वर ( थाने सर ) से अपनी राजधानी जब कन्नौज लाए थे उस समय अयोध्या को अपनी राजधानी बनाने पर भी उन्होंने विचार किया था।

प्राचीन समय में तो अयोध्या सप्तपुरियों में था ही पर भगवान बुद्ध के समय में भी यह भारतवर्ष के छ प्रमुख नगरों में था। अन्य पाँच नगर निम्न लिखित थे —राजगृह, (राजगिर) श्रावस्ती ( सहेट महेट ), कोशाम्बी ( कोसम), काशी (बनारस) और चम्पा ( नाथ नगर )।

आर्कियालाजिकल मुहकमें या अन्य विद्वानों की खोज के अनुसार ह्वानच्वांङ के समय में जो यहाँ बौद्ध धर्मशाला थी वह जगह आजकल 'सुग्रीव पर्वत' कहलाती है। इस धर्मशाला के समीप महाराज अशोक का बनवाया हुआ स्तूप उस जगह पर था जहाँ भगवान बुद्ध छ साल रहे थे। यह स्तूप निध्वंस रूप में अब 'मणिपर्वत' कहलाता है। मणि पर्वत से मिली हुई एक जगह है जो मुसलमानों के कब्जे में है और उसे वे 'अयूब' पैगम्बर का मक़बरा कहते हैं। यह वह स्थान है जहाँ पूर्व के चार बुद्ध घूमा व बैठा

करते थे। ह्वान चॉग ने जिस रूप में भगवान बुद्ध के नग और शिरा रक्खे बताये हैं वह जगह कुबेर पर्वत कहलाती है। सनातनी लोग इन शनाख्तों को स्वीकार नहीं करते।

प्रथम जैन तीर्थङ्कर श्री आदिनाथ का स्थान अयोध्या के स्वर्गद्वार मोहल्ले में इटावा तालाब से दो फर्लाङ्ग पर है। इटावा तालाब ही के समीप तीर्थङ्कर श्री अजित नाथ का भी स्थान है। चतुर्थ तीर्थङ्कर श्री अभिनन्दन नाथ का स्थान नवाबी सराय मोहल्ले में रामघाट के निकट है, पञ्चम तीर्थङ्कर श्री सुमतिनाथ का कटरा मोहल्ले में और चौदहवें तीर्थङ्कर श्री अनन्तनाथ का कटरा मोहल्ले से आधमील राघव घाट पर है।

अयोध्या से १४ मील दूर नदिग्राम या नाद गाँव है जिसे अब भदरसा कहते हैं। भदरसा भ्रातृदर्शन का अपभ्रंश है। श्रीराम के वनवास के समय भरतजी ने यहीं अपने दिन काटे थे। यहाँ भरत कुण्ड और भरत जी का मन्दिर है जहाँ साल में तीन बार मेला लगता है।

चिरौदक, जहाँ महाराज दशरथ ने पुत्र लाभ के लिये यज्ञ किया था, का वर्तमान नाम मखौड़ा है। यह स्थान अयोध्या से १० मील पर जिला बस्ती में है। चैत्र की पूर्णमासी को यहाँ मेला लगता है।

दक्षिण के कुछ लोगों का विश्वास है कि राजा रुक्माङ्गद की राजधानी सकायम पट्टन थी। ( देखिए सकायम पट्टन )

वशिष्ट आश्रम (कुल)—ऋषि वशिष्ट का आश्रम आबू पर्वत पर था इनका दूसरा प्रसिद्ध आश्रम अयोध्या से एक मील उत्तर में था, और तीसरा आश्रम आसाम में कामरूप के समीप सन्ध्याचल पर्वत पर था।

**२४ अरौरा**—( देखिए खुपुआडीह )

**२६ अलवर**—( राजपूताने में एक राज्य )

इस स्थान का प्राचीन नाम शाल्व नगर है। यह मार्तिकावत अथवा शाल्वदेश के राजा शाल्व की राजधानी था जिन्हें श्रीकृष्ण ने मारा था।

सत्यवान ( जिन्हें सावित्री ने वरा था ) के पिता भी इसी शाल्व देश के राजा थे।

शाल्व राज्य में अलवर राज्य के अतिरिक्त जयपुर व जोधपुर रियासतों के भी कुछ भाग शामिल थे।

अलवर राज्य, राजा विराट के मत्स्यदेश का भाग था जिसके यहाँ पाण्डव बनवास के अन्तिम वर्ष में भेष बदल कर रहे थे। उन दिनों मत्स्य देश की राजधानी विराट थी जो जयपुर से ४१ मील उत्तर में है। मत्स्यदेश में अलवर और जयपुर के राज्य शामिल थे। अब भी अलवर में एक स्थान 'मछेरी' है जो मत्स्य से बना है।

२७ अलीगढ़ —(*संयुक्त प्रान्त के एक ज़िले का सदर स्थान*)
इस का प्राचीन नाम कोइल है।
बलराम जी ने यहाँ कोल दैत्य को मारा था।

२८ अनघपुरी—( देखिए अयोध्या )
२९ अवानी —( मैसूर राज्य में एक गाँव )

प्रसिद्ध है कि श्रीरामचन्द्र जी लङ्का जाते समय इस स्थान पर ठहरे थे और इस गाँव की पहाड़ी पर महर्षि वाल्मीकि कुछ दिनों तक रहे थे।
यहाँ रामचन्द्र जी का मंदिर है और प्रतिवर्ष बड़ा मेला लगता है।

३० अविचल कूट—(देखिये सम्मेद शिखर)
३१ अश्वक्रान्ता पर्वत—(देखिये गोहाटी)
३२ अष्ट तीर्थ—(देखिये नासिक)
३३ अष्टावक्र आश्रम (कुल)—(देखिये श्रीनगर)
३४ अष्टावक्र पर्वत—(*देखिये श्रीनगर*)
३५ असरूर—(पाकिस्तानी पंजाब के गुजरानवाला जिले में एक स्थान)

यहाँ भगवान बुद्ध ने विश्राम किया था। विश्राम के स्थान पर दो मील दूर 'सालार' नाम का टीला है।

६३३ ई० में ह्यान चांग की यात्रा के समय यह स्थान पंजाब की राजधानी था।

ह्यान चांग ने इस नगर को अपनी यात्रा में देखा था। उस समय महाराज अशोक का बनवाया हुआ २०० फीट ऊँचा स्तूप यहाँ से दो मील पर विद्यमान था। उस स्थान पर भगवान बुद्ध ठहरे थे और महाराज अशोक ने उसी की स्मृति में यह स्तूप बनवाया था। यहाँ के लोग कहते हैं कि इस जगह का पुराना नाम 'ऊदा नगरी' या 'ऊदम नगर' था।

यहाँ के उजड़े हुए खण्डहर तीन मील के घेरे में हैं। और कहीं कहीं तीस गज ऊँचे हैं। महल और कोट के ढेर एक मील के घेरे में हैं। इस समय यहाँ एक छोटा सा गाँव आबाद है। खण्डहर से दो मील उत्तर 'गोतार' नाम का टीला है। यहीं भगवान बुद्ध के ठहरने की जगह वाला महाराजा अशोक का २०० फीट ऊँचा स्तूप था।

(३६ असीरगढ़—(मध्यप्रान्त के नीमार जिले में एक स्थान)

कहा जाता है कि यह ऋषि अश्वत्थामा का स्थान था और इसका प्राचीन नाम 'अश्वत्थामा गिरि' था।)

[अश्वत्थामा महाभारत के सुप्रसिद्ध गुरु द्रोणाचार्य के पुत्र थे। इन्होंने अंत तक दुर्योधन का साथ दिया और दुर्योधन की इच्छा पूरी की। अश्वत्थामा ने मृत्युशय्या पर पड़े हुये दुर्योधन के परामर्श से सोते हुए पाँचों पाण्डवों का सिर काट लेने का प्रयत्न किया था। अँधेरे में धोखे से ये द्रोपदी के पाँचों पुत्रों का सिर काट ले गये। पाण्डवों ने इनको मस्तक कोर कर इन्हें छोड़ दिया। कहा जाता है कि यह अमर हैं और उसी दशा में भ्रमण करते फिरते हैं।]

३७ अहमदाबाद—(गुजरात में एक जिले का सदर स्थान)

यहाँ दादू जी का जन्म हुआ था।

पुराण वर्णित खड्गधारेश्वर और नीलकण्ठ शिवलिंग यहाँ हैं।

प्रा० क०—(पद्मपुराण, उत्तर खण्ड १६७ वाँ अध्याय) साभ्रमती के तीर पर खड्ग तीर्थ में स्नान करके खड्गधारेश्वर शिव के दर्शन करने से मनुष्य को स्वर्गलोक मिलता है।

(१७२ वाँ अध्याय) साभ्रमती के तीर पर नीलकण्ठ तीर्थ में नीलकण्ठ महादेव हैं।

अहमदाबाद को अनहिल पत्तन के सोलंकी वंश के राजा कर्णदेव ने बसाया था इससे इसका पुराना नाम कर्णावती था। श्री नगर और राजनगर भी इसे कहते हैं।

करीब ४०० वर्ष हुए संवत् १६०१ वि० में अहमदाबाद में नागर ब्राह्मण के घर दादू जी का जन्म हुआ था। १२ वर्ष की अवस्था में संन्यास ग्रहण कर राजपूताने में आकर आमेर, सिकरी, करौली आदि नगरों में विचरे। उनका यशप्रताप फैला। साँभर के निकट निरैना में उनका देहान्त हुआ यहीं दादूपंथ का प्रधान स्थान है।]

च० द०—अहमदाबाद शहर के पश्चिम साबरमती नदी बहती है। साबरमती के किनारे नीलकंठ महादेव, सद्गभारेश्वर और भीमनाथ महादेव के प्रसिद्ध शिवालय हैं।

यह शहर एक समय ३६० महल्लों में विभक्त था। फरिश्ता ने लिखा है कि ये ३६० महल्ले अलग अलग दीवारों से घिरे थे। कहा जाता है कि एक समय यहाँ की आबादी ६ लाख थी। इस समय भी अहमदाबाद व्यापार का एक बड़ा केन्द्र है।

दलपति और वशीधर यहाँ दो अच्छे हिन्दी के कवि हो गये हैं जिन्होंने १७६२ वि० में 'लाकर' ग्रन्थ बनाया था।

३८ अहरौली—(देखिए नयम्बर)

३९ अहल्या कुण्ड तीर्थ—(बिहार प्रांत के दरभंगा जिले का एक स्थान)

गौतम ऋषि का यहाँ आश्रम था। यहीं इन्द्र ने अहल्या का सतीत्व नष्ट किया था।

रामचन्द्र जी ने अहल्या को यहाँ मुक्त किया था।

राजर्षि जनक ने यहाँ एक कुँवा बनवाया था।

प्रा० क०—(वाल्मीकीय रामायण बालकांड, ४८वाँ अध्याय) रामचन्द्र जी ने मिथिला के उपवन में प्राचीन और निर्जन स्थान को देखा और महर्षि विश्वामित्र से पूछा कि यह आश्रम किसका है। मुनि ने उत्तर दिया कि यहाँ पर गौतम ऋषि अपनी स्त्री अहल्या के साथ रहते थे। किसी समय इन्द्र ने गौतम का वेष धारण करके मुनि की अनुपस्थिति में आश्रम में आकर अहल्या से प्रसंग करने की इच्छा प्रकट की। अहल्या ने इन्द्र को पहचानते हुए भी उसका मनोरथ पूर्ण किया। ज्यों ही इन्द्र पर्णकुटी से बाहर निकला त्यों ही गौतम जी आ गये और इन्द्र और अहल्या दोनों को शाप दिया। अहल्या को उन्होंने यह शाप दिया कि "तू अनेकों वर्ष इसी स्थान पर वास करेगी, तेरा भोजन वायु होगा और तू किसी को दिखाई नहीं देगी। जब दशरथ के पुत्र राम इस वन में आवेंगे तू उनका सत्कार करके इस शाप से मुक्त होगी और अपने पूर्व शरीर को प्राप्त कर मेरे पास आवेगी।" रामचन्द्र ने विश्वामित्र का वचन सुन उस आश्रम में प्रवेश किया और इस अहल्या को जिसे कोई नहीं देख सकता था देखा। राम का दर्शन पाकर अहल्या के पाप नष्ट हो गये और वह प्रत्यक्ष दिखाई पड़ी। राम और लक्ष्मण ने प्रसन्नता

से उसके चरणों का स्पर्श किया। अहल्या ने भी गौतम के वचनों का स्मरण कर राम के चरणों का स्पर्श किया और उनकी पूजा की। इसके पश्चात् अहल्या शुद्ध होकर गौतम महर्षि से जा मिली।

( महाभारत वन-पर्व ८४ वाँ अध्याय ) गौतम के आश्रम में जाने और अहल्याकुण्ड में स्नान करने से पुरुष शोभा को प्राप्त होता है और उसे मोक्ष मिलता है। वहाँ के तीनों लोकों में विख्यात तडाग में स्नान करने से अश्वमेध का फल होता है, और राजर्षि जनक के कुँए में स्नान करने से विष्णु लोक प्राप्त होता है।

[महर्षि गौतम सप्तर्षियों में से एक ऋषि हैं। कहीं कहीं पुराणों में ऐसी कथा मिलती है कि महर्षि अन्धतमा जन्म के अन्धे थे। उनपर स्वर्ग की काम धेनु प्रसन्न हो गई और उस गौ ने इनका तम हर लिया। ये देखने लगे और तब से इनका नाम गौतम पड़ गया। ब्रह्मा की मानसी सृष्टि से उनकी उत्पत्ति है। पुराणान्तरों में ऐसी कथा आती है कि सर्व प्रथम ब्रह्मा की इच्छा एक स्त्री बनाने की हुई। उन्होंने सब जगह से सौन्दर्य इकट्ठा करके एक अभूतपूर्व स्त्री बनाई। उसके नख से शिख तक सौन्दर्य ही सौन्दर्य भरा था। 'हल' कहते हैं पापको और जिसमें पाप न हो उसका नाम 'अहल्या' है। अतः उस स्त्री का नाम ब्रह्मा ने अहल्या रक्खा। यह पृथिवी पर सर्व प्रथम इतनी सुन्दर मानुषी स्त्री हुई है। सब देवता और ऋषि उन्हें पाना चाहते थे पर ब्रह्मा उन्हें गौतम ऋषि के यहां धरोहर रख आये। कुछ काल पश्चात् गौतम ऋषि ने ब्रह्मा से कहा कि अपनी धरोहर अब ले जायें। उनके त्याग से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने अहल्या को उन्हीं से ब्याह दिया।]

व० द०—अहल्या कुंड तीर्थ में एक वृक्ष के नीचे अहल्या का चौरा है। जिसके पास दरभंगा के महाराजा का बनवाया हुआ रामलक्ष्मण का सुन्दर मंदिर है। अहल्या कुंड तीर्थ के ३ मील पश्चिम गौतम कुंड बराबर है जिसके चारों ओर घाट बना है।

४० आलम —( देखिए ताड़कपुर व कुण्डनपुर )

## आ

/४१ आगरा –( संयुक्त प्रांत आगरा व अवध में एक जिले का सदर स्थान )

यह स्थान राधा स्वामियों का केन्द्र स्थान है।

लाला शिवदयाल सिंह ने आगरा में जन्म लिया था। और सन् १८६१ ई० में बसन्त पंचमी के दिन 'राधा स्वामी सतसङ्ग' की स्थापना की थी।

आगरा ही में 'स्वामी जी महाराज' लाला शिवदयाल सिंह ने शरीर छोड़ा था।

राधा स्वामियों के द्वितीय गुरु 'हुजूर महाराज' राय बहादुर लाला सालिग राम ने भी आगरा में जन्म लिया था और आगरा ही में शरीर छोड़ा था।

राधा स्वामियों के पाँचवें गुरु 'साहेब जी महाराज' सर आनन्द स्वरूप ने २० जनवरी सन् १९१५ ई० को आगरा में राधास्वामियों के 'दयाल बाग' को बसाया।

**प्रा० का०**—आगरा का प्राचीन नाम अग्र वन मिलता है जो ब्रज मण्डल के वनों में से एक था। ब्रज मण्डल की परिक्रमा यहाँ से प्रारम्भ होने के कारण इसका नाम अग्रवन था। बहलोल लोदी ने आगरा का नया शहर बसाया और १५ वीं शताब्दी के अंत में उसके लड़के सिकन्दर लोदी ने दिल्ली से हटाकर आगरा में राजधानी स्थापित की थी।

[लाला शिवदयाल सिंह साहेब का जन्म आगरा के पन्नी गली मुहल्ले में २४ अगस्त १८१८ ई० (भाद्रकृष्ण अष्टमी १८७५ वि०) को खत्रीकुल में हुआ था। आपके पिता लाला दिलवाली सिंह नानकपन्थी थे। १५ वर्ष की अवस्था में लाला शिवदयाल जी सुरत शब्द योग का अभ्यास करते थे और दो दो तीन तीन दिन तक कोठरी से बाहर नहीं आते थे। आप गृहस्थाश्रम में थे और आपकी धर्मपत्नी को आपके अनुयायी 'राधा जी' कहकर सम्बोधित करते थे। आपके सन्तान नहीं थी। जनवरी १८६१ ई० में बसन्त पंचमी के दिन आपने राधास्वामी सतसंग की स्थापना की। अन्य पूर्व सन्तों की भाँति स्वामी जी 'सत्यनाम' का ही उपदेश देते थे। राधास्वामी नाम को आपने अपने पूरे गुरुमुख हुजूर साहेब (रायबहादुर सालिगराम) द्वारा प्रकट कराया। स्वामी जी जन्म भर आगरा ही में रहे और ८ जून १८७८ ई० को वहीं शरीर छोड़ा।]

[रायबहादुर लाला सालिगराम का जन्म माथुर कायस्थ कुल में १४ मार्च १८२६ ई० को आगरा के पीपल मंडी मुहल्ले में हुआ था। आपके बाबत कहा जाता है कि आपने १८ मास गर्भवास किया था। आपको

अंग्रेजी की शिक्षा उस समय की सीनियर श्रेणी तक हुई थी जो आजकल के बी० ए० के बराबर थी। शिक्षा प्राप्त करके आपने डाक विभाग में काम किया और पोस्ट मास्टर जनरल के पद तक पहुँचे। श्री स्वामी जी महाराज के बाद लाला सालिगराम जी ८ जून १८७८ ई० को राधा स्वामियों के गुरु हुए और 'श्री हजूर महाराज' कहलाते थे। आपके समय में इस मत के अनुयाइयों की सख्या बहुत बढ़ गई। लगभग ७० साल की अवस्था में ६ दिसम्बर १८६८ ई० को आपने आगरा में नश्वर शरीर का त्याग किया।]

व० द०—मुगल साम्राज्य के समय आगरा भारतवर्ष की राजधानी रह चुका है। और यहाँ का ताजमहल जो शाहजहाँ बादशाह ने अपनी बेगम मुम्ताज़ महल की कब्र पर बनवाया है जगत प्रसिद्ध है।

आगरा राधास्वामियों की छावनी का मुख्य स्थान है और उनकी दयालबाग छावनी भारतवर्ष में अपने ढंग की एक अद्वितीय चीज है।

४२ आदि बद्री—(देखिये ऊर्जम गाँव)

४३ आनन्दपुर—(उत्तरी गुजरात का एक नगर)

कल्पसूत्र के लेखक भद्रबाहु ने ४११ ई० में अपना यह ग्रन्थ आनन्दपुर में बनाया था। आनन्दपुर में ही महादेव के अचलेश्वर नामक लिङ्ग की सर्व प्रथम स्थापना हुई थी।

इसका आधुनिक नाम नगर या चमत्कार नगर है, जहाँ नागर ब्राह्मणों की प्राचीन बस्ती थी। नागर ब्राह्मणों से ही नागरी की उत्पत्ति हुई।

४४ आनन्दपुर—(पजाब प्रांत में होशियारपुर जिले में एक सिक्ख तीर्थ स्थान)

सिक्खों के चार तख्तों में से एक तख्त—'श्री आनन्द साहिबी' यहा है।

गुरु गोविन्द सिंह जी ने इस स्थान को अपना मुख्य स्थान बनाया था। यहाँ से १ मील पर केसगढ है जहाँ उन्होंने यज्ञ किया था और 'पाँच प्यारे' बनाये थे।

४५ आनागन्दी—(हैदराबाद राज्य में मद्रास प्रांत के हास पेट ताल्लुके की सीमा के समीप एक बस्ती)

यह सुग्रीव की राजधानी 'किष्किन्धा' है। किष्किन्धा नाम का छोटा गाँव अब भी यहाँ स्थित है, यहीं रामचन्द्र जी ने बालि को मारा था।

इस स्थान से २ मील दूर पर माल्यवान पहाड़ी है जिसके एक भाग का नाम 'प्रवर्षण गिरि' है। इसी पर श्री रामचन्द्र और लक्ष्मण ने सीताहरण

के पश्चात् सुग्रीव के यहाँ वर्षा बिताई थी। आनागन्दी से डेढ़ मील की दूरी पर ऋष्य मूक पहाड़ी है जहाँ श्री रामचन्द्र जी से और हनुमान जी तथा सुग्रीव से प्रथम भेंट हुई थी।

ऋष्यमूक पहाड़ी का चक्कर लगा कर पहाड़ियों के बीच में तुङ्गभद्रा नदी बहती है। वहाँ उसकी चौड़ाई लगभग १०० गज़ है। यह चक्र तीर्थ है।

आनागन्दी से एक मील की दूरी पर पम्पा सर है जहाँ रामचन्द्र जी गये थे।

पम्पा सर के पास महर्षि मतङ्ग अपने शिष्यों के सहित रहते थे।

पम्पासर से पश्चिम लगभग २० कोस शवरी का जन्मस्थान 'सुरोवनम्' नामक बस्ती है। राजा युधिष्ठिर के भ्राता सहदेव ने किष्किन्धा के निकट बन्दर नाथ मयन्द और द्विविद से युद्ध किया था।

प्रा० च०—(महाभारत वन पर्व, २७६ वाँ व २८० वाँ अध्याय) कबंध राक्षस ने रामचन्द्र को बतलाया कि लंका का राजा रावण सीता को ले गया है। उसके कहने से रामचन्द्र जी ऋष्य मूक पहाड़ी पर स्थित पंपासर पहुँचे जहा पर बालि का भाई सुग्रीव अपने चार मन्त्रियों के सहित निवास करता था। राम ने सुग्रीव के साथ मित्रता की। तब सुग्रीव ने राम को सीता के गिराए हुए वस्त्रों को दिखलाया। राम ने सुग्रीव का अभिषेक अपने हाथ से किया और वालि को मारने की प्रतिज्ञा की। सुग्रीव ने भी सीता के लाने की प्रतिज्ञा की। फिर वे लोग युद्ध की इच्छा करके किष्किन्धा गये। बालि तारा के वचनों का निरादर करके माल्यवान पर्वत के नीचे खड़ा हुआ। वालि और सुग्रीव युद्ध करने लगे। बालि और सुग्रीव दोनों के रूप में भेद दिखाई देनेके लिये हनुमान जी ने सुग्रीव को एक माला पहिना दी। जब रामने सुग्रीव के गले में चिन्ह देखा तब बालि को अपने बाणों से मार डाला। उसकी मृत्यु के उपरान्त सुग्रीव ने तारा के समेत सब राज्य प्राप्त किया। राम माल्यवान पर्वत के ऊपर वर्षा ऋतु भर रहे।

(सभा पर्व ३१ वा अध्याय) राजा युधिष्ठिर के भ्राता सहदेव ने दक्षिण देश में किष्किधा नामक कन्दरे के निकट जाकर बन्दर नाथ मयन्द और द्विविद से युद्ध किया।

( वाल्मीकीय रामायण-अरण्यकांड, ७३वाँ सर्ग ) कबंध राक्षस के कहने से श्रीरामचन्द्र जी पम्पा सरोवर पर पहुँचे। उसने कहा था कि पम्पा सरोवर के

समीप महर्षि मतङ्ग अपने शिष्यों के सहित रहते थे। ऋषि लोग तो चले गये; परन्तु उनकी सेवा करनेवाली तपस्विनी शबरी अब तक उस आश्रम में देख पड़ती है। वह तुमको देख कर स्वर्ग लोक को चला जायेगी। तुम पम्पा के पश्चिम तट पर उस गुप्त स्थान को जो 'मतङ्ग वन' करके प्रसिद्ध है, देखना।

( ७४वाँ सर्ग ) राम और लक्ष्मण ने कबन्ध के वचन के अनुसार वन में चलते चलते एक पर्वत के निकट निवास किया और वहाँ से चल कर पम्पा के पश्चिम शबरी के रमणीय स्थान को देखा. सिद्धा शबरी रामचन्द्र और लक्ष्मण को देख, उठकर उनके चरणों पर गिर पड़ी। इसके पश्चात् उसने दोनों भाइयों का आतिथ्य सत्कार किया।

( ७५वाँ सर्ग ) रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले कि मैंने मुनियों के सप्तसागर तीर्थ में पितृ तर्पण किया, अब हम लोग पम्पा सरोवर के तीर पर चलें जहाँ ऋष्यमूक पर्वत भी पास देख पड़ेगा जिस पर सुग्रीव निवास करता है। ऐसा कह दोनों भाई पम्पा के तीर पर आये।

( किष्किन्धा कांड १-५ सर्ग ) रामचन्द्र लक्ष्मण के सहित आगे चले। सुग्रीव ने जो ऋष्यमूक पर निवास करता था इन दोनों को देख भययुक्त हो हनुमान को भेजा। हनुमान ऋष्यमूक पर्वत से कूदकर राम लक्ष्मण के पास आये और अनेक बातें करके दोनों भाइयों को पीठ पर चढ़ा कर सुग्रीव के पास पहुँचे। वहाँ रामचन्द्र ने सुग्रीव का हाथ पकड़ा। दोनों मित्रों ने अग्नि की प्रदक्षिणा करके प्रतिज्ञा की।

(११वाँ सर्ग) सुग्रीव कहने लगा कि हे रामचन्द्र! दुन्दुभी असुर भैंसे का रूप धारण कर किष्किन्धा के द्वार पर आकर गरजने लगा। वालि ने उसे मार कर एक योजन पर मतङ्ग ऋषि के आश्रम में फेंक दिया। मुनीश्वर ने अपनी तपबल से वानर का कर्म जानकर शाप दिया कि जिसने इस मृतक को मेरे आश्रम में फेंका है वह यदि अब से इस आश्रम में प्रवेश करेगा तो मर जायगा। इस शाप से वालि ऋष्यमूक पर्वत की ओर आँख उठा कर देख भी नहीं सकता है। देखिए दुन्दुभी की हड्डियों का समूह पर्वत ही के देख पड़ता है और ये सात साखू के वृक्ष हैं इनमें से एक एक को वालि अपने पराक्रम से दिखाकर बिना पत्ते का कर सकता है। आप उसको कैसे मार सकेंगे! रामचन्द्र ने अँगूठे को तोड़ पैर के अँगूठे से दुन्दुभी के सूखे शरीर को उठाकर १० योजन दूर फेंक दिया ( १२वाँ सर्ग ) और एक बाण साखू के वृक्ष की तरफ

चलाया। उन बाण वालों वृक्षों को और पर्वत को फोड़ कर रामचन्द्र के तर्कश में आ घुसा। तब सुग्रीव बोले कि हे प्रभो! तुम बाणों से सम्पूर्ण देवताओं को मार सकते हो, वालि क्या पदार्थ है।

(२७वाँ सर्ग) राम और लक्ष्मण ने प्रस्रवण गिरि पर आकर उसकी एक बड़ी लम्बी चौड़ी कन्दरा को देख वहाँ निवास किया। रामचन्द्र लक्ष्मण से बोले कि देखो इस गुहा के अग्रभाग में यह पूर्ववाहिनी नदी शोभा दे रही है। यहाँ से किष्किंधा दूर भी नहीं है। देखो यहाँ से गीत और बाजा का घोष और गर्जते हुए वानरों का शब्द सुन पड़ता है। (२८वाँ सर्ग) उसके उपरान्त माल्यवान पर्वत पर निवास करते हुए रामचन्द्र ने लक्ष्मण से वर्षा ऋतु की शोभा वर्णन की।

(सुन्दरकांड ६५ वाँ सर्ग) दक्षिण जाने वाले हनुमान आदि वानरों ने प्रस्रवण पर्वत पर आकर सीता का समाचार रामचन्द्र से कहा और सीता की दी हुई मणि उनको दी।

(उत्तरकांड ४० ४१वाँ सर्ग) अगस्त्य जी श्रीरामचन्द्र जी से हनुमान के जन्म की कथा कहने लगे कि हे रघुनन्दन! सुमेरु पर्वत पर वानरों का राजा केशरी रहता था उसकी स्त्री का नाम अञ्जना था। वायु ने अञ्जना से हनुमान को उत्पन्न किया।

(वामनपुराण—१२वाँ अध्याय) सरोवरों में पम्पासर श्रेष्ठ है।

[वालि वानरों का राजा था। एक बार एक राक्षस वालि की राजधानी किष्किंधा में आकर गरजने लगा। वालि ने उसका पीछा किया और उसके पीछे पीछे एक बिल में घुस गया। उसके साल भर तक न लौटने पर उसके छोटे भाई सुग्रीव ने समझा कि वह मर गया और उस बिल का मुँह बन्द कर दिया। वानरों ने सुग्रीव को राजा बना लिया। वालि मरा नहीं था, लौट आया। सुग्रीव को राजा बना देख उसने उसे निकाल दिया और वह श्री मतङ्ग ऋषि के आश्रम में प्राण लेकर भाग गये। हनुमान इनके मंत्री थे और इन्हीं के साथ रहते थे। महाराज रामचन्द्र व सीता वियोग में घूमते हुए इनके आश्रम में आने पर इन्होंने रामचन्द्र जी को सहायता देने का वचन दिया और उन्होंने वालि को मार कर इन्हें वानरों का राजा बना दिया। सुग्रीव की सेना की सहायता से राम ने रावण को मार कर लङ्का विजय की थी। रामचन्द्र जी के साथ सुग्रीव अयोध्या भी आये थे।]

[हनुमान जी केशरी की पत्नी अंजना के गर्भ से पवन के द्वारा पैदा हुए थे। पैदा होने के समय ही यह बड़े बली थे। बाल्य काल ही में सूर्य को कोई लाल फल समझकर यह उसे खाने को लपके पर इन्द्र का वज्र लगने से नीचे आ गिरे। वज्र के लगने से इनकी हनु (ठोड़ी) टेढ़ी हो गई, इसलिए इनका नाम हनुमान पड़ा। सीता जी की खबर लगाकर यही लाये थे। रामचन्द्रजी की भक्ति किसी में इनसे बढ़कर न हुई है, न है। कहा जाता है कि यह सात चिरजीवियों में से हैं और अब भी पृथिवी पर विराजमान हैं।]

['शबर' भील जाति को कहते हैं। शबरी के पिता भीलों के राजा थे। भीलों में बलिदान का बहुत प्रचार है। शबरी के विवाह के दिन निकट आये सैकड़ों बकरे भैंसे बलिदान के लिये इकट्ठे किये गये। शबरी ने पूछा 'यह सब जानवर क्यों इकट्ठे किये गये हैं?' उत्तर मिला 'तुम्हारे विवाह के उपलक्ष में इनका बलिदान होगा।' भक्तिमती बालिका का सिर चकराने लगा। यह कैसा ब्याह जिसमें इतने प्राणियों का वध हो। इस विवाह से तो ब्याह न करना ही अच्छा। ऐसा सोचकर वह रात्रि में उठकर जगल में चली गई, और फिर लौट कर घर नहीं आई।

ऋषियों के आश्रमों में शबरी झाड़ बुहारी देती रहती थी। किसी से सुन लिया कि महाराज रामचन्द्र उधर से निकलेंगे। तभी से शबरी जो मीठा बेर चखती वह उनके लिए रख लेती। जब राम उधर से निकले तो शबरी ने अपने बेर दिये। राम ने खाया, पूछा 'क्या शबरी यह तोतों ने कुतर डाले हैं, बोली 'ना ना, यह तो मैंने चख चख के तुम्हारे लिए मीठे २ रखे हैं'। राम, लखन और सीता, सबने खुशी २ खा लिये।

ऋषियों के आश्रम की एक सुन्दर पुष्करिणी में कीड़े पड़ गये थे। उन्होंने रामचन्द्र जी से कहा। ऋषि लोग शबरी को जल नहीं स्पर्श करने देते थे। रामचन्द्र जी ने कहा कि जब शबरी के पैर इसमें पड़ेंगे तब उसके स्पर्श से कीड़े दूर होंगे। ऋषियों को मानना पड़ा, और पुष्करिणी साफ हो गई। शबरी की भक्ति सराहनीय थी।]

[मतङ्ग ऋषि उन आर्य महात्माओं में से एक थे जो आरम्भ में दक्षिण में आर्यसंस्कृति फैलाने का गौरव रखते हैं। इनका आश्रम बालि और सुग्रीव की राजधानी किष्किंधा के समीप था।]

पृ० ८०—आनागुन्दी तुंगभद्रा नदी के बायें किनारे पर एक बस्ती है, जिसमें वहाँ के राजा का एक छोटा सा महल है। यह राजा, प्रख्यात विजय

नगर के सम्राटों के वंश में से है परन्तु अब हैदराबाद राज्य के आधीन एक जमींदार है। आनागन्दी से १ मील से अधिक पश्चिम तुंगभद्रा से उत्तर पम्पासर नामक तालाब है। पंपासर से लगभग ३० कोस पश्चिम शबरी का जन्म स्थान सुरीबनम नामक बस्ती है। पम्पासर से दक्षिण तुङ्गभद्रा लाँघ कर हौस पेट ताल्लुके के हांपी गाँव के पास विरुपाक्ष शिव का मन्दिर है। रास्ते में अजनी पहाड़ी, जो ऋष्यमूक से उत्तर है, दाहिने मिलती है, और उसके ऊपर एक मन्दिर है। हांपी विजयनगर साम्राज्य की राजधानी थी, और इमारतों के खंडहर ६ वर्गमील में फैले हुए हैं।

विरुपाक्ष के मन्दिर से लगभग ४ मील पूर्वोत्तर माल्यवान पहाड़ी है जिसके एक भाग का नाम प्रवर्षण गिरि है। विरुपाक्ष के मन्दिर से आध मील अधिक पूर्वोत्तर ऋष्यमूक पहाड़ी का चक्कर लगाकर पहाड़ियों के बीच में तुंगभद्रा नदी बहती है। वहाँ उसकी चौड़ाई लगभग १०० गज है। उसको चक्रतीर्थ कहते हैं। उसके उत्तर ऋष्यमूक पर्वत और दक्षिण बगल रामचन्द्र जी का एक छोटा मंदिर है। यात्री लोग चक्रतीर्थ में स्नान करके राम मन्दिर में मेवे और फल भेंट देते हैं। चक्रतीर्थ के उत्तर ऋष्यमूक के पूर्व सीतासरोवर नामक एक निर्मल जल का कुण्ड है। उसके पास एक छोटी प्राकृतिक गुफा, और दक्षिण काशी, सीता अभरण, राम लक्ष्मण के चरण चिन्ह इत्यादि स्थान हैं।

उडीसा प्रांत में विजयनगर के पास निम्बपुर से एक मील पूर्व एक स्थान को भी किष्किंधा कहा जाता है। एक ढेर पर घास फूस लगा है, उसे कहते हैं बालि के शरीर की राख का ढेर है।

४६ आनन्दकूट— ( देखिए सम्मेद शिखर )।

४७ आबू पर्वत— ( राजपूताने में सिरोही राज्य मे एक पर्वत )
यह पौराणिक 'अरबुद गिरि' (अरावली) का एक भाग है। "
जैन मत के पाँच परम पवित्र पहाड़ों मे से यह एक है।
आबू पर्वत पर वशिष्ठ मुनि और अन्य ऋषियों ने तप किया था।

इस तप में राक्षसों ने विघ्न डाले थे इस पर इन ऋषि मुनियों की भगवान महादेव की वन्दना करने पर, अग्नि से, परिहार, प्रमार, सोलंक तथा चौहान क्षत्रिय उत्पन्न हुए जिन्हाने राक्षसों का नाश किया। इस प्रकार अग्नि वंशी क्षत्रियों की उत्पत्ति संसार में हुई।

प्रा० क०—(महाभारत—वन पर्व, ८२वा अध्याय) तीर्थ के यात्रियों को चाहिये कि चर्मण्वती (चम्बल) नदी में स्नान करके हिमाचल के पुत्र अर्बुद गिरि जाय। यहाँ पूर्व समय में पृथिवी में छेद था। उसी जगह तीनों लोकों में विख्यात वशिष्ठ मुनि का आश्रम है।

[महर्षि वशिष्ठ की उत्पत्ति का वर्णन पुराणों में भिन्न रूप से आता है। ये कहीं ब्रह्मा के मानस पुत्र, कहीं आग्नेय पुत्र, और कहीं मित्रावरुण के पुत्र कहे जाते हैं। कल्पभेद से यह सभी बातें ठीक हो सकती हैं। ब्रह्मशक्ति के मूर्तिमान स्वरूप तपोनिधि महर्षि वशिष्ठ के चरित्र से हमारे धर्मशास्त्र और पुराण भरे पड़े हैं। यह सप्तर्षियों में से एक हैं। इनकी सहधर्मिणी अरुन्धती जी हैं जो सप्तर्षि मण्डल के पास ही अपने पतिदेव की सेवा में लगी रहती हैं। जब महर्षि वशिष्ठ के पिता ब्रह्मा ने इन्हें सृष्टि करने और भूमण्डल में आकर सूर्यवंशी राजाओं की पौरोहित्य करने की आज्ञा दी तो इनको हिचकिचाहट थी पर समझाने पर आना पड़ा। सूर्यवंशी राजाओं को नीति शिक्षा सदा महर्षि वशिष्ठ से मिली थी और वेद वेदाङ्ग लेकर उन्होंने इस कर्तव्य का पालन किया। वही आत्मा बार बार अवतरित होती थी इससे वशिष्ठ नाम ही से उसे पुराणों में पुकारा गया है। महाराज दशरथ और श्री रामचन्द्र के भी यही पुरोहित थे। महर्षि विश्वामित्र में और इनमें कई बार विवाद हो गया पर विश्वामित्र जी को ही हर बार अपनी भूल माननी पड़ी। महर्षि वशिष्ठ मानो शांति की साक्षात् मूर्ति थे।]

यू० द०—अब तक (भारत स्वतन्त्र होने से पूर्व) आबू पहाड़ पर गवर्नर जनरल के राजपूताने के एजेन्ट और अन्य योरपियन रहते थे। यहाँ लगभग आधी मील लम्बी 'नक्की तालाब' नामक एक सुन्दर झील है। लोग इसे 'नैनतालाब' भी कहते हैं। इस देश के लोग कहते हैं कि देवताओं ने महिषासुर के भय से भाग कर अपने छिपने के लिये अपने नख अर्थात् नाखूनों से इसे बनाया था।

आबू के सिविल स्टेशन से लगभग १ मील उत्तर पहाड़ के ऊपर देलवाड़े में आबू के प्रसिद्ध जैन मन्दिर हैं। इनमें से विमल शाह और वस्तुपाल तेजपाल के मन्दिर भारतवर्ष के सब जैन मन्दिरों से अधिक सुन्दर हैं कुछ लोगों का मत है कि ताजमहल को छोड़ कर भारतवर्ष में दूसरी ऐसी सुन्दर इमारत नहीं है।

देवलवाड़े से ५मील दूर अचलेश्वर महादेव का सुन्दर मन्दिर है जिसे चित्तौड़ के सुप्रसिद्ध राणा सांगा ने स्थापित किया था।

४८ आरा—( विहार प्रांत में एक जिले का सादर स्थान )

इसका प्राचीन नाम 'एक चक्र' था। 'चक्र पुर' भी कहते थे। आराम नगर भी इस स्थान का एक नाम था।

वनवास के समय पाण्डव यहाँ रहे थे।

भीम ने वकासुर का वध यहीं किया था।

भगवान के बुद्ध के गुरु आलाड़ कलाम यहीं के निवासी थे।

बौद्धग्रन्थों मे कहा है कि भगवान बुद्ध ने यहाँ मर्दुम खोर दैत्यों से मानुष भक्षण करना छुड़ाया था।

भगवान बुद्ध के समय में यह स्थान भारतवर्ष के प्रमुख नगरों मे से था।

प्रा० क०—( महाभारत ) महर्षि व्यास ने पाण्डवों का एक चक्र मे रहने का आदेश किया और वे जगल छोड़कर वहाँ एक ब्राह्मण के घर में निवास करने लगे। एक दिन उस ब्राह्मण के घर मे रोदन सुनकर कुन्ती ने समाचार पूँछा तो विदित हुआ कि वकासुर जो निकट के ग्राम में रहता था आदमियों को खाया करता था और उस दिन उस ब्राह्मण के जाने की बारी थी। ब्राह्मण जाने को तैयार था पर अपने भाग्य को रोता था। इस पर उसकी पत्नी व पुत्री उसके बदले जाने को तैयार थीं पर वह उन्हें जाने न देता था। ब्राह्मण के एक बहुत छोटा सा बेटा था जो ठीक से बोल भी न पाता था उसने कहा 'पिता आप न रोयें, माता आप न रोयें, मुझे वकासुर के पास भेज दें'। कुन्ती ने जब यह देखा तो उन सब को चुप किया और उनके बदले अपने एक पुत्र को भेजने का वचन दिया। ब्राह्मण ने इसे अस्वीकार किया पर कुन्ती ने कहा कि वह उनके पुत्र भीमसेन से पार न पायेगा और भीमसेन वकासुर के लिए भेजे गये। वे जगल मे जाकर बैठ गये। वकासुर भूख से व्याकुल लाल २ आँखे निकाले आया और भीमसेन के जो उसकी तरफ पीठ किये बैठे थे, दो घूसे जमाये। भीमसेन हँस कर उठ खड़े हुए। बकासुर ने जड़ से एक वृक्ष उखाड़ कर उन पर धावा किया। भीमसेन ने भी एक वृक्ष उखाड़ कर उसे मारना शुरू किया। सारे जगल के वृक्ष इस प्रकार उखड़ जाने पर दोनों में मल्ल युद्ध होने लगा। जब दैत्य थक गया तब भीमसेन ने उसके पाँव पकड़ कर चीर डाले और खींच कर एक चक्र नगरी के बाहर डाल दिया।

कुंती व अन्य पाण्डवों को जब यह समाचार विदित हुआ तो पहिचाने जाने के भय से सब वहाँ से चले गये। उन दिनों वह अज्ञातवास कर रहे थे। वहा के निवासी बकासुर की लाश देखकर फूले न समाये और कुन्ती के पैर पर पड़ने को दौड़े आये पर यह देखकर कि यह लोग वहाँ से प्रस्थान कर चुके हैं, महा दुखी हुए।

ह्वानचांग ने भी इस स्थान की यात्रा की थी और लिखा है कि महाराज अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप यहा उपस्थित था जो उस जगह पर बनाया गया था जहाँ भगवान बुद्ध ने उपदेश देकर मानुषभक्षी दैत्यों से मानुष भक्षण करना छुड़वाया था।

व० द०—इस समय आरा बिहार प्रांत के एक जिले का सदर स्थान है। वहाँ के लोग कहते हैं कि जिस दिन बकासुर मारा गया था वह दिन मंगल अर्थात् 'अरा' का था। इससे वहाँ का नाम आरा पड़ गया।*

४९ आलन्दी—( बम्बई प्रांत के पूना जिला में एक स्थान )
यह संत ज्ञानेश्वर महाराज के जन्म का स्थान है।

[श्री विट्ठल पंत के द्वितीय पुत्र श्री ज्ञानेश्वर का जन्म सं० १३३२ वि० में हुआ था। विट्ठलपंत ने सन्यास ले लिया था पर अपने गुरु के आदेशानुसार पुनः गृहस्थाश्रम में लौट आये थे और तत्पश्चात संतान हुई थी इससे ग्राम वालों ने उनकी संतान को संन्यासी की संतान कहकर यज्ञोपवीत करने से मना कर दिया था। श्रीविट्ठल पंत और उनकी पत्नी रुक्मिणी बाई ने इसका प्रायश्चित नदी में कूदकर प्राण देकर कर दिया पर कुटिल समाज का जी ठंढा न हुआ, उस समय ज्ञानेश्वर जी केवल ५ साल के थे। आलन्दी के पंडितों ने इन बालकों को पैठण (आलन्दी से १४० मील) जाने की सलाह दी और कहा कि यदि पैठण के विद्वान उनके उपनयन की व्यवस्था दे देंगे तो आलन्दी वाले भी उसे मान लेंगे। यह लोग बेचारे पैदल चल कर किसी तरह पैठण ( पटैन ) पहुँचे। वहाँ ज्ञानेश्वर जी ने एक विचित्र चमत्कार दिखलाया। वाद विवाद में यह कह रहे थे कि सब की आत्मा एक है। एक पंडित ने कहा कि सब की आत्मा एक है तो यह भैंसा जो आ रहा है वह भी वेद मन्त्र उच्चारण करे।

ईश्वर की लीला कि भैंसे के मुँह से वेद मन्त्र उच्चारण होने लगे। व्यवस्था क्या, सब इनके चरणों पर गिर पड़े। इसके पीछे कुछ काल तक यह पैठन ही

में रहकर भगवद्भक्ति का मार्ग दिखाते रहे। बाद को यहाँ से चले और नेवासे (ज़िला अहमदनगर) में कुछ दिन रहे। यहीं ज्ञानेश्वर महाराज ने गीता का 'ज्ञानेश्वरी भाष्य' कहा। उस समय इनकी आयु १५ साल की थी। गीता पर अनेक भाष्य हैं। पर ऐसा सर्वांग सुन्दर और अपने ढंग का निराला दूसरा भाष्य नहीं है।

नेवासे से ज्ञानेश्वर जी आलन्दी आये और अब बड़े प्रेम और आदर के साथ वहाँ उनका स्वागत हुआ। बाद को यह तीर्थ यात्रा को निकले और सबसे पहले पण्ढर पुर और फिर काशी आदि तीर्थों को गये। इनका यश सर्वत्र फैल गया और चाँग देव जैसे महात्मा भी इनकी शरण आये। चाँग देव को अपनी तपस्या पर बड़ा अभिमान था। १४०० साल की समाधि लगा चुके बताये जाते हैं। जब मिलने को ज्ञानेश्वर जी से चले तो सिंह पर सवार हुए और साँप का चाबुक बनाया। उस समय ज्ञानेश्वर जी अपने भाई बहिनों के साथ एक दीवार पर बैठे थे। उन्होंने उस दीवार ही को चलने को कहा और वह चल दी। चाँग देव जी का अभिमान चूर चूर हो गया और वे ज्ञानेश्वर जी के चरणों पर गिर पड़े। कुल इक्कीस वर्ष तीन मास पाँच दिन की अवस्था में वि० सं० १३५३ में श्री ज्ञानेश्वर जी महाराज ने जीवित समाधि ले ली।

आलन्दी में इनकी समाधि का स्थान मौजूद है। और जो दीवार चल पड़ी थी वह भी टूटी फूटी अवस्था में दिखाई जाती है। यह स्थान पूना से १३ मील उत्तर में है।]

## इ

४० इन्द्र पाथ ( भारतवर्ष की राजधानी दिल्ली का एक स्थान )

इन्द्रपाथ इन्द्र प्रस्थ का अपभ्रंश है। इन्द्र प्रस्थ को धर्मराज, युधिष्ठिर ने बसाकर अपनी राजधानी बनाया था और यहाँ राजसूय यज्ञ किया था।

कुरुक्षेत्र के युद्ध के उपरान्त युधिष्ठिर के हस्तिनापुर राजधानी बना लेने पर अर्जुन ने इन्द्रप्रस्थ का राज्य कृष्ण के प्रपौत्र वज्र को प्रदान किया था।

इन्द्रप्रस्थ को खाण्डव प्रस्थ भी कहते थे, जो महाभारत के खाण्डव वन का एक भाग था।

पद्म पुराण का निगमोद्बोध तीर्थ इन्द्रप्रस्थ में ही है। उसे आज कल निगबोद घाट कहते हैं।

भारत के अन्तिम हिंदू सम्राट महाराज पृथ्वीराज की भी इसी के समीप पुरानी दिल्ली में राजधानी थी।

आठवें सिक्ख गुरु हरि कृष्ण साहिब ने यहाँ शरीर छोड़ा था।

इन्द्र प्रस्थ के समीप दिल्ली म 'गुरुद्वारा शीश गंज' के स्थान पर नवें सिक्ख गुरु तेग बहादुर साहिब का सिर औरङ्गजेब ने धड़ से कटवा दिया था।

शुक सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी चरण दासजीने दिल्ली म १४ वर्ष की समाधि लगाई थी।

३० जनवरी १६४८ ई० को एक हत्यारे के हाथ से भारतवर्ष के वर्तमान काल के भाग्य विधाता महात्मा मोहन दास कर्म चन्द गान्धी ने दिल्ली में शरीर छोड़ा था।

**प्रा० क०** ( महाभारत, आदि पर्व २०८ वाँ अध्याय ) जब युधिष्ठिर आदि पाण्डव गण द्रौपदी को लेकर द्रुपदपुरी से हस्तिनापुर आये तब उनके चाचा राजा धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा कि तुम राज्य का आधा भाग लेकर अपने भाइयों सहित खाण्डवप्रस्थ में जा बसो, जिससे तुम लोगों से हमारा फिर बिगाड़ न हो। युधिष्ठिर आदि पाण्डवों ने हस्तिनापुर के राज्य का आधा भाग पाकर खाँडव प्रस्थ के पुण्य स्थान मे शाँति कार्य करवा कर एक नगर बसाया जो भाँति भाँति के सुन्दर भवनों की पंक्तियों से दीप्यमान होकर इन्द्रपुरी के समान शोभायमान होने के कारण इन्द्रप्रस्थ नाम से विख्यात हुआ। ( २२२ वा अध्याय ) कृष्ण और अर्जुन इन्द्रप्रस्थ में यमुना के तट पर आखेट का आनन्द लेने लगे।

( सभा पर्व ) महाराज युधिष्ठिर ने चारों दिशाओं के राजाओं को जीत कर इन्द्र प्रस्थ से राजसूय यज्ञ किया।

( शांति पर्व ४० वाँ अध्याय ) उसके पश्चात (कुरुक्षेत्र संग्राम मे राजा धृतराष्ट्र के दुर्योधन आदि पुत्रों के विनाश होने पर ) राजा युधिष्ठिर कौरवों की राजधानी हस्तिनापुर में राज्यसिंहासन पर बैठे और राज्य [illegible] करने लगे।

( मौसल पर्व पहिला अध्याय ) राजा युधिष्ठिर के हस्तिनापुर में राज तिलक होने के छत्तीसवें वर्ष प्रभास क्षेत्र में यदुवंशियों का नाश हो गया।

( सातवाँ अध्याय ) तब अर्जुन बचे हुए बालक वृद्ध और स्त्रियों को द्वारिका और प्रभास में ले आये। उन्हों ने उनमें से बहुतेरों को कुरुक्षेत्र में, बहुतेरों को मार्तिका वत नगर मे, और बहुतेरों को सरस्वती के तट पर बसा

कर के अनिरुद्ध के पुत्र तथा कृष्ण के प्रपौत्र वज्र को इन्द्र प्रस्थ का राज्य प्रदान किया और विभाग क्रम से बहुतेरे द्वारिकावासियों को वज्र के समीप इन्द्रप्रस्थ में स्थापित कर दिया।

(आदि ब्रह्म पुराण, देवी भागवत, और श्रीमद्भागवत में भी अर्जुन के वज्र को इन्द्र प्रस्थ का राज्य देने की कथा है।)

राजपाल ने जिसका दूसरा नाम दिल्लू था सन् ई० से लगभग ५० वर्ष पहिले इन्द्र प्रस्थ के समीप कुछ दूर पर नया नगर बसाया जो उसके नाम से दिल्ली कहलाया और यही नाम अधिक प्रसिद्ध हो गया।

[ दिल्ली भक्त परमेष्ठी दर्जी का जन्म और निवास स्थान था। ४०० वर्ष हुए दिल्ली के बादशाह ने इनसे दो बहुमूल्य तकिये बनवाये। यह भक्त थे, तकिये तैयार करके ध्यान मग्न हो गये। ध्यान में देखा कि जगन्नाथपुरी में भगवान की मूर्ति को तकिया चाहिये। आपने एक अर्पण कर दिया। ध्यान खुला तो सचमुच एक तकिया गायब था। इस अपराध में यह बन्दी कर दिये गये। एक दिन देखने में आया कि कारागार के सब दरवाजे खुले हैं और यह ध्यानमग्न बैठे हैं। बादशाह को भी भयदायक स्वप्न हुआ था। यह मुक्त कर दिये गये। ]

व० द०—वर्तमान दिल्ली से दो मील दक्षिण पाण्डवों का बसाया हुआ इन्द्रप्रस्थ के स्थान पर इन्द्रपाथ का पुराना किला जर्जर हो रहा है।

इन्द्र प्रस्थ में चौहान राजा अनंग पाल द्वितीय के बनवाये हुए किले ( लाल कोट ) के अवशेष अब भी हैं। यहाँ योग माया देवी का मन्दिर भी है।

हुमायूं बादशाह ने सन १५३३ में इन्द्र प्रस्थ के पुराने किले को सुधार कर उसका नाम दीन-पनाह रक्खा था परन्तु पीछे वह नाम प्रसिद्ध नहीं हुआ। शेरशाह हुमायूं को निकाल कर जब दिल्ली की गद्दी पर बैठा तब उसने इस क़िले को अपने नये शहर का किला बनाकर उसका नाम शेर गढ रक्खा, पर अंत में फिर भी वह इन्द्र प्रस्थ का पुराना किला ही कहलाता रहा और अब भी इन्द्र पाथ कहलाता है।

वर्तमान दिल्ली के अजमेर फाटक से लगभग १० मील पर कुतुब मीनार है। कुतुब के पास ही महाराज पृथ्वीराज ने सन् ११८० में लाल कोट के चारों ओर एक दूसरी ५ मील लम्बी दीवार बनवाकर उस किले का नाम राय पिथोरा रक्खा था। इसी स्थान को पुरानी दिल्ली कहते हैं।

जिस चबूतरे पर राय पिथौरा, अर्थात् पृथ्वीराज का बड़ा देव मन्दिर था उसी पर 'कुतुब इस्लाम' मस्जिद बनवाना आरम्भ किया गया था जिसकी एक मीनार कुतुब मीनार है। पर वह मस्जिद अनबनी ही रह गई। इसी मस्जिद के आँगन में ईसा की चौथी सदी का, सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय का स्थापित किया हुआ २८ फुट पृथ्वी में गड़ा हुआ और २२ फुट पृथ्वी के ऊपर लोहे का प्रसिद्ध स्तंभ है।

जहाँ पर गुरू हरिकृष्ण साहिब ने शरीर छोड़ा था वहाँ पर सिक्ख गुरू द्वारा बना हुआ है।

जैसा ऊपर आ चुका है पहिला नगर ( इन्द्र प्रस्थ ) इस स्थान पर महाराज युधिष्ठिर ही ने बसाया था जो उनकी, और पीछे वज्र आदि की राजधानी रहा। पीछे उससे थोड़ा हट कर महाराज दिलू ने दूसरा नगर बसाया था जो उनकी, धव की और पृथ्वीराज आदि की राजधानी रहा। पहले मुसलमान बादशाहों ने भी इसी स्थान को अपनी राजधानी रक्खा। बाद को सम्राट शाहजहाँ ने वर्तमान दिल्ली को बसाकर उसका नाम शाहजहानाबाद रखा और उसको राजधानी बनाया परंतु 'दीनपनाह' और 'शेरगढ़' के समान यह नाम भी लोप हो गया और दिल्ली ही नाम विख्यात रहा। इधर अँग्रेज गवर्नमेन्ट ने नई दिल्ली बसाई है और सारी सरकारी इमारतें इसी में हैं।

दिल्ली की अवस्था को देख कर समय के हेरफेर का चित्र आँखों के सामने आ जाता है। कहते हैं कि जितने मुर्दे यहाँ गड़े हैं उतने जीवित आदमी दिल्ली में न होंगे। यह मुर्दों का ही नगर है।

दिल्ली निवासी 'रसखान', 'घन आनंद', और 'वीर' हिन्दी के अच्छे कवि हो गये हैं। रसखान पठान थे और १६१५ वि० के लगभग पैदा हुये थे। घन आनन्द जाति के कायस्थ थे और इनका कविता काल १७७१ से १७६६ वि० तक रहा। वीर भी श्रीवास्तव कायस्थ थे और इनका 'कृष्णचन्द्रिका' नामक ग्रन्थ सं १७७६ वि० में लिखा गया था।

**५१ इन्द्र प्रयाग**—(संयुक्तप्रांत के हिमालय प्रांत पर टेहरी राज्य में एक स्थान)

यहाँ राज्यभ्रष्ट इन्द्र ने तप करके फिर अपना राज्य पाया था।

यहाँ से थोड़ी दूर पर राजा नहुष ने कठोर तप करके इन्द्र का राज्य प्राप्त किया था।

(स्कन्द पुराण, तीसरा अध्याय) अलकनन्दा के समीप इन्द्र प्रयाग है। उसी स्थान पर राज्यभ्रष्ट इन्द्र ने तप करके फिर अपना राज्य पाया।

सरस्वती और शक्तिजा नदी के संगम से उत्तर शक्तिजा के पश्चिम तीर से आधे कोस पर महादेव का मंदिर है, उसी स्थान में सोम वंशी राजा नहुष ने कठोर तप करके इन्द्र का राज्य पाया था।

५२ इमना बाद—(पाकिस्तानी पंजाब के गुजरानवाला जिले में एक स्थान)

गुरु नानक ने हाकिम की पूड़ी में खून और एक गरीब की रोटी में दूध यहाँ दिखाया था।

हाकिम मलिक भागो ने गुरु नानक जी को पकवान बनवा कर भोजन को भेजा पर गुरु जी ने गरीब भाई लालों की रोटी खाना पसन्द किया। हाकिम मलिक को बुरा लगा और उसने शिकायत की इस पर गुरु नानक ने उसकी पूड़ी को निचोड़ा और उसमें से खून बहा। लालों की रोटी को दबाया तो उसमें से दूध बहा। मलिक देख कर रह गया, और इनका शिष्य हो गया।

यहाँ रोड़ी साहेब गुरु द्वारा बना हुआ है। रोटी को पंजाब में रोटी कहते हैं।

५३ इलाहाबाद—( संयुक्त प्रदेश आगरा व अवध की राजधानी )

इसका प्राचीन नाम प्रयाग है और यह तीर्थों का राजा कहलाता है। इसका दूसरा नाम भास्कर क्षेत्र भी है। यह स्थान ५२ पीठों में से एक है। सती की पीठ यहाँ गिरी थी। यहाँ साम, वरुण और प्रजापति का जन्म हुआ था।

ब्रह्मा ने पूर्व समय में यहाँ १०० अश्वमेध यज्ञ किये थे। ब्रह्मा की पाँच वेदियां में से यह एक है, और मध्य वेदी है। भरद्वाज मुनि यहीं निवास करते थे।

बनवास के समय रामचन्द्र, लक्ष्मण और जानकी प्रयाग में गंगा यमुना के संगम पर भरद्वाज मुनि के आश्रम में आये थे। भरत भी रामचन्द्र की खोज में अयोध्या से चित्रकूट जाते समय यहाँ ठहरे थे।

प्रह्लाद ने यहाँ आकर स्नान किया था।

श्री आदिनाथ स्वामी ( प्रथम तीर्थङ्कर ) ने यहाँ दीक्षा ली थी, तप धारण किया था, और कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था।

महात्मा कुमारिल भट्ट यहाँ निवास करते थे और जगद्गुरु श्री शंकराचार्य ने लोकप्रतिष्ठा प्राप्त करने के पहिले यहाँ आकर उनका दर्शन किया था।

प्रयाग के समीप गंगा के बायें किनारे पर झूसी है जो पूर्व समय में प्रतिष्ठानपुर नाम से विख्यात राजधानी था। राजा पुरुरवा की यही राजधानी थी। इला ने प्रतिष्ठानपुर को बसाया था।

प्रतिष्ठानपुर में आकर गालव मुनि ने वहाँ के राजा ययाति की पुत्री माधवी से अपना विवाह किया था।

नहुष, ययाति, पुरु, दुष्यन्त और भरत ने प्रतिष्ठानपुर में राज्य किया था।

रामानन्द स्वामी का प्रयाग में जन्म हुआ था।

म० भा०—( महाभारत आदि पर्व ८७ वाँ अध्याय ) लोक विख्यात गंगा और यमुना के संगम पर पूर्व समय में ब्रह्मा ने यज्ञ किया था, इसी से इसका नाम प्रयाग हुआ। यहाँ तपस्वियों से सेवित तापस वन है।

( ५५ वाँ अध्याय ) प्रयाग में सोम, वरुण और प्रजापति का जन्म हुआ था।

( ८५ वाँ अध्याय ) प्रयाग, प्रतिष्ठानपुर, कम्बलाश्वतर तीर्थ, भोगवती यह ब्रह्मा की वेदी है। मुनि लोग तीन लोक के तीर्थों में प्रयाग को अधिक कहते हैं। यहाँ पर राजा वासुकी का भोगवती नामक स्थान है। प्रयाग ही में गंगा के तट पर दशाश्वमेध नामक तीर्थ है।

( वाल्मीकीय रामायण, अयोध्या कांड ५४ वाँ सर्ग ) रामचन्द्र लक्ष्मण और जानकी के संग वनवास के समय प्रयाग में गंगा यमुना के संगम पर भरद्वाज मुनि के आश्रम में गये।

( मत्स्य पुराण, १०३ वाँ अध्याय ) प्रयाग प्रतिष्ठानपुर से लेकर वासुकी के हृद तक का कम्बलाश्वतर और बहुमूलक नामक नाग स्थान है यह सब मिल कर प्रजापति क्षेत्र कहलाता है।

( १०५ वाँ अध्याय ) जब प्रलय काल में सूर्य और चन्द्रमा नष्ट हो जाते हैं तब विष्णु भगवान प्रयाग में अक्षय वट के समीप वारम्वार पूजन करते हुए स्थित रहते हैं।

( वामन पुराण, २२ वाँ अध्याय ) ब्रह्मा की पाँच वेदी हैं जिनमें उन्होंने यज्ञ किया है। इनमें मध्य वेदी प्रयाग है। और दूसरी चार वेदियों में पूर्व वेदी गया, दक्षिण वेदी विरजा, पश्चिम वेदी पुष्कर, और उत्तर वेदी स्यमन्त पचक ( कुरुक्षेत्र ) है।

( ८३ वाँ अध्याय ) प्रह्लाद ने प्रयाग में जाकर निर्मल तीर्थ में स्नान करने के उपरान्त लोकों में विख्यात यामुन तीर्थ में वटेश्वर रुद्र को देख योग शायी माधव का दर्शन किया।

( पद्मपुराण, स्वर्ग खड, ५२ वाँ अध्याय, गगा और यमुना इन दो नदियों के पास तीर्थ राज है। (५४ वाँ अध्याय ) ३३ करोड तीर्थों का मुख्य राजा प्रयाग है ( ८२ वाँ अध्याय ) जहाँ ब्रह्मा ने १०० अश्वमेध यज्ञ किये उस स्थान को प्रयाग कहते हैं।

भरद्वाज मुनि प्रयाग में वास करके माधव जी की आज्ञा से कश्यप आदि सप्त ऋषियों में हो गये हैं।

(८६ वाँ अध्याय ) तीनों लोकों में प्रयाग का स्नान और उससे अधिक वहाँ का मुण्डन दुर्लभ है।

( शिवपुराण, ८ वाँ खड, पहिला अध्याय ) तीर्थराज प्रयाग में ब्रह्मा का स्थापित किया ब्रह्मेश्वर शिव लिंग है।

( महाभारत, उद्योगपर्व ११४ वाँ अध्याय ) गालव मुनि गरुड़ का साथ ले प्रतिष्ठानपुर में राजा ययाति के समीप आये। राजा ने पुत्र उत्पन्न कराने के लिये माधवी नामक अपनी कन्या मुनि को दी।

( मत्स्यपुराण ११०वाँ अध्याय ) प्रतिष्ठानपुर तीर्थ में ब्रह्मा स्थित हैं।

( कूर्म पुराण ब्राह्मी सहिता पूर्वार्द्ध ३६ वाँ अध्याय ) गगा के पूर्व तीर पर त्रिभुवन विख्यात प्रतिष्ठान नगरी है, जहा ३रात्रि वास करने से अश्वमेध का फल मिलता है।

पुराणों में प्रयाग राज की महिमा का बहुत बखान है।

(ब्रह्म पुराण, १०, ११ व १२ वाँ अध्याय, तथा लिङ्गपुराण,प्रथम खड ६३ वाँ अध्याय) नहुष ययाति, पुरु, दुष्यन्त और भरत ने प्रतिष्ठानपुर में राज किया था।

कथा है कि देवासुर सग्राम के स्थान से देवगुरु बृहस्पति जी अमृत कुण्ड लेकर भागे। भागीरथी, त्रिवेणी, गोदावरी और क्षिप्रा के तट पर कुह

स्पति से दानवों की हाथा पाई होते समय कुंभ में से अमृत उछल पड़ा था। इस लिये कुंभ के बृहस्पति होने पर हरद्वार में भागीरथी के किनारे, वृष के बृहस्पति होने पर प्रयाग मे त्रिवेणी पर, सिंह के बृहस्पति होने पर नासिक में गोदावरी के तीर पर, और वृश्चिक बृहस्पति होने पर उज्जैन में क्षिप्रा नदी के किनारे कुंभ योग संगठित होता है।

[देवताओं के गुरु बृहस्पति के भाई उतथ्य के पुत्र भरद्वाज जी थे। इनकी भगवद्भक्ति लोक प्रसिद्ध है। भगवद्भक्ति का इन्हें आदि स्रोत कहें तो अत्युक्ति न होगी। प्रत्येक मकर में समस्त ऋषि कल्पवास करने प्रयाग राज आते थे और इन्हीं के आश्रम में ठहरते थे। महाराज रामचन्द्र ने भी इनके दर्शन किये थे।]

[महात्मा कुमारिल भट्ट श्री आदिशंकराचार्य के समकालीन थे। और अपने काल के संसार के सबसे बड़े और प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य थे।]

व० द०—इलाहाबाद गंगा और यमुना के संगम पर बसा हुआ है। गंगा और यमुना के संगम पर कहा जाता है सरस्वती का भी गुप्त रूप से संगम है। संभव है किसी काल में सरस्वती का संगम यहां रहा हो। इस कारण इस स्थान को त्रिवेणी कहते हैं।

लाखों यात्री त्रिवेणी पर माघ मास में स्नान करते हैं। अमावस्या स्नान का खास दिन है। कुंभ के दिनों में यात्रियों की संख्या ३० लाख से भी अधिक हो जाती है।

संपूर्ण यात्री त्रिवेणी पर मुंडन कराते हैं। जो स्त्रियाँ मुंडन नहीं कराती वे अपने बालों की एक लट कटवा देती हैं।

दारागंज के निकट गंगा में दशाश्वमेध तीर्थ है और वहाँ ब्रह्मेश्वर शिवलिंग है। यह ब्रह्मा के यज्ञ का स्थान है।

संगम के समीप यमुना तट पर अकबर का बनवाया हुआ प्रसिद्ध किला है। अकबर ने उसका नाम 'इलाहाबास' रक्खा था। इसके भीतर जमीन के नीचे 'अक्षयवट' मिला पत्थर का दो शाख का वृक्ष है। इसी स्थान पर जैनियों के भी आदिनाथ स्वामी ने तप किया था।

इस किले के भीतर महाराज अशोक की एक पत्थर की लाट है।

प्रयाग राज में अन्य बहुत मन्दिरों के अतिरिक्त शहर के पास भरद्वाज मुनि का मन्दिर है। अलोपी देवी का मन्दिर सती के पीठों में से एक माना जाता है। मन्दिर में पालना बंधा है। गंगा और यमुना के संगम पर बांध [illegible]

का मन्दिर है जिसका उल्लेख श्री माधवाचार्य के शङ्कर विजय में है। इस स्थान का नाम इलाहाबाद शाहजहाँ का रक्खा हुआ है।

इलाहाबाद म श्रीधर, उपनाम मुरलीधर, एक अच्छे कवि हो गये हैं, जिनका जन्म १७३७ वि० के लगभग माना जाता है।

महा मना प० मदन मोहन मालवीय (१८६१ ई०) तथा स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री देश भक्त पण्डित जवाहर लाल नेहरू (स १८८६ ई०) की यह जन्मभूमि है।

उ

५४ उज्जैन (देखिए काशी पुर)

५५ उज्जैन (मध्य देश म ग्वालियर राज्य म एक शहर)

इसका प्राचीन नाम अवन्ति पुर, विशाला, पुष्पा, अवन्तिनी, और महाकालपुरी हैं। प्रसिद्ध प्राचीन सप्तपुरियों म से यह एक पुरी हैं।

सुप्रसिद्ध १२ ज्योतिर्लिङ्गों म से यहाँ महा कालेश्वर शिव विद्यमान हैं। इसी स्थान के निकट शिव और अन्धक का युद्ध हुआ था। उज्जैन म शिवजी ने दूषण दैत्य को मारा था।

प्रह्लाद ने इस नगरी म, आकर क्षिप्रा मे स्नान किया था। महर्षि अगस्त्य यहाँ पधारे थे।

उज्जैन महाराज विक्रमादित्य, शालिवाहन, भोज और भर्तृहरि की राजधानी थी।

साँदीपनि मुनि का यहाँ आश्रम था। श्री कृष्ण और बलदेव जी ने यहाँ आकर मुनि से विद्या पढ़ी थी।

यहाँ के राजा विन्द और अनुविन्द के दुर्योधन का ओर से महाभारत में युद्ध किया था।

अपने पिता के राज्यकाल में महाराज अशोक उज्जैन में, मालवा के सूबेदार होकर, रहे थे। यहीं पर अशोक के लडके महेन्द्र का जन्म हुआ था जिन्होंने लङ्का म बौद्ध मत फैलाया था।

श्री वल्लभाचार्य ने यहाँ कुछ काल निवास किया था।

श्री भद्रबाहु स्वामि (जैन) यहाँ रहते थे।

महाराज रामचन्द्र के पुत्र कुश महाकालेश्वर का दर्शन करने वाल्मीकि जी के आश्रम से यहाँ आये थे।

महाकवि कालिदास बहुत समय तक उज्जैन में रहे। अपने ग्रन्थ मेघदूत में उन्होंने इस नगरी का सुन्दर वर्णन किया है।

उज्जैन का प्रसिद्ध महाकाल का मन्दिर नाटकों में 'कालप्रियनाथ' का मंदिर कहा गया है। यहां प्राचीन नाटक खेले जाते थे।

उज्जैन में रुद्रशुद्धि देवी का मन्दिर है कहा कहा जाता है, राजा विक्रमादित्य अपने शिरों को काट कर देवी को बलि देते थे।

एक स्थान की कुबलाव में ऐसा एक है जहाँ से प्रलय के समय जल निकल कर सारा पृथिवी को डुबो देगा।

प्रा० क०—(महाभारत, उद्योग पर्व, १६ वाँ अध्याय) अवन्ती के राजा विन्द और अनुविन्द दो अक्षौहिणी सेना और अनेक दक्षिणी राजाओं के सहित कुरुक्षेत्र के संग्राम में राजा दुर्योधन की ओर आये (द्रोण पर्व, ९७ वाँ अध्याय) अर्जुन ने अवन्ती के राजा विन्द और अनुविन्द को मार डाला।

(आदि ब्रह्म पुराण, ४२ वा अध्याय) पृथिवी में सब नगरियों में उत्तम अवन्ती नामक नगरी है, जिसमें महाकाल नाम से विख्यात सदाशिव, स्थित हैं। वहाँ क्षिप्रा नामक नदी बहती है और विष्णु कई एक रूप से स्थित हैं। उसी नगरी में इन्द्रद्युम्न नामक राजा हुआ।

(गरुड़पुराण पूर्वार्द्ध, ८६ वा अध्याय) महाकाल तीर्थ संपूर्ण पापों का नाशक और मुक्ति देने वाला है।

(प्रेत कल्प १७ वाँ अध्याय) अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काँची, अवंतिका और द्वारिका यह सातों पुरियाँ मोक्ष देने वाली हैं।

(शिवपुराण ज्ञान संहिता, ३८ वाँ अध्याय) शिव जी के बारह ज्योतिर्लिङ्ग हैं—उनमें से उज्जैन में महाकाल हैं, इनकी पूजा करने का अधिकार चारों वर्णों को है।

(४६ वाँ अध्याय) पाप को नाशने वाली और मुक्ति को देने वाली अवन्ती नामक नगरी है, जहाँ पवित्र क्षिप्रा नदी बहती है। उसमें वेदपारग एक शिव भक्त ब्राह्मण रहता था। उसके पुत्र भी बड़े शिवभक्त थे। उसी समय रत्न माल गिरि पर दूषण नामक असुर हुआ वह ब्रह्मा के वरदान से बलवान होकर सब को दुख देने लगा। उसके भय से संपूर्ण तीर्थ वन और पर्वतों के मुनिगण भाग गये। दूषण शिव भक्तों के विनाश करने के निमित्त अपनी सेना सहित उज्जैन में गया और चारों ओर से नगरी को घेर कर शिव भक्तों के निकट पहुँचा। उस समय शिव की कृपा से उस स्थान पर गढ़ा हो

गया और उस गढे म से शिव जी ने प्रकट होकर दैत्य का विनाश किया। शिवभक्तो ने शिव जी से विनय की कि आप यहाँ स्थित होवे और आप ने जगत के काल रूप दूषण दैत्य का मारा इसलिये आप का नाम 'महाकालेश्वर' होवे। शिवजी उसी गढे म ज्योतिर्लिङ्ग होकर स्थित हुए।

(वामन पुराण, ८३ वा अध्याय) प्रह्लाद ने अवती नगरी में क्षिप्रा नदी के जल में स्नान करके विष्णु और महाकाल शिव का दर्शन किया।

(स्कदपुराण काशी खण्ड, ७ वाँ अध्याय) महाकाल पुरी में कलिकाल की महिमा नहीं व्यापी थी।

(मत्स्यपुराण १७८ वाँ अध्याय) शिव और अधक का युद्ध अवती नगरी के समीप महाकाल वन मे हुआ था।

(पद्मपुराण पाताल खण्ड ६३ वा अध्याय) सीता जी के बडे पुत्र कुश, महाकाल की पूजा करके उज्जैन से आ गये।

(विष्णु पुराण, ५ वाँ अश, २१ वाँ अध्याय) कृष्ण और बल्देव दोनों भाई अवन्तिकापुरी क वासी सादीपनमुनि से विद्या पढने गये (श्री मद्भागवत और आदिब्रह्म पुराण में भी यह कथा है।)

(सौर पुराण, ६७ वाँ अध्याय) उज्जैन म शक्ति भेदन नामक एक तीर्थ है जिसमें स्नान करके भद्र वट के दर्शन करने से मनुष्य सपूर्ण पापों से विमुक्त होकर स्कद लोक को जाता है।

(भविष्य पुराण, १४१ वाँ अध्याय) उज्जैन में विक्रमादित्य नामक, राजा होगा जो करोड़ म्लेच्छों का मार धर्म स्थापन कर १३५ वर्ष राज करेगा। इसके अनतर बड़ा प्रतापी राजा शालि वाहन १०० वर्ष पर्यन्त राज करेगा।

पुराणों में उज्जैन की बड़ी महिमा कही गई है।

[उज्जैन सुप्रसिद्ध विक्रमादित्य की राज धानी था जिसके नाम का सवत उत्तरी भारत मे प्रचलित है। विक्रमादित्य ने सिदियन लोगों को भगा कर सपूर्ण उत्तरी भारत मे राज्य किया।

धनवन्तरी, क्षपणक अमर सिंह, शकु, वैताल भट्ट, घट खर्पर, कालिदास, वराह मिहिर और वर रुचि इनकी सभा के नव रत्न थे।

अपने भाई भर्तृहरि को राज्य देकर विक्रमादित्य योगी हो गये थे। यह वही भर्तृहरि हैं जो अपने स्त्री का व्यभिचार देखकर राज्य पाट छोड़ योगी हो गये और कई उत्तम ग्रन्थ लिखे हैं और जिनके विषय म कहा जाता है कि व अमर हैं। भर्तृहरि के विरक्त होने पर वीर विक्रमादित्य उज्जैन को लौट आये थ।]

[ लगभग ७५७ संवत् मे भोज उज्जैन के राजा हुए। विद्या के प्रचार के लिये महाराज भोज विख्यात है। कहा जाता है कि इनकी महारानी लीलावती की ही बनाई हुई 'लीलावती' नाम की गणित की पुस्तक है, पर यह बात प्रमाणित नहीं है। महाराज भोज ने धाड़ (धारावती) को अपनी राजधानी बनाया था। ]

[ श्री भद्रबाहु स्वामी ने राजा पद्माधर की रानी पद्मा श्री के पुरोहित सोम शर्मा की स्त्री सोमश्री के गर्भ से जन्म लिया था। ७ वर्ष की आयु मे आप गोवधन स्वामी महामुनि से शिक्षा पाने लगे और बाल अवस्था ही मे वैराग्य ले लिया। वीर निर्वाण संवत् १६२ मे जैनमुनी होकर निर्वाण प्राप्त किया। ]

लगभग ४०० ई० में गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अयोध्या से हटाकर उज्जैन को अपनी राजधानी बनाया। विद्वानों का मत है कि यही सुप्रसिद्ध महाराज विक्रमादित्य थे जिन्होने उज्जैन और भारत से शकों को निकाला था। उज्जैन मे विद्वानों की सभाएँ हुआ करती थीं। गुप्त कालमे उज्जैन के विद्यालय की बडी उन्नति हुई।

५३३ ई० में यशोधर्मन उज्जैन के शासक हुए थे जिन्होंने हूण राजा मिहिर कुल को पूर्णतया पराजित कर मार भगाया था।

प्राचीन काल से उज्जैन सर्वमत वालों का बड़ा भारी पवित्र क्षेत्र है और बराबर मालवा की राजधानी रहता आया। अंत मे यह मरहठों के हाथ आया और सिंधिया वंश की राजधानी रहा। दौलत राव सिंधिया ने सन् १८१० ई० मे इसे छोड़ कर ग्वालियर को अपनी राजधानी बनाया।

व० द०—उज्जैन क्षिप्रा नदी के दाहिने किनारे पर बसा है। पुराने उज्जैन के खण्डहर इससे एक मील उत्तर हैं। शहर के समीप क्षिप्रा नदी पे कई घाट पत्थर के बने हैं। कार्तिक की पूर्णिमा को उज्जैन का मेला होता है। १२ वर्ष परन्तव वृश्चिक राशि के बृहस्पति होते हैं तब उज्जैन मे कुंभयोग का बड़ा मेला होता है। उस समय भारतवर्ष के सपूर्ण प्रदेशों के सब सम्प्रदाय के कई लाख साधु और गृहस्थ क्षिप्रा मे स्नान करने के लिये यहाँ एकत्र होते हैं। १२० मील बहकर क्षिप्रा नदी चम्बल मे मिली है।

एक पक्के सरोवर के बगल पर उज्जैन के प्रधान देवता महाकालेश्वर का शिखर दार विशाल मंदिर है मंदिर पाँच मंज़िला है। नीचे कीमंजिल में जो भूमि की सतह से नीचे हैं बड़े आकार का महाकालेश्वर शिवलिंग है। पहिले का चढा हुआ बिल्वपत्र (बेल पत्र) भी धोकर पुन चढाने की यहाँ रीति है।

क्षिप्रा नदी के समीप विक्रमादित्य की कुलदेवी हरसिद्धी देवी का शिखरदार विशाल मन्दिर है। कहा जाता है कि यहीं विक्रमादित्य अपना सिर काट काट कर देवी को चढ़ाते थे जो देवी की कृपा से फिर पूरा हो जाता था।

शहर से तीन मील दूर क्षिप्रा नदी के किनारे एक छोटा पुराना वट वृक्ष है। कार्तिक सुदी १४ को यहाँ मेला होता है, इसके समीप एक बड़ा धर्मशाला है।

शहर से दो मील दूर गोमती गंगा नामक पक्के सरोवर के समीप सांदीपन मुनि का स्थान अङ्कपात ( अङ्कपाद ) है। श्रीकृष्ण और बलराम ने मथुरा से आकर इसी स्थान पर सांदीपन मुनि से विद्या पढ़ी थी। समीप के दामोदर कुण्ड में वे अपनी तख्ती धोते थे।

शहर के भीतर एक बहुत पुराना फाटक है जिसको लोग विक्रमादित्य के किले का हिस्सा कहते हैं, और १॥ मील उत्तर एक स्थान है जिसको भर्तृहरि की गुफा कहा जाता है। इसमें भर्तृहरि का योगासन और उनकी तथा गुरु गोरखनाथ की मूर्तियाँ हैं। शहर के दक्षिण पूर्व में एक अकेली पहाड़ी अब गोगा शहीद कहलाती है। कहा जाता है कि यहीं पर विक्रमादित्य का सुविख्यात सिंहासन था जिसे राजा भोज खोद ले गए थे।

उज्जैन में बहुत मन्दिर, सरोवर और घाट हैं।

नगर के दक्षिण पश्चिम में महाराज जयसिंह ( जयपुर नरेश ) की बनवाई हुई ज्योतिष यन्त्रालय टूटी फूटी दशा में है। भारतवर्ष का यह सर्व प्रथम ज्योतिष यन्त्रालय था। यहाँ के ब्राह्मण क्रिया वान् होते हैं और कुछ नीच जातियों को छोड़ कर हिन्दू मात्र मद्य मांस नहीं खाते।

उज्जैन से ४० मील पर इन्दौर है जिसको अहल्याबाई ने बसा कर होल्कर वंश की राजधानी बनाया था। इन्दौर की उन्नति के साथ-साथ उज्जैन शहर की अवनति हो रही है।

५६ उडूपीपुर—( मद्रास प्रांत के मंगलूर जिला में एक स्थान )

इस स्थान के समीप वेललिग्राम में श्री माध्वाचार्य का जन्म हुआ था। इसका प्राचीन नाम उडूपी क्षेत्र है।

चैतन्य महाप्रभु यहाँ पधारे थे।

उडूपी पुर में श्री माध्वाचार्य का मठ है। उडूपी क्षेत्र से दो तीन मील दूर वेललि ग्राम में भारगव गोत्रीय नारायण भट्ट के अंश से तथा माता वेद

## ऊ

६४ ऊखल (नौ)—( देखिए कड़ा )

६५ ऊखी मठ—( गढ़वाल में एक प्रसिद्ध स्थान )

इस स्थान पर राजा नल ने तप किया था।

सूर्यवंशी राजा युवनाश्व के पुत्र राजा मान्धाता ने यहाँ सिद्धि प्राप्त की थी।

इस स्थान को मान्धाता क्षेत्र भी कहते हैं।

(स्कन्दपुराण केदार खंड, उत्तर भाग, २४ वाँ अध्याय ) गुप्त काशी के पूर्व मंदाकिनी नदी के बायें तट पर राजा नल ने राजसुख त्याग कर तप और राज राजेश्वरी देवी का पूजन किया था। वहाँ के नलकुंड में स्नान करने से जन्म भर का संचित पाप नष्ट हो जाता है। सूर्यवंशी राजा युवनाश्व के पुत्र राजा मान्धाता ने उस स्थान पर तप करके परम सिद्धि प्राप्त की थी।

ऊखीमठ के एक शिखरदार मन्दिर में ऊँकारनाथ शिवलिङ्ग स्थित है। उनके पूर्व राजा मान्धाता की बड़ी मूर्त्ति है। मन्दिर के पूर्व एक कोठरी में ऊषा और अनिरुद्ध की मूर्तियाँ हैं और धातु के पत्तर पर चित्र लेखा की मूर्ति है ( ऊषा और अनिरुद्ध के सम्बन्ध में देखिये 'शोणित पुर'। )

जाड़े के दिनों में केदारनाथ के पट बन्द हो जाने पर उनकी पूजा ऊखी मठ में होती है। ऊँकार नाथ के मन्दिर के पश्चिम यहाँ के रावल का मकान है। ऊखी मठ का रावल केदारनाथ, गुप्त काशी, ऊखी मठ, तुङ्गनाथ आदि मन्दिरों का अधिकारी है।

६६ ऊर्जमगाँव—( गढ़वाल में अलकनन्दा के किनारे एक गाँव )

यहाँ ऊर्ज मुनि ने तप किया था। राजा सगर का यहाँ जन्म हुआ था। पञ्च बद्री में से एक—आदि बद्री—यहाँ विराजते हैं।

*प्रा० क०*—(*शिवपुराण ११ खंड, २१ वाँ अध्याय*) अयोध्या पर राजा बाहु के समय में राक्षसों की सहायता से कुछ राजे चढ़ आये और राजा को परास्त कर आप राज्य करने लगे। तब राजा बाहु ऊर्ज मुनि की शरण में रहने लगे और वहीं मर गये। राजा की बड़ी रानी गर्भवती थी। छोटी रानी ने डाह से उसे विष दे दिया, लेकिन रानी न मरी। उसने ऊर्ज मुनि के आश्रम पर एक पुत्र जना। मुनि ने बालक को विष सहित जन्मा देख कर उसका नाम सगर रक्खा। राजा सगर शिव जी की प्रसन्नता और ऊर्ज मुनि की सहायता से

शत्रुओं का विनाश कर उन पर प्रबल हुए। फिर सगर ऊर्ज मुनि को गुरु बनाकर अश्व मेधयज्ञ करने लगे।

( वाल्मीकीय रामायण—बाल काण्ड, ३८ वा सर्ग ) अयोध्या के राजा सगर सततिहीन थे। राजा के केशिनी और सुमति नामक दो रानियाँ थीं। महाराज सगर दोनों पत्नियों के साथ हिमवान पर्वत के भृगु प्रश्रवण देश में जाकर तप करने लगे। सौ वर्ष तप करने के पश्चात् भृगु मुनि ने प्रसन्न हो सगर को वर दिया जिससे अयोध्या में आने पर केशिनी के एक पुत्र और सुमति के साठ सहस्र पुत्र हुए।

व० द०—ऊर्जम गाँव से कुछ दूर पर मडल गाँव है जिसको मडल तीर्थ कहते हैं। ऐसा प्रसिद्ध है कि पूर्व काल में राजा सगर ने यहाँ अश्वमेध यज्ञ किया था।

## ऋ

६७ ऋण तानूर—( राजपूताने का एक नगर)
यहाँ राजा रति देव का निवास स्थान था जिसका वर्णन कालिदास ने मेघदूत में किया है।

रतिदेव ने बहुत सी गौवों का दान किया था, जिससे चर्मणवती (चबल) नदी पृथिवी पर आई।

ऋणतानूर चम्बल नदी पर बसा है।

६८ ऋद्धिपुर—( देखिए काठ सुर )
६९ ऋषिकुण्ड— ( देखिए मँकनपुर )
७० ऋषिश्रृङ्ग— ( देखिए श्रृङ्गेरी )
७१ ऋष्यमूक— ( देखिए आनागन्दी )
७२ ऋष्य श्रृङ्ग आश्रम— ( कुल ) ( देखिये मँकनपुर )

## ए

७३ एडैयालम— ( मद्रास के दक्षिणी अर्काट जिले में एक ग्राम )
श्री मल्लिषेणाचार्य मुनि (जैन) ने इस स्थान पर तपस्या की थी।
श्री सिद्धात मुनि (जैन) का यह जन्म स्थान है।

[श्री मल्लिषेणाचार्य जी श्री आदितीर्थङ्कर ऋषभ देव जी के १५वें गण धर थे। श्री सिद्धांत मुनि भी जैनियों में परम मुनि हो गये हैं।
यहाँ एक अति प्राचीन जैन मन्दिर है।]

## ऊ

६४ ऊखल (नौ)—( देखिए कडा )

६५ ऊखी मठ—( गढवाल में एक प्रसिद्ध स्थान )

इस स्थान पर राजा नल ने तप किया था।

सूर्यवंशी राजा युवनाश्व के पुत्र राजा मान्धाता ने यहाँ सिद्धि प्राप्त की थी।

इस स्थान को मान्धाता क्षेत्र भी कहते हैं।

(स्कन्दपुराण केदार खंड, उत्तर भाग, २४ वाँ अध्याय ) गुप्त काशी के पूर्व मदाकिनी नदी के बायें तट पर राजा नल ने राजसुख त्याग कर तप और राज राजेश्वरी देवी का पूजन किया था। यहाँ के नलकुंड में स्नान करने से जन्म भर का संचित पाप नष्ट हो जाता है। सूर्यवंशी राजा युवनाश्व के पुत्र राजा मान्धाता ने उस स्थान पर तप करके परम सिद्धि प्राप्त की थी।

ऊखीमठ के एक शिखरदार मन्दिर में ओंकारनाथ शिवलिङ्ग स्थित है। उनके पूर्व राजा मान्धाता की नयी मूर्ति है। मन्दिर के पूर्व एक कोठरी में ऊषा और अनिरुद्ध की मूर्तियाँ हैं और धातु के पत्तर पर चित्र लेखा की मूर्ति है ( ऊषा और अनिरुद्ध के सम्बन्ध में देखिये 'शोणित पुर' । )

जाड़े के दिनों में केदारनाथ के पट बन्द हो जाने पर उनकी पूजा ऊखी मठ में होती है। ओंकार नाथ के मन्दिर के पश्चिम यहाँ के रावल का मकान है। ऊखी मठ का रावल केदारनाथ, गुप्त काशी, ऊखी मठ, तुङ्गनाथ आदि मंदिरों का अधिकारी है।

६६ ऊर्जमगाँव—( गढवाल में अलकनन्दा के किनारे एक गाँव )

यहाँ ऊर्ज मुनि ने तप किया था। राजा सगर का यहाँ जन्म हुआ था।

पंच बद्री में से एक—आदि बद्री—यहाँ विराजते हैं।

प्रा० क०—(शिवपुराण ११ खंड, २१ वाँ अध्याय) अयोध्या पर राजा बाहु के समय में राक्षसों की सहायता से कुछ राजे चढ़ आये और राजा को परास्त कर आप राज्य करने लगे। तब राजा बाहु ऊर्ज मुनि की शरण में रहने लगे और वहीं मर गये। राजा की बड़ी रानी गर्भवती थी। छोटी रानी ने डाह से उसे विष दे दिया, लेकिन रानी न मरी। उसने ऊर्ज मुनि के आश्रम पर एक पुत्र जना। मुनि ने बालक को विष सहित जन्मा देख कर उसका नाम सगर रक्खा। राजा सगर शिव जी की प्रसन्नता और ऊर्ज मुनि की सहायता से

शत्रुओं का विनाश कर उन पर प्रबल हुए। फिर सगर ऊर्ज मुनि को गुरु बनाकर अश्व मेधयज्ञ करने लगे।

(वाल्मीकीय रामायण—बाल काण्ड, ३८ वाँ सर्ग) अयोध्या के राजा सगर संततिहीन थे। राजा के केशिनी और सुमति नामक दो रानियाँ थीं। महाराज सगर दोनों पत्नियों के साथ हिमवान पर्वत के भृगु प्रश्रवण देश में जाकर तप करने लगे। सौ वर्ष तप करने के पश्चात् भृगु मुनि ने प्रसन्न हो सगर को वर दिया जिससे अयोध्या में आने पर केशिनी के एक पुत्र और सुमति के साठ सहस्र पुत्र हुए।

च० द०—ऊर्जम गाँव से कुछ दूर पर मंडल गाँव है जिसको मंडल तीर्थ कहते हैं। ऐसा प्रसिद्ध है कि पूर्व काल में राजा सगर ने वहाँ अश्वमेध यज्ञ किया था।

## ऋ

६७ ऋण तांबूर—(राजपूताने का एक नगर)
यहाँ राजा रति देव का निवास स्थान था जिसका वर्णन कालिदास ने मेघदूत में किया है।

रतिदेव ने बहुत सी गौवों का दान किया था, जिससे चर्मणवती (चवल) नदी पृथिवी पर आई।

ऋणतांबूर चवल नदी पर बसा है।

६८ ऋद्धिपुर—(देखिए काठ सुर)

६९ ऋषिकुण्ड—(देखिए मँक्नपुर)

७० ऋषिशृङ्ग—(देखिए शृङ्गेरी)

७१ ऋष्यमूक—(देखिए आनागन्दी)

७२ ऋष्य शृङ्ग आश्रम—(कुल) (देखिये मँक्नपुर)

## ए

७३ एडैयालम—(मद्रास के दक्षिणी अर्काट जिले में एक ग्राम)

श्री मल्लिषेणाचार्य मुनि (जैन) ने इस स्थान पर तपस्या की थी।

श्री सिद्धांत मुनि (जैन) का यह जन्म स्थान है।

[श्री मल्लिषेणाचार्य जी श्री आदितीर्थङ्कर ऋषभ देव जी के १५वें गण धर थे। श्री सिद्धांत मुनि भी जैनियों में परम मुनि हो गये हैं।

यहाँ एक अति प्राचीन जैन मन्दिर है।]

## ओ

७४ ओङ्कारपुरी— ( देखिये मान्धाता )

७५ ओर्छा— ( मध्यभारत के ओड़छा राज्य में एक प्रसिद्ध स्थान )
यह महाकवि केशवदासजी तथा कवीन्द्र बिहारी दास जी का जन्मभूमि है।
सत श्री व्यासदास का भी यहीं जन्म हुआ था।

प्रा० क०—हिन्दी में सूरदास, तुलसीदास और केशवदास तीन सर्वश्रेष्ठ कवि माने गये हैं। कहा गया है—सूर सूर तुलसी शशि, उडुगण केशवदास। अबके कवि खद्योत सम, जहँ तहँ करत प्रकाश॥

केशवदास जी का जन्म सम्वत १६१८ वि० में ओड़छा में हुआ था। आपके पिता प० काशीनाथ मिश्र सनाढ्य ब्राह्मण तथा महाराज ओड़छा की सभा के एक रत्न थे। केशवदास जी ने किसी पाठशाला में शिक्षा नहीं पाई, उनके पिता ही ने उन्हें पढ़ाया था। पिता की मृत्यु के पश्चात् केशवदास जी ओड़छा नरेश की सभा के रत्नों में सम्मिलित हुए, और जीवनपर्यन्त आपका वहाँ बडा मान और वैभव रहा। सम्राट अकबर के दरबार में भी बीरबल (महाराज महेशदास जी) द्वारा इनका अच्छा आदर सत्कार होता था।

ओड़छा नरेश महाराज इन्द्रजीत सिंह के यहाँ राय प्रवीण नामी एव प्रसिद्ध वेश्या थी। अकबर ने उसकी प्रशसा सुन उसे बुलवा भेजा। इन्द्रजीत सिंह ने आज्ञा स्वीकार करली, पर राय प्रवीण को यह बुरा लगा। वह अपने को महाराज इन्द्रजीत सिंह की पतिव्रता रखैल स्त्री मानती थी। अपने बिदाई के नाच में खिन्न होकर उसने एक गाना इन्द्रजीतसिंह के दरबार में सुनाया

> आई हौं बूझन मन्त्र तुम्हें,
> निज सासन सौं सिगरी मति गोई।
> देह तजौं कि तजौं कुल कानि,
> हिये न लजौं, लजि है सब कोई॥
> स्वारथ औ परमारथ को पथ,
> चित्त विचार कहौ अब कोई।
> जामें रहे प्रभु की प्रभुता,
> अरु मोर पतिव्रत भङ्ग न होई॥

वीर प्रसविनी वीरभूमि चित्तौड़ के बाद, साहस और वीरता में ओड़छा ही अपना सिर ऊँचा किये खड़ा रहा है, यद्यपि उसकी वीरता में उद्दण्डता है।

राय प्रवीण का गाना सुनकर महाराज इन्द्रजीत सिंह ने उसे अकबर के यहाँ भेजने से इनकार कर दिया। अकबर ने उनपर १ करोड़ रुपया जुर्माना कर दिया। इन्द्रजीत सिंह ने नहीं दिया। बात बढ़ती देख कर केशवदास जी महाराज बीरबल के पास आगरा गये और एक सवैया सुनाया :—

पावक, पंछी, पशु, नर, नाग, नदी, नद, लोक रचे दस चारी।
'केशव' देव, अदेव रचे, नरदेव रचे, रचना न निवारी॥
के वर बीर बली बलबीर, भयो कृत कृत्य महाव्रत धारी।
दै करतापन आपन ताहि, दई करतार दुवौ करतारी॥

इस सवैया को सुन कर महाराज बीरबल इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने वह एक करोड़ वाला जुर्माना सम्राट अकबर से माफ करा दिया, और छः लाख रुपये और केशवदास जी को भेंट किये। इस पर केशवदास जी ने एक और सवैया उसी समय सुनाया :—

केशवदास के भाल लिख्यौ, विधि रंक को अंक बनाय सँवारयो।
छूटे छुट्यो नहिं धोये धुल्यो, बहुतीरथ के जल जाय पखारयो॥
ह्वै गयो रङ्क ते राउ तहाँ, जब बीर बली बर बीर निहारयो।
भूलि गयो जग की रचना, चतुरानन बाय रह्यो मुख चारयो॥

जब काबुल में यूसुफजाइयों के युद्ध में बीरबल मारे गये तो यह समाचार अकबर तक पहुँचाने का किसी को साहस नहीं होता था। केशवदास जी उन दिनों आगरा में थे और उन्हें इस काम के लिये चुना गया। उन्होंने निम्न लिखित दोहा सुना कर बीरबल की मृत्यु का समाचार अकबर पर प्रकट किया था :—

याचक सब भूपति भये, रह्यो न कोऊ लेन।
इन्द्रहु को इच्छा भई, गयो बीरबल देन॥

कहते हैं कि अकबर ने महा शोक करते हुए एक सोरठा भी कहा था कि :—

दीन देखि सब दीन, एक न दीन्हों दुसह दुख।
सो अब हम कहँ दीन, कछु नहिं राख्यो बीरबल॥

कवि लोग कहा करते थे कि जब कोई नरेश किसी कवि को बिदाई देना नहीं चाहता था तब केशवदास जी की कविता की चर्चा छेड़ देता था, जिससे कवि का मुँह बन्द हो जावे :—

देनो न चाहे बिदाई नरेश, तो पूछत केशव की कविताई।

आशुतोष औघड़दानी शिव जी महाराज के दरिद्र रूप का वर्णन करते हुए उनके महादान पर आश्चर्य कर केशवदास जी कहते हैं :—

> गाय के कुठार माल कपाल,
> जटान के जूट रहे लुटियाते।
> खाल पुरानी, पुरानो है बैल,
> सो और की और कहें बिष-माते॥
> पार्वती पति सम्पति देख,
> कहैं यह 'केशव' शम्भु मता ते।
> आप तो माँगत भीख भिखारिन,
> देत दई! सुरमंगी कहाँ ते॥

एक बार महाशिव ने रतिनाथ को भस्म कर दिया था। इससे विरह विकला नायका, जो रतिनाथ का विशेष शिकार है, उसके रूप में भी रति नाथ शिवजी का भ्रम करके डरते हैं, उनसे केशवदास जी कहते हैं।

> गंग नहीं शिर मोतिन माँग है।
> कारो नहीं शिर केश विशाल है।
> कंठ न नील अभूषण आप है,
> चन्द्र नहीं यह उन्नति भाल है॥
> विभूति नहीं मलयाय है 'केशव'
> ध्यान नहीं, पिय कारन विहाल है।
> एरे मनोज सम्हार के देख लै,
> शम्भु न होय, वियोगिनी बाल है॥

केशवदास जी ने संवत् १६८४ वि० में शरीर छोड़ा। इनके पुन प्रसिद्ध महा कवि बिहारीदास जी थे जिन्होंने बिहारी [illegible] लिखी है।

श्री बिहारीदास वा बिहारीलाल जी के समान शृंगार रस का कोई दूसरा कवि नहीं हुआ। इनका जन्म १६६० वि० में और स्वर्गवास १७२० वि० में हुआ।

उदाहरण के लिये देखिये कि [illegible] कितने थोड़े में कितना कह डाला है—

> अमी हलाहल मद भरे, [illegible], स्याम रतनार।
> जियत, मरत, [illegible] [illegible] जेहि चितवत इक बार॥

विहारीलाल जी मानो कुजे मे समुन्दर भर देते थे।

यह महाराज जयसिंह, जेपुर नरेश, के यहाँ चले गये थे। बगाल विजय के समय महाराज जयसिंह एक बगाली बालिका पर आसक्त होकर उसे साथ ले आये थे। वह छोटी ही थी पर उसके प्रेम मे फँस कर जयसिंह उसी के पास बैठे रहते थे और बाहर निकलना तक छोड दिया था। इस पर निम्न लिखित दोहा विहारी जी ने जयसिंह तक पहुँचवाया था।

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहि विकास यहि काल।
अली कली ही सो बँध्यो आगे कौन हवाल॥

इसको पाकर महाराज बाहर निकले और तभी से दरबार में विहारी जी का बडा मान होने लगा। पिता और पुत्र दोनों ही ऐसे महान कवि हों ऐसा उदाहरण कहीं और नहीं मिलता। कुछ लोग कहते हैं कि विहारी जी माथुर ब्राह्मण थे और ग्वालियर के निकट बसुआ गोविंदपुर में पैदा हुए थे, पर इनका केशवदास जी का पुत्र होना ओडछा के प्रमाणों से स्पष्ट साबित है। बसुवा गोविंदपुर कहने वाले लोग भी यह मानने पर विवश हैं कि बाल्य काल ही से यह बुन्देल खण्ड मे रहते थे। कारण यह है कि बुन्देल खण्ड ही इनका जन्म और निवासस्थान था।

कुछ लोगों का मत है कि सूर और तुलसी के बाद महाकवि देव सबसे बड़े कवि हुये हैं। बाज लोग इन्हें सूर और तुलसी से भी ऊँचा मानते हैं। उनका विचार है कि तुलसी दास और सूरदास महात्मा अवश्य बडे थे पर कविता मार्ग मे वे देव जी के पीछे ही रह जाते हैं। वास्तव में सूर, तुलसी, केशव और देव इन चारों की कविता मे निराले ही गुण हैं। ऐसे चार २ कवि किसी भाषा मे भी देखने मे नहीं आते। महाकवि देवदत्त उपनाम—देव इटावा के रहने वाले सनाढय ब्राह्मण थे। इनका जन्म स० १७३० वि० में हुआ और स० १८०२ वि० मे इनका देहान्त होना अनुमान सिद्ध है। इनकी कविता का एक उदाहरण दिया जाता है —

अनुराग के रगनि रूप तरगनि
अगनि ओप मनो उपनी।
कवि देव हिये सियरानी सबै
सियरानी को देखि सोहाग सनी॥
वर धामन वाम चढी बरसै
मुसुकानि सुधा घन सारघनी।

सखियान के आनन इन्दुन तें
अँखियान की वदनवार तनी ॥

ओड़छा के सनाढ्य ब्राह्मण कुल में संवत् १५६७ वि० में श्री व्यास दास का जन्म हुआ था। तत्कालीन ओड़छा नरेश मधुकर शाह के आप राज गुरु थे। पर दीक्षा लेकर विरक्त वैष्णव के रूप में वृन्दावन चले गये। वहाँ से महाराज मधुकर शाह स्वयं इन्हें बुलाने गये फिर भी यह न लौटे और श्री कृष्ण चन्द्र के चरणों ही में जन्म व्यतीत किया। भगवान के यह परम भक्त थे।

एक समय सम्राट अकबर ने माला और तिलक लगाकर दरबारियों को अपने दरबार में आने की मनाही कर दी थी। सब ने आज्ञा का पालन किया पर ओड़छानरेश महाराज मधुकर शाह एक भारी माला और तिलक धारण करके दरबार में पहुंचे। अकबर उनके साहस से बहुत प्रसन्न हुये और कहा कि केवल परीक्षा के लिये उन्होंने ऐसा हुक्म दिया था। तब से वैसा तिलक 'मधुकर शाही टीका' कहलाता है।

ओड़छा के महाराज जुझारसिंह राजदरबार में देहली बुला लिये गये थे। उनके पीछे उनके भाई हरदौल ओरछा का राज काज करते रहे। हरदौल अपनी भावज को माता के समान मानते थे। एक बड़े मुसलमान योधा ने ओड़छा आकर सारी राजपूत जाति को तलवार से लड़ने को ललकारा और कई वीरों की तलवार काट कर उन्हें हरा दिया। हरदौल यह अपमान नहीं सहन कर सके थे पर केवल महाराज जुझारसिंह वाली तलवार उस योधा की तलवार के काट को रोक सकती थी। हरदौल ने उसे महारानी से माँग कर उस योधा को परास्त कर दिया। पर महारानी का हरदौल को उनकी तलवार देना, जुझारसिंह को अच्छा नहीं लगा। इधर हरदौल की कार्य निपुणता से कुछ लोग उनसे जलने लगे थे, और उन्होंने जुझारसिंह के कान भरे। जुझारसिंह महारानी के आचरण पर सन्देह करने लगे, और अपने को निर्दोषी प्रमाणित करने को, उन्होंने महारानी से अपने हाथ से हरदौल को विष देने को कहा। हरदौल को यह मालूम होगया और उन्होंने खुशी से विषमिला हुआ भोजन महारानी से लेकर खा लिया। प्राण छूटते समय वे जुझारसिंह के चरण छूने गये। उस समय जुझारसिंह को अपनी मूर्खता पर पश्चाताप हुआ था। पर बुन्देलखण्ड में ग्राम ग्राम में चबूतरे बने हैं जिन पर

स्त्रियाँ 'हरदौल लला' का पूजन करती हैं। उन्होंने एक स्त्री का पातिव्रत साबित करने को अपने प्राण दिये थे।

संवत् १५८८ वि० से १८४० वि० तक ओड़छा नगर ओड़छा राज्य की राजधानी था। अब टीकमगढ राजधानी है।

च० द०—ओड़छा एक महारमणीय स्थान बेतवा नदी के किनारे खड़ा है। जहाँगीर का महल और कितने ही अन्य महल, भवन, देवमंदिर यहाँ विद्यमान हैं। ओड़छा के वर्तमान नरेश महि महेन्द्र हिज हाईनेस महाराजा सर वीरसिंह जू देव हिन्दी के बड़े प्रेमी व विद्वान हैं। आपने कवीन्द्र केशवदास जी की स्मृति में भी एक संस्था स्थापित की है जो बहुत उत्तम रीति से काम कर रही है। महाराज सर वीर सिंह जू देव की पितामही, महारानी वृषभानु कुंवरि जी देवी, अच्छी कवियत्री हो गई हैं।

७६ ओपियन—(*अफगानिस्तान में काबुल से २७ मील उत्तर एक नगरी*)

यह प्रसिद्ध सम्राट मिलिन्द की जन्मभूमि है जिनका महात्मा नागसेन से वार्तालाप हुआ था। अनुमान होता है कि ओपियन प्राचीन क्षत्रिय उपनिवेश है। यह नगर परशुस्थल की राजधानी था।

७७ ओरियन—(बिहार प्रान्त के मुंगेर ज़िले में एक गाँव)

ओरियन गाँव के पास एक पहाड़ी है। इस पहाड़ी पर कुछ समय तक भगवान बुद्ध रहे थे।

यहाँ भगवान बुद्ध की निशानियाँ पाई जाती हैं और पुराने समय में यह स्थान यात्रा के लिए प्रसिद्ध था।

## औ

७८ औंधारखेड़ा—(देखिये बटेश्वर)

## क

७९ कटाक्षराज—(पाकिस्तानी पंजाब के झेलम ज़िले में एक तीर्थ स्थान)

यहाँ पर पाण्डवों ने १२ साल के बनवास में कुछ दिन वास किया था। इस स्थान का असल नाम कटाक्ष है। कहते हैं कि सती के विलाप में शिव के नेत्र से बहे हुए जल से यहाँ का कुण्ड बन गया था।

सिंहपुर इस स्थान का दूसरा प्राचीन नाम है। इसे अर्जुन ने विजय किया था।

कुरुक्षेत्र व ज्वालामुखी के बाद कटाछराज पंजाब का सबसे बड़ा तीर्थ-स्थान है। यहाँ का पवित्र कुंड २०० फीट लम्बा, ऊपर की ओर १५० फीट चौड़ा और नीचे की ओर ८० फीट चौड़ा है। इसका कुछ भाग प्राकृतिक और कुछ बनाया हुआ है। बनाया हुआ भाग अब खराब हो गया है। यहाँ एक स्थान पर सात मन्दिर हैं जिन्हें सतघरा कहते हैं। बताया जाता है कि यह पाण्डवों के समय के हैं। यहाँ बहुत से और मन्दिर व पुरानी इमारतों के निशान हैं। वैशाख मास में कटाछराज का मेला होता है और यात्री लोग कुंड में नहाते हैं।

यहाँ के लोग कहते हैं कि यहीं नरसिंहावतार हुआ था। (देखिए मुल्तान)

८० कड़ा—(संयुक्त प्रदेश के इलाहाबाद ज़िले में एक क़स्बा)

नौ ऊखलों में से यह एक ऊखल है जहाँ से प्रलय के समय जल निकल कर सारी पृथिवी को डुबो देगा। इस स्थान का प्राचीन नाम काल ऊखल और करकोटक नगर है। सती का हाथ यहाँ गिरा था।

यहाँ मलूकदास का जन्म हुआ था, और उनकी समाधि है।

प्रा० क०—रेणुक, शूकर, काशी, काली काल, बटेश्वरः

*कालिञ्जर, महाकाल, ऊखल नव कीर्तयः*

अर्थात्, रेणुक (आगरा के समीप), शूकर (सोरों), काशी, कालीकाल (कड़ा), बटेश्वर, कालिञ्जर, महाकाल (उज्जैन) यह नौ कीर्ति पूर्ण ऊखल हैं।

अपने पिता के यज्ञ में अपने पति शिव का अनादर देख जब सती ने अपना शरीर छोड़ दिया था और शिव जी विलाप करके उस शरीर को लेकर घूमने लगे थे उस समय सती के अंग इधर उधर गिरे थे जिनमें से हाथ इस स्थान पर आकर गिरा था और इसी से इसका नाम करकोटक नगर पड़ा।

[सती—कनखल और उसके समीप के देश के राजा, प्रजापति दक्ष, की पुत्री थीं। इन्होंने घोर तप करके शिवजी को प्रसन्न करके उन्हें बरा था। दक्ष प्रजापति ने अपने यज्ञ में जो कनखल में हुआ था, शिवजी को नहीं बुलाया और उनका अनादर किया इसपर सती ने अपने प्राण दे दिये।

शिवजी ने दक्ष पर क्रुद्ध होकर उनका यज्ञ विध्वंस कर डाला था और सती के मृत शरीर को लेकर जगह जगह घूमते फिरे थे।]

प० द०—कडा, गंगा जी के किनारे पर बसा है। पहिले कोशाम्बी मंडल में यह एक कस्बा था पर १२०० ई० में मुसलमानों ने कोशाम्बी के स्थान पर इसे सूबे की राजधानी बनाया। १५७५ ई० में अकबर ने इलाहाबाद का क़िला बनाकर उसको राजधानी बना दिया, और तब से कडा उजडने लगा, यहाँ का क़िला कन्नौज के राजा जयचन्द का बनाया हुआ है।

आषाढ कृष्ण पक्ष का सप्तमी, अष्टमी व नवमी को कडा में गंगा स्नान का भारी मेला लगता है। चैत्र और श्रावण की अष्टमी को भी मेले लगते हैं। कालेश्वर शिव के प्रसिद्ध मन्दिर में पूजा पाठ की भीड रहती है।

८१ कणकाली—(बङ्गाल प्रान्त के बीरभूम जिला में एक तीर्थ स्थान)
यह स्थान ५२ पीठों में से एक है जहाँ सती की कमर गिरी थी।
कण काली देवी का मन्दिर श्मशान में नदी के किनारे बना है।

८२ कण्व आश्रम—( कुल ) ( देखिए मन्दावर )

८३ कनकपुर—( देखिए खुपुआ डीह )

८४ कनखल—( देखिए हरद्वार )

८५ कनहट्टी—(मैसूर राज्य में दुदेरी ताल्लुके में एक गाँव)
लिङ्गायत लोगों के महापुरुष टप्पा रुद्र का यहा समाधि मन्दिर है।
यहाँ प्रति वर्ष रथयात्रा के मेले में बहुत यात्री एकत्रित होते हैं।

८६ कनारक—( उडीसा प्रान्त में पुरी जिले में एक स्थान )
इस स्थान के प्राचीन नाम कोणार्क, अर्कक्षेत्र, सूर्यक्षेत्र तथा मित्र वन है।
यहाँ श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब कुष्ठ रोग से मुक्त हुए थे। (देखिए मथुरा)

प्रा० क०—( देवी भागवत—पूर्वार्द्ध, ६६ वाँ अध्याय ) नारद जी ने श्रीकृष्ण चन्द्र के पास जाकर कहा कि आप का पुत्र साम्ब अति रूपवान है इसलिये आप की सोलहों हजार रानियाँ उस पर मोहित हैं। कृष्ण चन्द्र की स्त्रियों के समीप जब साम्ब बुलाया गया तब उसका रूप देख कर स्त्रियों का चित्त चलायमान हो गया। उस समय श्री कृष्ण भगवान ने स्त्रियों को शाप दिया कि तुमको पति लोक और स्वर्ग की प्राप्ति न होगी और अन्त में तुम लोग चोरों के वश में पडोगी। इसी शाप से श्रीकृष्ण के वैकुण्ठ जाने के पीछे, अर्जुन के देखते देखते सब स्त्रियों को चोर हर ले गये। इसके पीछे श्रीकृष्ण चन्द्रने साम्ब को भी शाप दिया कि तू कुष्ठी होगा।

( १२१ वाँ अध्याय ) साम्ब चन्द्रभागा नदी के तट पर मित्र वन नामक सूर्य के क्षेत्र में जाकर तप करने लगा। सूर्य ने प्रकट होकर साम्ब का रोग दूर किया और चन्द्रभागा के तट पर अपनी प्रतिमा स्थापन करने के लिये उसको आज्ञा दी।

( १२२ वाँ अध्याय ) साम्ब ने नदी में बही जाती हुई सूर्य की प्रतिमा को पाया जिसको विश्वकर्मा ने कल्प वृक्ष के काष्ठ से बनाकर नदी में बहाया था। साम्ब ने मित्र वन में मन्दिर बना कर विधि पूर्वक प्रतिमा को स्थापन किया। इस स्थान में परब्रह्म स्वरूप जगत के स्वामी सूर्य नारायण ने मित्ररूप से तप किया था।

व० द० कनारक में सूर्य का विचित्र और प्रसिद्ध एक पुराना मंदिर है। उड़ीसा के लेखों से जान पड़ता है कि राजा नृसिंह देव लंगोर ने उड़ीसा की १२ वर्ष की आमदनी खर्च करके सन् १२३७ और सन् १२८२ ई० के बीच में वर्त्तमान मंदिर को बनवाया था। मंदिर का शिखर गिर गया है। इसकी दीवारें बीस २ फीट तक मोटी हैं। मन्दिर काली पत्थर से बना है। पत्थर के टुकड़े लोहे से एक दूसरे में जड़ दिये गये हैं। यह इस समय अतिशय हीन दशा में पड़ा हुआ है। (मथुरा की कृष्ण गङ्गा में स्नान करके भी साम्ब के कुष्ट रोग का दूर होना बतलाया जाता है।)

८७ कनिष्ठ पुष्कर—( देखिये पुष्कर )

८८ कन्धार—( अफगानिस्तान में एक प्रसिद्ध नगर )

इस का प्राचीन नाम गान्धार था।

काबुल के नीचे के देश व कन्धार को गान्धार देश कहते थे।

कौरवों की माता गान्धारी, जो धृतराष्ट्र को ब्याही थी, यहीं की थी।

कन्धार के पास भगवान बुद्ध का भिक्षापात्र मौजूद है।

पहिले भगवान बुद्ध का भिक्षापात्र वैशाली में था। वहाँ से पेशावर में आया। फाहीयान के समय, ४०२ ई० में, वह पेशावर ही में था। ह्वान च्वांग के समय, ६३० ई० में, वह फारस ( ईरान ) में था और अब कन्धार के समीप है। सर एच० रालिन्सन लिखते हैं कि मुसलमान लोग इसे बड़ी श्रद्धा से पूजते हैं और पैगम्बर का कमण्डल कहते हैं।

अफगानिस्तान में काबुल के बाद कन्धार सब से बड़ा शहर है।

८९ कन्नौज—( संयुक्त प्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में एक कस्बा )

कन्नौज का प्राचीन नाम कन्या कुब्ज है।

वायु के शाप से कुश नाम की १०० कन्यायें यहाँ कुबड़ी हो गई थीं।
विश्वामित्र के पिता राजा गाधि की यहाँ राज धानी थी।
यहीं विश्वामित्र का जन्म हुआ था।
भगवान बुद्ध ने संसार की असारता पर यहाँ उपदेश दिया था। चार पूर्व बुद्धों ने भी यहाँ निवास किया था।
भगवान बुद्ध का दाँत इस नगर में एक विहार में रक्खा था और एक स्तूप में उनके नाखून और बाल थे।
अश्वत्थामा का स्थान कन्नौज के समीप है।
राजा जयचन्द ने यहाँ अश्वमेध यज्ञ किया था और वीर पृथ्वीराज यहाँ से उनकी पुत्री संयोगिता को स्वयम्बर से हर ले गये थे। यह भारतवर्ष का अंतिम अश्वमेध यज्ञ और अन्तिम स्वयम्बर था।
कन्नौज अपने विद्वत्त भाषा के लिये प्रसिद्ध है।
यहाँ महाकवि भवभूति, वाण भट्ट ( कादम्बरी व हर्ष चरित्र के लेखक ), राजशेखर तथा श्री हर्ष (नैषध चरित्र के लेखक) आदि अनेक उद्भट विद्वान तथा प्रसिद्ध कवि हुए हैं।
मा० क०—( महाभारत, अनुशासन पर्व, ४ था अध्याय ) ऋचीक मुनि ने राजा गाधि से कन्या के लिये प्रार्थना की। राजा ने कहा कि हे मुनीश्वर ! तुम मुझको सहस्र श्यामकर्ण घोड़े दो तब मैं तुमको अपनी कन्या दूँगा। तब मुनि ने वरुण देव से कहा कि हे देव सत्तम ! तुम मुझको एक सहस्र श्यामकर्ण घोड़े दो,वरुण ने कहा कि बहुत अच्छा, तुम जिस स्थान पर चाहोगे, उसी स्थान पर घोड़े प्रकट हो जायँगे। उसके पश्चात् ऋचीक मुनि के ध्यान करते ही एक सहस्र शुक्ल वर्ण के श्यामकर्ण घोड़े गंगा जल से प्रकट हो गये। कन्याकुब्ज अर्थात् कन्नौज देश के समीप जिस स्थान में घोड़े प्रकट हुए थे उसको अश्वतीर्थ कहते हैं। राजा गाधि ने मुनि से घोड़ों को लेकर उनको सत्यवती नामक अपनी कन्या प्रदान कर दी।

ह्यान चांग की यात्रा के समय कन्नौज महाराज हर्षवर्धन की राजधानी थी जिनका राज्य काश्मीर से आसाम और नैपाल से नर्वदा तक था। उन्होंने काश्मीर के राजा को धमका कर उनसे भगवान बुद्ध का दांत जो वहाँ था, कन्नौज मँगवा लिया था। एक विहार में यह दाँत रक्खा गया था और रोज़ भक्तों को देखने दिया जाता था। जहाँ भगवान बुद्ध ने संसार की असारता पर उपदेश दिया था वहाँ महाराज अशोक ने २००

फीट ऊँचा एक स्तूप बनवाया था। एक स्तूप में बुद्ध देव के बाल और नख रक्खे हुये थे और अन्य स्तूप उस जगह पर थे जहाँ पूर्व चार बुद्ध यहाँ पर रहे थे।

कई शताब्दी तक कन्नौज उत्तरीय भारत की राजधानी था। शहर के चारों ओर भारी चहारदीवारी और खाई थी और पूर्व में गंगा जी बहती थीं।

महाराज जयचन्द यहाँ के अन्तिम हिन्दू सम्राट थे। उनके साथ कन्नौज का भी पतन हुआ। जयचन्द ने भारतवर्ष में अन्तिम अश्वमेध यज्ञ किया था और अपने समय के सब से बड़े राजा होने का दावा था। अपनी परम सुन्दरी राजकुमारी संयोगिता का उन्होंने स्वयम्बर किया और ईर्षा वश वीर पृथ्वीराज की मूर्ति को द्वारपाल की जगह पर खड़ा कर दिया। कुमारी संयोगिता ने उसी मूर्ति के गले में जय माल डाल दी। उसी समय वीर पृथ्वीराज आ पहुँचे और कुमारी को स्वयम्बर से उठा ले गये। प्रसिद्ध बनाफर सरदार आल्हा व ऊदल ने इनका मुकाबिला किया पर पृथ्वीराज संयोगिता को लेकर चले गये। जयचन्द्र ने स्वयं वीर पृथ्वीराज से टक्कर लेने की शक्ति अपने में न पाकर विदेशी मोहम्मद गोरी को भारतवर्ष आने का न्योता दिया और पृथ्वीराज के विरुद्ध सहायता देने का प्रलोभन दिया। गोरी कई बार पृथ्वीराज से हारा और पृथ्वीराज ने उसे पकड़ कर छोड़ दिया, पर एक बार वह सफल हुआ और नीच ने तुरन्त महाराज पृथ्वीराज को अन्धा कर दिया। देश के वैरी जयचन्द्र को दूसरे ही वर्ष अपनी करतूत का फल मिल गया। गोरी ने उस पर चढ़ाई की और वह भागते समय गंगा जी में नाव डूब जाने से वहाँ डूब कर मर गया। लिखा गया है कि मोहम्मद गोरी के समय में कन्नौज जैसा दूसरा शहर नहीं था। सम्राट हर्षवर्धन के समय में यहाँ की विशेष उन्नति हुई थी।

[ प्रजापति के पुत्र कुश हुए। इन्हीं के वंश में एक महाराज गाधि हुए और गाधि के पुत्र महाराज विश्वामित्र थे

महर्षि विश्वामित्र जी के समान सतत लगन के पुरुषार्थी ऋषि शायद ही कोई और हों। उन्होंने अपने पुरुषार्थ से क्षत्रियत्व से ब्रह्मत्व प्राप्त किया था। राजर्षि से महर्षि बने, सप्तर्षियों में अग्रगण्य हुये, और वेद माता गायत्री के द्रष्टा ऋषि हुये।

इन्हीं ही ने महाराज रामचन्द्र जी को शस्त्र विद्या सिखायी थी और उनको सीता-स्वयंवर में जनकपुर ले गये थे। इनकी कीर्ति कथाओं से पुराण भरे पड़े हैं।]

य० द०—कन्नौज गंगा और काली नदी के संगम से ५ मील पर काली नदी के बाँये किनारे पर एक पुराना क़स्बा है। वर्तमान शहर पुराने नगर के उत्तरी कोने और टूटे किले में बसा है। अब देखने योग्य चीज़ों में रङ्ग महल के खण्डहर हैं जिसे जयचन्द से पहले महाराज अजयपाल ने बनाया था कदाचित् यहीं से पृथ्वीराज संयोगिता को ले गए थे। दूसरा स्थान सूर्यकुण्ड है जहाँ भादों में मेला लगता है। भगवान बुद्ध का स्तूप शहर से सवा मील दक्षिण पूर्व में था। अब उसके चिन्ह नहीं हैं। अन्य स्तूपों के भी चिन्ह नहीं हैं। जिस विहार में बुद्ध देव का दाँत रक्खा था उसका स्थान वर्तमान 'लाल मिश्र टोला' महल्ले में है।

कन्नौज से २८ मील दक्षिण पूर्व, नटराजपुर स्टेशन से २ मील दूर एक सुन्दर पुराने मन्दिर में खेटेश्वर महादेव हैं, और वहाँ से ५०० क़दम दक्षिण पश्चिम महाभारत के प्रसिद्ध अश्वत्थामा का स्थान है। कहा जाता है कि खेटेश्वर महादेव की अश्वत्थामा ही ने स्थापना की थी (गोपीचन्द नाटक छठा अङ्क)। फाल्गुन की शिवरात्रि को यहाँ मेला होता है और सावन के प्रत्येक सोमवार को बहुत लोग दर्शन को आते हैं। मन्दिर के चारों ओर १४ मील के घेरे में गढ़े हुए बहुतेरे पुराने पत्थर निकलते हैं किन्तु लोग डर के मारे उन ईंटा पत्थरों को अपने काम में नहीं लगाते।

घाघ जिनकी कहावतें गाँव गाँव में मशहूर हैं, उनका जन्म १७५३ वि० में कन्नौज में हुआ था। मोटिया नीति इन्होंने बड़ी ज़ोरदार ग्रामीण भाषा में कही है, जैसे—

कुच कट पनही बन कट जोय। जो पहिलौठी बिटिया होय॥
पातर कृषी बौरहा भाय। घाघ कहैं दुख कहाँ समाय॥

९० कपिलधारा—(बम्बई प्रांत में नासिक से २४ मील पर एक क़स्बा)
यहाँ कपिल मुनि की कुटी थी।

अमर कंटक से निकल कर नर्मदा सर्व प्रथम इसी स्थान में होकर बहती हैं।

९१ कपिल वस्तु—(देखिए भुइला डीह)

९२ कम्पिला—(संयुक्त प्रदेश के फर्रुखाबाद ज़िले में एक क़स्बा)

इस स्थान पर श्री विमलनाथ जी ( तेरहवें तीर्थङ्कर ) के गर्भ, जन्म, दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुए हैं।

जैन ग्रंथों में इस स्थान को कपिल्यपुर भी कहते हैं।

पाचाल देश की यह राजधानी थी। द्रौपदी का स्वयंवर इसी स्थान पर हुआ था। श्री कृष्ण और पाण्डव इस स्वयंवर में आये थे और अर्जुन ने स्वयम्बर को जीत कर द्रौपदी को पाया था।

प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य्य वराह मिहिर की यह जन्मभूमि है।

प्रा० क०-प्राचीन पाचाल देश हिमालय पर्वत से लेकर चम्बल नदी तक फैला हुआ था। महाभारत के थोडा पहिले द्रोणाचार्य ने पचाल के राजा द्रुपद ( द्रौपदी के पिता ) को परास्त करके उत्तरी पचाल को अपना राज्य बना लिया और उसकी राजधानी अहिच्छेत्र ( रामनगर ) हुई। द्रोण ने दक्षिणीय पचाल राजा द्रुपद को लौटा दिया और कम्पिल्य उसकी राजधानी थी। यहीं द्रौपदी का स्वयम्बर हुआ था।

[ श्री विमलनाथ स्वामी, तेरहवें तीर्थंकर, का जन्म माता श्यामा के उदर से पिता सुकृत वर्मा के घर कम्पिला में हुआ था। आपकी दीक्षा और कैवल्य ज्ञान भी यहीं हुए, और पार्श्वनाथ पर्वत पर निर्वाण हुआ था। आप का चिन्ह शूकर है। ]

[ महाराज द्रुपद के यहाँ यज्ञ कुण्ड से द्रौपदी का प्रादुर्भाव हुआ था। इनके धृष्टद्युम्न और शिखण्डी दो भाई थे। द्रौपदी का शरीर कृष्णवर्ण के कमल के समान सुकुमार और सुन्दर था, इसलिये इनका एक नाम कृष्णा भी था अपने समय की यह अद्वितीय रूप लावण्य युक्त ललना थी। विवाह युक्त होने पर राजा द्रुपद ने इनका स्वयम्बर रचा था जिसमें अर्जुन ने इन्हें पाया। कृष्ण भगवान की यह परम भक्त थीं। युधिष्ठिर के साथ राज्याभिषेक में यही सिंहासन पर बैठी थीं। ]

व० द०—कम्पिला में पुरानी इमारतों के निशान अब नहीं हैं। बुढगगा के किनारे पर कुछ टीले हैं, इनमें से सबसे पूर्व वाला, राजा द्रुपद के महल का स्थान जहाँ स्वयम्बर हुआ था, बताया जाता है।

कम्पिला में जैन मन्दिर और धर्मशाला है और चैत्र मास में रथोत्सव होता है।

कविराज सुखदेव मिश्र यहाँ एक अच्छे कवि हो गये हैं। अनुमान है कि इनका जन्म काल १६६० वि० के लगभग था और १७६० वि० तक जीवित रहे।

९३ करतारपुर—(पाकिस्तानी पंजाब के स्यालकोट जिले में एक स्थान)
करतारपुर को गुरू नानक ने १५६१ वि० में बसाया था।
गुरू नानक जी ने यहीं शरीर छोड़ा था।
गुरू अङ्गद उनके स्थान पर यहाँ गद्दी पर बैठे थे।
'गुरुद्वारा श्री करतारपुर' के नाम से यहाँ एक मशहूर सिक्ख गुरुद्वारा है।

९४ करनवेल—( देखिये तेवर )

९५ करवीर—( देखिये कोल्हापुर )

९६ कर्ण प्रयाग—( हिमालय पर गढ़वाल में एक स्थान )

इस स्थान पर कुन्ती के पुत्र कर्ण ने सूर्य का बड़ा यज्ञ किया था।

(स्कंद पुराण केदारखण्ड प्रथम भाग, ८१वाँ अध्याय) महाराज कर्ण ने कैलाश पर्वत पर नन्द पर्वत के निकट गंगा और पिंडारक के संगम के समीप शिव क्षेत्र में सूर्य का बड़ा भारी यज्ञ किया। सूर्य भगवान ने कर्ण को अभेद्य कवच, अक्षय तूणीर और अजेयत्व दिया और उस क्षेत्र का नाम कर्ण प्रयाग रक्खा।

पिंडारक नदी जिसको कर्ण गंगा भी कहते हैं, यहाँ अलक नन्दा से मिल गई है। कर्ण गंगा के दाहिने किनारे पर कर्ण का मन्दिर और संगम पर कर्ण शिला नामक एक छोटी चट्टान है। कर्ण प्रयाग गढ़वाल प्रान्त के प्रसिद्ध पाँच प्रयागों में से एक है।

९७ कर्दम आश्रम—(देखिये सिद्धपुर)

९८ कर्नाल—( पंजाब प्रांत में एक जिले का सदर स्थान )

ऐसा कहा जाता है कि कुन्ती पुत्र कर्ण ने कर्नाल बसाया था।

कर्नाल जिले का उत्तरी बड़ा भाग कुरुक्षेत्र में शामिल है, और दक्षिण में पानीपत उन पाँच गाँवों में से है जिन्हें युधिष्ठिर ने दुर्योधन से माँगा था।

( महाभारत, उद्योगपर्व ३१वाँ अध्याय ) राजा युधिष्ठिर ने दुर्योधन से कहा यदि हमको आधा राज्य नहीं दोगे तो अविस्थल, वृकस्थल, माकंदी,

वारणावत और पाँचवा जो तुम्हारी इच्छा हो वही पाँच गाँव दे दो।

( इन्हीं पाँचों में से एक पानीपत है )

९९ कलकत्ता—( बगाल प्रांत की राजधानी )

यहाँ ५२ पीठों मे से एक काली पीठ है जहाँ सती के दाहिने पैर की चार उँगलियाँ गिरी थीं।

यह महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर की जन्म भूमि है।

यहीं ब्रह्मानन्द केशव चन्द्र सेन का जन्म हुआ था।

स्वामी विवेकानन्द का भी यह जन्म स्थान है।

कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने भी यहीं जन्म लिया था।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने कलकत्ता में निवास किया था।

प्रा० क०—[ महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म कलकत्ता मे बंगाल के सुप्रसिद्ध ठाकुर परिवार में सन् १८१७ में हुआ था। आपका चित्त वनपर्वतों ही में शांति पाता था और धन के प्रति मन में गहरी घृणा उत्पन्न हो गई थी। केवल ईश्वर अनुसंधान में मन रहता था और गायत्री जप करते हुए आपने प्रभु चरणों में अपने प्राणों का विसर्जित कर दिया था। ]

[ सन् १८३८ ई० की नवम्बर में महात्मा केशवचन्द्र सेन का जन्म कलकत्ते में हुआ था। आपकी विरक्ति और धर्म जिज्ञासा प्रतिदिन बढ़ती गई सन् १८५७ ई० में आपने ब्राह्म धर्म की दीक्षा ली और कुछ काल अनन्तर आप ब्राह्म समाज के आचार्य बनाये गये तथा ब्रह्मानन्द की उपाधि मिली। आगे चल कर आपने अपने धर्म का नाम 'नव विधान' रक्खा। ब्रह्म धर्म प्रचार के लिए आपने देश विदेश ( विलायत ) में खूब भ्रमण किया, और ४६ वर्ष की अवस्था में ही अपनी मानवलीला संवरण कर दी। ]

[ स्वामी विवेकानन्द जी ने कलकत्ते में एक कायस्थ घराने में सन् १८६२ ई० में जन्म लिया था। सन् १८८६ ई० में इन्होंने सन्यास लिया और श्रीराम कृष्ण परमहंस जी के शिष्य हो गये। कुछ काल इन्होंने एकान्त में रह कर साधना की और १८९३ ई० में शिकागो ( अमेरिका ) में संसार भर के धर्मों की पार्लियामेंट में सम्मिलित होकर वेदान्त पर भाषण करके सारे जगत को चकित कर दिया था। आपने १९०२ ई० में नश्वर शरीर का त्याग किया। ]

[ कवि सम्राट रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने बंगाल के परम प्रसिद्ध ठाकुर कुल में सन् १८६१ ई० में जन्म लिया था। आपने 'शांति निकेतन' स्थापित करके मानव जाति का उपकार किया है। अपनी पुस्तक "गीतांजलि" पर संसार का

सबसे बड़ा पुरस्कार नोबिल प्राइज पाया था। महात्मा गाँधी इन्हें 'गुरु देव' कहते थे। १९४१ ई० में इन्होंने शरीर छोड़ा। ]

व० द०—कलकत्ता भारतवर्ष का अव्वल शहर गिना जाता है, और श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, देशबन्धु चितरजनदास, श्री सुभाषचन्द्र बोस और मौलाना अबुल कलाम आजाद जैसे नेताओं का यह कार्य क्षेत्र रहा है। देशबंधु चितरंजनदास का १८७० ई० में यहीं जन्म भी हुआ था। १९२५ ई० में दार्जिलिंग में उन्होंने शरीर छोड़ा। कलकत्ता ही में सदल मिश्र और लल्लू जी लाल ने जो वर्तमान हिन्दी गद्य के जन्म दाता कहे जाते हैं और फोर्ट विलियम कॉलिज में नौकर थे, १८६० ई० में पहिले गद्य लिखे थे।

१०० कलपेश्वर—( देखिये केदारनाथ )

१०१ कलापग्राम—( संयुक्त प्रांत में बद्रिकाश्रम के पास एक ग्राम )

यहाँ मरु तथा देवापि ने तपस्या की थी।

वायुपुराण ( अ० १ ) में लिखा है कि पुरूरवा और ऊर्वशी ने कुछ दिन यहाँ बिताये थे।

[ मरू सूर्यवंश के और देवापि चन्द्र वंश के अन्तिम सम्राट् थे जिन्होंने कलाप ग्राम में तपस्या की कि कल्कि अवतार के म्लेच्छों के नष्ट करने के उपरांत वे फिर अयोध्या व हस्तिनापुर में राज्य करें। ]

१०२ कलियानी—( देखिए कल्यानपुर )

१०३ कलिपनाक—( देखिए बड़गाँवाँ )

१०४ कल्याणपुर—( हैदराबाद रियासत में एक नगर )

मिताक्षरा के प्रसिद्ध लेखक विज्ञानेश्वर की यह जन्मभूमि है। इसे कल्याण भी कहते थे, और यह प्राचीन कुंतल देश की राजधानी थी।

यह स्थान बीदर से ३६ मील पश्चिम में है और कल्यानी भी कहलाता है।

१०५ कश्मीर—( भारतवर्ष के उत्तर में सुविख्यात भारी राज्य )

महर्षि कश्यप कश्मीर में निवास करते थे।

यहाँ उत्तर के सम्पूर्ण ऋषि गण, राजा ययाति, कश्यप और अग्नि का संवाद हुआ था।

कश्मीर का प्राचीन नाम कश्यप मीर था। श्रीनगर से ३ मील हरि पर्वत पर महर्षि कश्यप का आश्रम था और यहां शारिका देवी का मंदिर है जो पीठों में से एक है जहाँ सती का गला गिरा था।

वारणावत और पाँचवाँ जो तुम्हारी इच्छा हो यही पाँच गाँव दे दो।

( इन्हीं पाँचों में से एक पानीपत है )

९९ कलकत्ता—( बंगाल प्रांत की राजधानी )

यहाँ ५२ पीठों में से एक काली पीठ है जहाँ सती के दाहिने पैर की चार उँगलियाँ गिरी थी।

यह महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर की जन्म भूमि है।

यहीं ब्रह्मानन्द केशव चन्द्र सेन का जन्म हुआ था।

स्वामी विवेकानन्द का भी यह जन्म स्थान है।

कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने भी यहीं जन्म लिया था।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने कलकत्ता मे निवास किया था।

प्रा० क०—[ महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म कलकत्ता में बंगाल के सुप्रसिद्ध ठाकुर परिवार में सन् १८१७ में हुआ था। आप का चित्त वनपर्वतों ही में शांति पाता था और धन के प्रति मन में गहरी घृणा उत्पन्न हो गई थी। केवल ईश्वर अनुसंधान में मन रहता था और गायत्री जप करते हुए आपने प्रभु चरणों में अपने प्राणों को विसर्जित कर दिया था। ]

[ सन् १८३८ ई० की नवम्बर में महामना **केशवचन्द्र सेन** का जन्म कलकत्ते में हुआ था। आपकी विरक्ति और धर्म जिज्ञासा प्रतिदिन बढ़ती गई सन् १८५७ ई० में आपने ब्राह्म धर्म की दीक्षा ली और कुछ काल अनन्तर आप ब्राह्म समाज के आचार्य बनाये गये तथा ब्रह्मानन्द की उपाधि मिली। आगे चल कर आपने अपने धर्म का नाम 'नव विधान' रक्खा। ब्राह्म धर्म प्रचार के लिए आपने देश विदेश ( विलायत ) में खूब भ्रमण किया, और ४६ वर्ष की अवस्था में ही अपनी मानवलीला संवरण कर दी। ]

[ स्वामी विवेकानन्द जी ने कलकत्ते में एक कायस्थ घराने में सन् १८६२ ई० में जन्म लिया था। सन् १८८६ ई० में इन्होंने सन्यास लिया और श्रीरामकृष्ण परमहंस जी के शिष्य हो गये। छः साल इन्होंने एकान्त में रह कर साधना की और १८९३ ई० में शिकागो ( अमेरिका ) में संसार भर के धर्मों की पार्लियामेंट में सम्मिलित होकर वेदान्त पर वार्ता करके सारे जगत को चकित कर दिया था। आपने १९०२ ई० में नश्वर शरीर का त्याग किया।]

[ **कवि सम्राट रवीन्द्र नाथ ठाकुर** ने बंगाल के परम प्रसिद्ध ठाकुर कुल में सन् १८६१ ई० में जन्म लिया था। आपने 'शांति निकेतन' स्थापित करके मानव जाति का उपकार किया है। अपनी पुस्तक "गीतांजलि" पर संसार का

सबसे बड़ा पुरस्कार नोबिल प्राइज पाया था। महात्मा गाँधी इन्हें गुरु देव कहते थे। १९४१ ई० में इन्होंने शरीर छोड़ा।]

व० द०—कलकत्ता भारतवर्ष का अव्वल शहर गिना जाता है, और श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, देशबन्धु चितरंजनदास, श्री सुभाषचन्द्र बोस और मौलाना अबुल कलाम आजाद जैसे नेताओं का यह कार्य क्षेत्र रहा है। देशबंधु चितरंजनदास का १८७० ई० में यहीं जन्म भी हुआ था। १९२५ ई० में दार्जिलिंग में उन्होंने शरीर छोड़ा। कलकत्ता ही में सदन मिश्र और लल्लू जी लाल ने जो वर्तमान हिन्दी गद्य के जन्म दाता कहे जाते हैं और फोर्ट विलियम कॉलेज में नौकर थे, १८६० वि० में पहिले गद्य लिखे थे।

१०० कलपेश्वर—( देखिये केदारनाथ )

१०१ कलापग्राम—( संयुक्त प्रांत में बद्रिकाश्रम के पास एक ग्राम )

यहाँ मरू तथा देवापि ने तपस्या की थी।

वायुपुराण ( अ० १ ) में लिखा है कि पुरुरवा और उर्वशी ने कुछ दिन यहाँ बिताये थे।

[ मरू सूर्यवंश के और देवापि चन्द्र वंश के अन्तिम सम्राट् थे जिन्होंने कलाप ग्राम में तपस्या की कि कल्कि अवतार के म्लेच्छों के नष्ट करने के उपरांत वे फिर अयोध्या व हस्तिनापुर में राज्य करें।]

१०२ कलियानी—( देखिए कल्यानपुर )

१०३ कलिपनाक—( देखिए बड़गाँवाँ )

१०४ कल्याणपुर—( हैदराबाद रियासत में एक नगर )

मिताक्षरा के प्रसिद्ध लेखक विज्ञानेश्वर की यह जन्मभूमि है। इसे कल्याण भी कहते थे, और यह प्राचीन कुंतल देश की राजधानी थी।

*यह स्थान बीदर से ३६ मील पश्चिम में है और कल्यानी भी कहलाता है।*

१०५ कश्मीर—( भारतवर्ष के उत्तर में सुविख्यात भारी राज्य )

महर्षि कश्यप कश्मीर में निवास करते थे।

यहाँ उत्तर के सम्पूर्ण ऋषि गण, राजा ययाति, कश्यप और अग्नि का संवाद हुआ था।

कश्मीर का प्राचीन नाम कश्यप मार था। श्रीनगर से ३ मील हरि पर्वत पर महर्षि कश्यप का आश्रम था और यहाँ शारिका देवी का मंदिर है जो पीठों में से एक है जहाँ सती का गला गिरा था।

कश्मीर घाटी के पूर्व छोर के पास मार्तण्ड ( सूर्य ) का प्राचीन स्थान वड्डा तीर्थ है। इससे और आगे अमरनाथ शिव का स्थान रुद्र तीर्थ है।

मत्स्यावतार कश्मीर की घाटी में हुआ था। जिस समय यह घाटी जल मय था।

जगद्गुरु शङ्कराचार्य श्रीनगर में पधारे थे।

प्रा० र०—(महाभारत वन पर्व ८२वां अध्याय) कश्मीर देश में तक्षक नाग का वन सब पापों का हरने वाला है। वहाँ वितस्ता ( झेलम ) नदी में स्नान करने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है और मुक्ति मिलती है। वहाँ से वड्डा तीर्थ में जाकर प्रातःकाल में विधि पूर्वक स्नान करना चाहिये। वहाँ सूर्य का नैवेद्य चढ़ाने से लाख गोदान, सहस्र राजसूय यज्ञ और सहस्र अश्वमेध यज्ञ करने का फल होता है। वहाँ से रुद्र तीर्थ जाना चाहिये जहाँ महादेव की पूजा करने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है।

( वन पर्व १३०वाँ अध्याय ) परम पवित्र कश्मीर देश में महर्षि गण निवास करते हैं। उसी स्थान में उत्तर के सम्पूर्ण ऋषि गण, राजा ययाति, कश्यप और अग्नि का संवाद हुआ था।

राजतरंगिणी में लिखा है कि कश्यप मुनि ने एक दैत्य को निकाल कर अपने तपोबल से कश्मीर मंडल का निर्माण किया।

बहुतों का मत है कि कश्मीर, कश्यप मेरु का अपभ्रंश है।

राजतरंगिणी में उल्लेख है कि जब मगध देश के राजा जरासन्ध ने मथुरापुरी पर आक्रमण किया तब उसका मित्र कश्मीर का आदिगोनर्द भी अपनी सेना लेकर उसके साथ गया था जो बलदेव जी के शस्त्र से मारा गया। उसका पुत्र बालगोनर्द महाभारत के समय बालक था इससे पांडवों या कौरवों ने उसे अपनी सहायता के लिये नहीं बुलाया।

पहिले कश्मीर के निवासी सूर्य के उपासक थे, पीछे बौद्धों का यह प्रधान स्थान हुआ और बौद्ध मत यहाँ से सब दिशाओं में फैला था। सम्राट अशोक ने मज्झन्तिक ( मध्यान्तिक ) नामक बौद्ध भिक्षु को सर्व प्रथम बौद्ध धर्म प्रचारार्थ यहाँ भेजा था।

श्रीनगर के [illegible], 'शङ्कराचार्य' है जिसे अब तख्ते सुलेमान कहते हैं [illegible] पुराना [illegible] है। इस पर भी शङ्कराचार्य रहे थे। और [illegible] अशोक के पुत्र कुनाल ने एक [illegible] बनवाया था जो

बाद को मसजिद बना दिया गया था। महादेव ज्येष्ठ रुद्र का मन्दिर इस पहाड़ी की चोटी पर था।

[ब्रह्मा ने छः मानसिक पुत्र उत्पन्न किये थे मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु। उनमें से मरीचि के पुत्र महर्षि कश्यप हुए। दक्ष प्रजापति ने अपनी तेरह कन्याओं का विवाह इनके साथ कर दिया और उन्हीं के इतनी सतान हुई कि सारी सृष्टि भर गई। इन तेरहों में अदिति इनकी सब से प्यारी पत्नी थी। इनसे इन्द्रादि समस्त देवता हुए। अदिति और कश्यप के महा तप के प्रभाव से जीवों को निर्गुण भगवान के सगुण रूप में दर्शन हो सके। यह महानुभाव ही भगवान को निर्गुण से सगुण साकार बनाने वाले हैं।]

व० ट०—कश्मीर की राजधानी श्रीनगर, रावलपिंडी से १६२ मील है। इसे राजा प्रवरसेन ने छठी शताब्दी ईसवी में बसाया था और इसका नाम प्रवरपुर था। कश्मीर के पहाड़, वन, झीलों की विचित्र नुमायश है। यह देश इस पृथिवी का स्वर्ग कहा जाता है। कश्मीर में मेवा, फल, केसर आदि घाटी भर में उत्पन्न होते हैं और यह घाटी जलवायु और खूबसूरती के लिये अद्वितीय है।

कश्मीर के पूर्वोत्तर में अमरनाथ शिव का गुहा मन्दिर है। गुहा के ऊपर से नीचे तक लिङ्गाकार जल की धारा सर्वदा गिरती है और जाड़ों में भी लिंगाकार बर्फ में परिणित हो जाती है। इसको शिव लिंग कहते हैं। यहाँ सलोनो के पर्व के समय यात्रियों का बड़ा मेला होता है और रक्षाबन्धन के दिन यात्रीगण शिव दर्शन करते हैं। राज्य की ओर से यात्रियों के साथ रक्षक, औषधि, रसद आदि का प्रबन्ध श्रीनगर से अमरनाथ तक रहता है। एक ही साथ सब यात्री श्रीनगर से प्रस्थान करते हैं। एक एक करके उस विकट रास्ते से कोई नहीं जा सकता।

श्रीनगर से अमरनाथ के लगभग आधे रास्ते पर एक ऊँचे प्लेटो पर मार्तण्ड अर्थात् सूर्य का प्रसिद्ध पुराना स्थान है। श्रीनगर से ३ मील पर हरि० पर्वत है। इसी पर्वत पर शारिका देवी का मन्दिर है।

कादम्बरी में वर्णित अच्छोद सरोवर कश्मीर में 'अच्छावत' नाम से अब प्रसिद्ध है। कल्हण की राजतरंगिणी में कश्मीर का विस्तृत वर्णन है। कश्मीर की पुरानी राजधानी अनन्तनाग थी जिसका नाम मुसलमानों ने बदल कर इस्लामाबाद कर दिया था।

कश्मीर देश में गर्मी कभी तेज नहीं होती। इस विषय में राजतरंगिणी के लेखक कल्हण कवि कहते हैं कि सूर्य देव कश्मीर मण्डल को अपने पिता (कश्यप) का रचा हुआ जान करके उसको सताप रहित रखने के लिये यहाँ गर्मी के दिनों में भी तेज किरणों को धारण नहीं करते।

श्रीनगर से ३२ मील पर बरामुला में वराहावतार का होना बतलाया जाता है, पर यह प्रमाणित नहीं है। (देखिये वाराहक्षेत्र।)

१०६ कसिया—(संयुक्त प्रांत के देवरिया जिले में एक कस्बा),

यहाँ भगवान बुद्ध ने अपना शरीर छोड़ा था।

इसके प्राचीन नाम कुशीनगर, कुशीनारा, कुशीनगरी और कुशो ग्रामिका है।

भगवान बुद्ध के अंतिम शिष्य ब्राह्मण-सुभद्र को भी यहीं निर्वाण प्राप्त हुआ था।

यहाँ से अनिरुद्ध, महारानी मायादेवी (भगवान बुद्ध की माता) को भगवान बुद्ध के महा परि निर्वाण प्राप्त करने (बैकुंठवास होने) का समाचार देने को स्वर्ग गये थे।

एक पूर्व जन्म में भगवान बुद्ध जब हिरण थे तब यहाँ एक खरगोश की जान बचाने में अपनी जान देदी थी। एक और पूर्व जन्म में तीतर थे तब एक जंगल की यहाँ आग बुझाई थी।

प्रा० क०— पाली ग्रंथों में लिखा है कि भगवान बुद्ध के शरीर छोड़ने का जब समय आया तो वे भिक्षुकों की सभा में उनको अन्तिम उपदेश देकर मल्ल राजाओं की राजधानी की ओर चले आये। राजधानी से आधा मील उत्तर-पश्चिम एक साल वन में भगवान ने शरीर छोड़ा। अनिरुद्ध ने मल्ल राजाओं को यह समाचार भेजा और वे बा [illegible], फूल मालाओं सहित वहाँ उपस्थित हुए। छः दिन तक शरीर को दर्शनों के लिये [illegible] छोड़ा गया और उस के बाद आठ मल्ल सरदारों ने उसे दाह को उठा कर ले चलना चाहा। उन के उठाये शरीर न उठा। महात्मा अनिरुद्ध ने बताया कि देवताओं की इच्छा है कि जिस मार्ग से राजे चाहते हैं उससे नहीं बल्कि शरीर को नगर के उत्तरीय फाटक से नगर में ले जाया जावे। राजाओं ने वैसा ही किया और शरीर को नगर होकर अपनी श्मशान भूमि को ले गये। चार सरदारों ने चार ओर से चिता में आग लगाई पर वह न जली। महात्मा अनिरुद्ध ने बताया कि

जब तक भगवान बुद्ध के प्रमुख शिष्य महा कश्यप न पहुँच जावेंगे चिता न जलेगी। महा कश्यप भगवान बुद्ध के महा परि निर्वाण का समाचार पाकर इधर की यात्रा कर रहे थे। जब वे वहाँ पहुँच गये और उन्होंने तीन वार चिता की परिक्रमा की और भगवान के चरणों पर से अपना मस्तक उठाया तब आप से आप चिता प्रज्वलित हो गई। महात्मा अनिरुद्ध ने स्वर्ग में मायादेवी को भगवान के शरीर छोडने का समाचार जाकर बतलाया।

ह्यान चांग लिखते हैं कि राजधानी से आधा मील उत्तर-पश्चिम भगवान ने शरीर छोडा था, उस स्थान पर एक विशाल विहार बनवाया गया था। उस विहार में शरीर छोडने के स्थान पर भगवान बुद्ध की एक बहुत बडी मूर्ति ठीक उसी तरह बनाकर रक्खी गई थी कि जिस प्रकार उन्होंने शरीर छोड़ा था। उसी मूर्ति के समीप महाराज अशोक ने २०० फीट ऊँचा एक स्तूप और एक स्तंभ बनवाया था जिस पर महा परि निर्वाण का वृतांत लिखा था। एक बहुत बडा स्तूप उस स्थान पर भी था जहाँ ब्राह्मण सुभद्र ने निर्वाण प्राप्त किया था। सुभद्र भगवान के अंतिम शिष्य थे। जिस समय भगवान बुद्ध का शरीर छूटने वाला था उस समय सुभद्र द्वार पर पहुँचे। भिक्षुकों ने उनको रोक दिया कि भगवान अब उपदेश नहीं दे सकते। सुभद्र को बडा दुख हुआ। भगवान के कान में इस बातचीत की भनक पड़ी और उन्होंने सुभद्र को बुला लिया। सुभद्र ने अपनी शंकाओं का निवारण किया और भगवान के अंतिम शिष्य होने का पद लाभ किया।

ह्यान चांग कहते हैं कि एक स्तूप कुशीनारा में उस स्थान पर था जहाँ एक पूर्व जन्म में हिरण रूप में बुद्ध देव ने एक जख्मी खरगोश की जान बचाई थी। खरगोश नाले में से निकल रहा था, और नाले का पानी रोकने के लिये हिरण ने अपना शरीर उसमें लगा दिया। खरगोश बच गया पर हिरण की जान न बची। एक और स्तूप उस स्थान पर था जहाँ एक और जन्म में तीतर रूप से बुद्धदेव ने एक जंगल की आग बुझाई थी।

भगवान बुद्ध के महा परि निर्वाण के पश्चात् महात्मा अनिरुद्ध कुशी नगर में भिक्षुकों व यात्रियों को सान्त्वना देने को रुक गये थे।

महारानी मायादेवी भगवान को जन्म देने के सात ही दिन बाद स्वर्ग को सिधारी थीं। वहीं जाकर भगवान ने उनको उपदेश दिया था।

व० द०—कसिया का प्रसिद्ध स्थान गोरखपुर से ३५ मील पूर्व है। भगवान बुद्ध के शरीर छोड़ने की जगह को माथा कुँवर (कदाचित् मृत्यु कुँवर

का अपभ्रंश ) कहते हैं, और यह कसिया से डेढ़ मील पश्चिम है। यहाँ कई विहारों के चिन्ह खोदने पर निकले हैं। एक मन्दिर में भगवान बुद्ध की बीस फाट लम्बी मूर्ति लेटी हुई है। सिर उत्तर की ओर है और मुँह पश्चिम को है। दाहिने हाथ पर चेहरा है और बायाँ हाथ लांना २ शरीर पर रक्खा है। इसी तरह महापरि निर्वाण के समय भगवान बुद्ध का शरीर था, और यह मृत्यु के स्थान की वही मूर्ति है जिसका जिक्र ह्वान चाग ने किया है। मन्दिर की दीवार ६ फीट ६ इच मोटी है। इसके पीछे एक स्तूप है जिसमे से कुछ चीजें निकली थीं। अनुमान है कि यह भगवान बुद्ध के चिता की होगी। समीप के धर्म शाला में, जो माथा कुँवर में भिक्षु चन्द्रमणि ने बनवाई है, इस स्तूप की निकली हुई चीजों का थोडा भाग यात्रियों को दिखाने का छोड़ दिया गया है बाकी लन्दन चला गया।

भगवान बुद्ध के शरीर को जहाँ दाह किया गया था वहाँ पर एक टूटा हुआ स्तूप है जिसे अब 'रामा भार' स्तूप कहते हैं। इससे दक्षिण में अनिरुधवा गाँव है। यह गाँव पुरानी राजधानी के स्थान पर है और इसमे पुराने चिन्ह निकले हैं। ज्ञात होता है कि महात्मा अनिरुद्ध के ठहरने के कारण इस जगह का नाम 'अनिरुधवा' पड़ गया था और अब तक वह इसी नाम से पुकारी जाता है।

१०७ कसूर—( देखिये लाहौर )

१०८ कहसावन—( देखिये गिरनार पर्वत )

१०९ काँगड़ा—( पजाब प्रांत में एक जिले का सदर स्थान )

यह महाशिव की शक्ति महा माया का स्थान है।

यह स्थान ५२ पीठों में से एक है। सती की एक छाती यहाँ गिरी था।

प्रा० क०—काङ्गड़ा के सुप्रसिद्ध गढ, नगरकोट, को सुशर्मचिन्द्र ने महाभारत के थोडे दिन बाद बनाया था। इसके समीप 'भवन' स्थान में महामाया देवी का विख्यात मन्दिर है। यह देवी महा शिव की स्त्री अर्थात् शक्ति है।

अब्दुल फजल ( अकबर बादशाह के प्रसिद्ध वज़ीर ) ने लिखा है कि इस स्थान की विचित्रता यह है कि हिन्दू लोग यहाँ अपनी जीभ को काट कर देवी को चढ़ा देते हैं और वह दो तीन दिन में फिर पूरी हो जाती है, और कभी २ तुरन्त ही निकल आती है।

१०११ ई० में महमूद गजनवी यहाँ से मूर्ति को उठा ले गया और मंदिर से बेशुमार सोना चाँदी ले गया पर ३२ साल बाद हिंदुओं ने मुसलमानों को मार भगाया और देवी की नई मूर्ति स्थापित की।

व० द०—यह नई मूर्ति मातादेवी तथा वज्रेश्वरी देवी के नाम से प्रसिद्ध है और नगर कोट अर्थात् काँगडा के उत्तर पहाड़ी में विद्यमान है। यह ५२ पीठों में से है। प्रति नवरात्रि को यहाँ यात्रियों का बड़ा मेला लगता है।

११० काकन्दी—(देखिये खुखुन्दों)

१११ काञ्ची—(मद्रास प्रांत के चिंगिलपट जिले में एक कस्बा;)

यह प्रसिद्ध सप्तपुरियों में से एक पुरी है।

पतञ्जलि ने अपने महा भाष्य में इसको लिखा है और महाभारत में इसका नाम 'कांजीवरम्' मिलता है।

भगवान बुद्ध ने काची में बहुत दिनों तक निवास किया था।

श्री रामानुजाचार्य ने यहाँ वेदाध्ययन किया था।

जगद्गुरू रेणुकाचार्य्य यहाँ निवास करते थे।

बलदेव जी भ्रमण करते हुए यहाँ आये थे।

जगद्गुरू श्री शङ्कराचार्य्य की यहाँ समाधि है।

प्रा० क०—(महाभारत— कर्ण पर्व, १२वाँ अध्याय) काची के क्षत्रिय गण कुरुक्षेत्र के संग्राम में पाण्डवों की ओर होकर कौरवों की सेना से युद्ध करने लगे।

(वामन पुराण—१२वाँ अध्याय) नगरों में श्रेष्ठ काची नगर, और पुरियों में श्रेष्ठ द्वारिकापुरी है।

(देवी भागवत्—सातवाँ स्कंध, ३८वाँ अध्याय) काचीपुरी में भीमा देवी और विमला देवी का स्थान है।

(श्री मद्भागवत, दशम स्कंध, ७९वाँ अध्याय) बलदेव जी श्रीशैल और वेंकटेश पर्वत का दर्शन करके काची पुरी में गये।

(गरुड़ पुराण—पूर्वार्द्ध ८१वाँ अध्याय) काची पुरी एक उत्तम स्थान है।

(प्रेत कल्प, २७वाँ अध्याय) अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काची, अवन्तिका और द्वारिका ये सात पुरियाँ मोक्ष देने वाली हैं।

( पद्म पुराण— स्वर्ग खण्ड, ५७वाँ अध्याय ) विराट पुरुष के सात धातुओं से सातों पुरियाँ हैं।

( सृष्टि खण्ड, १४वाँ अध्याय ) महादेव जी सब प्रदेशों में पर्यटन करते हुए काञ्ची पुरी में गये।

ह्वानच्चाँग ने लिखा है कि काञ्ची के लोग सचाई और ईमानदारी बहुत पसंद करते हैं, वे विद्या की बहुत प्रतिष्ठा करते हैं। इनकी भाषा और अक्षर मध्य देश वालों से कुछ भिन्न हैं।

मौर्य सम्राट अशोक ने यहाँ अनेक स्मारक बनवाये थे।

महाकवि दण्डि, जो किरातार्जुनीय के कर्त्ता भारवि के पौत्र थे, काञ्चीपुरी के पल्लव शासक नरसिंह वर्मन् ( ६६० ६८५ ई० ) के यहाँ प्रतिष्ठित राज्य कवि थे।

व० द०—काञ्ची नगरी मद्रास से ४३ मील दक्षिण पश्चिम है। रेलवे स्टेशन से डेढ़ मील दूर बड़ा काञ्चीवरम् अर्थात् शिव काञ्ची, और शिव काञ्ची से लगभग दो मील दक्षिण पूर्व छोटा काञ्चीवरम् अर्थात् विष्णु काञ्ची है। शिव काञ्ची में शिव लोग और विष्णु काञ्ची में रामानुज सम्प्रदाय के वैष्णव रहते हैं।"

शिवकाञ्ची— शिवकाञ्ची में एकाम्रेश्वर शिव का बड़ा मन्दिर है। द्राविड़ के पाँच लिंगों में से यह 'पृथिवी लिंग' है। ( श्रीरंगम के पास जम्बुकेश्वर 'जल लिंग', दक्षिण अरकाट जिले के तिरुवन्नामलई के पास की अरुणाचल पहाड़ी पर 'अग्नि लिंग', काल हस्ती में कालहस्तीश्वर 'वायु लिंग', और चिदम्बरम् में नटेश 'आकाश लिंग' हैं। ) शिवकाञ्ची में कामाक्षी देवी के मन्दिर के हाते में श्री शङ्कराचार्य की समाधि है और उस पर उनकी मूर्ति रखी है।

विष्णुकाञ्ची— विष्णुकाञ्ची में वरदराज विष्णु का विशाल मन्दिर पत्थर का बना हुआ है। विष्णु का मन्दिर श्री शङ्कराचार्य ने बनवाया था। यहाँ रामानुजीय सम्प्रदाय के प्रतिवादी भयङ्कर का गद्दा है और पुजारी पण्डे सब लोग आचारी हैं। वरदराज के मन्दिर का हाता १,१०० फीट लम्बा और ७०० फीट चौड़ा है।

११२ कालडी— ( मलाबार में एक नगर )

यहाँ जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य जी का जन्म हुआ था।

इस स्थान का पुराना नाम शलादि है।

[ शङ्कर दिग्विजय आदि संस्कृत ग्रन्थों में वर्णन है कि केरल ( मलाबार व वर्तमान कोचीन राज्य ) में वृष पर्वत के ऊपर पूर्णा नदी के

किनारे ज्योतिर्लिङ्ग रूप से शिव जी प्रगट हुए और वहाँ के राजशेखर नामक राजा ने उस लिंग की प्रतिष्ठा कराई। उस लिंग के समीप काटली नामक नगर में विद्याधिराज नामक पण्डित के घर पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम शिव गुरु पड़ा। जब ५५ वर्ष तक शिवगुरु के कोई सन्तान नहीं हुई तब वे वृष पर्वत पर शिवजी की आराधना करने लगे। शिवजी के प्रगट होने पर शिवगुरु ने उनसे पुत्र माँगा और शिवजी वर देकर चले गये। श्रीशङ्कर जी की आराधना से शिवगुरु को पुत्र हुआ इसलिए उसका नाम शङ्कर रखा गया। यही जगद् प्रसिद्ध जगद्गुरु शङ्कराचार्य्य हुये।

श्री सुभद्रा देवी के गर्भ से केरल प्रदेश के पूर्णा नदी के तटवर्ती कलादि नामक गाँव में शङ्कराचार्य जी ने जन्म ग्रहण किया था। इनका जन्म काल का ठीक पता नहीं है पर ईसा से पूर्व ही सिद्ध किया जाता है।

पाचवें वर्ष में यज्ञोपवीत करके शङ्करजी को गुरू के घर पढने भेजा गया, और केवल सात वर्ष की अवस्था में ही यह वेद वेदान्त और वेदाङ्गों का पूर्ण अध्ययन करके घर वापस आगये। इनकी असाधारण प्रतिभा देख कर इनके गुरुजन दङ्ग रह गये। माता की आज्ञा प्राप्त करके शङ्कर जी आठ वर्ष की अवस्था में घर से निकल पड़े। घर से चल कर नर्मदा तट पर आये और स्वामी गोविन्द भगवत्पाद से दीक्षा ली। गुरु ने इनका नाम भगवत् पूज्य पादाचार्य्य रखा। शीघ्र ही यह योग सिद्ध महात्मा हो गये और गुरुने प्रसन्न होकर इन्हें काशी जाकर वेदान्त सूत्र का भाष्य लिखने की आज्ञा दी। तद नुसार यह काशी आगये। एक दिन चाण्डाल रूप में भगवान विश्वनाथ ने इन्हें काशी में दर्शन दिये, और इनके उन्हें पहिचान कर प्रणाम करने पर महा सूत्र पर भाष्य लिखने और धर्म के प्रचार करने का भगवान विश्वनाथ ने आदेश दिया।

शङ्कराचार्य्य ने प्रयाग आकर कुमारिल भट्ट से भेंट की और उनकी सलाह से माहिष्मती में मण्डन मिश्र के पास जाकर शास्त्रार्थ किया। शास्त्रार्थ में मण्डन मिश्र की पत्नी मध्यस्थ थी। अन्त में मण्डन मिश्र ने शङ्कराचार्य्य का शिष्यत्व ग्रहण किया और उनका नाम सुरेश्वराचार्य्य पड़ा।

श्री शङ्कराचार्य्य ने भारत वर्ष के चारों कोनों पर चार विशाल मठ स्थापित किये जो अब भी विद्यमान हैं और उनके मठाधीश 'शङ्कराचार्य्य' कहलाते हैं। इन मठों में अतुल धन है और सारा भारतवर्ष इनकी प्रतिष्ठा मानता है।

कुल भारत में पुनः हिन्दू धर्म फैला कर ३२ साल की ही अवस्था में श्री जगद् गुरु शङ्कराचार्य्य संसार से चले गये।]

११३ काठमाँडू— ( नेपाल राज्य की राजधानी )

काठमांडू का पुराना नाम काष्ठ मण्डप है। यहाँ पुराण वर्णित श्री पशुपतिनाथ का मन्दिर है।

प्रा० क०— ( दूसरा शिव पुराण— ८वाँ खण्ड, ४५वाँ अध्याय ) नेपाल में पशुपतिनाथ शिवलिंग है। वे महिष भाग अर्थात् भैंस के शरीर के एक भाग हैं।

(२७वाँ अध्याय) जब राजा पाडु के लड़के केदार में गये कि केदारेश्वर के दर्शन करके अपने पापों से छूटें तब शिव जी भैंसे का रूप धर कर वहाँ से भाग चले। उस समय उन्होंने अति प्रेम से यह विनय की कि हे प्रभो! जो पाप हमको महाभारत के युद्ध में हुआ है उसको तुम दूर करो और इसी स्थान में स्थित हो जाओ। तब शिव जी अपने पिछले धड़ से उसी स्थान पर स्थित हो गये और अगले धड़ से नेपाल में जा विराजे। वे हरिहर रूप से वहाँ सबको सुख देते हैं।

(वाराह पुराण— उत्तरार्ध, १२६वाँ अध्याय) वाराह जी बोले कि नेपाल नामक स्थान में जो पशुपति नामक शिव जी हैं उनके जटा से श्वेत गङ्गा नामक तीर्थ प्रगट हुआ।

( २८वाँ अध्याय ) शिव जी ने देवताओं से कहा कि हम हिमवान पर्वत के तट में नैपाल नामक देश में पृथ्वी को भेदन कर चार मुख धारण करके उत्पन्न होंगे तब हमारा नाम शरीरेश होगा।

सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म प्रचारार्थ मझिम, कस्सप गोत्त तथा दुंदुभिस्सर को नैपाल भेजा था।

च० द०—नैपाल राज्य को संसार की कोई विदेशी जाति अपने आधीन नहीं कर सकी। काठमाण्डू समुद्र के जल से लगभग ४५०० फीट ऊँचा, विष्णुमती और बागमती नदी के संगम के निकट एक अच्छा नगर है।

महाराज के महल से एक कोस उत्तर देवी पट्टन नामक नगर में पशुपतिनाथ का मन्दिर है। मन्दिर के मध्य में प्रायः तीन हाथ ऊँची पापाणमयी पञ्चमुखी पशुपति जी की मूर्ति है। मन्दिर के समीप बहुत से पक्के धर्मशाले हैं जिनमें यात्री ठहरते हैं। दूसरे तीर्थों के समान यहाँ के पण्डे यात्रियों से हठ नहीं करते। देवी पट्टन नगर को अशोक की पुत्री चारुमती ने बसाया था।

११४ काटसुरे— ( बिरार प्रांत में ऋद्धिपुर के समीप एक गाँव )

महानुभाव पंथ के आद्य पुरुष श्री गोविंद प्रभु का यहाँ जन्म हुआ था।

[ वि० स० १२४५ के लगभग विदर्भ प्रदेश में ऋद्धिपुर स्थान के समीप काटसुरे ग्राम में श्री गोविंद प्रभु उर्फ गुराडम प्रभु या गुराजे बाबा का जन्म हुआ था। यह काण्डव शाखीय ब्राह्मण थे। ऋद्धिपुर में इन्होंने विद्याध्ययन किया। इसी अवस्था में इन्हें परमार्थ सुख का चस्का लगा और यह सिद्धकोटि को प्राप्त हुये। महानुभाव पन्थ के यही आदि पुरुष थे। स० १३४२ वि० में यह समाधिस्थ हुये। ]

११५ कातवा— ( बंगाल प्रांत के वर्द्धवान जिले में एक स्थान )

इस स्थान का पुराना नाम कतद्वीप है।

चैतन्य महाप्रभु ने २४ साल की अवस्था में यहाँ दण्डी मत की दीक्षा ली थी। उस समय के उनके कटे हुये केश एक छोटे मन्दिर में यहाँ रखे हैं।

कातवा से ४ मील उत्तर कामतपुर में कृष्णदास कविराज का निवास स्थान था जिन्होंने चैतन्य चरितामृत की रचना की है। कातवा से १६ मील दक्षिण-पश्चिम नान्नुर ( जिला बीरभूम ) में वैष्णव कवि चंडीदास का जन्म हुआ था।

११६ कामरूप— ( देखिये गोहाटी )

११७ कामाँ— ( भरतपुर राज्य में एक स्थान )

यह श्री कृष्णचन्द्र और राधिका जी की क्रीड़ा भूमि थी।

इसका प्राचीन नाम कादम्ब वन है।

कामाँ मथुरा से ३६ मील पश्चिमोत्तर में है। यहाँ एक गुफा जिसे 'लुकलुक' कहते हैं यह स्थान है जहाँ ग्वाल बाल और श्री कृष्ण आँख मिचौनी खेलते थे। कामाँ में वे स्थान दिखलाये जाते हैं जहाँ लाडली जी ( राधा ) और कृष्णचन्द्र उठते बैठते और चलते फिरते थे। यहाँ कई मन्दिर और कुण्ड हैं जिनमे गोपीनाथ का मन्दिर प्रसिद्ध है। यात्री बराबर दर्शनों को आते रहते हैं। कदम्ब के वृक्ष यहाँ बहुत होते हैं।

११८ कामाख्या— ( आसाम प्रांत के गोहाटी जिले में एक पहाड़ी )

इस स्थान का प्राचीन नाम कामशैल है।

सती की योनि गिरने से यहाँ कामाख्या नाम की देवी प्रकट हुई। रामचन्द्र के भाई शत्रुघ्न यहाँ आये थे।

प्रह्लाद ने यहाँ आकर शिव पार्वती का पूजन किया था।
रामचन्द्र जी के समय का प्राचीन नगर अहिच्छत्रापुरी यहीं था।

मा० क०— ( देवी भागवत, सातवाँ स्कंध, ३८वाँ अध्याय ) काम रूप देश का कामाख्या भूमण्डल में देवी का महा क्षेत्र है। भूमण्डल में इससे श्रेष्ठ स्थान देवी का नहीं है। वहाँ साक्षात् देवी प्रतिमास रजस्वला होती हैं। वहाँ की सब पृथ्वी देवी रूप है।

( दूसरा शिव पुराण— दूसरा खण्ड, ३७वाँ अध्याय ) शिव की स्त्री सती ने अपने पिता राजा यक्ष के यश में शिव जी का अपमान देख अपने शरीर को छोड़ दिया। शिवजी ने क्रुद्ध होकर यक्ष का यश विध्वंस कर डाला। सती के शरीर को गङ्गा के तट पर पड़ा देख वे उसको अपने शरीर में लिपटा कर चारों ओर दौड़ने लगे। जिस जिस स्थान पर सती के अङ्ग गिरे वह सब स्थान सिद्ध पीठ हो गये। काम शैल पर सती की योनि गिरने से कामाख्या नामक देवी प्रकट हुईं जिनको काम रूपा भी कहते हैं।

( पद्म पुराण— पाताल खण्ड, १२वाँ अध्याय ) शत्रुघ्न जी रामचन्द्रजी के यश अश्व की रक्षा करते हुए अहिच्छत्रा नामक बड़े नगर में पहुँचे। उन्होंने एक देवालय देख कर अपने मंत्री सुमति से पूछा कि यह किसका मन्दिर है। मंत्री ने बताया कि यह मन्दिर त्रिशूल की माता कामाख्या जी का है जिनके दर्शन मात्र से सम्पूर्ण सिद्धी प्राप्त होती है। सहस्रों कन्या रम्य भूषणों से भूषित हो कर हाथियों पर चढ़कर शत्रुघ्न जी के सम्मुख उपस्थित हुईं और राजा अपनी सेना सहित शत्रुघ्न जी से जा मिले। जब राजा शत्रुघ्न जी को अपने राज मन्दिर को ले चले तब हाथियों पर चढ़ी हुई कन्याओं ने शत्रुघ्न जी के ऊपर लावा मिश्रित मोतियों की वर्षा की।

य० द०—कामाख्या नामक पहाड़ी के एक सरोवर के निकटश्यामा का देवी का, जिनको कामाख्या भी कहते हैं; सुंदर मंदिर है और मन्दिर में अँधेरा रहने के कारण दिन में भी दीप जलता है। हिन्दुस्तान के सब विभागों से जा कर यात्रीगण देवी का पूजन करते हैं। माघ, भादों और आश्विन में उत्सव के समय बहुत लोग कामाख्या में उपस्थित होते हैं।

यहाँ की स्त्रियाँ बड़ी सुन्दर होती हैं।

११९ कामार पुकुर— ( बंगाल प्रान्त के हुगली जिले में एक गाँव )
यह श्री रामकृष्ण परमहंस की जन्म भूमि है।

[सन् १८३६ ई० में कामार पुकुर में **श्रीरामकृष्ण परमहंस** का जन्म हुआ था। आपका घर का नाम गदाधर चट्टोपाध्याय था। सन् १८५३ में आप कलकत्ते चले आये, और हिन्दू धर्म के विभिन्न अङ्गों की साधनायें की। वे किसी भी पापी के चरित्र को अपने दैवी शक्ति द्वारा पलट देते थे। स्वामी विवेकानन्द जी इनके प्रसिद्ध शिष्यों में से थे। सन् १८८६ ई० में परमहंस जी ने स्वर्ग को गमन किया।]

१२० कामोद— (पञ्जाब प्रांत के थानेसर जिले में एक तीर्थ)

इस स्थान का प्राचीन नाम काम्यकवन है।

वनवास के समय पाण्डव बहुत दिन तक यहाँ रहे थे।

कामोद कुरुक्षेत्र से ६ मील दक्षिण पूर्व में है। यहाँ द्रौपदी का भण्डार एक स्थान है जहाँ कहा जाता है कि द्रौपदी भोजन बनाया करती थीं।

१२१ कारों— (संयुक्त प्रांत के बलिया जिले में एक गांव)

यह स्थान आधुनिक कामाश्रम है।

शिवजी ने कामदेव को यहीं जला कर भस्म किया था। रघुवंश में इस स्थान को मदन तपोवन कहा गया है।

कामेश्वरनाथ का मंदिर यहाँ अब भी है।

रामायण के अनुसार कारों ही कामाश्रम है जहाँ शिवजी ने अपने तीसरे नेत्र से काम को भस्म किया था, पर स्कन्द पुराण इस घटना का होना हिमालय के देवदारु वन में बतलाता है। (देखिये गोपेश्वर)

१२२ कालिञ्जर— (संयुक्त प्रदेश के बाँदा जिले में एक कस्बा और प्रसिद्ध पहाड़ी किला)

इस स्थान पर संहार कर्ता भगवान् महेश्वर ने काल को जीर्ण करके फिर जिला दिया था।

सात ऋषियों ने यहाँ शापवश मृग की योनि में जन्म बिताया था, तथा यहाँ हिरण्यबिन्दु तीर्थ है।

सीताजी ने लङ्का से लौटने के उपरांत एकसमय यहाँ शयन किया था।

यह स्थान उन नौ ऊखलों में से एक है जहाँ से प्रलय के समय जल निकल कर सारी पृथिवी को डुबा देगा।

प्रा० क०— (लिंग पुराण पूर्वार्द्ध—२४वाँ अध्याय) शिव जी बोले २१वें द्वापर में श्वेत नामक हमारा अवतार होगा, तब हम जिस पर्वत पर काल को जीर्ण करेंगे वह कालिंजर कहलायेगा।

( कूर्म पुराण— ब्राह्मी संहिता उत्तरार्द्ध, ३५वाँ अध्याय ) जगत में कालिंजर नामक एक महातीर्थ है, वहाँ संहारकर्त्ता भगवान महेश्वर ने काल को जीर्ण करके फिर जिला दिया था।

( शिव पुराण—-दुर्गा खण्ड दूसरा अध्याय ) चित्रकूट के दक्षिण तीनों लोकों में प्रसिद्ध कालिंजर पर्वत है जहा बहुतों ने तप करके सिद्धि पाई है।

पुराणों में लिखा है कि ७ ऋषि थे जो अपने गुरु के शाप से जन्मांतर में कालिंजर में हिरण हुये।

च० द०—भारतवर्ष के प्रसिद्ध पुराने क़िलों मे से कालिंजर एक है। कोट के भीतर पत्थर काट कर बनी हुई कोठरी में पत्थर की शीतल सेज है। कोट में मृगधारा एक प्रसिद्ध स्थान है जहाँ दो चट्टानी कोठरी, एक पानी का कुण्ड और चट्टानों में ७ हिरण बने हैं। क़िले के अन्दर अनेक देव मन्दिर, गुफायें, कुण्ड और मूर्तियाँ हैं। यहाँ नीलकण्ठ महादेव का मन्दिर प्रसिद्ध है।

अकबर के समय में यह स्थान राजा बीरबल की जागीर में था। सन् १८६६ ई० मे अँग्रेजो ने इस क़िले को तोड़ कर बेकाम कर दिया।

१२३ कालीदह— ( देखिये मथुरा )

१२४ काल्पी— ( संयुक्त प्रांत में जालौन जिले में एक स्थान )

काल्पी में श्री वेदव्यास जी का जन्म हुआ था।

प्राचीन प्रभावती नगरी इसी स्थान पर थी।

प्रा० फ०— 'तुलसी शब्दार्थ प्रकाश' नामक सन् १८७४ ई० में एक भाषा ग्रन्थ में वर्णन है कि काल्पी में महर्षि व्यास जी ने अवतार लिया था।

सन् ३३० और ४०० ई० के बीच वासुदेव ने यह नगर बसाया था।

प्रति द्वापर में अवतीर्ण होकर भगवान वेदों का विभाग करते हैं। अकेले इस वैवस्वत मन्वन्तर में ही अब तक अट्ठाईस व्यास हो चुके हैं। गत द्वापर के अन्त में वे श्रीकृष्ण द्वैपायन जी के नाम से श्री पराशर मनु के पुत्र रूप में अवतीर्ण हुये थे।

पराशर मनु के यमुना नदी पार करने में सत्यवती से महात्मा से व्यासजी का जन्म हुआ था। यह वही केवट-कन्या है जिनका पीछे महाराज शान्तनु से विवाह हुआ था, और जिनकी सन्तान को राज्य देने के निमित्त महात्मा भीष्म पितामह ने आजन्म विवाह न करने और राज न लेने की प्रतिज्ञा की थी।

लोगों को आलसी, अल्पायु, मन्दमति और पापरत देख कर महर्षि व्यास ने वेदों का विभाजन किया। अष्टादश पुराणों की रचना करके उपाख्यानों द्वारा वेदों को समझाने की चेष्टा की। उनका मनुष्य जाति पर अनन्त उपकार है। यह जगत उनका आभारी है।]

व० द०—यमुना नदी के बगल में वर्तमान काल्पी के पश्चिमी सीमा पर बहुत खँडहर हैं। ये खँडहर प्राचीन प्रभावती नगरी के हैं।

भारतवर्ष में रेल का प्रचार होने से पहिले काल्पी व्यापार का एक केन्द्र था। रेल आने पर यह बस्ती उजड़ कर कानपुर बसा है। पत्थरों के बड़े बड़े आलीशान मकान काल्पी में खाली पड़े हैं। अब भी इस नगर में म्यूनिसिपैल्टी है। मरहठों के समय का पुराना किला यमुना के तट पर था, उसके घाट और दूसरे चिन्ह स्पष्ट मौजूद हैं। इसी किले में देशभक्त नाना साहब व वीरांगना रानी लक्ष्मी बाई सन् १८५७ में आकर रही थीं इससे अँग्रेजों ने इसे नष्ट कर डाला। इसी स्थान पर अब डाक बंगला है जो स्थिति के विचार से संयुक्त प्रांत के सब से अच्छे बंगलों में से कहा जा सकता है। बंगले से आधे मील की दूरी पर यमुना के तट पर एक टीला है जिसको लोग व्यास टीला कहते हैं, और उसके आस पास की भूमि एक मील की दूरी तक व्यास-क्षेत्र कहलाती है। बतलाया जाता है कि महर्षि व्यास की जन्म भूमि का यही स्थान है। यहाँ से १४ मील की दूरी पर बेतवा नदी के किनारे एक स्थान परासन है जिसको पराशर मनु की तपस्या भूमि कहा जाता है। मरहठों ने पराशर मनु का मन्दिर यहां बनवा दिया था और पिण्डदान करने को लोग दूर दूर से यहाँ आते हैं। पराशर मनु महर्षि व्यास के पिता थे।

जिन दिनों लेखक ( रामगोपाल मिश्र ) काल्पी के सब डिवीज़नल मजिस्ट्रेट थे उन दिनों उन्होंने माधवराव सिंधिया व्यास हाईस्कूल यहाँ खोला था जो बहुत अच्छी दशा में चल रहा है और इन्टर कालेज हो गया है। इसके खोलने के लिये लेखक को एक धर्मार्थ समिति भी स्थापित करनी पड़ी थी जो अभी कुछ वर्ष पहिले तक उन्हीं के सभापतित्व में सात आठ हजार रुपया प्रतिवर्ष दान में देती रही थी।

काल्पी में रावण के एक भक्त ने लङ्का बनाई है जिस पर उन्होंने लगभग सवा लाख रुपया खर्च किया था। इसकी मीनार बहुत दूर से दिखाई देती है, संसार में कहीं और रावण की स्मृति में कोई चीज नहीं बनाई गई है। यह काल्पी ही की विशेषता है।

१२५ काशी— ( देखिये बनारस )

१२६ काशीपुर— ( संयुक्त प्रांत के नैनीताल जिले में एक बड़ा कस्बा )
काशीपुर से एक मील पूर्व उज्जैन गाँव है। इसके समीप भगवान बुद्ध ने उपदेश दिया था और उनके नख ( नाखून ) व केश ( बाल ) स्तूपों में रक्खे थे।

प्रा० क०—ह्वानचाग की यात्रा के समय वर्तमान काशीपुर के समीप एकराज्य की राजधानी थी और उस नगर का घेरा ढाई मील का था। शहर में० ३० देव मन्दिर और दो संघाराम थे। बड़ा संघाराम नगर के बाहर था। उसके मध्य में महाराज अशोक का बनवाया हुआ २०० फीट ऊँचा एक स्तूप। जहाँ भगवान बुद्ध ने उपदेश दिया था। दो बारह बारह फीट ऊँचेश स्तूप थे जिनमें भगवान बुद्ध के नख और केश रक्खे थे।

व० द०—काशीपुर के बाहर एक बड़ा ताल 'द्रोण सागर' है जिसके किनारे पर कई देव मन्दिर हैं। उनमें ज्वालादेवी का मन्दिर, जिन्हें उज्जैनी देवी भी कहते हैं, बहुत प्रसिद्ध है, और चैत्र कृष्ण पक्ष की अष्टमी कोयहाँ बड़ा मेला लगता है। ताल की लम्बाई व चौड़ाई दो दो सौ गज है। इसकी बड़ी प्रतिष्ठा है। गंगोत्री के यात्री पहले इसके दर्शनों को आते हैं। ताल के किनारे सती स्त्रियों के बहुत स्मारक हैं। पास ही पुराने गढ के खेड़े और पुराने नगर के चिन्ह हैं।

जागेश्वर महादेव के मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम एक स्तूप के चिन्ह हैं। नीचे का घेरा २०० गज से अधिक है और ऊपर अब भी ६० गज से ज्यादा मुटाई है। यह स्तूप वह है जो महाराज अशोक ने भगवान बुद्ध के सदुपदेश के स्थान पर बनवाया था।

काशीपुर से लगभग ६५ मील पर रामनगर है जो गुरु द्रोणाचार्य की राजधानी 'अहिछेत्र' था। द्रोण सागर कदाचित गुरु द्रोणाचार्य का बनवाया हुआ है और इसी से उसकी प्रतिष्ठा अब तक चली आ रही है।

१२७ किरीट कोण— (बङ्गाल के मुर्शिदाबाद जिले में एक नगर)
सती का मुकुट इस स्थान पर गिरा था।

१२८ किष्किंधा— ( देखिये आनागन्दी )

१२९ कीर्तिपुर— ( देखिये देहरापाताल पुरी )

१३० कुड़की ग्राम—( जोधपुर राज्य में एक स्थान )
यह भक्त शिरोमणि मीराबाई की जन्मभूमि है।

[सम्वत १५५५ वि० के लगभग मीरा का आविर्भाव कुडकी ग्राम में हुआ था। मेड़ते के राठौर रत्नसिंह की पुत्री और जोधपुर बसाने वाले प्रसिद्ध महाराज जोधा की यह प्रपौत्री थीं। इनका विवाह चित्तौड़ के सुविख्यात राणा साँगा के ज्येष्ठ पुत्र युवराज भोजराज के साथ १५७३ वि० में हुआ था। विवाह के कुछ वर्ष बाद ही महाराणा की मौजूदगी में युवराज भोजराज का देहान्त हो गया।

मीरा बाई ने पितृकुल में राव दूदा, वीरम देव आदि परम भक्त एवम् वैष्णव थे। श्री कृष्णचन्द्र की लगन मीरा को जन्म ही से थी। कुटुम्बी इसमें बाधक थे पर अन्त में लोकलाज के आडम्बर को हटा कर मीरा मन्दिर में जाकर भक्तों और सन्तों के बीच श्री भगवान् कृष्णचन्द्र की मूर्ति के सामने आनन्द मग्न होकर नाचने और गाने लगीं।

महाराणा संग्राम सिंह जी (सांगा) के बाद मेवाड़ की गद्दी पर उनके तीसरे पुत्र रत्न सिंह जी बैठे। उनके निरसन्तान देव लोक होने पर इनके छोटे भाई विक्रमादित्य १५८८ वि० स० में मेवाड़ के राणा हुए। स्वजन मीरा बाई को नाना प्रकार के कष्ट देने लगे। विष भेजा गया भगवान् का चरणामृत कहके। मीरा चरणामृत मान उसे पी गई। वह भी अमृत हो गया। वि० स० १५८८ में घर वालो के व्यवहार से खिन्न होकर मीरा घर से चली गई। अपने मायके आईं, पीछे वृन्दावन पहुँची और मन्दिरों में घूम घूम कर अपने हृदयधन का भजन सुनाया करती थीं। अन्त में वृन्दावन की प्रेमलीला में पगी मीरा द्वारिका पहुँची और श्री रणछोड़ जी के मन्दिर में पैरों में घूँघरू बाँध कर और हाथ में करताल लेकर भजन गाया करतीं। यहीं नव वधू के रूप में अपने जीवन के अन्तिम दिन स० १६०३ वि० में मीरा रण छोड़ जी की मूर्ति में समा गईं।

इनके भजनों में अगाध रस है। उदाहरणार्थ एक भजन लिखा जाता है —

बसो मेरे नैनन में नन्द लाल।
मोहनि मूरति सांवरि सूरति नैना बने रसाल॥
मोर मुकुट मकराकृत कुण्डल अरुण तिलक दिए भाल।
अधर सुधारस मुरली राजति उर बैजंती माल॥
क्षुद्र घंटिका कटि तट सोभित नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु सन्तन सुखदाई भक्त बछल गोपाल॥]

१३१ कुण्डलपुर—( बिहार प्रान्त के पटना जिला में एक स्थान )

यहाँ श्री महावीर स्वामी (चौबीसवें तीर्थङ्कर) के गर्भ और जन्म कल्याणक हुये थे।

*इस स्थान का पुराना नाम क्षत्रियकुण्ड है।*

[श्री महावीर स्वामी जैनियों के अन्तिम तीर्थङ्कर हैं। आप के पिता राजा सिद्धार्थ इक्ष्वाकु वंश के क्षत्रिय राजा और इनकी माता त्रिशला देवी वैशाली के प्रतिष्ठित सम्राट की पुत्री थीं। पिता ने आप का नाम वर्द्धमान रक्खा था। तीस वर्ष की अवस्था में आप ने राजवैभव को त्याग कर दीक्षा ले ली, और साढ़े बारह वर्ष तक महान प्रचण्ड तपस्या करके वीतराग और सर्वज्ञ हो गये। आपके दीक्षा, कैवल्यज्ञान, और निर्वाण का स्थान पावापुरी है जो बिहार नगर से सात मील पर है। महावीर स्वामी के निर्वाण से जैनी सम्वत का आरम्भ हुआ है। २००० विक्रमी सम्वत के बराबर २४७० जैनी सम्वत होती है। इस प्रकार आप का निर्वाण विक्रमी सम्वत से ४७० वर्ष पूर्व और जन्म ५४२ वर्ष पूर्व हुआ था।]

श्वेताम्बर व दिगम्बर, दोनों सम्प्रदायों के, महावीर जी के मन्दिर व धर्मशालायें कुण्डलपुर में बने हैं। यह स्थान प्रसिद्ध प्राचीन नालन्दा विद्याक्षेत्र ( वर्तमान बड़गावां ) से एक मील की दूरी पर है। कुण्डल पुर को कुण्डापुर भी कहते हैं। यहाँ से तीन मील पर पावापुरी है जहाँ श्री महावीर स्वामी का निर्वाण हुआ था।

१३२ कुण्डापुर—( देखिए कुण्डलपुर )

१३३ कुण्डिनपुर—( बरार प्रान्त के अमरावती जिला में एक ग्राम )

इसका प्राचीन नाम कौंडण्यपुर है।

रुक्मिणी के पिता विदर्भ के राजा भीष्म की यह राजधानी थी।

रुक्मिणी का यहाँ जन्म हुआ था।

यहीं से श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी को हरा था।

[ रुक्मिणी कौंडिन्य पुर के राजा भीष्म की पुत्री थी। उनका विवाह चेदिराज शिशुपाल से होने वाला था पर उन्होंने श्रीकृष्ण के पास सन्देश भेजा कि वे शिशुपाल से विवाह न करेंगी और यदि श्रीकृष्ण उन्हें न ले गये तो वे आत्महत्या कर लेंगी। इस पर श्रीकृष्ण चन्द्र उन्हें हर ले गये थे और वह उनकी पटरानी बनी। इनके पुत्र प्रद्युम्न, और प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध थे। प्रद्युम्न का विवाह रुक्मिणी के भाई रुक्मी की पुत्री सुन्दरी से हुआ

था। उन्हीं से अनिरुद्ध उत्पन्न हुये थे। फिर अनिरुद्ध का विवाह रुक्मी के पुत्र की पुत्री से हुआ। बाणासुर की पुत्री उषा अनिरुद्ध के मोह में पड़ गई थी और वे उसे ले आये थे। अनिरुद्ध के पुत्र वज्र हुये जिन्हें पाण्डवों ने इन्द्रप्रस्थ का राज्य दे दिया था।]

आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इन्डिया रिपोर्ट (Archaeological Survey of India report) के अनुसार राजा भीष्म की राजधानी अहार, जिला बलन्द शहर (सयुक्त प्रान्त) में है परन्तु महाभारत में कहीं वर्णन नहीं है कि कुण्डिनपुर गङ्गा जी के तट पर था। अहार गङ्गा तट पर है। कुण्डिनपुर गङ्गा तट पर होता तो महाभारत में जहाँ उसके बहुत मन्दिरों और राजभवनों का वर्णन है इसका भी वर्णन होता। दूसरे, चेदि राज्य कुण्डिनपुर से मिला हुआ ही एक विशाल राज्य था इसी से सम्भवतः चेदि राज रुक्मिणी को व्याहना चाहते थे। अहार को कुण्डिनपुर माना जावे तो चेदि राज्य वहाँ से बहुत दूर पड़ता है।

कुण्डिनपुर अब वर्धा नदी के किनारे अमरावती से ४० मील पूर्व कौंडवीर नामक गाँव है। कहा जाता है कि पहले प्राचीन कुण्डिनपुर वर्धा नदी (विदर्भ नदी) से अमरावती तक फैला हुआ था और अमरावती में अब भी भवानी का वह मन्दिर दिखाया जाता है जहाँ से श्रीकृष्ण रुक्मिणी को ले गये थे।

चाँदा जिला के देवल वाडा को भी कुण्डिनपुर कहा जाता है। कुण्डिनपुर का दूसरा नाम विदर्भ नगरी कहा गया है। विदर्भ देश के किसी भी राजधानी को विदर्भ नगरी कहा जा सकता था। दमयन्ती के पिता राजा भीम भी अपने काल में विदर्भ देश के राजा थे, और विदर्भ नगरी उनकी राजधानी थी। राजा भीम की राजधानी को बीदर के स्थान पर माना जाता है (देखिए बीदर)। ज्ञात यह होता है कि विदर्भ देश बरार से लेकर दक्षिण तक फैला हुआ था। उसमें भीष्म की राजधानी कौंडवीर के स्थान पर और भीम की बीदर के स्थान पर थी। दोनों विदर्भ नगरी कहलाती थी।

कुण्डिनपुर से रुक्मिणी को हर ले जाकर श्रीकृष्ण ने काठियावाड़ के माधवपुर में उनसे विवाह किया था और तब द्वारिका ले गये थे।

१३४ कुतवार—(ग्वालियर राज्य में एक कस्बा)

इसके प्राचीन नाम कमन्तलपुरी, कान्तीपुरी, कान्तीपुर और कुन्तलपुरी हैं।

पाण्डवों की माता कुन्ती के पिता कुन्तिभोज का यह नगर था और उन्होंने ही इसे बसाया था।

प्रा० क०—नाग राजाओं की कान्तीपुरी का जो पुराणों में उल्लेख है, वह यही है। बिल्कुल आरम्भ में इस नगर का नाम कमन्तलपुरी था। पीछे कुन्ती के प्रसिद्ध होने पर उनके नाम से इसको लोग कुन्तलपुरी भी कहने लगे।

ग्वालियर प्रदेश की सबसे पुरानी राजधानी यहीं थी।

[शास्त्रों में पाँच देवियाँ नित्य कन्यायें मानी गई हैं। उनमें से एक कुन्ती है। यह वसुदेव जी की बहिन और श्रीकृष्ण चन्द्र की बुआ थीं। महाराजा कुन्तिभोज से इनके पिता की मित्रता थी, और कुन्तिभोज के सन्तान नहीं थी अतः यह कुन्तिभोज के यहाँ गोद आई और कुन्ती कहलाई।

महर्षि दुर्वासा से इन्होंने एक मन्त्र पाया था जिससे वे जिस देवता को चाहें बुला सकती थीं। इन्होंने सूर्य को बुलाया और उनसे इनके कर्ण उत्पन्न हुये। अपनी लाज बचाने को इन्होंने कर्ण को नदी में एक टोकरी में बहा दिया। दुर्योधन के सारथी ने एक बालक को नदी में बहता देख उसे निकाल लिया और पाल लिया। यही बालक महाभारत के महाप्रतापी वीर कर्ण हुये। ऐसा दानवीर पृथिवी पर कदाचित दूसरा नहीं हुआ। बाद को पाण्डु से कुन्ती का विवाह हुआ और युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन पैदा हुये।]

व० द०—कुतवार ग्वालियर से २५ मील उत्तर में है। इसकी पुरानी तबाहियों पर इन दिनों एक मिट्टी की गढ़ी और १४०० पत्थर के मकान बने हैं। बाज बाज मकान बहुत अच्छे हैं। जब से राजधानी ग्वालियर को चली आई तब से कुतवार की दशा बहुत तेजी से बिगड़ने लगी।

१३५ कुदरमाल—( मध्य प्रदेश के बिलासपुर जिले में एक बस्ती )

यहाँ श्री कबीरदास जी के सुप्रसिद्ध शिष्य धर्मदास जी के पुत्र चनन चूरामणि की समाधि है।

माघ की पूर्णिमा को यहाँ प्रसिद्ध मेला होता है जो लगभग तीन सप्ताह तक रहता है। चतुर्दशी और पूर्णिमा को बड़ी धूम धाम से समाधि की चौका आरती होती है।

१३६ कुदवानाला—( देखिये महायान डीह )

१३७ कुनिन्द—( पञ्जाब प्रांत में शिमला के समीप का पहाड़ी देश )
यह देश मार्कण्डेय पुराण का कौलिन्द और विष्णु पुराण का कुलिन्द देश है।

अर्जुन ने यहाँ युद्ध करके यहाँ के राजा को परास्त किया था। ( महाभारत-सभापर्व ) अर्जुन ने कुलिंद देश के राजा पर आक्रमण करके उस पर विजय पाई।

इस देश में कुनते लोग आबाद हैं और एक समय मे यह राज्य बहुत हरा भरा था। कुलू पहाड़ी जहाँ के फल प्रसिद्ध हैं यहीं है। विख्यात ज्योतिषी बराह मिहर ने कुलिंद को भारतवर्ष का एक प्रांत माना है।

१३८ कुन्थलगिरि—( देखिये रामकुण्ड )

१३९ कुमायू व गढवाल—( संयुक्त प्रांत में हिमालय का भाग )

कुमायू के नाम कूर्मवन और कुमार वन थे। यहाँ कूर्मावतार लोहा घाट के समीप हुआ था।

यहाँ का दूना गिरि पुराणों का द्रोणाचल है। कुमायू तथा गढवाल महापुन कहलाते थे।

सातवीं शताब्दी ईसवी में कुमायू व गढवाल का देश मिलकर सुवर्ण गोत्र कहा जाता था।

यहाँ स्त्रियाँ ही राज्य करती थी और इसे 'स्त्री राज्य' भी कहते थे।

महाभारत काल म यहाँ की प्रमिला नामक शासिका ने अर्जुन के विरुद्ध युद्ध किया था।

मद्रास प्रांत के गजम जिला म समुद्र तट पर श्री कूर्म नामक स्थान है जिसका प्राचीन नाम कूर्म क्षेत्र था और जहा चैतन्य महाप्रभु पधारे थे। इस स्थान को भी कूर्मावतार की जगह बताया जाता है।

१४० कुमार स्वामी—( देखिये मल्लिकार्जुन )

१४१ कुमारी तीर्थ—( दक्षिण हिन्दुस्तान के अंत म तिरुवाँकूर राज्य के कुमारी अन्तरीप में एक बस्ती )

बल्देव जी ने यहाँ आकर देवी का दर्शन किया था।

( महाभारत, वन पर्व, ८३ वाँ अध्याय ) कन्या तीर्थ म ३४ दिन व्रत करने से १०० दिव्य कन्या मिलती हैं और स्वर्ग लोक में निवास होता है।

( ८५वाँ अध्याय ) यात्रियों को उचित है कि कावेरी नदी में स्नान करने के पश्चात् समुद्र के किनारे पर जाकर कन्यातीर्थ का स्पर्श करें जिससे उनका सम्पूर्ण पाप विनाश हो जायेगा।

कुमारी गाँव म कुमारी देवी का बडा मन्दिर बना हुआ है। देवी के भोग राग में बडा खर्च होता है। उनके बहुमूल्य भूषण हैं। इन्हीं कुमारी देवी के नाम से उस अन्तरीप का नाम कुमारी अन्तरीप पडा है।

१४२ कुम्भकोणम्—( मद्रास प्रांत के तंजोर जिले में एक नगर )

यह नगर पौराणिक पवित्र स्थान है।

( स्कंद पुराण—सेतुबन्द खण्ड, ५वाँ अध्याय ) कुम्भकोण आदि क्षेत्रों म निवास करने से बडा फल लाभ होता है।

कुम्भकोणम् एक बडा शहर है और यहाँ कुम्भेश्वर शिव का प्रसिद्ध मन्दिर है। विष्णु का भी यहाँ एक विशाल मन्दिर है जिनके मन्दिर का ११ खनवाला बडा गोपुर लगभग १६० फीट ऊँचा है। यहाँ के मन्दिरों के राग भोग के खर्च के लिये बडी आमदनी है।

मन्दिर से चौथाई मील दक्षिण पूर्व महामोहन तालाब है जिसके किनारों पर जगह जगह बहुत से मन्दिर बने हैं। इस स्थान म १२ वर्ष पर महा माघ का प्रसिद्ध मेला होता है।

कुम्भकोणम् चोला राज्य की राजधानी थी। यहाँ विद्या का बडा प्रचार है और यहाँ के पण्डित प्रसिद्ध हैं।

१४३ कुर्कविहार—( बिहार प्रांत के गया जिले में एक स्थान )

भगवान बुद्ध के सुविख्यात प्रधान शिष्य महाकश्यप का यह निवास स्थान था। यहीं से उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया था।

इस स्थान का पुराना नाम कुक्कुट पाद गिरि व गुरुपाद गिरि है।

बौद्ध ग्रंथ कहते हैं कि यहीं से भगवान् मैत्रेय ( बोधिसत्व ) धर्म का प्रचार करेंगे।

प्रा० क०—ह्वान चाग व फाहियान दोनों ने इस स्थान का वर्णन किया है। फाहियान ने कुक्कुट पाद गिरि की बाबत जो लिखा है वह सब बातें कुर विहार से मिलती हैं। उन्होंने एक तीन शिखर का पर्वत लिखा है वह भी आधे मील की दूरी पर मौजूद है। यहाँ एक विहार था जो कुक्कुट पाद विहार से बिगड़कर कुकुट विहार और कुरविहार हो गया है। स्थान का नाम कुकुट

पाद गिरि था, जो गुरु महाकश्यप के निवास स्थान होने से गुरुपाद गिरि भी कहलाता था।

[भगवान् बुद्ध के बाद बौद्धों के सबसे बड़े महात्मा श्री महाकश्यप हुये हैं। पाली में इन्हें महाकस्सप कहते हैं। इनके पिता ने एक आदर्श दुलहिन के रूप में सोने की मूर्ति देकर ब्राह्मणों को इनके लिये दुलहिन खोजने मथुरा भेजा था, क्योंकि मथुरा उन दिनों नारी रत्नों के लिये प्रसिद्ध था। वे लोग खोज कर परम सुन्दरी भद्र कपिलानी को लाये थे। पर महात्मा महाकश्यप अपने और उनके बीच म फूलों की माला रख कर सोये और कहा कि जिसके मन मे विकार आजायगा उसी की ओर के फूल कुम्हला जायँगे। प्रति दिन फूल की माला ताजी रहती थी। कुछ दिन में दोनों के मन में पूर्ण वैराग्य उत्पन्न हुआ। दोनों ही घर से निकल पड़े, पर अलग अलग चले। भगवान् बुद्ध उन दिनों राजगृह में थे। वे दूर चल कर राजगृह और नालन्दा के बीच महाकश्यप के मार्ग में बैठ गये। उनको देखते ही महाकश्यप की भक्ति इन पर दौड़ गई, भगवान् ने इन्हें उपदेश दिया और अपना वस्त्र इन पर डाल कर वहाँ से चले गये। राजगृह म सबसे पहिली बौद्ध महासभा जो भगवान बुद्ध के बाद हुई थी उसके यही महागुरु थे।

व० द०—कुरकिहार में कई पुराने खेड़े हैं जिनम मूर्तियाँ बहुतायत से निकलती हैं। सबसे बड़ा खेडा २०० गज लम्बा और २०० गज चौड़ा है। मूर्तियों में से एक भगवान बुद्ध की मूर्ति बोधि प्राप्त करने की दशा की है। उसी में एक ओर उनके जन्म और दूसरी ओर निर्वाण के समय का दृश्य है। कुरकिहार को गुप्पा भी कहते हैं और यह गया से लगभग १०० मील पर है।

१४४ कुरुक्षेत्र— (पंजाब में अम्बाला और करनाल जिले में सरस्वती और दृषद्वती (गागरा) के मध्य का प्रदेश)

कुरुक्षेत्र आरम्भ से आर्य धर्म व सभ्यता का गृह है।

यह पवित्र भूमि ब्रह्मावर्त, धर्मक्षेत्र, स्यमन्त पञ्चक, रामह्रद और सन्निहित करके भी प्रसिद्ध है।

यह स्थान ब्रह्मा की उत्तर वेदी है।

परशुराम ने क्षत्रिय कुल का नाश कर उनके रुधिर मे पांच तालाब भर कर यहाँ अपने पितरों का तर्पण किया था।

राजा कुरु ने यहाँ तप किया था और इस भूमि को जोता था। शात

होता है कि भारतवर्ष में भूमि का जोतना आर्यों ने प्रथम यहीं से आरम्भ किया था।

राजा पृथु ने भी, जिनके नाम से पृथिवी का नाम पड़ा है, यहाँ तप किया था।

यहीं कौरव और पाण्डवों का जगत विख्यात महाभारत का भयकर सग्राम हुआ था।

नारायण ने जल के भीतर जगत को जान कर अण्डे का विभाग किया था, जिससे पृथिवी हुई, जिस स्थान में अण्डा स्थित था वह कुरुक्षेत्र का सन्निहित सरोवर है।

वामन पुराण ४४वें अध्याय के अनुसार लिंग पूजन सर्वप्रथम स्थानेश्वर में आरम्भ हुआ था।

ऋषियों के शाप से शिवजी का लिंग जो गिरा था वह अन्त में सन्निहित तीर्थ ही में स्थाणु तीर्थ स्थान पर लाकर रक्खा गया था और प्रतिष्ठित किया गया था।

यहीं तप करने से ब्रह्मा अपनी कन्या पर मोहित होने के पाप से मुक्त हुए थे।

राजा बलि ने कुरुक्षेत्र में यज्ञ किया था, और वामन जी ने यहीं आकर तीन पग भूमि उन से माँगी थी।

कुरुक्षेत्र में तप करके ब्रह्मा जी ने ब्रह्मत्व को पाया था।

वसुदेव जी ने कुरुक्षेत्र में विधिपूर्वक यज्ञ किया था।

भगवान कृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश इसी पवित्र भूमि पर दिया था।

देवताओं ने स्वामि कार्त्तिक का कुरुक्षेत्र में अभिषेक करके सेनापति नियत किया था।

दधिचि ने क्षुप और विष्णु को कुरुक्षेत्र के मध्य, स्थानेश्वर में पराजित किया था। दधिचि ऋषि की हड्डियों से बने हुए वज्र से इन्द्र ने वृत्रासुर को यहीं मारा था।

कुरुक्षेत्र में स्थाणु तीर्थ में सरस्वती के तट पर विश्वामित्र का एक आश्रम था।

कुरुक्षेत्र मुद्गल ऋषि का निवास स्थान था।

पुरुरवा ने खोई हुई उर्वशी को यहाँ फिर पाया था।

भा० क०— ( महाभारत, वन पर्व, ८३वाँ अध्याय ) सरस्वती से दक्षिण और दृषद्वती नदी के उत्तर कुरुक्षेत्र में जो लोग बसते हैं वे स्वर्ग के वासी हैं। उसके पुष्कर समिति तीर्थ में स्नान करके पितर और देवताओं को तर्पण करना चाहिये। यहीं परशुराम ने भारी काम किया था। यहां जाने से पुरुष कृतकृत्य हो जाता है, और अश्वमेध का फल लाभ होता है। तीर्थ सेवी पुरुष रामसर में स्नान करें। तेजस्वी परशुराम ने यहां क्षत्रियों को मार कर तडागों को रुधिर से भर कर अपने पितरों और पूर्व पितरों का तर्पण किया था। पितरों ने परशुराम को यह वरदान दिया कि तुम्हारे यह तालाब नि सन्देह तीर्थ हो जायेंगे।

चन्द्र ग्रहण में कुरुक्षेत्र में स्नान करने से १०० अश्वमेध यज्ञ का फल होता है। पृथिवी और आकाश के सम्पूर्ण तीर्थ और नदी, कुण्ड, तड़ाग, झरने तलेया तथा बावडी अमावस्या के दिन प्रतिमास कुरुक्षेत्र में आते हैं। इसी निमित्त कुरुक्षेत्र का दूसरा नाम सन्निहित है।

आकाश मे पुष्कर और पृथवी में नैमिषारण्य सर्वोपरि हैं, और कुरुक्षेत्र तीनों लोकों में श्रेष्ठ हैं। परशुराम के तड़ाग और मस्वकुक तीर्थ के बीच की भूमि का नाम कुरुक्षेत्र है। इसी को समन्त पञ्चक भी कहते हैं, यह ब्रह्मा की उत्तर वेदी है।

( महाभारत—वनपर्व, ११७वाँ अध्याय ) परशुराम ने २१ बार पृथिवी को क्षत्रियों से रहित कर दिया और समन्त पञ्चक तीर्थ में जाकर क्षत्रियों के रुधिर से ५ तालावों को भर दिया।

( महाभारत—उद्योगपर्व ) कुरुक्षेत्र में कौरव और पाण्डवों का जगत विख्यात संग्राम हुआ।

(महाभारत,शल्य पर्व, ३८ वाँ अध्याय) जब महाराज कुरु ने कुरुक्षेत्र में यज्ञ किया, तब उनके ध्यान करने से ऋषभ देश को छोड़ कर सुरेणु नामक सरस्वती कुरुक्षेत्र आई। ओघवती नामक सरस्वती वशिष्ठ के ध्यान करने से कुरुक्षेत्र में आई थी। ( ५३वां अध्याय ) महात्मा कुरु ने अनेक वर्ष तक इसमें निवास किया था, और इस पृथिवी को जोता था इसलिए इसका नाम कुरुक्षेत्र हुआ।

( लिंगपुराण, ३६वाँ अध्याय ) जिस युद्ध में शिव भक्त दधिचि से राजा क्षुप और विष्णु परास्त हुये, उस स्थान का नाम स्थानेश्वर हुआ। यहाँ शरीर त्याग करने से शिव लोक मिलता है। (शिव पुराण, दूसरा खण्ड, ३२ वें अध्याय में भी यह कथा है)

( वामन पुराण,२२वाँ अध्याय ) राजा सम्बरण के पुत्र कुरु ने द्वैत वन में प्राप्त हो सरस्वती नदी को देखा। पीछे वह ब्रह्मा की उत्तर वेदी को गये जहाँ बीस बीस कोस चारों ओर समन्त पञ्चक नामक क्षेत्र है। राजा कुरु ने उस क्षेत्र को उत्तम माना और कीर्ति के लिए सोने के हल बना कर महादेव के वृष और धर्मराज के भैंसे को हल में लगाया। वह प्रतिदिन उसी हल से सात कोस चारों तरफ पृथिवी को जोतने लगे। इसके अनन्तर राजा कुरु ने विष्णु के प्रसन्न होने पर यह वरदान मांगा कि जहाँ तक मैंने यह पृथिवी बाही है वह धर्म क्षेत्र हो जाय। यज्ञ, दान, उपवास, स्नान, जप, होम आदि शुभ और अशुभ काम जो इस क्षेत्र में किया जाय वह अक्षय हो जाय और आप तथा महादेव सब देवताओं के सहित यहाँ वास करें।

आदि में यह स्थान ब्रह्मा जी की वेदी कहलाया, पीछे रामह्रद के नाम से विख्यात हुआ, और कुरु राजा के हल से बाहने पर कुरुक्षेत्र कहलाया।

( वामन पुराण, ३३वाँ अध्याय ) सरस्वती और दृषद्वती इन दो नदियों के बीच जो अन्तर है वह देव निर्मित ब्रह्मावर्त देश कहलाता है। कुरुक्षेत्र में सन्निहित तीर्थ ब्रह्मवेदी है।

( ३४वाँ अध्याय ) कुरुक्षेत्र में रामह्रद है जहाँ परशुराम जी ने सब क्षत्रियों को मार कर उनके रुधिर से ५ ह्रद पूरित किये हैं।

( ४१वाँ अध्याय ) सूर्यग्रहण में सन्निहित तीर्थ में श्राद्ध करने से महा फल प्राप्त होता है। ( ४३वाँ अध्याय ) नारायण ने जल के भीतर जगत को जानकर अण्डे का विभाग किया जिससे पृथिवी हुई। जिस स्थान में अण्डा स्थित हुआ वहाँ सन्निहित सरोवर है। आदि के निकले हुए तेज से आदित्य ( सूर्य ) और अण्डे के मध्य में ब्रह्मा उत्पन्न हुए।

( ४४ वाँ अध्याय ) ऋषियों के शाप से शिवलिंग के गिरने पर जगत में बड़ा उपद्रव होने लगा। पीछे शिव ने ब्रह्मा की स्तुति से प्रसन्न होकर ऐसा कहा कि जो लिंग गिरा है वह सन्निहित तीर्थ में प्रतिष्ठित हो जाय। जब गिरा

हुआ शिव लिङ्ग किसी से न उठा तब शिव जी ने हस्ती रूप धारण कर दारुवन से अपने सुण्ड द्वारा उस लिङ्ग का लाकर सर की पश्चिमी पार्श्व में निवेशित किया।

( ४५वाँ अध्याय ) स्थाणु लिङ्ग के दर्शन के माहात्म्य से स्वर्ग पूर्ण होने लगा। स्थाणु तीर्थ में स्नान, लिङ्ग के दर्शन और वट के स्पर्श करने से मुक्ति और मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है। चैत्र महीने में कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन रुद्र कर तीर्थ में स्नान करने से परमपद प्राप्त होता है।

( ४८वाँ अध्याय ) ब्रह्मा अपनी कन्या को देख कर मोहित हुए। उस पाप से ब्रह्मा का सिर कट गया। पीछे ब्रह्मा ने कटे हुए सिर के सहित सान्निहित तीर्थ में जाकर स्थाणु तीर्थ में सरस्वती के उत्तर तीर्थ पर चार मुख वाले शिर की प्रतिष्ठा कर आराधन किया, तब वे पाप रहित हो गये। इस प्रकार से ब्रह्मासर प्रतिष्ठित हुआ।

( ५७वाँ अध्याय ) कुरुक्षेत्र में विष्णु इन्द्रादि सब देवताओं ने स्वामि कार्तिकेय का अभिषेक किया और उनको सेनापति बनाया।

( ८६वाँ अध्याय ) राजा बलि ने कुरुक्षेत्र में यज्ञ किया।

( ६२वाँ अध्याय ) वामन जी ने तीन पग पृथिवी बलि से जाकर मांगी और बलि ने देदी।

( मत्स्यपुराण—१६१वां अध्याय ) सूर्यग्रहण में महापुण्य वाले कुरुक्षेत्र सेवते हैं।

( सौरपुराण, ६७वां अध्याय ) कुरुक्षेत्र में ब्रह्मा ने तप करके ब्रह्मत्व को पाया और बालखिल्य आदि ब्राह्मणों ने परम सिद्धि लाभ की।

( श्रीमद्भागवत, ८४वाँ अध्याय ) वसुदेवजी ने कुरुक्षेत्र में विधिपूर्वक यज्ञ किया।

( महाभारत, आदिपर्व, प्रथम अध्याय ) परशुराम ने क्षत्रिय कुल का सर्वनाश कर उनके शोणित से समन्त पञ्चक में ५ ह्रद बनाये और पितृगणों से यह वर मांगा कि यह ह्रद भूमण्डल में प्रसिद्ध तीर्थ बनें। इन ह्रद के आस पास का देश पवित्र समन्त पञ्चक नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसी देश में कौरव और पाण्डवों का संग्राम हुआ था।

( ६४वां अध्याय ) पुरुवंशी राजा भरत के पश्चात् छठी पीढ़ी में राजा सम्वरण का पुत्र राजा कुरु हुआ। जिसकी तपस्या करने से कुरु जंगल नामक स्थान, उसके नाम के अनुसार कुरुक्षेत्र नाम से प्रसिद्ध हुआ।

( व्यासस्मृति, शरासस्मृति, वामन पुराण, मत्स्य पुराण, स्कंद पुराण, पद्म पुराण, गरुड पुराण, अग्नि पुराण, कूर्म पुराण, सौर पुराण, श्रीमद् भागवत और महाभारत में कुरुक्षेत्र की महिमा का वर्णन है। )

[ परम वैष्णव महाराज ध्रुव के वंश में वेन नाम का एक राजा हुआ, यह बड़ा अत्याचारी था इससे मुनियों ने उसे शाप द्वारा मार डाला। उसके कोई सतान न थी, इससे ब्राह्मणों ने उसकी दोनों बाहुओं का मथ कर एक स्त्री और एक पुरुष को उत्पन्न किया। यह पुरुष महाराज पृथु थे, और यह स्त्री उनकी पत्नी अर्चिदेवी थीं।

राजा पृथु ने संसार अपने वश में कर लिया और उसका नाम पृथिवी पड़ा। फिर उनके हृदय में भगवान के प्रति भक्ति उत्पन्न हुई और साथ ही साथ वैराग्य सहित ज्ञान का प्रादुर्भाव हुआ जिससे उनके हृदय की सारी गुत्थियाँ आप ही आप टूट गईं ]

[ प्रह्लाद के पुत्र विरोचन, और विरोचन के पुत्र दान शिरोमणि महाराज बलि थे। इन्होंने अपने पराक्रम से दैत्य, दानव, मनुष्य और देवताओं को सबको जीत लिया। विष्णु ने ब्राह्मण का रूप धर कर इनसे तीन पग भूमि मांगी और राजा बलि के स्वीकार करने पर उन्होंने दो ही पग में पृथिवी को नाप लिया। राजा बलि ने अपने को तीसरे पग में नपा दिया। विष्णु ने प्रसन्न होकर वर मांगने को कहा तो बलि ने मांगा कि आप सदा मेरे द्वार पर विराजें। विष्णु ने इसे स्वीकार किया और भगवान का आशीर्वाद पाकर राजा बलि प्रसन्नता पूर्वक सुतल लोक को चले गये। ]

[ द्वापर युग में महात्मा मुद्गल कुरुक्षेत्र में रहते थे। यह जितेन्द्र थे और इनकी कीर्ति सारे देश में फैल रही थी।

दुर्वासा ऋषि की कठिन से कठिन परीक्षा में भी यह विचलित न हुए और पूर्ण उतर कर निर्वाण पद के भागी हुए। ]

[ राजा कुरु चन्द्रवंशियों के परम पराक्रमी पूर्वज थे और इनके वंशज कौरव कहलाये। महाराज धृतराष्ट्र और पाण्डु दोनों इनके वंश में थे। ]

न० ८०— अम्बाला से २६ मील दक्षिण सरस्वती नदी के तट पर कुरुक्षेत्र के मध्य में थानेसर ( स्थानेश्वर ) कस्बा है। यह कस्बा भारतवर्ष के अति प्राचीन और प्रसिद्ध कस्बों में से एक है। कस्बे के निकट बहुत से सरोवर हैं जिनमें कुरुक्षेत्र सरोवर सन्निहित सरोवर और स्थाणु, यह तीन प्रधान हैं। कुरुक्षेत्र सरोवर कस्बे से चौथाई मील दक्षिण सरस्वती के जल से भरा हुआ

१२०० गज लम्बा और ६४० गज चौड़ा दो मील से अधिक घेरे का पवित्र सरोवर है। सरोवर के उत्तर-पश्चिम तथा १०० गज पूर्व नीचे से ऊपर तक पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं परन्तु दक्षिण का भाग मिट्टी से पट गया है।

सरोवर में उत्तर किनारे के मध्य से ७४ गज दक्षिण ऊँची भूमि पर सूर्य घाट है। उत्तर किनारे से सूर्यघाट तक पुल बना है। पुल से लगभग ६० गज पश्चिम इसके समानान्तर रखा म दूसरा पुल है जिससे सरोवर के भीतर चन्द्र कूप के निकट तक जाना होता है। वहाँ चन्द्रकूप नामक पवित्र कुआँ है।

सन्निहित सरोवर थानेसर से पूर्व दक्षिण नदी के समान लम्बा सरोवर है। यही ब्रह्मवेदी है और यहाँ पृथिवी का अन्डा रखा गया था।

स्थाणु सर सरोवर थानेसर के उत्तर में एक बड़ा सरोवर है जिसके चारों ओर पक्की सीढ़ियाँ बनी हैं और पश्चिम किनारे पर स्थानेश्वर शिव का सुन्दर मन्दिर है। यह स्थान स्थाणु तीर्थ है जहाँ शिव का गिरा हुआ लिंग प्रतिष्ठित किया गया था।

इस स्थान के अनेक सरोवरों में से एक ब्रह्मसर है। पक्के सरोवर के किनारे एक छोटे मन्दिर में ब्रह्मा जी की स्थापित एक चतुर्मुख शिव मूर्ति है। ब्रह्मा जी ने अपनी कन्या पर मोहित होने के पाप से मुक्त होने को यहाँ तप किया था।

पञ्च प्राची नाम का यहाँ एक दूसरा पक्का सरोवर है। एक और पक्का सरोवर रुद्रकर है।

थानेसर के चारों ओर इस देश में ३६० पवित्र स्थान हैं। बड़ी परिक्रमा में ये सब स्थान मिलते हैं। एक छोटी परिक्रमा होती है जिसको अन्तरगृही की परिक्रमा कहते हैं। इसके करने में कुछ घंटे लगते हैं। तीसरी सबसे छोटी परिक्रमा कुरुक्षेत्र सरोवर की होती है।

प्रति अमावस्या को स्नान के लिये थानेसर में बहुत से यात्री आते हैं। प्रतिवर्ष तीन चार लाख यात्री यहाँ आते जाते हैं परन्तु सूर्यग्रहण पर १० लाख से अधिक यात्री भारतवर्ष के कोने कोने से यहाँ पहुँचते हैं। कुरुक्षेत्र में दान करने का माहात्म्य अन्य सम्पूर्ण तीर्थों से अधिक है।

किसी समय थानेसर एक विशाल नगर और राज्य की राजधानी था। लुटेरे महमूद गजनवी ने इस नगर को भी लूटा था। यहाँ अनेक नये और पुराने देव मन्दिर हैं।

महाराजा कश्मीर, पटियाला, नाभा, जिन्द, फरीदकोट आदि पञ्जाब के राजाओं के बड़े बड़े मकान थानेसर में बने हैं। सदाव्रत भी होता है। यात्रियों

को कोई कष्ट नहीं पहुँचता है। पन्डे लोग अपने घरों में यात्रियों को टिकाते हैं।

प्राचीन कुरुक्षेत्र की राजधानी श्रुग्न थी जो अब जगाद्री और उरिया के समीप 'सुग' गाँव है।

थानेसर कस्बे से १३ मील पश्चिम-दक्षिण कुरुक्षेत्र की सीमा के भीतर अम्बाला जिले में सरस्वती नदी के किनारे पिहोवा एक छोटा पुराना कस्बा और पवित्र स्थान है। पूर्व समय में यह पृथूदक तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध था, और महाभारत में पुष्कर समिति इसका नाम लिखा है। राजा पृथु ने, जिन्होंने संसार में पहिले पहल राज्य स्थापित करके अराजकता मिटाई और जिनके नाम से पृथिवी, पृथिवी कहलाई, उन्होंने यहाँ तप किया था। इसी से इसका नाम पृथूदक था।

इस कस्बे के पुराने मन्दिरों को भी मुसलमानों ने तोड़ दिया था। यहाँ अनेक उत्तम नये मन्दिर हैं। पुराने सर्वश्रेष्ठ मन्दिरों में से एक पृथ्वीश्वर महादेव का मन्दिर है जिसके निकट कार्तिक कृष्ण पक्ष की पञ्चमी से नवमी तक मेला लगता है। कस्बे के पूर्व में एक मील के घेरे का ताल है जिसके किनारे कृपावन का मन्दिर है। यह महाभारत के कृपाचार्य से सम्बन्ध रखता है। पिहोवा में अपसरोदय ताल वह स्थान है जहाँ अप्सरा उर्वशी को पुरुरवा ने पाया था। यहाँ के और पवित्र सरोवर मधुसरवा, घृतसवा और पापान्तक हैं। पापान्तक में कहा जाता है कि स्वयं गंगाजी ने स्नान करके अपने में धोये हुए पापों को धोया था। ययाति और बृहस्पति के मन्दिर भी पिहोवा के प्रसिद्ध मन्दिर हैं जिनमें ययाति कौरवों और पाण्डवों के पुरखे का स्थान है, और बृहस्पति में बृहस्पति ने तप किया था।

अकाल मृत्यु से मरे हुए मनुष्यों के सम्बन्धी पिहोवा में जाकर उनके उद्धार के लिये वहाँ श्राद्ध कर्म करते हैं। आश्विन और चैत्र की अमावस्या को पिहोवा में मेला लगता है। विधवा स्त्रियाँ मेले में एकत्रित होकर अपने अपने पति के लिये विलाप करती हैं।

थानेसर से ५ मील दक्षिण अमिन है जहाँ अभिमन्यु मारे गये थे, और अश्वत्थामा को अर्जुन ने पराजित करके उनका सिर छेद दिया था, तथा जहाँ अदिति ने सूर्य को जन्म दिया था। (देखिये अमिन)

थानेसर से ८ मील पश्चिम में भूरिश्रवा मारे गये थे। चक्रतीर्थ में श्री कृष्ण ने भीष्म के मारने को रथ का पहिया (चक्र) उठाया था। थानेसर से ११ मील दक्षिण-पश्चिम में भीष्म पितामह ने शरीर छोड़ा था, और थाने

सर से पश्चिम अस्थीपुरा में महाभारत में मारे गये योद्धाओं के शरीरों को इकट्ठा करके दाह किया गया था।

सोनपत ( सोनप्रस्थ ) और पानीपत ( पाणिप्रस्थ ) उन पाँच ग्रामों में से दो थे जिनको श्रीकृष्ण ने दुर्योधन से पाण्डवों के लिये माँगा था।

१४५ कुलुहापहाड़— ( बिहार प्रांत के हजारीबाग जिले में एक स्थान )

यहाँ के प्राचीन नाम मकुल पर्वत और कुलाचल पर्वत हैं।

भगवान बुद्ध ने छठा चौमास यहाँ व्यतीत किया था।

कहा जाता है एक पूर्व जन्म में भगवान बुद्ध ने यहाँ अपना शरीर एक शेरनी को खिला दिया था जिससे उसके नये जन्मे बच्चे भूखों मरने से बच जावें।

कुलुहा पहाड़ बुद्ध गया से २६ मील दक्षिण में है।

१४६ कुशीनगर वा कुशीनारा— ( देखिये कसिया )

१४७ केदारनाथ— ( हिमालय के गढ़वाल प्रांत में एक पुरी )

केदार नामक राजा ने सतयुग में यहाँ तप किया था।

भगवान ने नर नारायण रूप से यहाँ कड़ा तप किया था।

शिव के १२ ज्योतिर्लिंगों में से यहाँ केदारेश्वर लिंग स्थित है।

युधिष्ठिर आदि पाण्डव इस स्थान की यात्रा को आये थे।

कार्तिकेय का यहाँ जन्म हुआ था।

प्रा० क०— ( महाभारत—शान्तिपर्व, ३५वाँ अध्याय ) महास्थान यात्रा, अर्थात केदाराचल पर गमन करके हिमालय पर चढ के प्राण त्याग करने से मनुष्य सुरा पान के पाप से विमुक्त हो जाता है।

( वनपर्व—८३वाँ अध्याय ) कपिस्थल (केदार) कुन्ड में स्नान करने से सब पाप भस्म हो जाते हैं।

( लिंगपुराण—६२वाँ अध्याय ) जो पुरुष सन्यास ग्रहण करके केदार में निवास करता है वह दूसरे जन्म में पाशुपत योग को प्राप्त करता है।

( वामनपुराण—३६वाँ अध्याय ) जहाँ साक्षात वृद्ध केदारदेव स्थित है उस कपिस्थल तीर्थ में स्नान करके रुद्र का पूजन करने से मनुष्य शिवलोक में जाता है।

( कूर्मपुराण—उपरिभाग, ३६वाँ अध्याय ) महालय तीर्थ में स्नान करके महादेव जी के दर्शन करने से रुद्रलोक मिलता है। शंकर जी का दूसरा सिद्ध स्थान केदार तीर्थ है।

( सौरपुराण—६६वाँ अध्याय ) केदार नामक स्थान भगवान शङ्करजी का महातीर्थ है।

( ब्रह्मवैवर्तपुराण—कृष्णजन्म खण्ड, १७वाँ अध्याय ) केदार नामक राजा सतयुग में सप्तद्वीप का राज्य करता था। वह बहुत काल राज्य करने के पश्चात अपने पुत्र को राज्य दे वन में जाकर श्री हरि का तप करने लगा और बहुत काल तप करने के उपरान्त गोलोक में चला गया। उसी के नाम के अनुसार वह तीर्थ केदार नाम से प्रसिद्ध होगया।

( शिवपुराण—ज्ञानसंहिता, ३८ वाँ अध्याय ) शिवजी के १२ ज्योतिर्लिंग विद्यमान हैं। उनमें से केदारेश्वर लिंग हिमालय पर्वत पर स्थित है।

( ४७वाँ अध्याय ) भरत खण्ड के बद्रिकाश्रम मण्डल में भगवान नर नारायण रूप मे सर्वदा निवास करते हैं और लोक के कल्याण के निमित्त नित्य तप करते हैं। एक समय उन्होंने हिमालय के केदार नामक शृङ्ग पर शिव लिंग स्थापित करके बड़ा तप किया।

( स्कंदपुराण—केदार खण्ड प्रथम भाग, ४०वाँ अध्याय ) पाण्डव लोग व्यासदेव के आदेशानुसार केदार में जाकर उस तीर्थ के सेवन से शुद्ध होगये।

( ४१वाँ अध्याय ) मनुष्य केदारपुरी में मृत्यु पाने से निःसन्देह शिवरूप हो जाता है। केदारपुरी में जाने की इच्छा करने वाले मनुष्य भी लोक में धन्य हैं।

( ४२वाँ अध्याय ) केदार नाम में पापियों को मुक्ति देने वाला भृगुतुङ्ग तीर्थ है। महापातकी मनुष्य भी भृगुतुङ्ग से श्री शिला पर गिर कर प्राण छोड़ने से परब्रह्म को पाता है।

[ भगवान विष्णु ने धर्म की पत्नी मूर्ति से नर और नारायण नाम के दो ऋषियों का अवतार ग्रहण किया। वे बदरीवन में रह कर निरन्तर तपस्या किया करते थे। इन्द्र ने एक बार भय खाकर उनके डिगाने को अप्सराओं को भेजा पर उन्हें निराश लौटना पड़ा और इ[illegible] को अपने व्यवहार पर लज्जित होना पड़ा। ]

व० द०—समुद्र के जल से ११ हजार फीट से अधिक ऊंचाई पर केदार महापथ नामक चोटी के नीचे मन्दाकिनी और सरस्वती नदियों के मध्य अर्द्धाकार भूमि पर केदारपुरी है। यहाँ थोड़े से पक्के मकानात हैं जिनमें १८ धर्मशालायें हैं और कई सदाव्रत लगे रहते हैं। केदारपुरी के उत्तर द्वार पर केदारनाथ का सुन्दर मन्दिर है। मन्दिर के ऊपर सुनहला कलश और उसके

भीतर मध्य में तीन चार हाथ लम्बा और डेढ़ हाथ चौडा केदारनाथ का अन गढ स्वरूप है। ऊपर से बडी जलधरी और चाँदी का बडा छत्र लटकता है।

केदारनाथ पहाड़ की सबसे ऊँची चोटी समुद्र से २२८५० फीट ऊँची है। वैशाख जेठ में भी जगह जगह बर्फ रहती है। जाडे के कारण मकान से बाहर आदमी नहीं रह सकते हैं। बहुतेरे यात्री दर्शन करके उसी दिन रामबाला चट्टी को लौट जाते हैं।

भैरव झाँप नामक प्रसिद्ध पर्वत के नीचे एक स्थान है जहाँ पहले ऊपर से कूद कर कोई कोई यात्री आत्मघात करते थे। सन् १८२६ ई० से अंग्रेजी सरकार ने यह प्रथा बन्द करदी।

केदारनाथ के मन्दिर के समीप एक कुंड है जहाँ कहते हैं कि कार्तिकेय का जन्म हुआ था।

केदारपुरी से १२ मील दक्षिण मध्यमेश्वर क्षेत्र है जिसके सम्बन्ध म स्कद पुराण, केदारखण्ड प्रथमभाग का ४८ वाँ अध्याय, कहता है कि मनुष्य मध्य मेश्वर क्षेत्र में सरस्वती के दर्शन मात्र से पापों से छूट जाता है और उसमें स्नान करने से आवागमन से रहित हो जाता है। स्कद पुराण के अनुसार शिवजी के ५ क्षेत्र हैं। १ केदारनाथ २ मध्यमेश्वर ३-तुङ्गनाथ ४ रुद्रालय ५ कल्पेश्वर।

तुङ्गनाथ— तुङ्गनाथ पञ्चकेदारों में से तीसरे हैं। केदारनाथ से २८ मील पर उखीमठ है और उसके दक्षिण म तुङ्गनाथ हैं। यहाँ का प्राचीन मन्दिर पत्थर के मोटे मोटे ढोकों से बना हुआ है। और उसके भीतर तुङ्गनाथ का पतला अनगढ शिव लिंग है। लिंग के पूर्व डेढ दो हाथ ऊँची शङ्करा चार्य्य की मूर्ति स्थित है। लोग कहते हैं कि तुङ्गनाथ का मन्दिर शङ्कराचार्य्य का बनाया है। यहाँ की चढाई बडी कडी है।

स्कदपुराण का केदार खण्ड, प्रथम भाग ४९वाँ अध्याय, कहता है कि मानधाता क्षेत्र (ऊखी मठ) से दक्षिण ओर दो योजन लम्बा और दो योजन चौडा तुङ्गनाथ क्षेत्र है जिसके दर्शन मात्र से मनुष्य का सब पाप छूट जाता है और शिव लोक मिलता है।

रुद्रानाथ— रुद्रनाथ का मन्दिर मडल गाँव स्थान से १२ मील पर है। यहाँ बर्फ बहुत रहती है इससे विरले ही यात्री वहाँ जाते हैं। स्कद पुराण केदार खण्ड प्रथम भाग ५१ वाँ अध्याय कहता है कि सदाशिव रुद्रालय क्षेत्र

का त्याग कभी नहीं करते। चेत्र का दर्शन मात्र करने से मनुष्य का जन्म सफल हो जाता है।

कल्पेश्वर—ऊर्जम गाँव जिसे आदि बद्री भी कहते हैं, वहाँ से दो मील पर पञ्चकेदारों में कल्पेश्वर महादेव का मन्दिर है। स्कंद पुराण के केदारखण्ड प्रथमभाग,५३वें अध्याय में वर्णन है कि शिवजी के पाँच स्थानों में से पाचवाँ स्थान कल्पस्थल करके प्रसिद्ध है। उसी स्थान पर देवराज इन्द्र ने दुर्वासा जी के शाप से श्रीहत होने के पश्चात महादेवजी का पूजन किया था और पार्वती जीके सहित महादेव जी की आराधना करके कल्पवृक्ष पाया था। तभी उसे शिवजी कल्पेश्वर नाम से प्रसिद्ध हुए।

१४८ केन्दुली—( बिहार प्रांत के वीरभूम जिले में एक गाँव )

यह महाकवि जयदेव जी की जन्मभूमि है जिन्होंने 'गीत गोविन्द' की रचना की है। यहीं उन्होंने शरीर छोड़ा था।

इस स्थान का पुराना नाम किन्दु बिल्व ग्राम है।

[ ३०० वर्ष हुए नाभा जी ने भक्त माल ग्रन्थ में पहले के भक्तों का यश गान किया है। उसमें वर्णन है कि जयदेव जी कवियों के महाराजा थे। का बनाया हुआ गीत गोविन्द तीनों लोक में प्रसिद्ध हुआ। इनकी अष्टपदी में अभ्यास करने से बुद्धि की वृद्धि होती है और उसका गानसुन कर निश्चय करके श्रीकृष्ण भगवान प्रसन्न होकर वहाँ चले आते हैं। भक्तमाल की टीका में लिखा है कि बिल्व ग्राम में जयदेवजी का जन्म हुआ।

जयदेव जी का जन्म सन् ईस्वी की ११वीं सदी के अन्त में अथवा १२ वीं सदी के आरम्भ में हुआ था। वे ब्राह्मण थे और अपने जीवन का अर्ध भाग उपासना और धर्मोपदेश में बिताया था। ]

केन्दुली ग्राम में जयदेव जी का सुन्दर समाधि मन्दिर बना हुआ है और अब तक उनके स्मरणार्थ मकर की संक्रांति को प्रति वर्ष एक बड़ा मेला लगता है जिसमें एक लाख के लगभग वैष्णव एकत्रित होते हैं और समाधि के चारों ओर कीर्तन करते हैं।

१४९ केशीतीर्थ—( देखिये मथुरा )

१५० केशगढ़—( देखिये आनन्दपुर )

१५१ केसरिया—( देखिये बिहार )

१५२ कैलाश गिरि—(तिब्बत में मानसरोवर झील के किनारे एक पर्वत)

यह पर्वत भगवान शंकर का निवास स्थान कहा जाता है।

इस स्थान से आदि नाथ ( प्रथम तीर्थंकर) मोक्ष को पधारे थे।

कैलास पर्वत ही जैन लोगों का अष्टापद पर्वत है। इसके अन्य नाम हेमकूट तथा हेम पर्वत हैं। यहाँ पर कुबेर का निवास स्थान है।

कैलास की शाखा क्रौंच पर्वत पर मानसरोवर झील स्थित है।

भारतवर्ष, तिब्बत और नेपाल की सीमा पर भोट देश है जहाँ व्यास जी ने तप किया था, और जिस कारण उसको व्यास खण्ड भी कहते हैं। इसीके समीप मानसरोवर झील के निकट अति मनोहर और सुन्दर कैलास गिरि पर्वत है। इसकी चट्टानें सीधी हैं जिससे उस पर चढा नहीं जा सकता। पर्वत की शोभा दर्शनीय है, ऐसा जान पड़ता है मानों उस पर देव निवास कर रहे हैं। मानसरोवर का निर्मल जल और वहाँ की शांति देवलोक का आनंद देने वाली और अकथनीय है।

कैलास पर्वत के चारों ओर की परिक्रमा २४ मील लम्बी है और उसको पूरा करने मे ३ दिन लगते हैं।

१५३ कौंडवीर— ( देखिये कुण्डिनपुर )

१५४ कोग्राम— ( बङ्गाल प्रांत के वर्दवान जिले में एक ग्राम )

यह ५२ पीठों म से एक है जहाँ सती के शरीर का एक अंग गिरा था।

लोचन दास की यह जन्म भूमि है जिन्होंने "चैतन्यमङ्गल" लिखा है।

१५५ कोटवा—( संयुक्त प्रांत के बाराबंकी जिले म एक स्थान )

स्वामी जगजीवन दास की यहां समाध है।

यहाँ से चार कोस पर सर्दहा गाँव म इनका जन्म हुआ था।

[ स्वामी जगजीवन दास का जन्म क्षत्रिय कुल में १६८२ ईस्वी में सूर्य दनी के किनारे सर्दहा गाँव, जिला बाराबंकी में हुआ था। बालावस्था में जब यह गौवें चरा रहे थे, दो महात्मा बुल्लासाहब व गोविंद साहब, उधर से निकले। उन्होंने इनसे चिलम चढ़ाने को अग्नि माँगी। जगजीवन दास अग्नि के साथ उनके लिये घर से दूध भी लेते आये, पर बाप के डर से जी में घबरा रहे थे कि खबर पाकर मारेंगे। उनके चित्त का यह दशा देख कर बुल्लासाहब ने कहा कि डरो नहीं, हम लोगों क देने से तुम्हारे घर का दूध घटा नहीं वरन् बढ गया है। यह जो घर लौटे तो देखा कि दूध का बर्तन लबालब भरा है, और ऊपर से बह बह कर दूध नीचे भी फैल रहा है। जगजीवन दास साधुओं के

पास को दौड़े, पर वे वहाँ से जा चुके थे। कुछ दूर पर उन्होंने उन्हें जा पकड़ा और चरणों पर गिर कर शिष्य बना कर मंत्र देने की विनय की।

बुल्ला साहब ने कहा कि कान में मंत्र फूंकने की आवश्यकता नहीं है। चिन्ह के लिए उन्होंने अपने हुक्के में से काला तागा और गोविंद साहब ने सफेद तागा उनकी कलाई में बाँध दिया। जगजीवन दास का जीवन बदल गया और उन्होंने सत्तनामी सम्प्रदाय कायम कि । इस सम्प्रदाय के लोग अवध और गोरखपुर कमिश्नरी में बहुतायत से हैं,वैसे देश के अन्य भागों में भी हैं। सत्तनामी लोग कलाई में काला और सफेद तागा बाँधते हैं। यह वही बुल्ला साहब व गोविंद साहब के जगजीवन दास की कलाई में तागा बाँधने की याद-गार में है।

स्वामी जगजीवन दास के शान्ति दायक यश की वृद्धि के साथ साथ उनके प्रति उनके गाँव वालों की ईर्षा की अग्नि भी बढ़ने लगी और वे सरदहा छोड़कर वहाँ से चार मील दूर कोटवा में रहने लगे, और वहीं १७६१ ईस्वी में शरीर छोड़ा। कहते हैं कि स्वामी जगजीवन दास के सरदहा गाँव छोड़ते ही उसे सूर्य नदी बहा ले गई।]

कोटवा में स्वामी जगजीवन दास की समाधि है और महन्ती गद्दी स्थापित है। उनके सामने अमरराम (अमरन) तालाब है जिसमें यात्री गण नहाते हैं। कार्तिक व वैशाख की पूर्णमासी को यहाँ भारी मेले लगते हैं।

१५६ कोटितीर्थ—(देखिये चित्रकूट रामेश्वर)

१५७ कोरूर—(पाकिस्तानी पंजाब के मुल्तान जिले में एक नगर)

महाराज विक्रमादित्य ने शकों पर ५२३ ईस्वी में पूर्ण विजय यहीं पाई थी।

इसी विजय से विक्रमी संवत का प्रारम्भ माना जाता है।

(सम्भव है कि यह संवत पहिले से चला आता था और महाराज विक्रमादित्य की विजय की स्मृति में इसका नाम बदल दिया गया)

१५८ कोलगाँव—(देखिये कोलागढ़)

१५९ कोलर—(मैसूर राज्य में पूर्व [illegible] एक नगर)

इसका पुराना नाम कोलाहलपुर है।

यहीं पर परशुराम ने किरातार्जुन का वध किया था।

(किरातार्जुन द्वापर के अन्त में हुए थे, और सहस्रार्जुन या सहस्रबाहु जिनको परशुराम ने माहिष्मती में मारा था वे त्रेतायुग में हुये थे।)

१६० कोल्हापुर—(बम्बई प्रांत के कोल्हापुर राज्य की राजधानी)

यहाँ देवी भागवत में कथित प्रसिद्ध महालक्ष्मी जी का विशाल मन्दिर है।

जगद्गुरु श्री रेणुकाचार्य यहाँ आये और रहे थे।

कहा जाता है कि अवधूत भगवान दत्तात्रेय अब भी यहाँ निवास करते हैं।

श्री समर्थ गुरु रामदास ने भी यहाँ की यात्रा की थी।

प्राचीन सत्याद्रि या सत्य पर्वत यहीं है।

अगस्त्य ऋषि ने यहाँ निवास किया था।

पद्म पुराण वर्णित रुद्र गया यहीं है।

है कि कोल्हापुर अति प्राचीन स्थान है। आस पास की भूमि खोदने पर अनेक छोटे छोटे मन्दिर तथा अन्य इमारतें मिली हैं जो किसी समय में भूकम्प से पृथिवी में धँस गई थीं।

शिवाजी के वंशजों का अब केवल एक यही राज्य है, वह अब बम्बई प्रान्त में सम्मिलित कर दिया गया है। अवधूत भगवान दत्तात्रेय के लिये कहा जाता है कि वे आज भी मौजूद हैं। करवीर में भिक्षा मांगते हैं, गोदावरी के तट पर भोजन करते हैं और सह्य पर्वत पर शयन करते हैं।

१६१ कौसम— ( संयुक्त प्रदेश के इलाहाबाद जिले में एक कस्बा )

इस स्थान के प्राचीन नाम कौशाम्बी, कौशाबीपुर, वत्स्य और वत्सय पट्टन हैं।

कौशाम्बी को कुशाम्ब ने बसाया था जो पुरुरवा से दसवीं पीढ़ी में थे।

महाराज चक्र ने जो अर्जुन से आठवीं पीढ़ी में थे, कौशाम्बी को, हस्तिनापुर के नष्ट होने पर अपनी राजधानी बनाया था।

यहाँ वररुचि कात्यायन का जन्म हुआ था।

श्री पद्म प्रभु स्वामी ( छठे तीर्थङ्कर ) के गर्भ और जन्म कल्याणक इसी स्थान पर हुए थे, और यहाँ से तीन मील पभोसा पहाड़ी पर उन्होंने दीक्षा ली थी तथा कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था।

भगवान बुद्ध ने बोध प्राप्त करने के पश्चात् छठा और नवाँ चतुर्मास यहाँ बिताया था।

भगवान बुद्ध के नख और शिखा यहाँ एक स्तूप में रक्खे थे, और उनकी सबसे पहली मूर्ति यहीं बनाई व रखी गई थी।

महात्मा बाकुल ( बौद्ध ) का यह जन्म स्थान था।

प्रा० क०—लङ्का के पाली ग्रंथों में लिखा है कि अपने समय के १९ बड़े से बड़े नगरों में से कौशाम्बी एक था। इस नगर का वर्णन रामायण में भी आया है। मेघदूत में कालिदास ने कौशाम्बी के राजा उदयन का जिक्र किया है। सोमदेव की वृहत् कथा में भी यहाँ के राजा उदयन का बखान है। रत्नावली नाटक की रङ्गभूमि, वत्स राजा की राजधानी कौशाम्बी ही हैं। महावंश ग्रन्थ में भी इस नगर का उल्लेख है। ललित विस्तार में लिखा है कि कौशाम्बी के राजा उदयन और भगवान बुद्ध एक ही दिन पैदा हुए थे। महाराज उदयन ने भगवान बुद्ध के जीवन काल ही में उनकी लाल चन्दन की मूर्ति बनवा कर अपने राज भवन के एक मन्दिर में रक्खी थी। भगवान बुद्ध की सबसे

विख्यात मूर्ति यही हुई है। ह्वानचांग के समय में यह मूर्ति एक पत्थर की छतरी के नीचे पुराने महल में रक्खी थी। उस समय महाराज अशोक के बन वाये हुए यहाँ तीन बड़े स्तूप भी थे। एक में भगवान बुद्ध के नख और शिखा रक्खे थे। एक उस स्थान पर था जहाँ उन्होंने उपदेश दिये थे, और एक जहाँ उन्होंने अपनी छाया को छोड़ा था।

[ श्री पद्मप्रभु स्वामी छठे तीर्थङ्कर हुए हैं। आपकी माता का नाम सुसीमा और पिता का नाम धारण था। आपका चिन्ह कँवल है। कोसमसे तीन मील पफोसा या पपोसा में आपने दीक्षा ली और कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था, और पार्श्वनाथ पर्वत पर निर्वाण लाभ किया था। ]

राजा निचक्षु जो जन्मेजय के पौत्र थे, उन्होंने हस्तिनापुर के गंगाजी की बाढ़ से नष्ट हो जाने पर, कौशाम्बी को अपनी राजधानी बनाया था। कहा जाता है कि कुशाम्ब ने, जो पुरूरवा से दसवीं पीढ़ी में थे, इस नगर को बसाया था। इस नगर की महिमा प्राचीन हिन्दू और बौद्ध ग्रथों, दोनों हीमें कही गई है।

कथा सरित्सागर ( तरंग १, अ० ३ ) के अनुसार वार्तिकार कात्यायन या बररुचि कोसम ही मे पैदा हुए थे और पाटलिपुत्र के राजा नंद के प्रधान मंत्री थे।

[ महात्मा वाकुल का कौशाम्बी में जन्म हुआ था। जब उनकी माता यमुना में स्नान कर रही थीं तब यह पानी में गिर पड़े। इन्हें एक मछली निगल गई। बनारस में एक मछली पकड़ी गई जिसके पेट में से यह जीवित निकले। इनकी माता को पता चला तो उन्होंने अपने पुत्र को वापस माँगा। जिस रमणी ने मछली खरीदी थी उसने देने से इनकार किया और अपना पालक पुत्र बना लिया था। मुआमला राजा तक पहुँचा उन्होंने फैसला किया कि वे दोनों के पुत्र हैं क्योंकि एक ने पैदा किया और दूसरी ने मोल लिया और पाला। इस प्रकार यह दोनों कुल के हुए और इनका नाम 'वाकुल' पड़ा। ८० साल की अवस्था में यह भगवान बुद्ध के शिष्य हुऐ और इतनी उम्र तक एक दिन बीमार नहीं पड़े थे। उसके बाद ८० साल यह और जीवित रहे और फिर भी कभी बीमार न पड़े। अन्त में यह अर्हत पद को प्राप्त हुए।]

व० द०— कोसम, इलाहाबाद से ३१ मील दक्षिण-पश्चिम यमुना नदी के बायें किनारे पर बसा हुआ है। उसकी तबाहिया के खेंड़े ४ मील ३ फर्लांग के घेरे में है। तबाहियों के पश्चिम मे कोसम इनाम, और पूर्व में कोसम

सिराज है। तवाहियों के बीच के ऊँचे खेड़े की जगह पर, जहाँ इस समय पार्श्वनाथ का एक छोटा जैन मन्दिर बना है, भगवान बुद्ध की चन्दन की मूर्ति रहती थी। पार्श्वनाथ के मन्दिर के पूर्व और पश्चिम दोनों ओर एक पुरानी इमारत के चिन्ह अब भी मौजूद हैं। यहाँ से आध मील पूर्व-दक्षिण में छोटा गढ़वा नामक गाँव है। यह उस जगह पर है जहाँ स्तूप में भगवान बुद्ध के नख और शिरा रक्खे थे। कौशाबी से १॥ मील दक्षिण-पश्चिम महाराज अशोक का २०० फीट ऊँचा वह स्तूप और एक गुफा थी जहाँ भगवान बुद्ध ने अपनी छाया को छोड़ा था। अब इन स्थानों के चिन्ह नहीं मिलते। यमुना नदी इनको बहा ले गई।

भगवान बुद्ध ने जिस स्थान पर बहुत दिनों तक उपदेश दिया था और जहाँ महाराज अशोक ने २०० फीट ऊँचा स्तूप बनवाया था उस जगह पर अब कोसम खिराज गाँव बसा है।

१६२ कोसम इनाम— ( देखिये कोसम )

१६३ कोसम खिराज— ( देखिये कोसम )

१६४ कौआकोल पहाड़— ( बिहार प्रांत के गया जिले में एक पहाड़ी)

*महाभारत के राजा जरासन्ध के दादा वसु ने कोलाहल पर्वत को ठोकर से तोड़ दिया था।*

कौआकोल का पुराना नाम कोलाहल है।

( महाभारत, आदि पर्व, ६३वाँ अध्याय ) चेदि राज राजा वसु की सेवा सारे गन्धर्व व अप्सरायें करते थे। उनके पाँच पुत्र थे जिनमें वृहद्रथ ( जरासन्ध के पिता ) मगध देश में प्रसिद्ध थे। उनके नगर के समीप शुक्तिमती नदी बहती थी। कोलाहल पर्वत ने काम-वश होकर उसका मार्ग रोक लिया। जब राजा वसु ने इस व्यवहार का समाचार सुना तो पर्वत में एक ठोकर मारी जिससे वह फट गया और उसमें से शुक्तिमती नदी बह निकली। शुक्तिमती और कोलाहल के संसर्ग से जो पुत्र वसुप्रद उत्पन्न हुआ था उसे राजा ने अपना सेनापति बना लिया और जो कन्या गिरिका उत्पन्न हुई थी उससे ब्याह कर लिया।

कौआकोल पहाड़ गया जिले में है और उसके बीच में होकर सकरी नदी बहती है। यह सकरी नदी पुराणों और महाभारत की शुक्तिमती है। ऐसा भी कुछ लोगों का विचार है कि 'महानदी' महाभारत की शुक्तिमती है।

१६५ कौशाम्बी— ( देखिये कोसम )

१६६ क्रौंच पर्वत— ( देखिये मल्लिकार्जुन )

### ख

१६७ खडूर साहेब— ( पञ्जाब प्रांत के अमृतसर जिले में एक स्थान )

यहाँ सिक्खों के द्वितीय गुरु श्री अंगद साहब ने शरीर छोड़ा था। गुरुद्वारा खडूर साहेब के नाम से एक गुरुद्वारा यहाँ विद्यमान है।

१६८ खरोद— ( देखिये नासिक )

१६९ खीर ग्राम—( बंगाल प्रांत में बर्दवान से २० मील उत्तर एक गाँव )

यह पीठों में से एक है, जहाँ सती के दहिने पैर की एक अँगुली गिर पड़ी थी।

यहाँ की देवी का नाम जोगाध्या है।

१७० खुखुन्धो— ( संयुक्त प्रांत के गोरखपुर जिले में एक स्थान )

इसके प्राचीन नाम काकँडीनगरी, काकन्दीपुरी और किष्किंधापुर हैं।

यहाँ पुष्पदन्त स्वामी ( नवें तीर्थंकर ) के गर्भ व जन्म कल्याणक हुए थे और यहीं उन्होंने दीक्षा ली थी तथा कैवल्य ज्ञानप्राप्त किया था।

[ श्री पुष्पदन्त स्वामी नवें तीर्थङ्कर हुए हैं। आप की माता रमा और पिता सुग्रीव थे। गर्भ, जन्म, दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक आपके खुखुन्धो अथवा काकंदी में हुए और निर्वाण पार्श्वनाथ पर्वत पर हुआ था। आप का चिह्न मगर है। ]

खुखुन्धो में पुष्पदन्त स्वामी का प्राचीन मन्दिर है।

१७१ खुपुआ डीह— ( संयुक्त प्रांत के बस्ती जिले में एक स्थान )

इसका प्राचीन नाम शोभावती था।

यहाँ कनकमुनि, पाँचवें बुद्ध का जन्म हुआ था।

भगवान गौतम बुद्ध सातवें बुद्ध थे। उन्होंने कहा है कि उनसे पहले ६ बुद्ध हो चुके थे। कनक मुनि उनमें से पाँचवें थे। फाहियान ने लिखा है कि इनका जन्म स्थान कपिलवस्तु (भुइलाडीह) से लगभग ७ मील पर था। लङ्का के ग्रंथ कहते हैं कि उस नगर का नाम शोभावती था। ह्वानच्वांग लिखते हैं कि कनकमुनि के जन्म स्थान पर महाराज अशोक ने स्तूप बनवा दिया था।

खुपुआडीह, भुइलाडीह से ६ मील पश्चिम में है और शोभावती नगर का खण्डहर है। डीह के पूर्वी भाग में खुपुआ नामक छोटा गाँव है और ६ फर्लाङ्ग की दूरी पर कनक पुर ग्राम है। डीह के पश्चिमी आधे भाग के बीच

मेंडेटों के दो ऊँचे समूह हैं। यह स्तूपों के चिन्ह हैं और यहाँ कनकमुनि बुद्ध का जन्म हुआ था।

१७२ खेमराज पुर— ( देखिये नगरा )

१७३ खैराडीह— ( देखिये जमनिया )

१७४ खैराबाद— ( सीमाप्रांत के यूसुफ जाई जिले में एक स्थान )

एक पूर्व जन्म में कहा जाता है कि भगवान बुद्ध मछली के रूप में यहाँ हुए थे।

चीन के यात्री सूंगयून, ( Sungyun ) जिन्होंने ५०२ ई० में अफगानिस्तान और पश्चिमी पञ्जाब की यात्रा की थी, लिखते हैं कि इस स्थान पर एक पूर्व जन्म में भगवान बुद्ध भारी मछली थे और अपने मांस से १२ साल तक यहाँ के निवासियों की रक्षा की थी। उसी स्थान पर यहाँ एक स्तम्भ लगा था जिस पर यह हाल खुदा हुआ था।

खैराबाद इण्डस नदी के पश्चिमी किनारे पर बसा है। नदी के दूसरे किनारे पर अटक है। खैराबाद का किला पुराने समय में बहुत अच्छा माना जाता था।

१७५ खोजकीपुर— ( देखिये बिठूर )

## ग

१७६ गँगासों— ( संयुक्त प्रांत के रायबरेली जिले में एक गाँव )

यहाँ गर्ग ऋषि का आश्रम था।

गगासों गाँव खजूर गाँव के पास गंगाजी के तट पर बसा है। नदी के उस पार असनी कस्बा है।

गर्ग आश्रम— गगासों के अतिरिक्त, कुमायूं पहाड़ी पर लोध मूसा जङ्गल में भी गर्ग ऋषि का आश्रम था।

१७७ गंगासागर—(कलकत्ते से दक्षिण, गङ्गा और समुद्र का सङ्गम स्थान)

यहाँ भगवान् कपिल का आश्रम था। राजा सगर के ६०,००० पुत्र यहाँ भस्म होगये थे।

युधिष्ठिर और पाण्डवों ने वनवास के समय गङ्गासागर तीर्थ में स्नान किया था। इस क्षेत्र का नाम शुल्क क्षेत्र भी है।

प्रा० क०—(श्री मद्भागवत तीसरा स्कन्ध, ३३ वाँ अध्याय) भगवान् कपिलदेवजी अपने पिता के आश्रम (सिद्धपुर) से माता की आज्ञा लेकर

ईशान कोण की ओर (गङ्गासागर) गये। वहाँ समुद्र ने उनका पूजन कर उनके रहने का स्थान दिया। अब तक कपिलदेव जी त्रिलोक की शान्ति के निमित्त योग धारण करके उसी स्थान पर विराजमान हैं।

(वाराह पुराण—१०७ वाँ अध्याय) गङ्गासागर सगम मे स्नान करने से मनुष्य की ब्रह्महत्या दूर होती है।

(महाभारत वन पर्व, ८४ वाँ अध्याय) गङ्गा और समुद्र के सङ्गम में स्नान करने से दश अश्वमेध का फल मिलता है।

(१०७ वाँ अध्याय) राजा सगर का यज्ञअश्व उनके साठ हजार पुत्रों से रक्षित होकर जल रहित समुद्र के तट पर आने पर अन्तर्धान हो गया। सगर के पुत्रों ने एक स्थान पर पृथिवी को फटा हुआ देखा। तब वे उस बिल को खोदने लगे। वह बिल समुद्र तक था। वे खोदते खोदते पाताल तक चले गये और कपिल जी के पास घोड़े को घूमते हुए देखकर उनका निरादर कर घोडा पकडने को दौडे। किन्तु कपिल जी के तेजरूपी अग्नि से सब लोग जलकर भस्म हो गये।

(१०८ वाँ अध्याय) राजा सगर के वशज भगीरथ ने सुना कि उनके पितरों को महात्मा कपिल ने भस्म कर दिया था इस कारण से उनको स्वर्ग नहीं मिला। तब उन्होंने हिमाचल पर जाकर गङ्गा जी को प्रसन्न करने के लिए एक सहस्र वर्ष घोर तप किया। तब गङ्गा जी ने प्रकट होकर वरदान माँगने को कहा। भगीरथ ने भगवान कपिल के क्रोध से जले हुए अपने पूर्वजों को स्नान करा कर स्वर्ग पहुँचाने की प्रार्थना की। गङ्गा जी ने कहा "हे राजन् तुम शिव को प्रसन्न करो, स्वर्ग से गिरती हुई हमको वेही अपने सिर पर धारण करेंगे।" भगीरथ ने कैलास में जाकर शिव जी की घोर तपस्या की और उनको प्रसन्न करके वर माँगा कि वे गङ्गा को अपने सिर पर धारण करें।

( १०९ वाँ अध्याय ) जब भगवान् शिव ने राजा के वचन को स्वीकार किया तब हिमांचल की पुत्री गङ्गा बड़ी धारा से स्वर्ग से गिरीं। गङ्गा को शिव ने अपने सिर पर धारण कर लिया। गङ्गा जी ने भगीरथ से पूछा "अब मैं किस मार्ग से चलूँ" राजा भगीरथ ने जिधर राजा सगर के ६० हजार पुत्र मरे पड़े थे उधर चलकर गङ्गा जी को समुद्र तक पहुँचा दिया और भगीरथ ने अपने पुरखों को जलदान दिया।

(११४ वाँ अध्याय) पाण्डव लोग गगा और समुद्र के सगम पर पहुँचे और उन्होंने वहां स्नान किया।

(आदि ब्रह्मपुराण, ४१ वाँ अध्याय) समुद्र में स्नान करके कपिल हर भगवान् और वाराही देवी के दर्शन करने से देवलोक प्राप्त होता है। यह गुह्य क्षेत्र १० योजन विस्तार का है जिसमें जाने से पापों का नाश होता है।

व० द०—गंगासागर अर्थात् सागर टापू कलकत्ते से (जलमार्ग से) लगभग ६० मील दक्षिण है। ऐसा कहा जाता है कि गंगासागर में कपिल जी का स्थान गुप्त हो गया था और उसको वैष्णव प्रधान आचार्य रामानन्द जी ने प्रकट किया था। संगम के पास कपिल जी की एक पुरानी मूर्ति थी, जिसके एक ओर राजा भगीरथ और दूसरी ओर आचार्य रामानन्द जी की पुरानी मूर्तियाँ खड़ी थीं। गंगासागर तीर्थ में मकर की संक्रान्ति के समय ३ दिन स्नान होता है। इस समय यहाँ सागर और गंगा के संगम का चिह्न नहीं है। पहले यह संगम था। अब इस जगह समुद्र की खाड़ी है।

१७८ गंगेश्वरी घाट—(नैपाल में एक तीर्थ)

पार्वती जी ने इसी स्थान पर तपस्या की थी।

यह स्थान मरुदारिका और वागमती नदियों के संगम पर बसा है। इसको शान्ता तीर्थ भी कहते हैं।

१७९ गंगोत्री—(*संयुक्त प्रान्त में गढ़वाल में रुद्र हिमालय पर एक स्थान*)

गंगाजी से गंगा जी का निकलना माना जाता है। यथार्थ में गंगा जी इस स्थान से और उत्तर से निकली हैं। गंगोत्री से दो मील दक्षिण रिन्दु सर नामक पवित्र सरोवर है, जहाँ भगीरथ ने गंगा जी को भूतल पर लाने को तपस्या की थी। गंगा जी का एक छोटा मन्दिर यहाँ उसी चट्टान पर बना है जिसपर बैठकर भगीरथ ने तपस्या की था।

गंगोत्री से दो हा मील पर पाटनगिरि है जहाँ महाराजा पाण्डु की पत्नियों ने और द्रौपदी ने १२ वर्ष तक शिव जी की तपस्या की थी।

पाटनगिरि में अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव और द्रौपदी ने शरीर छोड़ा, जो तत्पश्चात् युधिष्ठिर स्वर्गारोहिणी पर्वत पर चले गए और वहाँ से स्वर्ग को गए।

स्वर्गारोहिणी पर्वत गंगोत्री के उत्तर में उन पाँच पहाड़ियों में से एक है जिन के बीच रुद्र भूमि सदा बर्फ से ढकी रहती है और जिसके किनारे से गङ्गा जी की धार बहती है।

गङ्गोत्री में गङ्गादेवी का मन्दिर है और यात्रीगण यहीं तक जाकर लौट आते हैं, उसके और ऊपर नहीं जाते।

१८० गजपन्था—( बम्बई प्रान्त के नासिक जिले में एक छोटी पहाडी। इस स्थान से बलभद्रादि ८ कोटि ( जैन ) मुनियों ने मोक्ष पया है।

[ श्रीबलभद्रस्वामी जैनियों के एक महामुनि थे। निर्वाण काण्ड में आप का वर्णन आया है )

नासिक शहर से ४ मील पर मसरूल ग्राम है। यहाँ से एक मील पर ४०० फीट ऊँची गजपन्था पहाडी है। पर्वत पर पहाडी काट कर जैन मन्दिर बनाया गया है और ३२५ सीढ़ियाँ चोटी तक बनी हैं। माघ सुदी तेरस से तीन दिन तक यहाँ प्रति वर्ष मेला लगता है।

१८१ गण्डकी—(देखिए मुक्तिनाथ)

१८२ गया— (बिहार प्रान्त में एक ज़िले का सदर स्थान)

गया में मनु के पौत्र (सुदयुम्न अर्थात् इला के पुत्र) राजा गय ने १०० अश्वमेध यज्ञ और सैंकड़ों हजारों बार पुरुषमेधयज्ञ किए थे।

गया से ६ मील दक्षिण बोधगया में भगवान बुद्ध ने बोधि प्राप्त की थी।

यहाँ से अगस्त्य मुनि सूर्य के पास गए थे।

पाण्डव लोग इस स्थान पर आए थे।

ब्रह्मा ने यहाँ यज्ञ किया था।

गया के समीप मतङ्गी में मतङ्ग ऋषि का आश्रम था।

प्रा० क०—(अत्रिस्मृति, ५५ से ५८ श्लोक तक) नरक से डरते हुए पितर यह इच्छा करते हैं कि जो पुत्र गया को जायेगा वह हमारा रक्षक होगा। मनुष्य फल्गू तीर्थ में स्नान और गदाधर देव के दर्शन करके और गयासुर के सिर पर चरण रख कर ब्रह्महत्या से भी छूट जाता है।

(बृहस्पति स्मृति, २० वाँ श्लोक) नरक के भय से डरते हुए पितर यह कहते हैं कि जो पुत्र गया को जायेगा वह हमारी रक्षा करने वाला होगा।

(लघु स्मृति, शंख स्मृति, लिखित स्मृति और याज्ञवल्क्य स्मृति में गया में पिण्ड दान करने के माहात्म्य का वर्णन है।)

(महाभारत, वनपर्व ८४ वा अध्याय) गया में जाने से अश्वमेध का फल और कुल का उद्धार होता है। गया में महानदी और गया शिर नामक तीर्थ हैं। उसी जगह ब्राह्मण लोग अक्षयवट बतलाते हैं और उसी जगह पवित्र जल वाली फल्गु नामक महानदी है।

(६५ वाँ अध्याय) पाण्डव लोग गया में पहुँचे, जहां धर्मज्ञ राजा गय ने सत्कार किया है। उसी जगह उसने अपने नाम से गयाशिर नामक तीर्थ स्थापित किया है। उसी जगह ब्रह्मसर नामक उत्तम तीर्थ है, जहाँ से अगस्त्य मुनि सूर्य के पास गये थे। उसी तीर्थ में राजा अमूर्त्तरयस के पुत्र राजा गय ने तालाब के तट पर बड़े बड़े अनेक यज्ञ किये हैं।

(द्रोण पर्व, ६४ वाँ अध्याय) उनकी कीर्ति स्वरूप अक्षयवट और ब्रह्म सरोवर तीनों लोकों में विख्यात होकर जगत् में स्थित है।

( अनुशासन पर्व, २५ वाँ अध्याय ) गया के अन्तर्गत अश्मपृष्ठ में स्नान करने से पहली ब्रह्महत्या, निरविन्द पर्वत पर दूसरी ब्रह्महत्या, और क्रौंच पदी में स्नान करनेसे तीसरी ब्रह्महत्या छूट जाती है।

( वाल्मीकि रामायण—अयोध्या काण्ड, १०७ वां सर्ग ) गय नामक एक यशस्वी पुरुष ने जो गया प्रदेश में यज्ञ करता था, पितर लोगों के पास यह वाक्य कहलाया कि पुत्रों में से कोई एक भी यदि गया को जायगा तो पितरों का उद्धार होगा।

( लिङ्ग पुराण, ६५ वां अध्याय ) सूर्य के पुत्र मनु का सुद्युम्न नामक पुत्र था जो स्त्री रहने के समय इला कहलाता था। सुद्युम्न के तीन पुत्र हुए—उत्कल, गय और विनताश्व। इनमें से गय के नाम से गया बसा।

( वामन पुराण, ७६ वां अध्याय ) गय राजा ने जहां १०० अश्वमेध यज्ञ और सैकड़ों हजारों बार मनुष्यमेध यज्ञ किया है, और मुरारि भगवान गदाधर नाम से जहाँ प्रसिद्ध रहे हैं वहीं गया तीर्थ है।

( ६० वां अध्याय ) वामन जी बोले कि गया में गोपति देव, ईश्वर, त्रैलोक्यनाथ, वरद और गदा पाणि मेरे रूप हैं।

( वाराह पुराण, १८३ वां अध्याय ) पितर कहने लगे कि गया में श्राद्ध कर अक्षयवट के नीचे पिण्ड दान करो।

( मत्स्यपुराण, २२ वां अध्याय ) गया नाम से प्रसिद्ध पितृ तीर्थ सब तीर्थों में उत्तम है।

( ब्रह्मवैवर्त्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड, ७६ वाँ अध्याय ) जो मनुष्य गया के विष्णु पद में पिण्ड दान और विष्णु की पूजा करता है वह पितृगण को और अपने को उद्धार कर देता है।

( पद्मपुराण-सृष्टि खण्ड, ११ वां अध्याय ) श्राद्ध के विषय में गया के समान श्राद्ध का तीर्थ नहीं है।

( और पुराण, ६७ वां अध्याय ) परम गुप्त गया तीर्थ में भगवान महादेव के चरण चिन्ह प्रतिष्ठित है। वहाँ पिण्डदान करने से पितरों को अक्षय तृप्ति होती है।

( कूर्म पुराण अपर भाग, ३४ वां अध्याय ) परम गुप्त गया तीर्थ में श्राद्ध कर्म करने से पितर लोगों का पृथिवी में पुनरागमन नहीं होता है। गया में ब्रह्मा जी ने जगत के हित के लिये तीर्थ शिलापर चरण अङ्कित किया है।

( अग्नि पुराण—११५ वां अध्याय ) देवतावों ने गया सुर को वरदान दिया कि तुम्हारा शरीर विष्णु तीर्थ, शिव तीर्थ और ब्रह्मतीर्थ होगा।

( गरुड पुराण पूर्व खण्ड, ८२ वां अध्याय ) पूर्व काल में सम्पूर्ण प्राणियों को क्लेश देने वाले गया नामक असुर ने उग्र तपस्या की। उसके उपरान्त ब्रह्मा ने गया को उत्तम तीर्थ जान कर वहां यज्ञ किया।

व० द०—श्राद्ध के लिये गया भारत वर्ष में प्रधान है। वहाँ प्रतिदिन श्राद्ध करने को यात्री पहुँचते हैं किन्तु आश्विन मास का कृष्ण पक्ष गया में श्राद्ध का सर्व प्रधान समय है। उस समय भारत वर्ष के सभी प्रदेशों से लाखों यात्री गया में आते हैं। आश्विन के बाद पौष और चैत के कृष्णपक्ष में भी बहुत यात्री गया में पिण्ड दान करते हैं।

श्राद्ध के स्थान और विधि :—

(१) पूर्णिमा के दिन फल्गु नदी के एक बेदी पर खीर का श्राद्ध तथा तर्पण और पण्डा की चरण पूजा होती है। फल्गु नदी गया के पूर्व बहती हुई दक्षिण से उत्तर को गई है। फल्गु का विशेष माहात्म्य नगा कूट और भस्म कूट से उत्तर और उत्तर-मानस से दक्षिण है।

(२) कृष्ण प्रतिपदा के दिन ५ बेदियों पर पिण्ड दान करना होता है ब्रह्म कुण्ड, प्रेतशिला, काग बलि, रामकुण्ड और राम शिला। विष्णुपद के मन्दिर से करीब २ मील फल्गु के पश्चिम किनारे पर राम शिला पहाडी है और इसके पूर्व बगल में राम कुण्ड नामक तालाब है। प्रेतशिला से लौटकर पहले इस तालाब के किनारे और फिर रामशिला पर पिंडदान किया जाता है। लोग कहते हैं कि पहले रामशिला का नाम प्रेतशिला था। जब रामचन्द्र जी यहाँ आये तब से इसका नाम रामशिला हुआ है। रामशिला से पश्चिम ४ मील पर प्रेतशिला एक पहाड़ी है। प्रेतशिला के पास ही उत्तर

मन्दिर को इन्दौर की महारानी अहल्या बाई ( १७६६-६५ ई० ) ने बनवाया था। मन्दिर काले पत्थर का है। कलस, ध्वजा और ध्वजस्तम्भ में सोने का मुलम्मा है। किवाड़ों में चाँदी के पत्तर लगे हैं। मन्दिर के बीच में विष्णु का एक चरणचिन्ह शिला पर अरघड़ा है। उसके हौदे के चारो तरफ चाँदी का पत्तर लगा है। मन्दिर के आगे १८ गज लम्बा और १७ गज चौड़ा ४२ खम्भों का काले पत्थर का उत्तम जगमोहन है। जगमोहन के पूर्व-दक्षिण कोने के पास काले पत्थर से बना हुआ सोलह वेदियों का मण्डप है।

( ७, ८, ६ ) कृष्ण पक्ष के ६ से ८ तक तीन दिन में सोलह वेदी के मण्डप में १४ स्थानों पर और उसके पास के छोटे मण्डप में दो स्थानों पर कुल १६ वेदी पर पिण्डदान होते हैं। ( १ ) कार्त्तिकपद ( २ ) दक्षिणाग्नि (३) गार्हपत्याग्नि (४) आहवनीयाग्नि (५) सात्तत्याग्नि (६) आवस्थ्याग्नि (७) सूर्य पद (८) चन्द्र पद (९) गणेश पद ( १० ) दधीचि पद ( ११ ) कण्व पद (१२) मतङ्ग पद (१३) क्रौंच पद (१४) इन्द्र पद (१५) अगस्त्य पद (१६) कश्यपपद। अष्टमी के दिन सोलह वेदी के मण्डप में एक स्थान पर दूर से गजकर्ण तर्पण होता है।

(१०) कृष्ण पक्ष की नवमी को दो वेदियों पर पिण्डदान होता है—राम गया में और सीता कुण्ड में। पिछले स्थान पर माता पितामही और प्रपितामही को केवल तीन ही बालू के पिण्ड दिये जाते हैं। वहाँ सौभाग्य दान की विधि है।

विष्णु पद के मन्दिर के सामने पूर्व फल्गु नदी के दूसरे पार अर्थात् पूर्व किनारे को सीता कुण्ड कहते हैं। यहीं एक स्थान पर भरताश्रम की वेदी कही जाती है। उसी स्थान पर रामगया का पिण्डदान होता है।

( ११ ) कृष्ण पक्ष की दशमी के दिन गयाशिर में और गया कूप के पास दो वेदी का पिण्डदान होता है। विष्णुपद के मन्दिर से लगभग ५० गज दक्षिण गयाशिर नामक स्थान है और इसके पश्चिम एक आँगन में गयाकूप है।

( १२ ) कृष्ण पक्ष की ११ को तीन वेदियों पर अर्थात् मुण्डपृष्ठ, आदि गया और धौत पद पर पिण्डदान होता है।

गया कूप से ५० गज पश्चिम एक कोठरी में मुण्डपिष्ठा देवी की मूर्ति है। इसके दक्षिण-पश्चिम आदि गया है, वहाँ शिला पर पिण्डदान होता है।

आदि गया के दक्षिण-पश्छिम एक शिला भूमि पर निकली हुई है उसे धौत पद कहते हैं।

एकादशी के दिन खोया, गुड़, तिल, सिंहाडे के आटे आदि फलहारी वस्तुओं के पिण्डदान बनाये जाते हैं।

( १३ ) कृष्णपक्ष की १२ का तीन वेदियों पर पिण्डदान होता है— भीमगया, गोप्रचार और गदा लोल।

भीम गया वैतरनी के पश्छिमोत्तर के कोने से करीब ८० गज पश्छिम को है। यहाँ एक घेरे में तीन हाथ का गढा है जो भीम के अगूठे का निशान बताया जाता है। एक कोठरी में भीम की मूर्ति है। यहाँ से सवा सौ गज दक्षिण-पश्छिम गोप्रचार स्थान है। यहाँ पर एक शिला पर गौओं के छोटे बड़े खुरा के बहुत चिन्ह हैं। लोग कहते हैं इस स्थान पर ब्रह्मा ने गोदान किया था। अक्षयवट से दक्षिण गदालोल नामक कचा तालाब है। इसमें एक गदा खड़ी है।

( १४ ) कृष्ण पक्ष के १३ को फल्गु मे स्नान करने दूध का तर्पण और सन्ध्या समय में ४५ वेदियों के ४५ दीपदान फल्गु के किनारे, या कुछ विष्णुपद आदि प्रख्यात मन्दिरों के पास, लोग करते हैं।

( १५ ) कृष्ण पक्ष की १४ को वैतरनी मे तर्पण होता है। गया के दक्षिण फाटक से १३० गज दक्षिण १३० गज लम्बा और ६५ गज चौड़ा वैतरनी नामक तालाब है।

( १६ ) अमावस्या के दिन अक्षयवट के पास पिण्डदान होता है और पण्डे अपने अपने यात्रियों को सुफल देते हैं। अक्षयवट नामक वटवृक्ष ब्रह्मसरोवर से २५० गज पश्छिम है।

इस प्रकार पूर्णिमा से अमावस्या तक १६ दिन में ४५ वेदियों पर और सीता कुण्ड की नवीन वेदी मिला कर ४६ वेदियों पर पिण्ड दान समाप्त हो जाते हैं। बहुत से लोग केवल मुख्य मुख्य वेदियों ही पर पिण्डदान करके चले जाते हैं। प्रत्येक वेदी पर पिता, पितामह, प्रपितामह, माता, प्रमाता, वृद्ध प्रमाता, मातामह, प्रमातामह, वृद्ध प्रमातामह, मातामही, प्रमातामही, वृद्ध प्रमातामही के नाम से १२ पिण्ड होते हैं। इसके पीछे पिताकुल, माताकुल, श्वसुरकुल, गुरुकुल और नौकर को भी पिण्डदान दिये जाते हैं।

( १७ ) शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के दिन गायत्री घाट पर दही अक्षत का पिण्डदान होकर गया श्राद्ध का काम समाप्त होता है। गायत्रीघाट विष्णु पद

मन्दिर से उत्तर फल्गु नदी में है। इसमें नीचे से ऊपर तक ६८ सीढ़ी हैं। ११वीं सीढ़ी के ऊपर गायत्री देवी का मन्दिर है। गया में और भी बहुत से मन्दिर, तालाब और घाट हैं।

बोधिगया—विष्णु पद मन्दिर से ६ मील दक्षिण फल्गु नदी और मोहन नदी के सङ्गम से ऊपर बोधिगया एक गाँव है। यह स्थान बौद्ध लोगों के लिये सबसे अधिक पवित्र है। हजारों यात्री पवित्र पीपल के पेड़ के नीचे और प्राचीन जगत् विख्यात मन्दिर में पूजा चढ़ाते हैं। यहीं भगवान बुद्ध ने ३६ साल की अवस्था में ५९२ बी० सी० में बोधि प्राप्त की थी। यह मन्दिर ८० फीट लम्बी ७८ फीट चौड़ी और ३० फीट ऊँची कुर्सी पर बना है और नीचे से १७० फीट ऊँचा है। मन्दिर में पूर्व की ओर मुख किये बुद्ध का विशाल मूर्ति बैठा है। जैसा ऊपर लिखा गया है, महाराज अशोक ने इस मन्दिर के स्थान पर पहिले विहार बनवाया था। पीछे उस विहार की जगह पर प्रथम शताब्दी बी० सी० में दो ब्राह्मण भ्राताओं ने जिनके नाम शङ्कर और मुद्गरगामिन थे इस मन्दिर को बनवाया था। इसके पीछे कई बार मन्दिर की मरम्मत हुई। कुछ समय हुआ ब्रह्मा देश के सम्राट ने इसकी मरम्मत करवाई और फिर अंग्रेजी सरकार ने इसको सुधरवाया। केवल सुधार में लाखों रुपयेखर्च होते रहे हैं।

मन्दिर के पीछे भूमि पर उसके दीवार से लगा हुआ पूर्व वर्णित बौद्ध सिंहासन नामक पत्थर का चबूतरा है (जिस पर बैठ कर बुद्धभगवान को सिद्धि प्राप्त हुई थी)। चबूतरे से दो तीन गज पश्चिम पीपल का पवित्र वृक्ष है। गया कस्बे से १६ मील उत्तर फल्गु नदी के पास ७ बौद्ध गुफाएँ हैं। सबसे बड़ा महाराज अशोक के समय की, अर्थात् लगभग २००० वर्ष पुरानी है। यह ईसा मसीह से २५२ वर्ष पहले बनी थी।

नगर के दक्षिण ओर की ब्रह्मयोनि पहाड़ी बौद्धों की गयाशीष (गयाशीर्ष) पहाड़ी थी। अशोक के स्तूप के स्थान पर सनातनधर्मियों ने ब्रह्म या गायत्री देवी का मन्दिर स्थापित किया है।

मातङ्ग आश्रम—मातङ्ग ऋषि का आश्रम आनागन्दी में हैदराबाद राज्य में था और दूसरा आश्रम मलकप्ली में गया में था।

१८३ गर्ग आश्रम—(कुल)—(देखिए गगाली)

१८४ गलता—(जयपुर राज्य में एक स्थान)

गलता गालव ऋषि का आश्रम है।

गलता एक प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ पयोहारी स्वामी कृष्ण दास जी की गद्दी है। स्वामी जी की गुफा के सामने एक बार एक सिंह आ गया था आपने अपनी जघाओं का मांस काट कर उसे खिला दिया था। मांस खाकर व्याघ्र चला गया, पर ईश्वर की लीला, जघाएँ फिर ज्यों की त्यों हो गईं।

गालव आश्रम—गलता के अतिरिक्त गालव ऋषि का आश्रम चित्रकूट पर भी था। (देखिए गलता)

१८५ गहमर—(संयुक्त प्रान्त के ग़ाज़ीपुर ज़िले में एक क़स्बा)

इस स्थान का प्राचीन नाम गेहपुर है।

यह मुरा दैत्य का स्थान था जिसे श्री कृष्ण ने मारा था।

१८६ गालव आश्रम—(कुल)—(देखिए गलता)

१८७ गिरिनार पर्वत—(गुजरात प्रान्त के जूनागढ़ राज्य में एक पहाड़ी)

इस पर्वत के अन्य नाम उर्जयन्तगिरि, रैवतक और राम गिरि हैं। जैन धर्मावलम्बियों का यह बहुत प्रसिद्ध पवित्र क्षेत्र है।

यहाँ श्री नेमिनाथ (बाईसवें तीर्थंङ्कर) भगवान को मोक्ष प्राप्त हुआ था।

अनेक तीर्थंङ्करों की यहाँ समवसरण सभायें हुई थीं।

वरदत्त मुनि, शम्भु कुमार, प्रद्युम्न कुमार और अनेक जैन मुनियों ने भी इस स्थान से मोक्ष पाया था।

यह महाभारत का रैवत गिरि कहा जाता है, जहाँ श्रीकृष्ण विहार करते और यदुवशी उत्सव मनाने जाते थे।

भगवान दत्तात्रेय जी ने यहाँ निवास किया था।

प्रा० क० (महाभारत-आदि पर्व, २१६ वाँ अध्याय तथा अश्वमेध पर्व, ५६ वाँ अध्याय) रैवत गिरि पर यदुवंशी लोग उत्सव मनाने जाया करते थे।

(लिङ्ग पुराण-उत्तरार्द्ध तीसरा अध्याय) रैवत गिरि पर श्रीकृष्ण विहार किया करते थे।

[अवधूत दत्तात्रेय महर्षि अत्रि के पुत्रों में से एक थे। अत्रि ने अपनी पत्नी सती अनसूया के साथ बड़ी तपस्या के पश्चात् इन्हें पुत्र रूप में पाया था। श्री मद्भागवत के अनुसार यह विष्णु के चौबीस अवतारों में से एक हैं। इन्हों ने अलर्क, प्रह्लाद, यदु आदि को तत्व ज्ञान का उपदेश दिया था।

इनके जीवन के सम्बन्ध में मार्कण्डेय और स्कन्द आदि पुराणों में विस्तार से वर्णन आया है। कहा जाता है कि भगवान दत्तात्रेय आज भी हैं और करवीर में तथा सह्य पर्वत (कोल्हापुर) पर रहते हैं। ]

[ वरदत्त मुनि श्री आदि तीर्थङ्कर ऋषभदेव जी के १७ वे गणधर थे।
श्री शम्भु कुमार भगवान् कृष्णचन्द्र के पुत्र थे और सत्यभामा के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। श्री प्रद्युम्न कुमार भी भगवान् कृष्ण चन्द्र के पुत्र थे और रुक्मिणी से उत्पन्न हुए थे। ये दोनों कुमार जैनियों के महामुनियों में हुए हैं।]

वरदत्त मुनि शम्भुकुमार और प्रद्युम्न कुमार ने गिरिनार पर्वत से मोक्ष पाया था। ]

व० द०—गिरिनार पर्वत की ऊँचाई ३६६६ फीट है। लगभग ३००० से अधिक सीढ़ियाँ चढ़ने पर पर्वत की पहली टोंक मिलती है। इसी टोंक पर जैनियों के मुख्य मन्दिर हैं। अन्य टोंकों पर केवल चरण या देवलियाँ हैं। गिरिनार में कई धर्मशालायें और बीसियों जैन मन्दिर हैं जिनमें नेमनाथ भगवान् का मन्दिर बहुत विशाल है। एक टोंक पर अम्बा देवी का मन्दिर है, इसे जैन और अन्य हिन्दू, दोनों पूजते हैं। सबसे ऊँचे शिखर के चरण-चिन्ह को जैन, नेम नाथ भगवान के चरण चिन्ह, और अन्य हिन्दू, गुरु दत्तात्रेय के चरण चिन्ह कह कर पूजते हैं। इस टोंक से नेमनाथ स्वामी के प्रथम गणधर वरदत्तमुनि का निर्वाण हुआ था। यहाँ से थोड़ी दूर पर एक स्थान सहसा वन (सहस्राम्र वन) है। यहाँ नेमनाथ स्वामी ने कुछ दिन तपस्या की थी।

रास्ते में भैरव झाँपा नामक एक स्थान है। पुराने जमाने में लोग इस स्थान पर चढ़ कर परभव में सुख पाने की अभिलाषा से झाँपा पात करके प्राण त्याग किया करते थे।

गिरिनार के शिखर पर दत्तात्रेय जी का स्थान है। अगहन की पूर्णिमा को दत्तात्रेय जी का जन्म हुआ था उस दिन उनके दर्शन का अधिक माहात्म्य है।

कुछ लोगों का मत है कि गिरिनार पर्वत, जो गोमती/द्वारिका तथा बेट द्वारिका से सीधा लकीर में लगभग १०० मील दूर है, द्वारिका के पास का रैवत गिरि है।

जैन लोगों के जो पाँच पवित्र स्थान हैं उनमें शत्रुञ्जय पहाड़ी व सम्मेद शिखर के बाद गिरिनार का नम्बर सबसे ऊँचा है।

१८८ गिरियक—( विहार प्रान्त के राजगृह जिला में एक पहाड़ी )
कहा जाता है कि यहाँ इन्द्रने भगवान् बुद्ध से ४२ बातों पर प्रश्न किये थे।

पूर्व चार बुद्धों ने भी यहाँ भ्रमण किया है।

मार ने आनन्द को यहाँ सताया था और भगवान् बुद्ध ने उनकी रक्षा की थी।

प्रा० क०—फाहियान ने लिखा है कि यहाँ की गुफा में इन्द्र ने एक एक करके अपनी उङ्गली से ४२ विषयों पर शिलाओं पर प्रश्न लिख कर भगवान् बुद्ध से पूछे थे। ह्यान चाग ने भी अपनी यात्रा में इस बात का वर्णन किया है और इस स्थान का नाम 'इन्द्र शिला गुहा' कहा है। उन्होंने यह भी लिखा है कि इस पहाड़ी की चोटी में दो स्थानों पर चिन्ह थे जहाँ पूर्व चार बुद्ध चलते फिरते और बैठते थे।

फाहियान के समय में इन्द्र के प्रश्नों के स्थान पर एक सघाराम बना हुआ था, और ह्यानचाग के समय में उससे जरा दूर 'हस-सघाराम' और 'हंसस्तूप' थे। हससङ्घाराम की कथा इस प्रकार है कि एक बार यहाँ के सङ्घाराम के रहने वाले भिक्षुकों के पास खाने की सामग्री कम थी। इतने में हंसों का एक झुंड ऊपर से उड़ता हुआ निकला। प्रधान भिक्षुक ने उनकी ओर देख कर कहा कि हमारी खाद्यसामग्री कम है, हम पर दया क्यों नहीं करते? उसी समय एक हंस मर कर उसके पैरों पर गिर पड़ा! भिक्षुओं को बड़ा पश्चाताप हुआ और इस के स्मारक में 'हंसस्तूप' और 'हंस सघाराम' बनवाये गये थे।

व० द०—गिरियक एक अकेली पहाड़ी राजगृह में साढ़े चार मील पूर्व में स्थित है। कदाचित इसी से यह गिरिएक कहलाती है। पहाड़ी से १ मील पूर्व गिरियक गाँव है। गिरियक पहाड़ी पर एक टूटा हुआ स्तूप है, जिसे लोग 'जरासन्ध की बैठक' कहते हैं। यही हंस स्तूप है जहाँ हंस मर कर गिरा था। इससे मिले हुये अन्य इमारतों के भी चिन्ह मौजूद हैं। जरासन्ध की बैठक से एक मील पश्चिम, पहाड़ी की दक्षिण तरफ, एक गुफा है जिसे गिद्धद्वार कहते हैं। ह्यान चांग ने भी यहाँ एक गुफा का वर्णन किया है जिसका नाम गृद्ध गुफा था और उस पर्वत का नाम गृद्धकूट पर्वत था। इस गुफा में मार ने गृद्ध का रूप धर भगवान् बुद्ध के शिष्य आनन्द को डराया था, पर पत्थर—

के भीतर से भगवान् ने अपना हाथ बढाकर आनन्द का हाथ थाम लिया था और आनन्द का सारा भय जाता रहा था। फाहियान ने लिखा है कि भगवान् के हाथ डालने से जो छेद बन गया था उसको उन्होंने देखा था।

इस प्रकार ह्वान च्वाग की बताई हुई दो गुफायें होनी चाहिये—एक इन्द्र शिला गुफा दूसरी गृद्ध गुफा—एक जहाँ इन्द्र ने प्रश्न किये, दूसरी जहाँ भगवान बुद्ध ने आनन्द का हाथ थामा था, इस समय गृद्ध गुफा ही मिलती है। नाम से प्रतीत होता है कि यह गृद्ध गुफा आनन्द का हाथ थामने वाली गुफा है। इसी के समीप इन्द्र शिला गुफा होगी। एक गुफा वहाँ और है, और यह झाड़ी झङ्खाड़ों से भरी है। प्रतीत होता है कि वही इन्द्र शिला गुफा होगी।

१८९ गिरिव्रज—( देखिये राजगृह )

१९० गुजराँवाला—( देखिये लाहौर )

१९१ गुटीवा—( देखिये नगरा )

१९२ गुड़गाँव—( पजाब प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान )

महाराज युधिष्ठिर ने गुरु द्रोणाचार्य को यह स्थान दान में दिया था, इससे इसका नाम 'गुरु ग्राम' पड़ा।

१९३ गुणावा—(बिहार प्रदेश के पटना जिले में एक स्थान )

यहाँ श्री गौतम स्वामी जैन पंचम गति ( निर्वाण ) को प्राप्त हुये थे।

[ श्री गौतम स्वामी वसु भूति शर्मा के पुत्र थे और ईसवी सन् से ६२५ वर्ष पूर्व पैदा हुये थे। इनकी विद्वत्ता, बुद्धि पटुता, और चातुर्य लोक प्रसिद्ध थीं। सन् ईसवी के ५७५ वर्ष पूर्व ५० वर्ष की आयु में यह श्री महावीर स्वामी ( २४ वे तीर्थंकर ), जिन्हें ६६ दिन पहले मिती वैशाख सुदी दशमी को कैवल्य ज्ञान प्राप्त हो चुका था, शास्त्रार्थ करने गए। श्री महावीर स्वामी के आदेश से वे गृहस्थाश्रम त्याग मुनि हो गए, और महावीर स्वामी के ११ गणधरों में से मुख्य गणधर होकर पूज्य हुये। ]

गुणावा में गौतम स्वामी के चरण पादुका सहित एक छोटे तालाब के मध्य में एक उत्तम मन्दिर बना है। इसके आस पास कुछ तीर्थंकरों की चरण पादुकायें हैं।

१९४ गुप्तेश्वर महादेव—( देखिए तीर्थ पुरी )

१९५ गुप्पा पहाड़ी—( देखिए कुर्किहार )

१९६ गृद्धकूट पर्वत—( देखिए राजगृह )

१९७ गोंडा—( देखिए अयोध्या )

१९८ गोइँदवाल—( पंजाब प्रान्त के अमृतसर जिला में एक स्थान )

यहाँ गुरु नानक साहब ने बहुत दिनों एकान्त मे तप किया था।

यहीं गुरु रामदास जी को गुरुवाई का गद्दी दी गई थी।

गुरु अर्जुन साहब का यहाँ जन्म हुआ था।

गुरु नानक साहब ने बुखार से मृत्यु पाये हुए एक आदमी का यहा जीवित कर दिया था।

गुरु राम दास जी ने और गुरु अमर दास जी ने यहाँ शरीर छोड़ा था।

[ गुरु अर्जुनदेव जी सिक्ख सम्प्रदाय के पाँचवें गुरु हुए हैं। आप चौथे गुरु, श्री रामदास जी, के छोटे सुपुत्र थे, और गोइँदवाल में वैसाख बदी सप्तमी सम्वत् १६२० वि० (१५ अप्रैल सन् १५६३ ई०) को माता भानी जी के उदर से पैदा हुए थे। आप का विवाह मऊग्राम में कृष्ण चन्द जी की सुपुत्री श्रीमती गगादेवी से हुआ। आप के पिता ने भादों सुदी १ सम्वत् १६३८ वि० को आप को गुरुवाई की गद्दी बख्शी। आप के बड़े भाई पृथ्वी चन्द के विरोध के कारण आप ने कुछ दिन के लिये अपना निवास स्थान अमृतसर से हटा कर वडाली ग्राम में कर लिया।

धर्म कार्यों के निबाह के लिये सिक्खों के कमाई म से आपने दशमांश लेने की मर्यादा क़ायम की, और स० १६४५ वि० में हरिमन्दिर अमृतसर ( स्वर्ण मन्दिर ) की नाव रक्खी। स० १६६१ वि० में आप ने चारो गुरुओं की वाणी एकत्रित की और साथ ही अपनी रचित वाणी तथा कुछ भक्तों की जोड कर एक ग्रन्थ निर्माण किया, जो अबश्री "गुरु ग्रन्थ साहेब" के नाम से प्रसिद्ध है। उसी साल ग्रन्थ साहेब के तय्यार हो जाने पर आपने उसे हरिमन्दिर में स्थापित किया। आप के विरोधियों ने सम्राट अकबर से आपकी बुराई की, और अकबर शाह अमृतसर आये पर आप के प्रति उनका भक्ति उत्पन्न हो गई। जब जहांगीर बादशाह हुआ, और खुसरो ने बगावत की तो उन्हीं विरोधियों ने जहाँगीर को सुझाया कि गुरुजी ने खुसरो की सहायता की है। जहाँगीर ने आपको बन्दी कर लिया और अकथनीय कष्ट दिये। लाहौर में रावी नदी के किनारे आप ने जेठ सुदी ४ वि० स० १६६३ (३० ( मई सन् १६०६ ई० ) को शरीर त्याग किया। ]

गोइँदवाल में कई सिक्ख गुरुद्वारे हैं, जैसे 'बड़ा दरबार साहेब', 'बावली साहेब', 'कोठरी साहेब', 'चौबच्चा साहेब'।

१९९ गोकर्ण—( बम्बई प्रान्त के उत्तरी कनारा जिले में एक गाँव )

यहाँ रावण, विभीषण और कुम्भ कर्ण ने घोर तप किया था। चारुशीर्ष ने यहाँ भारी तपस्या की थी।

मारीच राक्षस राम चन्द्र के भय से भाग कर यहाँ रहने लगा था।

यहाँ अगस्त्य, सनत्कुमार इत्यादि बडे बड़े महान् पुरुषों ने तप किया था।

प्रा० क०—( महाभारत-वनपर्व, ८८ वाँ अध्याय ) दक्षिण की ताम्रपर्णी नदी के देश में विख्यात गोकर्ण तीर्थ है।

( २७७ वाँ अध्याय ) लंका पति रावण, खर की सेना का विनाश सुन कर रथारूढ हो त्रिकुलाचल और काल पर्वत को लाँघ कर आकाश मार्ग से रमणीय समुद्र को देखता हुआ गोकर्ण में पहुँचा। उसने वहाँ मारीच राक्षस को जो राम के डर से उस स्थान में आ पड़ा था, देखा।

( अनुशासन पर्व, १८वाँ अध्याय ) चारु शीर्ष ने गोकर्ण तीर्थ में जाकर १०० वर्ष पर्यन्त तप किया। तब महादेव जी ने उनको सौ हजार पुत्र और परमायु तथा एक सौ पुत्र दिये।

( अध्यात्म रामायण, उत्तर काण्ड, प्रथम अध्याय ) रावण ने कुम्भ करण और विभीषण के सहित गोकर्ण में जाकर कठिन तप किया था। जब एक सहस्र वर्ष बीत जाते थे तब वह अपना एक शिर काटकर अग्नि में होम कर देता था। इसी प्रकार दश सहस्र वर्ष बीतने पर जब वह अपना दसवाँ शिर काटने चला तब उसको वर देने के लिये ब्रह्मा प्रकट हुये।

( पद्मपुराण, उत्तर खण्ड, २२२ वाँ अध्याय ) गोकर्ण क्षेत्र में मृत्यु होने से मनुष्य निस्सन्देह शिवरूप हो जाता है, उसका फिर जन्म नहीं होता।

( गरुणपुराण-पूर्वार्ध, ८१ वाँ अध्याय ) भारतवर्ष में गोकर्ण नामक उत्तम तीर्थ है।

( कूर्मपुराण—उपरिभाग—३४ वाँ अध्याय ) तीर्थों में उत्तम गोकर्ण तीर्थ है, जिसमें गोकर्णेश्वर शिव लिङ्ग के दर्शन करने से मनोवाञ्छित फल का लाभ होता है, तथा वह मनुष्य शंकर को अति प्रिय हो जाता है।

( वराह पुराण—२१०वाँ अध्याय ) लंका पुरी का रावण सम्पूर्ण पृथिवी को जीत अपने पुत्र मेघनाद के साथ स्वर्ग में गया। उसने वहाँ इन्द्रादि देवताओं को जीत स्वर्ग में अपना राज्य स्थापित किया। रावण ने अपने घर

जाने के समय अमरावती के गोकर्णेश्वर को लंका में स्थापित करने के अपने साथ ले लिया। मार्ग में एक स्थान पर गोकर्णेश्वर शिव लिङ्ग को रख कर वह सन्ध्योपासन करने लगा। जब चलते समय वह शिव लिङ्ग को उठाने लगा तब वह नहीं उठा। उस समय रावण उसी भांति लिङ्ग को वहीं छोड़कर लंका को चला गया। उसी लिंग का नाम दक्षिण गोकर्ण हुआ।

(स्कन्दपुराण ब्रह्मोत्तर खंड, दूसरा अध्याय) शिवजी कैलास और मन्दराचल के समान गोकर्ण क्षेत्र में भी सर्वदा निवास करते हैं। वहाँ महाबल नामक शिवलिङ्ग है, जिसको रावण ने बड़ा तप करके पाया और गोकर्ण क्षेत्र में स्थापित किया।

उस क्षेत्र में अगस्त्य, सनत्कुमार, उत्तानपाद, अग्नि, कामदेव, भद्रकाली, गरुड़, रावण, विभीषण, कुम्भकर्ण आदि व्यक्तियों ने तप कर के अपने अपने नाम से शिव लिङ्ग स्थापित किये थे। वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, स्कन्द, गणपति, धर्म, क्षेत्रपाल, दुर्गा आदि देवताओं के स्थान हैं। वहाँ के सब तीर्थों में कोटि तीर्थ मुख्य है और सब लिङ्गों में महाबल नामक शिव लिङ्ग श्रेष्ठ है। पश्चिम के समुद्र तीर पर ब्रह्महत्यादि पापों के नाश करने वाला गोकर्ण क्षेत्र है। उस क्षेत्र में फाल्गुन की शिवरात्रि को विल्व पत्र से शिव की पूजन करने से सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होते हैं।

(दूसरा शिवपुराण, ८ वाँ खण्ड, १० वाँ अध्याय) पश्चिम के समुद्र तट पर गोकर्ण नामक तीर्थ है। शिव जी को मन्दराचल आदि स्थानों के समान गोकर्ण भी प्रिय है वहाँ असंख्य मनुष्यों ने तप करके मोक्ष पाया है। उस तीर्थ के महाबल नामक शिव के लिङ्ग को रावण ने तप करके पाया था।

[महर्षि पुलस्त्य, ब्रह्मा के मानस पुत्र थे। उनके पुत्र विश्रवा हुये। विश्रवा के सब से बड़े पुत्र कुवेर हुये, और एक असुर कन्या से रावण विभीषण और कुम्भ कर्ण ये तीन पुत्र और हुये। तीनों ने घोर तप किया, और उनकी उग्र तपस्या देख, ब्रह्मा ने प्रकट होकर वरदान माँगने को कहा। रावण ने त्रैलोक्य विजयी होने का वरदान माँगा, कुम्भकर्ण ने छः महीने की नींद और विभीषण ने भगवद्भक्ति माँगी। रावण ने कुवेर को निकाल कर असुरों की प्राचीन पुरी लंका को अपनी राजधानी बनाया। कुम्भकर्ण और विभीषण भी वहीं रहने लगे। जब सीताजी के हर लाने पर राम चन्द्रजी ने लंका पर चढ़ाई की तो विभीषण रामचन्द्र जी से आ मिले, और कुम्भकर्ण व रावण के मारे जाने पर लङ्का के राजा बनाये गये। मारीच इनके मामा थे।]

[ सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार ये ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं। ब्रह्म शक्ति ने इन्हें सम्पूर्ण विद्या, उपासना पद्धति और तत्त्वज्ञान का उपदेश दिया। सर्वदा पाँच वर्ष के बालकों के समान यह विचरते फिरते हैं। संसार के द्वन्द्व इनका स्पर्श नहीं कर पाते। इनके उपदेश और बुद्धि बल से संसार के प्राणियों का उद्धार हो रहा है। ]

व० द०—गोकर्ण गाँव में महाबलेश्वर शिव का द्राविड़ियन ढाँचे का बड़ा मन्दिर बना हुआ है जो मध्यकालीन द्रविड़ कला की एक सुन्दर कृति है। मन्दिर में सर्वदा १०० से अधिक दीप जलाये जाते हैं। भारत वर्ष से सभी विभागों के यात्री खास करके पर्यटन करने वाले साधु गोकर्ण में जाते रहते हैं।

२०० गोकुल—( देखिये मथुरा )

२०१ गोदना—( बिहार प्रान्त में छपरा जिले में एक बस्ती )

इसका प्राचीन नाम गोदान है। यहाँ राजा जनक ने एक ब्राह्मण वध के प्रायश्चित्त के लिये गौवों का दान किया था। इस स्थान को गौतम आश्रम भी कहते हैं।

गोदना छपरा से पश्चिम ७ मील पर है। पहिले गंगा जी इस स्थान के समीप बहती थीं, और कहा जाता है कि भगवान गौतम बुद्ध ने पाटलिपुत्र में लौटते समय गंगा जी को यहाँ पार किया था, जिससे इसका नाम गौतम आश्रम पड़ा। पर यह बात ठीक नहीं प्रतीत होती। न्याय दर्शन के लिखने वाले गौतम ऋषि का आश्रम भी जनकपुर के समीप था, यहाँ नहीं था, पर सम्भव है कुछ दिन यहाँ रह लिये हों।

२०२ गोपेश्वर—( हिमालय पर्वत के गढ़वाल प्रान्त में एक बस्ती )

स्कन्दपुराणानुसार इस स्थान पर शिव जी ने कामदेव को भस्म किया था।

( स्कन्दपुराण—केदारखण्ड, प्रथम भाग, ५५ वाँ अध्याय ) अग्नि तीर्थ के पश्चिम भाग में गोस्थल नामक स्थान है जहाँ पार्वती के सहित महादेव जी सर्वदा निवास करते हैं। उस स्थान पर शिव जी का आश्चर्यजनक त्रिशूल है जो बल पूर्वक हिलाने से नहीं डोलता है, और एक पुष्प वृक्ष है जो अकाल में भी सर्वदा पुष्पित रहता है। पूर्वकाल में शिव जी ने उसी स्थान पर कामदेव को भस्म किया था और काम की स्त्री रति ने शिव जी

को प्रसन्न करके दूसरे जन्म में काम को रूपदान किया था। तभी से उस स्थान पर शिव जी रतीश्वर नाम से प्रसिद्ध हो गये।

गढवाल देश के बडी वस्तियों में से गोपेश्वर एक वस्ती है। गोपेश्वर का मन्दिर एक बडे चौगान के मध्य में खडा है। मन्दिर के बाहर खरिक के मोटे वृक्ष पर और पदुम के पतले पेड पर लिपटी हुई कल्पलता नामक बँवर ( बेल ) है। बँवर पुरानी है और सब ऋतुओं में फूल देती है इसलिए उसको लोग कल्पलता. कहते हैं। मन्दिर के बाहर चौगान के भीतर लगभग ६ हाथ ऊँचा शिव का त्रिशूल खडा है। उसके खडे दण्डे में एक फरसा लगा है।

रामायण के अनुसार शिव जी ने कामदेव को कारों, ज़िला बलिया, में भस्म किया था—( देखिये कारा )

२०३ गोमती द्वारिका—( देखिये द्वारिका )

२०४ गोमन्तगिरि—( गोआ के समीप पच्छिमी घाट मे एक अकेली पहाडी )

कहा जाता है कि श्री कृष्ण और बलराम ने जरासन्ध को यहाँ हराया था। गोमन्तगिरि की चोटी पर गोरक्ष तीर्थ है। पद्मपुराण म गोमन्त देश का उल्लेख है।

२०५ गोरखपुर—( सयुक्त प्रान्त म एक कमिश्नरी का सदर स्थान ) यहाँ गुरु गोरखनाथ की समाधि और गद्दी है।

गुरु नानक यहाँ आये थ।

[ गुरु गोरखनाथ जी हठ योग क सर्व श्रेष्ठ आचार्य थ, और भर्तृहरि तथा गोपीचन्द इनके शिष्यों में थ। गुरु मत्स्येन्द्रनाथ आपके गुरु थ। इस 'नाथ' योग सम्प्रदाय के आदि आचार्य श्री आदि नाथ विश्वेश्वर हैं और इन्हीं से नाथ सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव हुआ है। श्री सिद्ध मत्स्येन्द्र नाथ को इन्हीं से योग दीक्षा मिली थी।

श्री मत्स्येन्द्र नाथ के प्रादुर्भाव की कथा—स्कन्दपुराण ( नागर खण्ड, २६२ वें अध्याय ) तथा नारदपुराण ( उत्तर भाग ) म बडी रोचकता के साथ लिखी है। नैपाल के अधिष्ठातृ देवता गुरु मत्स्येन्द्रनाथ जी ही हैं।]

गोरखपुर का ज़िला मेमन सिंह ( पाकिस्तानी बङ्गाल ) क बाद हिन्दुस्तान में सब से बडा ज़िला था। अब उसमें से दूसरा जिला देवरिया बन जाने से छोटा हो गया है। शहर में कोई शान नहीं है।

रेलवे स्टेशन से २ मील पश्चिमोत्तर एक शिखरदार मन्दिर में गुरु गोरखनाथ की समाधि और गद्दी है। इसके आसपास कई मन्दिर और इस सम्प्रदाय के लोगों की सैकड़ों समाधियाँ हैं। गद्दी के साथ अच्छी जायदाद लगी है। गोरखाली ( नैपाल ) और गोरखपुर दोनों का नाम श्री गोरखनाथ जी ही के नाम से पड़ा है।

२०६ गोलकुण्डा—( देखिये उड्डीपुर )

२०७ गोलगढ़—( काठियावाड़ प्रदेश में एक गाँव )

इसी के समीप दुर्वासा ऋषि का आश्रम था।

पिंडारक तीर्थ यहीं है। श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब को ऋषि ने यहीं शाप दिया था कि जो मूसल उससे पैदा होगा उसी से यदुवंश का नाश होगा।

विश्वामित्र, असित, कण्व, दुर्वासा, भृगु, अंगिरा, कश्यप, वामदेव, अत्रि, वशिष्ठ और नारद ऋषि ने यहाँ वास किया था।

प्रा० क०—(महाभारत, वन पर्व, ८२ वाँ अध्याय ) द्वारिका पुरी में जा कर पिंडारक तीर्थ में स्नान करने से बहुत सुवर्ण मिलता है।

( श्रीमद्भागवत्-एकादशस्कन्द, प्रथम अध्याय ) विश्वामित्र, असित, कण्व दुर्वासा, भृगु, अंगिरा, कश्यप, वामदेव, अत्रि, वशिष्ठ, नारद आदि ऋषि पिंडारक में वास करते थे।

[ महर्षि नारद के पूर्व जन्म के सम्बन्ध में श्रीमद्भागवत् में लिखा है कि यह पहिले दासी पुत्र थे। जिस गाँव में यह रहते थे वहाँ एक बार चातुर्मास बिताने को बहुत से महात्मा एकत्र हुये। इन्हें उन महात्माओं के पात्रों की बची जूठन खाने को मिल जाती थी और भगवान् की कथा श्रवण करने को मिलती थी। इससे इनका अन्तःकरण शुद्ध होगया और यह जङ्गलों को चले गये। वहाँ इन्हें भगवान् के दर्शन हुये। उस शरीर को छोड़कर कल्प के अन्त में यह ब्रह्मा जी के मानसपुत्र के रूप में अवतीर्ण हुए और, तब से भगवान के गुणों को गाते रहते हैं। इधर की बातें उधर लगा कर आग भी लगा देते हैं। इनको भगवान का 'मन' कहा गया है। ]

[ महर्षि अंगिरा ब्रह्मा के एक मानस पुत्र और प्रजापति थे। इनकी तपस्या और उपासना इतनी तीव्र थी कि इनका तेज और प्रभाव अग्नि के अपेक्षा भी अधिक बढ़ गया। इनके पुत्रों में बृहस्पति जैसे ज्ञानी और अनेकों मन्त्र द्रष्टा थे। ]

व० द०—गोलगढ पोरबन्दर से लगभग ४० मील पर है। पिंडारक तीर्थ द्वारिका से १६ मील पूर्व है।

दुर्वासा आश्रम—विहार प्रात के भागलपुर ज़िले में कोलगाँव ( कलह ग्राम—ऋषि दुर्वासा के स्वभाव के कारण यह नाम पडा ) से २ मील उत्तर और पाथर घाटा से २ मील दक्षिण खल्लों पहाडी की सबसे ऊँची चोटी पर भी इन ऋषि का आश्रम माना जाता है। गया जिले में रजौली से ७ मील पूर्वोत्तर में दुवाउर की पहाडी में भी इनका निवास स्थान बताया जाता है। भारतवर्ष के पश्चिमी भाग मे गोलगढ में इनका आश्रम स्थित किया गया है।

२०८ गोला गोकर्ण नाथ—( सयुक्त प्रान्त के लखीम पुर जिले में एक स्थान )

यहाँ गोकर्ण नाथ महादेव हैं जिनको ब्रह्मा ने स्थापित किया था। इस स्थान का नाम उत्तर गोकर्ण क्षेत्र और उत्तर गोकर्ण तीर्थ है।

प्रा० क०—( वराह पुराण, उत्तरार्ध, २०७ वाँ अध्याय ) एक समय महर्षि सनत्कुमार ने ब्रह्मा से पूछा कि शिव जी का नाम उत्तर गोकर्ण, दक्षिण गोकर्ण और शृंगेश्वर किस भाँति हुआ ? जहाँ इनका निवास है वह कौन तीर्थ है ? ब्रह्मा जी ने कहा कि एक समय शिव जी मन्दराचल के उत्तर किनारे के मुजवान पर्वत सेश्लेष्मातक वन मे चले गये। इसके पश्चात् इन्द्र, ब्रह्मा और विष्णु को लेकर, शिव जी को खोजने चले। शिव जी ने मृग रूप धारण किया था। देवताओं ने उनको पहिचान लिया और सब देवता उनको पकडने को चारों ओर से दौडे। इन्द्र ने मृग के शृंग का अग्र भाग जा पकडा, ब्रह्मा ने बिचला भाग पकड़ लिया और शृंग का मूल भाग विष्णु के हाथ में आया। जब वह शृंग तीन टुकड़ा होकर तीनों के हाथों में रह गया और मृग अन्तरधान हो गया तो आकाशवाणी हुई कि हे देवताओ तुम इसको नहीं पा सकोगे, अब शृंग मात्र के लाभ से सन्तुष्ट हो जावो। इन्द्र ने शृंग के निज खड को स्वर्ग में स्थापित किया, ब्रह्मा ने अपने हाथ के मृग खण्ड को उसी भूमि में स्थापित कर दिया। दोनों खडों का गोकर्ण नाम प्रसिद्ध हुआ। विष्णु ने भी शृंग के खड को लोक के हित के लिए स्थापित किया जिसका नाम शृंगेश्वर हुआ। जिन स्थानों मे शृंग के खड स्थापित हुये उन स्थानों में शिव जी निज अश कला से स्थापित हो गये।

रावण इन्द्र को जीत कर अमरावती से शृंग को उखाड़ कर लिङ्ग को ले चला पर कुछ दूर जाकर शिव लिङ्ग को भूमि मे स्थापित करके सन्ध्योपासन

करने लगा। जब चलने के समय वह शिव लिङ्ग रावण के उठाने से नहीं उठा तो वह उसे छोड़ कर चला गया। उसी लिङ्ग का नाम दक्षिण गोकर्ण प्रसिद्ध हुआ। और ब्रह्मा के स्थापित शृंग खंड का नाम उत्तर गोकर्ण है।

(कूर्म पुराण, उपरिभाग, ३४ वा अध्याय) उत्तर गोकर्ण में शिव का पूजन और दर्शन करने से सम्पूर्ण कामना सिद्ध होती है। वहाँ स्थानु नामक शिव हैं।

व० द०—गोकर्ण नाथ महादेव का सुन्दर मन्दिर एक बड़े तालाब के निकट बना है। शिव लिङ्ग के ऊपर गहराई है। साल में दो बार गोकर्ण में मेला लगता है, एक फाल्गुन की शिवरात्रि को और दूसरा चैत्र की शिवरात्रि को। चैत्र वाले मेले में लाखों यात्री आते हैं और दो सप्ताह तक मेला रहता है।

२०९ गोवर्धन—(देखिए मथुरा)

२१० गोहाटी—(आसाम प्रांत का एक जिला)

नरकासुर का पुत्र भगदत्त जो अर्जुन के हाथ से कुरुक्षेत्र में मारा गया था और कामरूप का राजा था, उसकी यह राजधानी थी।

प्राचीन काल में गोहाटी का नाम प्राग् ज्योतिष पुर था। यहीं से श्री कृष्ण चन्द्र नरकासुर (भौमासुर) को मार कर १६१०० राजकुमारियों को द्वारिका ले गये थे।

यह पीठों में से एक है जहाँ सती के शरीर का एक भाग गिरा था।

यह जिला महापुरुषिया वैष्णवों का प्रधान स्थान है। आसाम का प्राचीन नाम कामरूप था।

प्रा० क०—(महाभारत उद्योग पर्व, चौथा अध्याय) पूर्व के समुद्र के पास का रहने वाला भगदत्त है।

(१६ वां अध्याय) राजा भगदत्त के सङ्ग चीन और किरात देश की सेना हस्तिनापुर में दुर्योधन की सहायता के लिये आई।

(कर्णपर्व, ५ वा अध्याय) अर्जुन ने राजा भगदत्त को, जो पूर्व समुद्र के निकट के अनूप देश के किरातों का स्वामी, इन्द्र का प्यारा मित्र, और क्षत्रियों के धर्म में सदा निरत रहने वाला था, कुरुक्षेत्र के संग्राम में मार डाला।

(शान्तिपर्व, १०१ वां अध्याय) प्राग् देशीय योद्धा लोग हाथियों के युद्ध में निपुण होते हैं।

( श्री मद्भागवत—दशम स्कंध, ५६ वाँ अध्याय ) श्री कृष्ण चन्द्र सत्य-भामा के सहित गरुड़ पर चढ़ भौमासुर के नगर प्राग्ज्योतिषपुर में गये। यहा पर्वत, जल, अग्नि, पवन और शस्त्र का किला था। भौमासुर जिसका नाम नरकासुर भी है, गजारुढ़ सेना सहित बाहर निकला। बडा युद्ध करने के पश्चात् श्री कृष्ण भगवान ने पृथिवी के पुत्र भौमासुर का सिर अपने चक्र से काट डाला और १६,१०० कन्यायों को, जिनको भौमासुर ने छीन कर एकत्र किया था, पालकियो मे बैठा कर चार चार दांत वाले ६४ हाथियों सहित द्वारिका पुरी में भेज दिया। वहाँ सम्पूर्ण कन्यायों से श्री कृष्ण चन्द्र का विवाह हुआ। ( यह कथा आदि ब्रह्म पुराण के ६१ वें अध्याय मे भी है।)

व० द०—गोहाटी ब्रह्मपुत्र नदी के बायें अर्थात् दक्षिण किनारे पर एक छोटा कस्बा है। भगदत्त के वंशधरों के महल और मंदिरों की निशानिया अब तक उनका पराक्रम प्रकट करती हैं। मुसलमानों ने उनके वंश का विनाश किया था। लोग कहते हैं कि कूच बिहार, दरग, बिजनी और सदिया लो के राजा उसी राजवंश से हैं।

कहा जाता है कि बङ्गाल प्रान्त के राजशाही जिला में रङग् पुर नाम का जो कस्बा है वहाँ राजा भगदत का देहाती महल था।

ब्रह्मपुत्र नदी के दूसरी तरफ, उत्तर में, अश्वक्रान्ता नामक पर्वत है। कहा जाता है इसी पर्वत पर श्री कृष्ण और नरकासुर का युद्ध हुआ था।

२११ गौड—( देखिए लखनौती )

२१२ गौतम आश्रम—( कुल ) ( देखिए त्र्यम्बक )

२१३ गौरी कुंड—( देखिये त्रियुगी नारायण )

२१४ ग्वालियर—( मध्य भारत के ग्वालियर राज्य की राजधानी )

प्राचीनकाल मे यह स्थान दिगम्बर जैनियों का विद्या केन्द्र था और जैनियों की सबसे पुरानी यात्रा थी।

इसके पर्वत का प्राचीन नाम गोपगिरि है।

सूर्य्यसेन नामक एक कच्छवा प्रधान कोढी था, उसने शिकार खेलते समय गोपगिरि पहाडी के पास जिस पर अब किला है, ग्वालिया साधु से पानी लेकर पिया जिससे वह आरोग्य हो गया। उसकी कृतज्ञता में उसने उस पहाड़ी पर एक किला बनवाया और उसका नाम ग्वालियर रक्खा। सूर्य्यसेन ने सन् २७५ ई० में सूर्य का मन्दिर और सूर्य्यकुण्ड भी खुदवाया था।

जितनी जैन मूर्तियाँ यहाँ हैं, गिनती में इतनी और इनके समान बड़ी जैन मूर्तियाँ उत्तरी हिंदुस्तान के दूसरे किसी स्थान में नहीं हैं। कुण्ड के अखीर पश्चिम में जैनों के बाईसवें तीर्थंकर, श्री नेमनाथ की ३० फ़ीट ऊँची मूर्ति है।

सङ्गीताचार्य तानसेन की यहाँ समाधि है। तानसेन का नाम त्रिलोचन मिश्र था। यह ग्वालियर के एक ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए थे और इनके पितामह इनके साथ ग्वालियर नरेश महाराज राम निरञ्जन के यहाँ जाया करते थे। इन्हीं महाराज ने त्रिलोचन जी को तानसेन की उपाधि दी थी और तभी से यह तानसेन कहलाने लगे। यह स्वामी हरिदास जी के शिष्य थे। एक शार्दा घराने की कन्या से विवाह करने से यह मुसलमान हुए थे। तानसेन सा बड़ा गायनाचार्य दूसरा नहीं हुआ। यह महाराज रीवां के दरबार में थे। वहाँ से अकबर ने अपने यहाँ बुला लिया था, और महाराज रीवां को भेजना पड़ा। इनकी समाध पर एक इमली का पेड़ था। लोगों का विश्वास था कि उसकी पत्ती खाने से आवाज़ अच्छी हो जाती है। गायिकायें तमाम पत्ती खा गईं और पेड़ सूख गया। अब दूसरा पेड़ लगा है। ग्वालियर का क़िला पहाड़ी काट कर बना है और प्रसिद्ध है।

## घ

२१५ घुसमेश्वर— ( हैदराबाद दक्षिण के राज्य में यलोरा गुफाओं का स्थान )।

इस स्थान का प्राचीन नाम घृष्णेश्वर, इलवलपुर, मणिमतपुर, शिवालय व देव पर्वत हैं।

घृष्णेश्वर शिव लिङ्ग महादेव जी के १२ ज्योति लिङ्गों में से एक है।

पातापी दैत्य जिसे महर्षि अगस्त्य ने मारा था, उसके भाई इलवल का यह निवास स्थान था।

यलोरा अपनी गुफाओं के लिये ... में काट कर बनाई गई हैं, जगत प्रसिद्ध है।

प्रा० क०— ( शिव पुराण ) शिव जी के १२ ज्योति लिङ्गों में से घुसमेश्वर शिव लिङ्ग शिवालय में स्थित है।

( ज्ञान संहिता, ५८ वाँ अध्याय ) दक्षिण में देव पर्वत ( देवगिरि ) पर्वत के निकट सुधर्मा नामक एक ब्राह्मण रहता था। उसके कोई सन्तान न हुई। अपनी स्त्री सुदेहा के हठ करने पर उसने घुश्मा

नामक एक स्त्री से दूसरा विवाह कर लिया। घुश्मा नित्य १०८ पार्थिव का पूजन करती थी, और पूजन के उपरान्त उन्हें एक तालाब में चढ़ा देती थी। इस प्रकार एक लाख लिङ्गों का पूजन करने पर उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सम्बन्धियों में घुश्मा की प्रशंसा होने लगी इससे सुदेहा को अपने सौत के पुत्र से ईर्षा हो गई और एक दिन उसने उसे सोते हुये मार डाला। जिस तालाब में घुश्मा पार्थिव का विसर्जन करती थी उसी में सुदेहा ने उसके पुत्र केशव को डाल दिया। इस समाचार को पाकर भी घुश्मा अपने पूजन से न हटी और पूजन करके पार्थिव को सरोवर में विसर्जन करने गई। लौटते समय सरोवर के किनारे उसका पुत्र उसको जीवित मिला, और उसी समय घुश्मा की दृढ भक्ति और सन्तोष देख कर शिवजी ने ज्योति रूप होकर उसे दर्शन दिया और वर माँगने को कहा। घुश्मा ने कहा हे स्वामी, आप लोक रक्षा के लिये यहीं स्थित हो जाइये। महादेव जी ने कहा कि हे देवि! तेरे ही नाम से मेरा नाम घुसमेश्वर होगा और यह सरोवर जो लिङ्गों का आलय है शिवालय नाम से प्रसिद्ध होगा। ऐसा कह शिवजी लिङ्ग स्वरूप हो कर पार्वती सहित स्थित हो गये। इस लिङ्ग का दर्शन करके मनुष्य सब पापों से छूट जाता है और शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान उसके सुख की वृद्धि होती है।

प० द०—अजन्ता के समान यलोरा की गुफायें भी संसार भर में प्रसिद्ध हैं। यह पहाड़ी ही में पहाड़ी काट कर बनाई गई हैं। इनमें से 'कैलाश' जो सबसे विख्यात है बादामी (महाराष्ट्र देश की प्राचीन राजधानी जो अब बीजापुर जिला में है) के सम्राट् कृष्ण ने आठवीं शताब्दी ईस्वी में अपनी विजयों के यादगार में बनवाई थी। 'विश्वकर्मा' गुफा और समाव के विहार ६०० से ७५० ईस्वी तक के बने हुये हैं।

वेरुल गाँव से आधे मील दूर एक छोटी नदी के किनारे घुसमेश्वर का शिखरदार मन्दिर है। नदी के किनारे एक छोटा पक्का घाट है। वेरुल बस्ती और घुसमेश्वर शिव की बस्ती के बीच में एक तालाब के मध्य में एक बड़ा" मन्दिर और चारों कोनों पर चार छोटे मन्दिर हैं। घुसमेश्वर शिवलिंग आधा हाथ ऊँचा है। मन्दिर में रात दिन दीपक जलता है।

## च

२१६ चकर भण्डार— (देखिए सहेट महेट।)

२१७ चक्रतीर्थ— ( देखिए श्राना गन्दी, त्र्यम्बक और रामेश्वर )

२१८ चन्देरी— ( ग्वालियर राज्य में एक कस्बा )

यह स्थान शिशुपाल की राजधानी प्राचीन चेदि है। इसे चन्देली भी कहते थे।

इसके चारों ओर विशाल चेदि राज्य था।

प्रा० क०— ( महाभारत, द्रोणपर्व, २२वाँ अध्याय ) चेदि राज शिशुपाल का पुत्र धृष्टकेतु कुरुक्षेत्र के संग्राम में पाण्डवों की ओर से लड़ा।

( श्री मद्भागवत, दशम स्कन्ध, ५३वाँ अध्याय ) चन्देली का राजा दमघोष का पुत्र शिशुपाल था, जो रुक्मिणी से विवाह करने के लिये कुण्डिनपुर में गया। यहाँ से वह कृष्णचन्द्र से पराजित होकर अपने घर लौट गया। रुक्मिणी का हरण करके श्रीकृष्णचन्द्र द्वारिका में ले आये।

चेदि राज्य मालवा से लेकर महानदी के किनारे तक फैला हुआ था बल्कि विहार प्रांत के मध्य तक था। इसके कई टुकड़े हो गये थे जिनमें एक टुकड़ा 'डाहल' और एक 'महाकौशल' था। इसी से कई स्थान हैं जो चेदि राज्य की राजधानी कहलाते हैं। एक राजधानी नगरीवा के स्थान पर नर्मदा पर थी। दूसरी मणिपुर, जिसे अब शिरपुर कहते हैं, महानदी पर थी। मणिपुर को चित्रांगदपुर भी कहते थे और इस देशभर को चित्रांगदपुर कहा जाता था। मणिपुर के राजा बभ्रुवाहन ने युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को रोका था।

जबलपुर से ६ मील पर तेवर वा त्रिपुरी है। यह भी कलचूरी वंशी चेदि राजाओं की राजधानी थी। हेम कोष में इसका नाम चेदि नगरी लिखा गया है। अनुमान होता है कि चित्रांगदा से इस महान् राज्यका नाम चेदि पड़ा था।

[ राजा दमघोष के पुत्र और धृष्टकेतु के पितर महाराज शिशुपाल चेदि राज्य के प्रसिद्ध राजा हो गये हैं। रुक्मिणी से इनका विवाह होने वाला था, पर श्रीकृष्णचन्द्र रुक्मिणी को हर ले गये। इसके पश्चात् महाराज युधिष्ठिर के यज्ञ में जब श्रीकृष्णचन्द्र जी को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया तो शिशुपाल से न रहा गया और उन्होंने श्रीकृष्ण की निन्दा के पुल बाँध दिये। अन्त में श्रीकृष्ण ने वहीं इनका सिर उतार लिया। कुरुक्षेत्र की लड़ाई में इनके पुत्र पांडवों की ओर से लड़े थे। ]

व० द०—चन्देरी ललितपुर से १८ मील पश्चिम है। अब चन्देरी की तबाहियाँ चारों तरफ फैली हुई हैं। एक समय यह बड़ा प्रसिद्ध नगर था।

आईने अकबरी में लिखा है कि चन्देरी में १४,००० पत्थर के मकान, ३८४ बाज़ार, ३६० कारिवाँ सराय और १२,००० मस्जिदे थीं। एक ऊँची पहाड़ी पर यहाँ क़िला है जिसने एक समय ८ महीने के मुहासिरे को बर्दाश्त किया था।

२१९ चन्द्रगिरि— ( देखिये श्रवण बेल गुल )

२२० चन्द्रपुरी— ( सयुक्त प्रदेश के बनारस जिले में एक ग्राम )

यहाँ श्री चन्द्रनाथ ( चन्द्र प्रभु, ८वें तीर्थङ्कर ) के गर्भ व जन्म कल्याणक हुये थे, और यहीं उन्होंने दीक्षा ली थी तथा कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था।

[ श्री चन्द्रप्रभु ( ८वें तीर्थङ्कर ) की माता का नाम सुलक्षणा और पिता का नाम महासेन था। आपका चिन्ह चन्द्र है। आपके गर्भ, जन्म, दीक्षा व कैवल्य ज्ञान कल्याणक चन्द्रपुरी में, तथा निर्वाण पार्श्वनाथ पर हुआ था। ]

चन्द्रपुरी में श्री चन्द्रनाथ का मन्दिर और एक धर्मशाला है। इस गाँव को चन्द्रावटी भी कहते हैं, और यह गङ्गा जी के तट पर सारनाथ से ११ मील तथा बनारस से १७ मील पर स्थित है।

२२१ चन्द्रावटी— ( देखिये चन्द्रपुरी )

२२२ चमत्कारपुर— ( देखिये आनन्दपुर )

२२३ चम्पानगर— ( देखिये नाथ नगर )

२२४ चम्पापुरी— ( देखिये नाथ नगर )

२२५ चम्पारण्य— ( देखिये चौरा )

२२६ चरणतीर्थ— ( देखिये बेस नगर )

२२७ चात्सू— ( देखिये बाराह क्षेत्र )

२२८ चाफल— ( देखिये जाम्ब गाँव )

२२९ चामुण्डा पहाड़ी— ( देखिये मैसूर )

२३० चारसदा — ( सीमाप्रात में पेशावर ज़िला मे एक बस्ती )

यह स्थान प्राचीन पुष्कलावती वा पुष्करावती है।

महाराज रामचन्द्र के भ्राता भरत के पुत्र पुष्कर ने इसे बसाया था। महाराज रामचन्द्र ने अपना साम्राज्य बाँटते समय यह देश पुष्कर को प्रदान किया था।

पुष्करावती गान्धार वा गान्धर्व देश की राजधानी थी।

यह स्थान पेशावर से ७ मील पश्चिमोत्तर में है।

२३१ चितैमन्दारपुर—( देखिये 'शरदी )

२३२ चित्तौड़—( राजपूताने के मेवाड़ राज्य में एक प्राख्यात किला और कस्बा )

अपने दुर्दिनों में अन्तिम बार डूबते हुए भारत-मान की रक्षा इसी स्थान पर हुई थी।

आर्य गौरव का सूर्य अन्तिम बार इसी स्थान से चमका था।

महाराज रामचन्द्र जी के वंशधर हिंदू-पति, हिंदू-कुल गौरव, धुरन्धर वीर महाराणाओं की यह राजधानी रही है।

प्रा० क०—चित्तौड़ का राजवंश महाराज रामचन्द्र जी की सन्तान है। इस वंश ने मुसलमानों की आधीनता किसी समय में स्वीकार नहीं की। महाराना उदयपुर को सारे भारतवर्ष के क्षत्री अपना सिरताज मानते हैं, और उनसे सम्बन्ध होने में अपना अहोभाग्य और गौरव समझते हैं।

यहाँ के महाराना वाप्पारावल ने चित्तौड़ में अपना अधिकार करके तुर्किस्तान, खुरासान आदि देशों को जीता था।

महाराज समरसिंह को महाराजाधिराज पृथ्वीराज की बहिन पृथा व्याही थीं। इनकी दूसरी महारानी कर्मदेवी थीं, जिन्होंने कुतुबुद्दीन को रणक्षेत्र में परास्त किया था। महाराज समरसिंह पृथ्वीराज के साथ भारत रक्षा में वीर गति को प्राप्त हुए थे।

महाराना भीमसेन को सिंहल देश की विख्यात सुन्दरी महारानी पद्मावती व्याही गई थीं। अलाउद्दीन ने उनके पाने की चेष्टा से चित्तौड़ पर आक्रमण किया था। छल से अलाउद्दीन ने राना को बन्दी कर लिया था। उस समय पद्मावती अलाउद्दीन के पंजे से उन्हें छुड़ा लाई थीं। चित्तौड़ की रक्षा न होते देख पद्मावती १३०० आर्य ललनाओं के साथ एक चिता पर जल कर मर गई थीं, और सारे राजपूत दुर्ग का द्वार खोल शत्रुओं का संहार करते हुए परम गति को प्राप्त हुये थे।

कुमार हमीर उस समय बाहर थे। उन्होंने मुसलमानों को निकाल कर चित्तौड़ पर पुनः अधिकार किया था। इनके चचेरे भाई सुजानसिंह दक्षिण को चले गये थे और उन्हीं के वंश में महाराष्ट्र केसरी सुविख्यात शिवाजी का जन्म हुआ था।

राणा लाख ( लाखा ) के पुत्र चण्ड थे। मारवाड नरेश ने चण्ड के विवाह को अपनी बहिन का नारियल भेजा था। नारियल सामने आने पर राणा लाख ने हँसी में कहा था कि वह स्वयम् वृद्ध हैं इससे चण्ड ही के लिये नारियल आया होगा। इसी पर चण्ड ने उस लडकी को अपनी माता तुल्य समझ विवाह से इन्कार कर दिया था। महाराणा को विवश होकर उस लड़की से विवाह करना पड़ा था। चण्ड ने उस लडकी की सन्तान के लिये स्वयम् राज्य छोड दिया था और देश से भी निकल जाना स्वीकार किया था। चण्ड को वर्त्तमान समय का भीष्म माना गया है।

राणा कुम्भ ने मालवा के राजा महमूद और गुजरात के राजा कुतुबशाह को परास्त किया था। महाराणा साँगा के ज्येष्ठ पुत्र युवराज भोजराज की रानी सुप्रसिद्ध मीराबाई थीं जो कृष्ण भक्ति में घर छोड कर गोकुल और वृन्दा वन चली गई थीं और वहाँ से द्वारिका पुरी जाकर रणछोर जी के मन्दिर में श्रीकृष्ण में लीन हो गई थीं।

राणा कुम्भ के नीच पुत्र ऊधो ने अपने पिता को मारकर सिंहासन प पैर रक्खा था। जब सरदारों ने उसकी नीचता से उसे छोड दिया तब उसने दिल्लीपति से सहायता मांगकर उनको अपनी कन्या देना स्वीकार किया था। भगवान रामचन्द्र को अपने वश की रक्षा करना मजूर था, ज्योंही वह यह वादा करके दिल्ली के दरबार से बाहर निकला कि उस पर बिजली गिरी और वह वहीं मरकर रह गया। दिल्लीपति ने ऊधो के पुत्रों का पक्ष लिया पर सर दारों ने मुसलमान बादशाह को मार कर भगा दिया।

महाराणा सग्राम सिंह ने दिल्ली के बादशाह और मालवा के राजा गयासुद्दीन को युद्धक्षेत्र मे १८ बार परास्त किया था, परन्तु फतेहपुर सीकरी में सग्राम में शिलादित्य की विश्वाघातकता से मुगल बादशाह बाबर से परास्त हुये। उस समय सग्रामसिंह ने प्रतिज्ञा की कि जब तक मुगलों से बदला न लेंगे तब तक चित्तौड न जायेंगे। उस काल से वे बन ही में रहने लगे थे और कुछ काल के उपरान्त बुशारा नामक स्थान से स्वर्ग को सिधारे। वीराङ्गना ताराबाई इनके वीर भाई पृथ्वीराज की स्त्री थीं।

राणा विक्रमाजीत से सरदारगण को अप्रसन्न देख गुजरात के मुसलमान बादशाह ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था। करुणावती ने इस युद्ध मे वीरत्व का परिचय दिया था। महारानी ने हुमायू को भाई कहकर 'रक्षा'

-उनके पास भेजा था। हुमायूं रक्षा पाकर गद्गद हो गया। बङ्गाल में युद्ध कर रहा था उसको छोड़कर लौट पड़ा, पर चित्तौड़ का पतन हो चुका था। रानी करुणावती १३०० स्त्रियों के साथ चिता में जल कर राख हो चुकी थी। हुमायूं ने शत्रुओं को निकाल कर महाराना के वश को चित्तौड़ लौटा दिया।

पन्नाधाय ने, बालक राना उदयसिंह की, अपने लड़के का अपनी आँखों के सामने सिर कटवा कर, रक्षा की थी। अकबर से युद्ध में उदयसिंह बन्दी हो गये थे तो उनकी उप पत्नी वीरा, उनको छुड़ा कर लाई थी। दूसरे युद्ध में चित्तौड़ अकबर के हाथ आया पर ८००० स्त्रियाँ आत्म रक्षा के लिये चिता पर जल कर राख हो गईं। उदयसिंह ने चित्तौड़ छोड़ कर उदयपुर राजधानी बनाई।

प्रातःस्मरणीय महाराणा प्रतापसिंह ने २५ वर्ष तक वन वन घूम कर युद्ध किया और अन्त में चित्तौड़ मुसलमानों से छीन लिया। ऐसा बहादुर योद्धा वीर-प्रसवनी राजपूत जाति में भी दूसरा विरले ही हुआ है। उनके नाम से मेवाड़ के राजपूतों की भुजायें फड़क उठती हैं।

महाराणा राजसिंह ने औरङ्गजेब के अन्तः पुर को जाते हुये चञ्चल-कुमारी को छीन कर उसके मान की रक्षा की थी। मथुरा में कृष्ण भगवान की एक विख्यात मूर्ति को खण्डन करने का विचार औरङ्गजेब ने किया था तो महाराणा राजसिंह सेना सहित जाकर मूर्ति को उठा लाए थे और औरङ्गजेब मुह देखता रह गया था।

उदयपुर की राजकन्या कृष्णा कुमारी ने देश की रक्षा के लिए विष का प्याला हंसते हंसते पी लिया था।

जिन महाराष्ट्रियों को इसी वंश से उत्पन्न हुए छत्रपति शिवाजी ने बनाया उन्हीं महाराष्ट्रियों ने शक्तिशाली होकर इस वंश के गौरव को विध्वंस किया, इस कृतघ्नता की बलिहारी है!

हिन्दुओं के स्वतन्त्रराज्य नैपाल के सम्राट भी महाराणा उदयपुर ही के वंश से हैं। वे उदयपुर के एक निकले हुए राजकुमार की सन्तान हैं और इसी से अपने को राणा कहते हैं।

व० द०—अब चित्तौड़ पहाड़ी किले के नीचे दीवारों से घिरा हुआ एक कस्बा है। जब चित्तौड़ मेवाड़ की राजधानी था तब शहर किले में था, नीचे केवल बाहर का बाजार था।

चित्तौड का विख्यात किला उजाड़ हो रहा है। जिस पहाड़ी पर किला है वह आस पास के देश से औसत १५० गज़ ऊंची है। इसकी भूमि उजड़े पुजड़े बहुत से महलों मन्दिरों से भरी है। किले के भीतर छोटे बड़े ३४ सरोवर हैं। दीवारों के भीतर खेती होती है। किले तक चढाई की सडक एक मील लम्बी है। इस पर सात फाटक हैं और उनके निकट चित्तौड के मृत वीरों के स्मारक चिन्ह के लिये छतरियाँ बनी हैं।

पुराने शहर के सब स्थान उजड रहे हैं। किले का क्षेत्रफल ६६३ एकड़ है। इसकी सबसे अधिक लम्बाई (एक दीवार से दूसरी दीवार तक) सवा तीन मील और सबसे अधिक चौडाई ८३६ गज है। किले की चारों तरफ के दीवारों की लम्बाई १२११३ गज अर्थात् लगभग सात मील है।

राणा कुम्भका श्वेत पत्थर से बनाया हुआ जयस्तम्भ १२२ फीट ऊंचा है। गुजरात के बादशाह महमूद को जीत कर उस विजय के स्मारक चिन्ह में उन्होंने यह बनवाया था।

राणा कुम्भ का महल सूर्य फाटक के समीप दो तालाबों के पास स्थित है। भीमसिंह का महल तेरहवीं सदी की हिन्दू कारीगरी का अच्छा उदाहरण है। उनकी महारानी विख्यात पद्मावती का सुन्दर महल, तालाब की ओर मुख किये खडा है। अलाउद्दीन ने चित्तौड लूटते समय इस महल को नहीं तोडा था।

राणा कुम्भ का बनवाया हुआ एक ऊँचा शिखरदार देवी का मन्दिर है, जिसके निकट सुप्रसिद्ध मीराबाई का बनवाया हुआ रणछोड जी का मन्दिर है। मीराबाई मारवाड के मैरता के रहने वाले राठौर सरदार की पुत्री थीं। अबतक मेवाड प्रदेश मे रणछोड जी के साथ मीरा बाई की पूजा होती है।

सन् ७२८ से १५६८ तक चित्तौड मेवाड की राजधानी रहा उसके बाद से ६० मील पश्चिम-दक्षिण में अब उदयपुर इस देश की राजधानी है। उदयपुर बडा रमणीक स्थान है। शहर के पश्चिम सवा दो मील लम्बी और सवा मील चौडी पिछोला झील है जिस के मध्य म जगनिवास सङ्ग मर्मर का भवन है। शाहजहा अपने पिता से बागी होकर राणा की शरण में इस महल में कुछ दिन रहे थे। जब शाहजहा उदयपुर मे थे तो उन्होंने भ्रातृभाव दिखाने को अपनी पगडी महाराना से बदली थी। वह पगडी उदयपुर के अजायबखाने में ज्यों की त्यो अभी रक्खी है।

झील के किनारे पर शाही महल है और झील से ३ मील दूर महासती स्थान है जहां मृत महाराणाओं का दाह संस्कार होता है। यहाँ ऊँचे दीवार के घेरे में उन लोगों की छतरियाँ बनी हैं और उन लोगों के साथ जली हुई सतियों की छतरियां हैं।

उदयपुर से २० मील पर डेबर झील है। यह कदाचित पृथिवी में मनुष्य की बनवाई हुई जितनी झीलें हैं उन सब में बड़ी है। झील लगभग ६ मील लम्बी, ५ मील चौड़ी और २१ वर्ग मील के बीच फैली हुई है।

उदयपुर राजधानी से २१ मील उत्तर एक घाटी में श्वेत संगमरमर का बना हुआ मेवाड़ के महाराणों के इष्टदेव एकलिङ्ग जी का विशाल मन्दिर है। एकलिङ्ग जी के पूजन का अधिकार केवल महाराणों और रावल (पुजारी) को है। मेवाड़ के वीर, युद्ध में एकलिङ्ग जी की ही जय पुकारते हैं। इस मन्दिर की स्थापना बाप्पा रावल ने की थी। बाप्पारावल का खड्ग, जिसे कहा जाता है कि एकलिङ्ग जी ने उन्हें दिया था, उदयपुर में रक्खा है और नव दुर्गा पर ६ दिन के लिये बाहर निकाला जाता है। महाराना प्रतापसिंह की तलवार भी उसी समय में निकाली जाती है और महाराना लोग दोनों को पूजते हैं। महाराना प्रताप सिंह के जिरह बख्तर और उनके घोड़े 'चेतक' का ज़ीन भी उदयपुर के अजायब खाने में दर्शनीय पदार्थों में से है।

उदयपुर से २२ मील उत्तर कुछ पूर्व श्रीनाथद्वारा स्थान है जहाँ श्रीनाथ जी का मन्दिर है। इस मूर्ति का वल्लभाचार्य गोस्वामी, ... श्री... ने उसे गण्डित करने का विचार किया था, छिप कर गोकुल से यहाँ उठा लाये थे। नाथद्वारा वल्लभाचार्य गोस्वामियों का सर्व श्रेष्ठ स्थान है।

सारे भूमण्डल पर ऐसा ... नहीं है जहाँ इतने लोगों ने इस प्रकार मिट मिट कर अपनी स्वाधीनता की रक्षा की हो, और जहां जन्मभूमि के लिये इतनी स्त्रियों ने रणक्षेत्र में योद्धाओं की सेना होकर युद्ध किया हो, या जहां इतनी रमणियाँ प्रसन्न चित्त अपनी मान रक्षा के लिये चिता पर चढ़ कर भस्म हो गई हों। स्वामी दयानन्द सरस्वती के चितौड़ को देख कर आंखों से आंसू निकल आये थे।

२३३ चिदम्बरम—(मद्रास प्रान्त, दक्षिणी आर्काट जिले में एक स्थान)।

यहाँ महर्षि व्याघ्रपाद और पतञ्जलि ने तपस्या की थी।"

प्रा० क०—( स्कद पुराण, सेतुबन्ध खड, ५२ वाँ अध्याय ) चिदम्बर आदि क्षेत्रों में निवास करने से पुण्य होता है।

( शिव भक्त विलास, १४ वाँ अध्याय ) चिदम्बर नामक उत्तम क्षेत्र के दर्शन करने से मुक्ति लाभ होती है जहाँ महर्षि व्याघ्रपाद और पतञ्जलि, स्वर्ण सभा के मध्य में भगवान् शङ्कर को नृत्य करते हुए देख कर संसार बन्धन से मुक्त हो गये।

[ महर्षि पतञ्जलि, संहिताकार महर्षि प्राचीन योग के पुत्र थे। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि पाणिनि ने अपने सूत्रों मे व्यास कृत महाभारत के वासुदेव, अर्जुन आदि व्यक्तियों की चर्चा की है अत वे व्यास के पीछे हुये हैं। और महर्षि पतञ्जलि ने पाणिनि व्याख्या पर महाभाष्य लिखा है, अत. वे पाणिनि से पीछे हुये हैं। पतञ्जलि, योग के आचार्य थे, और उनके बनाये हुए ग्रथो से सारे ससार का जो हित साधन हुआ है और हो रहा है, उसके लिये सभी उनके ऋणी हैं और रहेंगे। ]

व० द०—चिदम्बरम् कस्बे के उत्तर ६६ बीघे भूमि पर नटेश शिव का मन्दिर है। ३० फीट ऊँची ऊँची दीवारों के घेरे के भीतर नटेश के निज मन्दिर का घेरा, पार्वती का मन्दिर, शिवगङ्गा नामक सरोवर और अनेक मडप तथा मन्दिर हैं। बाहर के दीवार के भीतर की भूमि की लम्बाई उत्तर से दक्षिण तक करीब १८०० फीट और चौड़ाई पूर्व से पश्चिम तक १५०० फीट है। भीतर वाली दीवार के अन्दर की भूमि लगभग १२०० फीट लम्बी और ७२५ फीट चौड़ी है। उस घेरे के भीतर जूतापहन कर नहीं जाया जाता है।

नटेश शिव के निज मन्दिर की दीवार पर चाँदी का और गुम्बज पर सोने का मुलम्मा है। दो डेवढी के भीतर नृत्य करते हुये नटेश शिव खड़े हैं। शिव के पास में कई देव मूर्तियाँ हैं। यहाँ के देवताओं के श्रृगार मनोहर हैं।

एक मन्दिर में तीन डेवढी के भीतर सुनहले भूषण और कौस्तुभ-मणि-माल पहने हुए श्यामल स्वरूप, मनुष्य से अधिक लम्बे, गोविंदराज भगवान् भुजङ्ग पर शयन किये हुए हैं। इनके पायताबे, दस्ताने और मुकुट स्वर्ण के हैं।

पार्वती का मन्दिर शिवगङ्गा सरोवर के पश्चिम है। घेरे के पश्चिम हिस्से के तीन डेवढी के भीतर पार्वती जी खड़ी हैं। इनके भी पायताबे, दस्ताने

और मुकुट सोनहले हैं। मन्दिर का जगमोहन विचित्र है। इसके आगे पूर्व के दरवाजे तक उत्तम मन्दिर बना है। मन्दिर और दरवाजे के बीच में सोने का मुलम्मा किया हुआ एक बड़ा स्तम्भ है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त इस घेरे में और भी बहुत से मन्दिर हैं।

चिदम्बरम का मन्दिर बहुत प्राचीन है, और दक्षिण भारत तथा लङ्का के लोग इसका बड़ा मान करते हैं। ऐसा कहा जाता है कि चक्रवर्ती राजा हिरण्यवर्ण इस मन्दिर के पास के सरोवर में स्नान करने से कुष्ठ रोग से मुक्त हो गया था। तब उसने मन्दिर को अच्छे प्रकार से बनवा दिया। यह कश्मीर का राजा था जिसने लङ्का को भी विजय किया था। कहा जाता है कि वह अपने साथ उत्तर से तीन हजार ब्राह्मणों को लाया था जिनके कुल के ब्राह्मण अब भी इस मन्दिर के अधिकारी हैं। बहुत से लोग कहते हैं कि वीर चोला राजा ने (सन ६२७ ६७७ ई०) शिव को पार्वती के सहित समुद्र के किनारे नृत्य करते हुये देखा था और उनके स्मरणार्थ उसने नटेश शिव का सुनहरा मन्दिर बनवा दिया। इसमें सन्देह नहीं कि दसवीं और सत्रहवीं सदी के बीच में चोला और चेरा वंश के राजाओं ने चिदम्बरम् मन्दिर को कई बार बढ़ाया है।

दिसम्बर में यहाँ एक बड़ा मेला होता है जिसमें साठ सत्तर हज़ार तक यात्री आते हैं।

२३४ चिरॉद—(देखिए बमाद)

२३५ चिरोदक—(देखिए अयोध्या)

२३६ चित्रकूट—(संयुक्त प्रान्त के बांदा जिले में एक तीर्थ)

महाराज रामचन्द्र ने, लखन और जानकी-सहित बनवास के समय अयोध्या से आकर यहां कुटी बनाकर वास किया था।

इसी स्थान पर भरत और अयोध्या वासियों ने रामचन्द्र जी से अयोध्या लौट चलने का अनुरोध किया था।

मार्कण्ड ऋषि का भी एक आश्रम चित्रकूट पर था।

स्वामी तुलसीदासजी ने चित्रकूट में श्रीरामचन्द्र जी का दर्शन पाया था।

यहाँ से ६ मील पर भरतकूप है। इस कूप को अत्रि मुनि के शिष्य ने जल के लिये खोदा था। रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक न स्वीकार करने पर जो तीर्थों का जल अभिषेक के लिये लाया गया था उसको भरत ने इसी कूप में डाल दिया था।

चित्रकूट से दो मील दक्षिण मन्दाकिनी के किनारे स्फटिक शिला नामक पत्थर का बड़ा ढोका है। इस स्थान पर काकभुशुण्डि ने सीताजी का चोंच से मारा था।

चित्रकूट से ८ मील पर मन्दाकिनी के तट पर अनसूया का निवास स्थान था। जानकी को पति व्रत धर्म की शिक्षा अनसूया ने इसी स्थान पर दी थी।

महर्षि अत्रि और सती अनसूया से इस स्थान अनसूया में भगवान् दत्तात्रेय और महर्षि दुर्वासा का जन्म हुआ था।

रामचन्द्रजी ने चित्रकूट छोड़कर अगस्त्य मुनि के आश्रम को जाते समय एक रात्रि अनसूया में निवास किया था। इस स्थान के नीचे मन्दाकिनी नदी जो बहती है उसे सती अनसूया ने दस साल के सूखा से लोगों का बचाने के लिये बनाया था।

प्रा० क०—(महाभारत-वनपर्व, ८५ वां अध्याय) चित्रकूट में सब पापों का नाश करने वाली मन्दाकिनी नदी है।

(वाल्मीकीय रामायण—अयोध्या काण्ड, ५६ वा सर्ग) वनवास के समय लक्ष्मण ने श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से अनेक प्रकार के वृक्षों को काट कर काष्ठ लाकर चित्रकूट पर्वत पर पर्णशाला बनाई।

(६२ वा सर्ग) चित्रकूट पर्वत से उत्तर ओर मन्दाकिनी नदी बहती थी। पर्वत के ऊपर पर्ण कुटी में राम लक्ष्मण निवास करते थे।

(६६ वां सर्ग) भरत जी अयोध्यवासियों सहित चित्रकूट में आकर रामचन्द्र से मिले।

(११६ वें सर्ग से ११६ वें सर्ग तक) भरत जी जब अयोध्या को लौट गये तब रामचन्द्र जी ने सोचा कि मैंने यहाँ भरत, मातृगण और पुरवासियों को देखा है इसलिये सर्वकाल में मेरी चित्त-वृति उन्हीं की ओर लगी रहती है, और इस स्थान में भरत की सेना के हाथी और घोड़ों की लीद से यह भूमि अशुद्ध हो गई है, ऐसा विचार कर श्री रामचन्द्र, सीता और लक्ष्मण सहित वहां से चल निकले और अत्रि मुनि के आश्रम में आकर उनको प्रणाम किया। मुनि ने तीनों जनों का विधि पूर्वक अतिथि सत्कार किया और कहा कि हे रामचन्द्र ! इस धर्मचारिणी तापसी अनसूया ने उग्र तप और नियमों के बल से १० वर्ष की अना वृष्टि में ऋषियों के भोजन के लिये फलफूल उत्पन्न किये और स्नान के लिये गङ्गा (मन्दाकिनी) नदी को यहाँ बहाया।

इसके अनन्तर अनसूया ने सीता को पतिव्रत धर्म के उपदेश और दिव्य अलङ्कार दिये। रामचन्द्र ने उस रात्रि में वहाँ निवास कर प्रात-काल लक्ष्मण और सीता सहित अत्रि मुनि के आश्रम से चलकर दुर्गम वन मे प्रवेश किया।

( सुन्दर काण्ड, ३८ वा सर्ग ) हनुमान ने लङ्का मे जानकी से कहा कि मुझको कुछ चिन्ह दो। जानकी बोलीं कि हे कपीश्वर! तुम रामचन्द्र से यह चिन्हानी कहना कि चित्रकूट पर्वत के पास उपवनों में जल क्रीडा करके तुम मेरी गोद में सो गये थे, उस समय एक काक (कौआ) मुझे चोंच मारने लगा। जब कौआ से विदीर्ण की गई मैं थक गई और आंसुओं से मेरा मुख भर गया तब कौआ रूपधारी इन्द्र के पुत्र ( जयन्त ) की ओर तुम्हारी दृष्टि जा पड़ी और तुमने बड़ा क्रोध कर के चटाई में से एक कुश ले उसको ब्रह्मास्त्र से अभिमन्त्रित कर उस पर चलाया था।

( शिव पुराण, ८ वां खण्ड दूसरा अध्याय ) ब्रह्मा ने चित्रकूट में जाकर मत्त गयन्द नामक शिव लिङ्ग स्थापित किया।

सकर्षण पर्वत के पूर्व कोटि तीर्थ में कोटेश्वर शिवलिङ्ग है। चित्रकूट के दक्षिण ओर से आगे पश्चिम की ओर को तुगारण्य पर्वत है, जहाँ गोदावरी नदी बह रही है। वहां पशुपति शिव लिङ्ग हैं।

( तीसरा अध्याय ) नील कठ से दक्षिण अत्रीश्वर शिवलिङ्ग है। अत्रि ने अपनी स्त्री अनसूया के सहित चित्रकूट पर्वत के निकट अति श्रम से तप किया है। अकाल और निर्वर्षण के समय अनसूया के तप के प्रभाव से चित्रकूट मे गङ्गा स्थित हो गई, जिसका नाम मन्दाकिनी प्रसिद्ध हुआ। ( भरत कूप मे तीर्थों का जल छोड़ने और इस कूप के अत्रि के शिष्य द्वारा खोदे जाने की कथा तुलसी कृत मानस रामायण में है। )

[ महर्षि अत्रि, ब्रह्मा के मानस पुत्र और प्रजापति थे। इनकी पत्नी अनसूया भगवदवतार कपिल की भगिनी थीं, और कर्दम प्रजापति की पत्नी देवहूति के गर्भ से पैदा हुई थीं।] जब ब्रह्मा ने दम्पति को आज्ञा दी कि सृष्टि करो तो इन्होंने सृष्टि करने से पहले बड़ा घोर तपस्या की। इनकी दीर्घकाल की निरन्तर साधना और प्रेम से आकृष्ट होकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों ही देवता प्रत्यक्ष उपस्थित हुये। समय पर तीनों ही ने इनके पुत्र रूप से अवतार ग्रहण किया। विष्णु के अंश से, दत्तात्रेय, ब्रह्मा के अंश से चन्द्रमा, और शंकर के अंश से दुर्वासा का जन्म हुआ। महर्षि अत्रि की चर्चा वेदों में भी

आती है। अनसूया जी ने पातिव्रत धर्म पर सीताजी को चित्रकूट के अनसूया स्थान पर शिक्षा दी थी। ]

[ काकभुशुण्डि जी किसी पहिले जन्म में अयोध्या में एक शूद्र थे। जब भोजन पाने का कष्ट हुआ तो यह वहाँ से उज्जैन चले गये। वहाँ इन्होंने अपने गुरु का अनादर किया इस पर शिवजी ने क्रुद्ध होकर इन्हें शाप दे दिया। शापवश अनेकों योनियों में भटकते भटकते इन्हें अन्त में ब्राह्मणयोनि प्राप्त हुई। इस योनि में लोमश ऋषि से निराकार के विरुद्ध तर्क करने में इन्हें लोमश ऋषि ने काक होने का शाप दे दिया। इसी योनि में इन्हें रामचंद्र जी के दर्शन हुये। ]

व० द०—चित्रकूट और उसकी बस्ती सीतापुर मन्दाकिनी अर्थात् पयस्विनी नदी के बायें तट पर है। चित्रकूट में चैत की रामनवमी और कार्तिक की दिवाली को बड़े मेले, और अमावस्या और ग्रहण में छोटे मेले होते हैं।

चारों ओर की पहाड़ियों पर मन्दाकिनी के किनारे और मैदानों में देवताओं के ३३ स्थान हैं। वैसे देव मन्दिर सैकड़ों हैं।

चित्रकूट से एक मील दक्षिण मन्दाकिनी के किनारे प्रमोद बन है।

एक पहाड़ी पर बहुत सीढ़ियों द्वारा चढने पर एक कुंड मिलता है जिस को कोटि तीर्थ कहते हैं। लोग कहते हैं कि एक समय इस स्थान पर कोटि ऋषियों ने यज्ञ किया था इसलिए इसका नाम कोटितीर्थ पड़ा।

चित्रकूट का परिक्रमा करने के लिए महाराज पन्ना ने चारो ओर ५ मील लम्बी पक्की सड़क बनवा दी है। जितनी भीड़ यात्रियों की चित्रकूट में रहती है उतनी बुन्देलखण्ड में किसी और स्थान में नहीं रहती।

रियासत सिरगुजा ( छोटा नागपुर ) में एक पहाड़ी रामगढ है। पश्चिमीय बड़े विद्वानों, जैसे मिस्टर जे० डी० बेगलर का कहना है कि यह रामायण का चित्रकूट है। कारण यह है कि जो बखान रामायण मे चित्रकूट का है वह रामगढ ही से मिलता है। यहाँ पहाड़ी में आप से आप बनी हुई गुफायें हैं जिनमें ऋषि मुनि रहते थे। कहा जाता है कि महर्षि बाल्मीकि का यह आश्रम था। एक गुफा सीता बँगरा है जहाँ सीता जी रहा करती बताई जाती है। यहाँ की गुफायें और नदी नाले बडे रमणीय हैं। यहाँ की एक गुफा कबीर चौतरा में, कबीरदास जी भी रहे हैं। उधर के लोग रामगढ़ ही को चित्रकूट पर्वत मानते हैं।

२३७ चुनार— ( सयुक्त प्रदेश के मिरज़ापुर ज़िले में एक कस्बा ) ✓

चुनार में जिस स्थान पर किला बना है वहाँ भर्तृहरि ने राज्य से विरक्त होकर निवास किया था और योग साधन किया था तथा "वैराग्य शतक" की रचना की थी।

महाराज पृथ्वीराज इस ज़िले में आकर रहे थे।

इस स्थान का पुराना नाम चरणाद्रि गढ़ है। आजकल चरण गढ़ भी कहते हैं।

चुनार का क़िला पुराने ज़माने के प्रसिद्ध गढ़ों में से है और भारतवर्ष के सबसे मज़बूत क़िलों में से एक था।

इसमें भर्तृहरि के योग करने का स्थान अब भी मैगजीन के भीतर बना हुआ है। पाल राजाओं ने जिन्होंने ८ शताब्दी से १२ शताब्दी ईस्वी तक बङ्गाल व बिहार पर राज किया था इस गढ़ को बनवाया था। सम्वत् १०२६ ई० में राजा सहदेव ने इस किले को अपनी राजधानी बनाकर पहाड़ की कंदरा में 'नैना योगिनी' की मूर्ति स्थापित की थी, इसलिये लोग चुनार को नैनीगढ़ भी कहते हैं।

१५७५ ई० में ६ मास तक इस गढ़ ने मुग़ल सेना का मुकाबला किया था। १७६४ ई० में अंग्रेजों ने इसे जीता। इस क़िले में नाना साहब के पिता को अंग्रेजों ने आजन्म क़ैद रखा था।

चुनार की जलवायु बहुत अच्छी है इससे बहुत लोग बाहर से आकर यहाँ रहने लगे हैं। स्थान भी रमणीय है और गंगा जी के दाहिने तट पर बसा है।

२३८ चूलगिरि— ( मालवा प्रदेश की बड़वानी रियासत में एक स्थान )

इसके समीप प्राचीन सिद्ध नगर है।

[ जैनियों के मतानुसार रावण के मारे जाने पर कुम्भकर्ण और मेघनाद ( इन्द्रजीत ) लङ्का से वैरागी होकर चले आये थे और सिद्ध आश्रम, बड़वानी, से निर्वाण को पधारे थे। जैनियों का मत है कि मेघनाद और कुम्भकर्ण दोनों रावण के पुत्र थे। ]

२३९ चौरा— ( बिहार प्रदेश के चम्पारन ज़िले में एक गाँव ) ✓

यहाँ श्री बल्लभाचार्य जी का जन्म हुआ था।

( कुछ लोगों का मत है कि चम्पारन, ज़िला रायपुर, मध्यप्रदेश, श्री बल्लभाचार्य जी का जन्म स्थान है। )

२४० चौरासी—( देखिए मथुरा )
२४१ चौसा—( बिहार के शाहाबाद जिले में एक गाँव )

इसका प्राचीन नाम च्यवनआश्रम था। च्यवन ऋषि की कुटी यहींथी।

सतपुरा पहाड़ी पर पयाष्णीनदी (वर्तमान पूर्णा) नदी के तट पर भी च्यवन ऋषि का निवास स्थान था। जयपुर राज्य में नरनौल से ६ मील दक्षिण एक स्थान धोसी है, यहाँ अनूपदेश ( मालवा ) की राजकुमारी ने च्यवन ऋषि के नेत्र फोड़ दिए थे। राजा ने उस राजकुमारी को पत्नी रूप में ऋषि को दे दिया। 'च्यवन प्राश' इन्हीं ऋषि का निकाला हुआ है जिसके सेवन से स्वास्थ्य को इतना लाभ होता है कि कहते हैं कि काया पलट हो जाती है। च्यवन ऋषि ने वृद्धावस्था से इस विवाह के पश्चात् फिर युवावस्था प्राप्त की थी। बिहार प्रांत में छपरा से ६ मील पूर्व चिरान्द में भी च्यवन ऋषि का आश्रम रहा बतलाया जाता है।

२४२ च्यवन आश्रम— ( कुल )—( देखिए चौसा )

छ

२४३ छपिया— ( संयुक्त प्रांत के गोंडा जिले में एक स्थान )

यहाँ श्री स्वामिनरायण का जन्म हुआ था।

[ वि० स० १८३७ में छपिया नामक गाँव के एक सरवरिया ब्राह्मण कुल में श्री स्वामिनरायण अवतरित हुए थे। माता पिता ने बालक का नाम घनश्याम रखा। थोड़े ही दिनों में सब लोग अयोध्या में जाकर रहने लगे। जब यह ११ साल के थे इनके माता पिता का देहान्त हो गया। इसका इन पर बड़ा प्रभाव पड़ा और १८४६ में यह घर छोड़कर चले गये। आठ साल बाद दीक्षा लेने पर इनका नाम श्री नरायण मुनि पड़ गया, और एक साल बाद जेतपुर नगर की धर्म धुरीण गद्दी पर इनका अभिषेक हुआ। इसके बाद इन्होंने अपना दिव्य प्रकाश फैलाया और विशिष्टाद्वैत स्वामिनरायण-सम्प्रदाय की स्थापना की तथा देश में घूम घूम कर उसका प्रचार किया। सन् १८८६ में इनकी लीला का संवरण हो गया। स्वामिनरायण सम्प्रदाय में इनके इतने नाम प्रचलित हैं— हरि, कृष्ण, हरिकृष्ण, श्रीहरि, घनश्याम, सरयूदास, नीलकंठवर्णी, सहजानन्द स्वामी, श्री जी महाराज, नरायण मुनि और श्री स्वामि नरायण। ]

छपिया में श्री स्वामि नरायण जी के जन्म स्थान पर एक बडा विशाल मन्दिर तालाब के बीच में बनाया गया है और यात्री बराबर आते रहते हैं।

२४४ छहरटा साहेब— ( देखिए अमृतसर )

२४५ छोटा गढ़वा— ( देखिए कोसम )

## ज

२४६ जगदीशपुर— ( देखिए बड़गावा )

२४७ जगन्नाथ पुरी—( उडीसा प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान )

इस स्थान के प्राचीन नाम पुरुषोत्तमक्षेत्र, श्रीक्षेत्र और दन्तपुर हैं।

भारतवर्ष के चार धामों में से यह एक है।

रामचन्द्र जी के अश्वमेध यज्ञ से पहले अश्व की रक्षा करते हुये शत्रुघ्न जी इस स्थान पर आये थे।

मार्कण्डेय मुनि ने इस स्थान पर महादेव जी की आराधना करके मृत्यु को जीता था।

नारद जी यहाँ पधारे थे।

यह स्थान ५२ पीठों में से एक है। सती के दोनों पैर यहाँ गिरे थे।

भगवान् बुद्ध का बाया दांत ( Cannine tooth ) यहाँ रखा हुआ था।

कुछ काल तक यह स्थान वाममार्गियों का केन्द्र था।

चैतन्य महाप्रभु यहाँ रहे थे और यहीं शरीर छोड़ा था।

श्री जगद्गुरु शंकराचार्य ने यहां गोवर्धन मठ की स्थापना की थी, और पद्मपाद आचार्य को मठाधीश बनाया था। पद्मपाद आचार्य ही श्री शङ्कराचार्य के सबसे पहिले शिष्य हुये थे।

प्रा० क०—( पद्मपुराण, पाताल खण्ड, १७ वा अध्याय ) शत्रुघ्न जी ने अश्व की रक्षा करते हुये जाते जाते एक पर्वताश्रम को देख कर अपने मन्त्री से पूछा कि यह कौन स्थान है, मन्त्री सुमति ने कहा कि यह नील पर्वत पुरुषोत्तम के स्थान से शोभित है। इस पर्वत पर चढकर पुरुषोत्तम जी का नमस्कार करके उनका पूजन और नैवेद भोजन करने से प्राणी चतुर्भुज हो जाता है।

( आदि ब्रह्म पुराण, ४१ वा अध्याय ) उत्कल देश में पुरुषोत्तम भगवान निवास करते हैं। उस देश में रहने वाले धन्य हैं। जो पुरुषोत्तम भगवान का दर्शन करता है उसका सदा स्वर्ग में वास होता है।

( ५० ५३ अध्याय ) मार्कण्डेय मुनि महाप्रलय के समय महावाह्य (बाढ) को देखकर भय से व्याकुल होकर पृथिवी पर भ्रमते फिरे। जब उन्हें कहीं विश्राम न मिला तब पुरुषोत्तम् के पास वटराज के समीप गये, जहा न कालाग्नि का भय था न शरीर का खेद होता था। उन्हाने कृष्ण को बाल रूप में देखा। मार्कण्डेय बोले कि भगवान्! मैं परमात्मा शङ्कर की स्थापना करूँगा। किस स्थान में करूँ? भगवान् ने कहा कि हे विप्र! पुरुषोत्तम देव के उत्तर दिशा में अपने नाम से शिवालय बनाओ और वह मार्कण्डेय तीर्थ नाम करके तीर्थों में विख्यात होगा।

( ५८ ६१ वा अध्याय ) चतुर्दशी को मार्कण्डेय ह्रद ( तालाब ) में और पूर्णिमा को समुद्र म स्नान का पुण्य है। मार्कण्डेय वट, रोहिरया ह्रद, कृष्ण महोदधि और इन्द्रद्युम्न सरोवर, यह पच तार्थ हैं। पृथिवी पर जितने नदी, सरोवर, तालाब, बावली, कुए और ह्रद हैं वे सब ज्येष्ठ के महीने में पुरुषोत्तम तीर्थ में शयन करते हैं।

( ६४ वा अध्याय ) जो मनुष्य गुडिच क्षेत्र मे जाते हुये रथ में बैठे श्रीकृष्ण, वल्देव, सुभद्रा के दर्शन करते हैं वे हरिलोक प्राप्त करते हैं। पुरुषोत्तम भगवान ने वर दिया कि गुडिच क्षेत्र में सरोवर के तीर सात दिन तक मेरी यात्रा रहेगी। असाढ शुक्ल मे गुडिचा नाम वाली यात्रा के समय श्रीकृष्ण, वल्देव और सुभद्रा के दर्शन करने से अश्वमेध से भी अधिक फल होता है।

(पुरुषोत्तम महात्म्य, ३ रा अध्याय) रुद्रकल्प जी बोले, मार्कण्डेय मुनि प्रलय के समुद्र में बहते हुये पुरुषोत्तम क्षेत्र में आये। उन्हाने वहां एक वट वृक्ष के ऊपर बाल रूप चतुर्भुज भगवान् को देखा। भगवान् ने मुनि के मनोरथ को सिद्ध करने के लिये वट वृक्ष के वाह्य कोण में अपने चक्र से एक तालाब खोदा। मार्कण्डेय मुनि ने उस तालाब के समीप महादेव जी की आराधना कर के वृक्ष को जात लिया। उन्हीं मुनि के नाम से सरोवर का नाम मार्कण्डेय तालाब हुआ जिस म स्नान कर के, मार्कण्डेय शिव का दर्शन करने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है।

(४ था और ५ वा अध्याय) जब महादेव जी ने ब्रह्मा का ५ वा सिर काट लिया तब वह सिर उनके हाथ से लिपट गया। तब शिव जी पृथ्वी पर भ्रमण करते हुये पुरुषोत्तम क्षेत्र में आये। यहां वह सिर उनके हाथ से छूट गया। तब से इस स्थान का नाम कपाल मोचन पडा।

(२० वां अध्याय) अवन्तीपुर का राजा इन्द्रद्युम्न नारद समेत पुरुषो त्तम भगवान् के दर्शन को आया और ब्राह्मणों को बहुत दान दिया। राजा इन्द्रद्युम्न के दान देने के समय में जो स्थान भर गया वही 'इन्द्रद्युम्न सर' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

(२६ वां अध्याय) भगवान की काष्ठ प्रतिमा राजा इन्द्रद्युम्न से बोली कि तुम्हारी भक्ति से मैं प्रसन्न हूँ। मन्दिर के भग्न होने पर भी मैं इस स्थान को नहीं त्याग करूंगी। कालान्तर में दूसरा मन्दिर बन जाने पर भी तुम्हारा ही नाम चलेगा। पुष्य नक्षत्र से युक्त आषाढ़ शुक्ल द्वितीया के दिन हम लोगों को रथ में बैठा कर गुण्डिचा क्षेत्र में, जहां हम लोगों की उत्पत्ति हुई है, ले जाना चाहिये।

(कूर्म पुराण—उपरि भाग, ३४ वां अध्याय) पूर्व दिशा में जहां महा नदी और विरजा नदी हैं पुरुषोत्तम तीर्थ में पुरुषोत्तम भगवान् निवास करते हैं। वहां तीर्थ में स्नान कर के पुरुषोत्तम जी की पूजा करने से मनुष्य विष्णुलोक को प्राप्त करता है।

(नरसिंह पुराण, ६० वां अध्याय) मार्कण्डेय मुनि ने पुरुषोत्तम पुरी में जाकर भगवान् पुरुषोत्तम का स्तव स्तुति की। विष्णु भगवान ने प्रगट हो कर वर दिया कि *यह तीर्थ स्थान से तुम्हारे ही नाम से मार्कण्डेय क्षेत्र* प्रसिद्ध होगा।

इतिहास से प्रगट होता है कि ३१८ ई० में जगन्नाथ जी की मूर्ति प्रगट हुई थी। उड़ीसा के राजा ययाति केशरी ने पुरी में उसकी स्थापना की। उड़ीसा के राजा अनङ्गभीम देव ने, जिनका राज्य सन् ११७४ ई० से १२०२ ई० तक था, जगन्नाथ जी के वर्तमान मन्दिर को बनवाया। मन्दिर का काम ११८४ ई० में आरम्भ होकर सन ११९८ ई० में समाप्त हुआ था।

व० इ०—जगन्नाथपुरी भारतवर्ष के चार धामों में से एक है। समुद्र से *लगभग एक मील पर २० फीट ऊँची जमीन पर जिसको नीलगिरि कहते* हैं जगन्नाथ जी का मन्दिर है। यह मन्दिर १९२ फीट ऊँचा, ८० फीट लम्बा और उतना ही चौड़ा है। मन्दिर के भीतर ४ फीट ऊँची और १६ फीट लम्बी पत्थर की वेदी है जिसको रत्न वेदी कहते हैं। रत्न वेदी के ऊपर उत्तर तरफ ६ फीट लम्बा सुदर्शन चक्र है, जिसमें दक्षिण जगन्नाथ जी सुभद्रा और बलभद्र जी क्रम से खड़े हैं। बलभद्र जी ६ फीट ऊंचे गौर वर्ण, जग-

नाथ जी बलभद्र जी से एक अगुल छोटे श्याम रङ्ग और सुभद्राजी पाच फाट ऊँची पीत वर्ण हैं। जगन्नाथ जी और बलभद्र जी के ललाट पर एक एक हीरा लगा है। मन्दिर के हाते में एक ओर अक्षयवट है, उसके पास प्रलय काल के विष्णु की बाल मूर्ति है जिसको बाल मुकुन्द कहते हैं। उसी तरफ रोहिणी कुण्ड नामक एक छोटा कुण्ड है। इस हाते मे लगभग ५० स्थान और मन्दिर बने हुये हैं। जगन्नाथ जी के मन्दिर से पश्चिम-दक्षिण स्वर्ग द्वार के रास्ते के पास श्वेत गङ्गा नामक एक पक्का तालाब है, जिसके पूर्व किनारे पर श्वेत केशव का मन्दिर बना हुआ है। जगन्नाथ जी के मन्दिर से एक मील दक्षिण-पश्चिम समुद्र के किनारे पर एक चौथाई मील की लम्बाई में स्वर्ग द्वार है जहाँ यात्री लोग समुद्र के लहर से स्नान करते हैं।

जगन्नाथ जी के मन्दिर से आध मील उत्तर मार्कण्डेय तालाब है। दक्षिण किनारे पर मार्कण्डेय शिव का बड़ा मन्दिर है। मार्कण्डेय तालाब से पूर्व कटक को सड़क के पास लगभग २२५ गज चौड़ा और इससे अधिक लम्बा चन्दन तालाब नाम का बड़ा पोखरा है। उसके चारों तरफ पक्की सीढ़ियाँ बनी हैं और मध्य म चबूतरे के साथ एक बड़ा मन्दिर है। नाव द्वारा उस मन्दिर में जाना होता है। वैशाख की अक्षय तृतीया का देवताओं की चल मूर्त्तियों को नाव पर चढ़ा कर उस तालाब में जलकेलि कराई जाती है और वे उस मन्दिर में बैठाई जाती हैं।

जगन्नाथ जी के मन्दिर से डेढ़ मील दक्षिण पूर्व जनकपुर है जिसका नाम पुराणों म गुण्डिच क्षेत्र लिखा है। उसी जगह काष्ठ मूर्तियाँ रची गई थीं। इसलिये उसको जनकपुर ( जन्मस्थान ) कहते हैं। एक चौड़ी सड़क मन्दिर से जनकपुर तक गई है। सड़क के दक्षिण बगल पर पुरी के राजा का मकान है। जनकपुर के मन्दिर से थोड़ा पूर्व मार्कण्डेय तालाब से कुछ छोटा इन्द्र द्युम्न तालाब है। उसके चारो बगल मे पत्थर की सीढ़ियाँ हैं। तालाब के पास एक मन्दिर में नीलकंठ महादेव और इन्द्रद्युम्न और दूसरे मन्दिर मे पद्म नाभ भगवान हैं। बारहवीं शताब्दी ईस्वी के आरम्भ म कलिङ्ग के राजा गङ्गादेव ने जगन्नाथ जी के मन्दिर को आरम्भ किया था, परन्तु राजा अनङ्ग भीमदेव ने ११९८ ईस्वी में चालीस और पचास लाख रुपये के बीच की लागत से वर्तमान मन्दिर को बनाया था। जिस स्थान पर यह मन्दिर बना है उसी स्थान पर उससे पहिले भगवान बुद्ध का बायाँ बड़ा दाँत यहाँ

रखा था और उन दिनों यह नगर दन्तपुर कहलाता था और कलिङ्गदेश की राजधानी था।

मन्दिर की वार्षिक आमदनी जागीर आदि से लगभग ५ लाख रुपये और यात्रियों की पूजा से क़रीब ६ लाख रुपये है। मन्दिर के पुजारी, पण्डे, मठधारी, नौकर और दूसरे देशों से यात्रियों को ले जाने वाले गुमाश्ते सब मिलाकर ६ हजार से अधिक पुरुष स्त्री और लडके जगन्नाथ जी से परवरिश पाते हैं, जिनमें से लगभग ६५० आदमी मन्दिर के कामों में मुकर्रर हैं। ४०० रसोईदारों को घर के लोग और १२० नृत्य करने वाली लडकियाँ हैं। ४२०० कुली रथ को खींचते हैं जिनको इस काम के लिये बिना लगान ज़मीन मिली है।

ऐसा प्रसिद्ध है कि कर्माबाई नाम की एक स्त्री जो वात्सल्य उपासक थी, नित्य प्रातःकाल उठ कर बिना प्रातःकाल की क्रिया किये हुये एक छोटे पात्र में अङ्गारों पर खिचड़ी बनाकर बडे प्रेम से भगवान् का भोग लगाती थी। जगन्नाथ जी पुरुषोत्तमपुरी से आकर इस खिचडी को खाते थे। कुछ दिन बाद एक साधू के कहने से कर्माबाई स्नानादि क्रिया करके आचार पूर्वक भोग लगाने लगीं। तब जगन्नाथ जी के भोजन में विलंब होने लगा। भगवान् की आज्ञानुसार उनके पण्डे ने उस साधू को ढूढ कर कहा कि जाकर कर्माबाई को उपदेश दो कि प्रथम ही की तरह बिना आचार के सबेरे भोग लगाया करें। साधु ऐसी ही शिक्षा दे आया। कर्माबाई बहुत प्रसन्न हुईं और वे प्रेम पूर्वक पहले ही की भाँति बिना स्नानादि किये हुये सबेरे भोग लगाने लगीं। अब तक पुरुषोत्तमपुरी में सब भोगों से पहले कर्माबाई के नाम से जगन्नाथजी को खिचड़ी का भोग लगाया जाता है।

मार्कण्डेय तालाब, चन्दन तालाब, श्वेत गङ्गा तालाब, पार्वती सागर और इन्द्रद्युम्न तालाब को लोग पञ्चतीर्थ कहते हैं। पुरी में पाँच महादेव प्रख्यात हैं.—

लोकनाथ, मार्कण्डेश्वर, कपालमोचन, नीलकंठ और रामेश्वर।

पुरी में बिमलादेवी का मन्दिर ५२ पीठों में से एक है जहाँ सती के दोनों पैर गिरे बताये जाते हैं।

चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथपुरी में काशी मिश्र के घर में, जिसे अब राधा-कांत का मठ कहते हैं, रहा करते थे। जिस एक छोटी कोठरी में वे रहते थे

उसमें उनके खडाऊँ, कमण्डल और एक वस्त्र रखे हैं। यहीं से वे भगवत् भजन में उन्मत्त होकर समुद्र में बढ़ते चले गये थे और परम धाम को पधारे थे।

७४८ जनकपुर— ( देखिए सीतामढी व जगन्नाथपुरी )

७४९ जह्नु आश्रम (कुल)— ( देखिए जहाँगीरा )

७५० जमदग्नि आश्रम (कुल)— (देखिए जमनिया )

७५१ जमनिया— ( संयुक्त प्रदेश के गाजीपुर जिले में एक बड़ा कस्बा )

इसके प्राचीन नाम जमदग्निया, जमदग्नि आश्रम और मदन बनारस थे। परशुरामजी के पिता जमदग्नि ऋषि का यह निवास स्थान था। परशुराम यहीं पैदा हुए थे।

[ महाराज गाधि के सत्यवती नाम की एक कन्या थी। उससे महर्षि ऋचीक ने अपना विवाह किया था। सत्यवती के कोई भाई नहीं था इससे सत्यवती की माता ने उससे कहा कि महर्षि से भाई हो जाने का वरदान माँगे। सत्यवती ने अपनी माता की प्रार्थना ऋचीक मुनि से कही और अपने भी एक पुत्र होने की इच्छा प्रकट की। महर्षि ने दो चरू मन्त्र बल से तैयार किए, और सत्यवती को बताकर दे दिए। माता ने समझा कि कन्या वाला चरू अच्छा होगा, इससे उसे लेकर पी गई, और उससे विश्वामित्र मुनि का जन्म हुआ, जो क्षत्रिय कुल में जन्म लेकर भी ब्राह्मण हुए। महर्षि ऋचीक ने सत्यवती से कहा कि तेरा पुत्र तो नहीं, पर पौत्र क्षत्रिय तेज वाला होगा। उसने जमदग्नि ऋषि को जन्म दिया जिनके पुत्र परशुराम हुए।

महर्षि जमदग्नि सदा तपस्या में ही लगे रहते थे। उस समय के प्राय समस्त राजा दुष्ट हो गए थे। राजाओं के रूप में सभी असुर उत्पन्न हुए थे। सहस्रबाहु के दुष्ट पुत्रों ने तपस्या में लगे हुए महर्षि जमदग्नि का सिर काट लिया। इस घटना पर परशुरामजी अपने क्रोध को न रोक सके और पिता की मृत्यु का बदला लेने को उन्होंने कई बार क्षत्रिय वंश का नाश किया। ]

जमनिया गङ्गा के तट पर एक अच्छा कस्बा है।

जमदग्नि आश्रम—जमनिया के अतिरिक्त, जमदग्नि ऋषि के आश्रम जैराडीह ( जिला गाजीपुर ), और बंगाल में जोगरा से ७ मील उत्तर महा स्थान गढ में, तथा नर्मदा के किनारे महेश्वर के समीप भी बतलाए जाते हैं। जैराडीह को भी परशुरामजी की जन्मभूमि कहा जाता है।

२५२ जहाँगीरा— ( विहार प्रांत के भागलपुर जिले में एक गाँव )
यहाँ जह्नु ऋषि का आश्रम था।

गङ्गाजी के बीच में यहाँ पहाड़ी है जिस पर जह्नु ऋषि निवास करते थे। जिस समय भगीरथ गङ्गा जी को लाये उनका जल इस पहाड़ी से टकराया, इससे महर्षि को क्रोध आया और वह सब जल पी गये। भगीरथ की प्रार्थना करने पर फिर अपने कान से उन्होंने उस जल को छोड़ दिया। तब से गङ्गाजी का नाम जाह्नवी हुआ।

यह पहाड़ी गङ्गाजी की बीच धारा में शोभायमान है। नदी के किनारे जहाँगीरा गाँव है, जो जाह्नुगृह या जह्नुगिरि का अपभ्रंश है। पहाड़ी पर गैबीनाथ महादेव का मन्दिर है और महन्त रहते हैं। बरसात में दो तीन महीने इस पहाड़ी से लोगों का बाहर आना जाना कठिन है।

जह्नु आश्रम—जहाँगीरा के अतिरिक्त जह्नुऋषि के आश्रम निम्न पाँच स्थानों पर और बतलाये जाते हैं— १- भैरव घाटी, भागीरथी और जाह्नवी के संगम पर गङ्गोत्री के नीचे पहाड़ पर। २-कन्नौज में। ३-शिवगञ्ज में, रामपुर बोलिया से ऊपर। ४- गौर में, मालदा के समीप। ५- जाननगर में, नदिया से ४ मील पश्चिम।

यह सब वे स्थान हैं जहाँ गङ्गाजी की धारा मुड़ी है। इससे यह रूपक प्रतीत होते हैं कि इन स्थानों पर पहले बहाव रुका, फिर बढ़ा। और जैसे जहाँगीरा में कहा जाता है कि जह्नु ऋषि ने गङ्गाजी का सब जल पी लिया और फिर बहाया वैसे ही यहाँ भी हुआ और इस प्रकार इन सब स्थानों को जह्नु ऋषि का आश्रम कहा गया।

२५३ जाजपुर— ( उड़ीसा प्रांत के कटक जिले में एक कस्बा )
जाजपुर के प्राचीन नाम विरज क्षेत्र, यज्ञपुर व ययातिपुर हैं।
इस स्थान पर पाण्डवों ने अपने पितरों का तर्पण किया था।
महर्षि लोमश यहाँ आये थे।
ब्रह्मा ने यहाँ वैतरणी नदी के किनारे दश बार अश्वमेध यज्ञ किया था।
यह स्थान बावन पीठों में से एक है जहाँ सती के शरीर का एक अङ्ग गिरा था।

प्रा० क०— ( लिङ्ग पुराण, ४१वाँ अध्याय ) समुद्र के उत्तर भाग में विरज क्षेत्र में वैतरणी नदी है। इस तीर्थ के अतिरिक्त उत्कल देश में अनेक और पवित्र तीर्थ हैं और पुरुषोत्तम भगवान् निवास करते हैं। ( महाभारत,

नन पर्व, ११४वाँ अध्याय ) युधिष्ठिर आदि पाण्डवों ने महर्षि लोमश सहित कलिङ्ग देश ( उड़ीसा व उससे मिला हुआ मद्रास का भाग ) में वैतरणी नदी पार उतर कर पितरों का तर्पण किया।

( आदि पर्व, १०४ वाँ अध्याय ) बली नामक राजा की सुदेष्णा स्त्री ने एक अन्धे ऋषि से सभोग किया जिससे अङ्ग, बङ्ग, कलिङ्ग, पुड् और सुह्म, ५ पुत्र उत्पन्न हुये जिनके नाम से एक एक देश हुआ। कलिङ्ग का दूसरा प्राचीन नाम उत्कल है।

( आदि ब्रह्म पुराण, ४१वाँ अध्याय ) जिस क्षेत्र में ब्रह्मा की प्रतिष्ठा की हुई विरजा माता हैं जनके दर्शन करने से मनुष्य अपने कुल का उद्धार करके ब्रह्मलोक में निवास करता है। उस क्षेत्र म सब पापों को हरने वाली और वर की देने वाली अन्य भी अनेक देवियाँ स्थित हैं, और सम्पूर्ण पापों को विनाश करने वाली वैतरणी नदी बहती है। विरज क्षेत्र में पिंडदान करने से पितरों की उत्तम तृप्ति होती है। ब्रह्मा के विरज क्षेत्र मे शरीर त्याग करने से मोक्ष प्राप्त होता है। उत्कल देश में निवास करने वाले मनुष्य धन्य हैं।

उड़ीसा ( प्राचीन कलिङ्ग ) के चार प्रमुख तीर्थ भुवनेश्वर ( चक्रक्षेत्र ), पुरी ( शङ्खक्षेत्र ), कोणार्क ( कनारक-पद्मक्षेत्र ) तथा यजपुर ( जाजपुर—गदाक्षेत्र ) हैं।

कहते हैं कि विष्णु ने गयासुर को मारकर अपना चरण चिन्ह ( पाद ) गया म छोड़ा और शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म यहाँ छोड़े थे। शैशुनाग वंशी राजाओं के समय कलिङ्ग स्वतन्त्र राज्य था। सबसे पहले मौर्य सम्राट अशोक ने इसे जीत कर अपने साम्राज्य में मिलाया। इसकी राजधानी तोसली थी। बाद में भुवनेश्वर राजधानी हुई जिसका दूसरा नाम कलिङ्ग नगर पडा। जाजपुर एक समय बडा प्रसिद्ध शहर था और उड़ीसा के महाराजा ययाति केशरी की राजधानी था।

व० द०—कटक शहर से ४४ मील पूर्वोत्तर वैतरणी नदी के दाहिने किनारे पर जाजपुर बसा है।

जाजपुर के पास वैतरणी नदी के सुप्रसिद्ध घाट पर पादगया तीर्थ म स्नान और पिण्डदान किया जाता है। नदी के टापू में वाराह जी का बड़ा मन्दिर है। ब्रह्म कुण्ड तालाब के समीप विरजा देवी का शिखरदार मन्दिर है। यहाँ वर्ष में एक मेला होता है।

२५४ जाम्बगाँव—( हैदराबाद राज्य में एक गाँव )

श्री समर्थ गुरु रामदास स्वामी ने यहाँ जन्म लिया था।

[ चैत्र शुक्ल नवमी के दिन सन् १६६५ वि० में ठीक रामजन्म के समय रेणुकाबाई ने गोदावरी के तट पर उस महापुरुष को जन्म दिया जिसे संसार समर्थ गुरु रामदास के नाम से जानता है। पिता सूर्याजी पन्त ने इनका नाम नारायण रखा। बारह वर्ष की अवस्था में जब इनका विवाह हो रहा था यह मण्डप से भाग गये और गोदावरी नदी तैर कर, किनारे चलते चलते नासिक पंचवटी पहुँचे। कहा जाता है यहाँ इन्हें भगवान् रामचन्द्र ने दर्शन दिये। नासिक के समीप टाकली ग्राम में, जहाँ गोदा और नन्दिनी का सङ्गम हुआ है, एक गुफा में रामदास जी रहने लगे। इस प्रकार यहाँ तप करते इन्हें तीन वर्ष हो गये।

एक दिन रामदासजी सङ्गम पर बहायन कर रहे थे कि इन्हें एक स्त्री ने प्रणाम किया। इन्होंने आठ पुत्रों की माता होने का आशीर्वाद दिया। स्त्री हँसी। वह पति के साथ सती होने जा रही थी और सती होने से पहले सत्पुरुषों को प्रणाम करने की विधि के अनुसार यहाँ आई थी। उसके पुत्र कोई न था। जब यह विदित हुआ तो श्री समर्थ ने शव वहीं लाने की आज्ञा दी। उसके आते ही समर्थ ने उस पर तीर्थोदक छिड़का। मृतशरीर जीवित हो उठा। यह गिरिधर पन्त का शरीर था और अन्नपूर्णा बाई उनकी स्त्री थीं। श्री समर्थ ने अन्नपूर्णा से कहा कि अब मैं तुम्हें दश पुत्र होने का आशीर्वाद देता हूँ, और उसके दश पुत्र हुये भी। इन दम्पति ने पहला पुत्र श्री समर्थ को अर्पण किया। वेही उद्धव गोसावी जी के नाम से प्रख्यात हुये हैं।

१२ वर्ष तपस्या और १२ वर्ष यात्रा करके श्री समर्थ माहुली क्षेत्र में रहने लगे। श्री समर्थ की सत्कीर्ति सुनकर छत्रपति शिवाजी महाराज का मन उनकी ओर दौड़ गया और उन्होंने सम्वत १७०६ में चाफल के समीप शिंगणवाड़ी (ज़िला सातारा) में महाराज शिवाजी को शिष्य रूप में ग्रहण किया। श्री समर्थ पराली (ज़िला सातारा) में रहने लगे और तभी से उस स्थान का नाम सज्जनगढ़ पड़ गया।

सम्वत् १७१९ में जब महाराज शिवाजी सातारा में थे, श्री समर्थ द्वार पर भिक्षा माँगने पहुँचे। महाराज ने एक कागज लिख कर झोली में डाल दिया। उस पर लिखा था "आज तक मैंने जो कुछ अर्जित किया है, यह सब स्वामी के चरणों में समर्पित है"। दूसरे दिन से छत्रपति महाराज श्री

मोली उालवर भिक्षा मांगने को स्वामी के साथ हो लिये। उन्होंने इन्हें राज-कार्य के लिये लौटा दिया और शिवाजी श्री समर्थ जी की मन्त्रणानुसार कार्य करने लगे। सम्वत् १७३८ में श्री रामदास महाराज ने सज्जनगढ़ से बैकुण्ठ को गमन किया। सातारा से ४ मील, सज्जनगढ में श्रीसमर्थ की समाधि मौजूद है। चाफल में एक गुफा है जहाँ उन्होंने ध्यान मग्न रह कर आत्म ज्ञान प्राप्त किया था]

२५५ जालन्धर या जलन्धर—(पजाब प्रदेश में एक जिले का सदर स्थान)

जालन्धर को दैत्य जलन्धर ने बसाया था।

महाभारत में जलन्धर के दोआब की भूमि त्रिगर्त देश कहलाती थी।

यहाँ के राजा सुशर्मा ने विराट में जाकर विराट के अहीरों से वहाँ की गौवों को हरा था। इस पर अर्जुन ने, जो अन्य पाण्डवो सहित विराट में अज्ञात वास कर रहे थे, उसे मार भगाया था। सुशर्मा ने महाभारत में दुर्योधन का पक्ष लिया था और अर्जुन के हाथ से मारा गया था।

जलन्धर दोआब अति प्राचीन काल में एक चन्द्रवशी राजा के वंशधरों द्वारा शासित था जिनकी सन्तान अब तक काँगडी की पहाडियों में छोटे प्रधान हैं। वे लोग बताते हैं कि वे महाभारत के युद्ध में लडने वाले राजा सुशर्मा के वंशधर हैं और उनके पूर्वजों ने मुलतान से जलन्धर दोआब में आकर कटोच राज्य स्थापित किया था।

(महाभारत, विराट पर्व, ३० वाँ अध्याय) दुर्योधन की सेना ने दो भाग होकर विराट पर चढ़ाई की। प्रथम भाग का सेनापति त्रिगर्त देश का राजा सुशर्मा हुआ, जिसने विराट में जाकर विराट के अहीरों से सब गऊ छीन लीं।

(द्रोण पर्व, १६ वाँ अध्याय) त्रिगर्त देश का राजा सुशर्मा अपने चारों भाइयों और १० सहस्र रथों के सहित अर्जुन से लडने के लिये तैयार हुआ।

(शल्य पर्व, २७ वाँ अध्याय) अर्जुन ने त्रिगर्त देश के राजा सुशर्मा को मार डाला।

इस समय जालन्धर पजाब प्रान्त के एक जिले का सदर स्थान और एक बडा शहर है।

२५६ जूनागढ—(काठियावाड में एक राज्य)

यहाँ भक्त नरसी मेहता का जन्म हुआ था और उनका निवास स्थान था।

[ नरसी मेहता गुजरात के भारी कृष्ण भक्त हो गये हैं और उनके भजन आज दिन सारे भारत में बड़ी श्रद्धा और आदर के साथ गाये जाते हैं। उनका जन्म काठियावाड़ के जूनागढ़ शहर में हुआ था। यह घर का काम न करके ईश्वर भक्ति में लगे रहते थे। एक दिन इनकी भावज ने ताना मारा कि ऐसी भक्ति उमड़ी है तो भगवान से मिलकर क्यों नहीं आते। नरसी जी निकल पड़े और जूनागढ़ से कुछ दूर श्री महादेव जी के पुराने मन्दिर में श्री शङ्कर की उपासना करने लगे। कहते हैं, उनकी पूजा से प्रसन्न होकर भगवान शङ्कर उनके सामने प्रगट हुये और उन्हें भगवान श्री कृष्ण के गोलोक में लेजा कर गोपियों की रास लीला का अद्भुतदृश्य दिखलाया।

कहा जाता है कि पुत्री के विवाह के लिये नरसी जी के पास सामान न था, जितने रूपये और सामग्रियों की जरूरत पड़ी सब भगवान ने पहुचाई और स्वयम् मण्डप में उपस्थित होकर सब कार्य्य सम्पन्न किये। इसी तरह पुत्र के विवाह में भी हुआ। इनके पिता के श्राद्ध में एक बेर घी की कमी पड़ा। मेहता जी घी लाने बाजार गये पर कीर्त्तन हो रहा था उसमें लग गये। घण्टा बाद याद आई तो घर को दौड़े। ब्रह्मभोज समाप्त हो चुका था। नरसी जी स्त्री से क्षमा मागने लगे। वह चकराई। उसे क्या खबर थी कि श्री कृष्ण भगवान् नरसी का रूप धर कर घी दे गये थे।

एक बार जूनागढ़ के रावमाण्डलिक ने मेहता जी के विरोधियों के भड़काने से उन्हे बन्दी कर लिया और कहा कि यदि भगवान अपने मूर्त्ति पर की माला उन्हें पिन्हावेंगे तब वे छूटेंगे, नहीं तो भक्त बनने के दाग में सजा पायेंगे। लोगों के देखते देखते मूर्त्ति की माला इनके गले में आ गई। नरसी जी का ही भजन है "वैष्णव जन तो तेने कहिये जो पीर पराई जाणे रे" जिसे महात्मा गाधी जी बड़े प्रेम से गाते थे। ]

२५७ जेठियन—( देखिए राजगृह )

२५८ जैतापुर—( देखिए भुरला टाड़ )

२५९ जोशीमठ—( हिमालय पर्वत पर गढ़वाल प्रान्त में एक प्रसिद्ध स्थान )

यह प्राचीन काल का ज्योतिर्धाम है।

इस मठ की स्थापना जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य जी ने की था।

जोशीमठ से तीन मीलपर विष्णु प्रयाग है जहां महर्षि नारद ने विष्णु भगवान की आराधना कर के सर्वज्ञत्व लाभ किया था।

प्रा० क०—( स्कन्द पुराण केदार खण्ड प्रथम भाग, ५८ वा अध्याय ) विष्णु कुण्ड से दो कोस पर ज्योतिर्धाम है जहा नृसिंह भगवान और प्रह्लाद जी, निवास करते हैं। इस पीठ के समान सिद्धि देने वाला और सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाला कोई दूसरा तीर्थ नहीं है।

ज्योतिर्धाम से दो कोस पर विष्णु प्रयाग है जिसमे स्नान करने वाला विष्णुलोक में पूजित होता है। महर्षि नारद ने उस प्रयाग म विष्णु भगवान की आराधना कर के सर्वज्ञत्व लाभ किया था, तभी से विष्णु कुण्ड प्रसिद्ध हो गया।

व० द० —श्री शङ्कराचार्य स्वामी ने जोशीमठ को स्थापित किया था। श्री नगर के बाद इतनी बड़ी बस्ती उस देश म नहीं है। यहां पचास से ऊपर मकान, कई धर्मशाले, पनचक्किया, शफाखाना आदि हैं। बस्ती के ऊपरी भाग में बद्रीनाथ के रावल का मकान है। जाडे म जब बद्रीनाथ के पट बन्द हो जाते हैं तब लगभग ६ मास तक बद्रीनाथ की पूजा जोशीमठ म होती है। पट खुलने के समय रावल बड़ा उत्सव करके जोशीमठ से बद्रीनाथ जाते हैं और लगभग ६ मास वहा रहते हैं।

रावल के मकान से पूर्व, पत्थर के तख्ता से छाया हुआ, दक्षिण मुख का, दो मंजिला नृसिंह जी का मन्दिर है। मन्दिर में सुनहले मुकुट और छत्र सहित नृसिंह जी की सुन्दर मूर्त्ति है।

जोशीमठ से लगभग तीन मील पर विष्णुप्रयाग है। वहां उत्तर से अलखनन्दा आई है और पूर्व नीति घाटी से धवली गगा, जिसको लोग विष्णु गगा भी कहते हैं, आकर अलखनन्दा म मिल गई है। वहा की धारा बड़ा तेज है। यात्रीगण लोटे में जल भर कर सङ्गम पर स्नान करते हैं। उसी स्थान को विष्णु कुण्ड कहते हैं। विष्णु प्रयाग गढवाल के पच प्रयागो में स एक है।

२६० जेष्ठ पुष्कर—( देखिये पुष्कर )

२६१ ज्वाला मुखी—( पजाब प्रदेश के कांगड़ा जिले मे एक पहाड़ी कस्बा )

यहाँ ज्वाला मुखी देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है।

यही महाभारत वर्णित चक्रवा है।

ग्रा० क०—( शिव पुराण, दूसरा खण्ड, २७ वां अध्याय ) जब सती ने कनखल में अपना शरीर जला दिया तब उससे एक प्रकाशमय ज्योति उठी जो पश्चिम की ओर एक देश में गिर पड़ी, उसका नाम ज्वाला भवानी हुआ। वह सब को प्रसन्न करने वाली है। उसकी कला प्रत्यक्ष है। उसकी सेवा पूजा करने से सब कुछ मिलता है, उसी को ज्वालामुखी कहते हैं।

( देवी भागवत, ७ वाँ स्कन्द, ३८ वां अध्याय ) ज्वाला मुखी का स्थान देखने योग्य और सदा व्रत करने योग्य है।

च० द०—ज्वाला मुखी पर्वत ३२८४ फीट ऊँचा है और १८८२ फीट की ऊँचाई पर ज्वाला मुखी देवी का गुम्बजदार मन्दिर है। मन्दिर और जगमोहन दोनों के गुम्बजों पर सुनहला मुलम्मेदार पत्तर पजाब केसरी महाराज रणजीत सिंह का जड़वाया हुआ लगा है। मन्दिर के किवाड़ों पर चाँदी का मुलम्मा है। मन्दिर की दीवार के नीचे का भाग और इसका फर्श संगमरमर का है। मन्दिर के भीतर देवी का प्रकाश है। भूमि की आग से निकलते हुए छोटे बड़े दश लाफ ( लवें ) रात दिन लगातार बलते हैं। लपटों के जलने से मन्दिर में रात्रि के समय में दिन का सा प्रकाश रहता है। भीतर के दश लपटों के अतिरिक्त मन्दिर से बाहर उसकी पीछे की दीवार में कई टेम जलते हैं। ज्वालादेवी को जीव बलिदान नहीं दिया जाता।

मन्दिर के पाछे छोटे मन्दिर में एक कूप है। कूप के भीतर उसकी बगल में दो बड़े लाफ बलते हैं। इसके पास दूसरे कूप का जल खौलता रहता है। लोग इसे गोरख नाथ का डिभी कहते हैं।

ज्वालपुर में नित्य यात्री आते हैं परन्तु आश्विन की नवरात्र और चैत्र की नवरात्र को बहुत भारी मेले लगते हैं।

२६२ ज्योतिर्लिङ्ग-भारखंड—( देखिए वैद्यनाथ )

## झ

२६३ झामतपुर—( देखिये कातवा )

## ट

२६४ टँडवा महन्त—( संयुक्त प्रान्त के बहराइच जिले में एक गाँव ) यहां लक्ष्मण दास था, जो नाथ गुरुओं में श्रेष्ठ गुरु थे, जन्म हुआ था और यहां उन्होंने समाधि ली थी।

भगवान गौतम बुद्ध ने कहा है कि उनसे पहिले छः बुद्ध और हो चुके हैं। उनमें से छठे, अर्थात् अन्तिम, कश्यप बुद्ध थे। फ़ाहियान ने लिखा है कि इनका जन्म स्थान और समाधि की भूमि श्रावस्ती ( सहेट-महेट ) से ८ मील में उत्तर पच्छिम में है। ह्वानच्वांग ने उसको श्रावस्ती से १० मील पच्छिम में,उत्तर की ओर को दखा हुआ, कहा है। वे यह भी कहते हैं कि इस स्थान पर एक स्तूप दक्षिण में और एक उत्तर मे था। दक्षिण वाला स्तूप उस स्थान पर था जहाँ कश्यप बुद्ध ने तपस्या की थी, और उत्तर वाला जहाँ उन्होंने समाधि ली थी।

टँड्वा महन्त या टँड्हा गाँव सहेट-महेट ( सावस्ती ) से नौ मील पच्छिम में है। यह बहुत प्राचीन जगह है और पुरानी ईंटो से भरी पड़ी है। गाँव से २०० गज़ पच्छिमोत्तर मे ८०० फ़ीट लम्बा और ३०० फ़ीट चौड़ा ईंटों का खेड़ा है। खेडे के पच्छिम-दक्षिण कोने में ईंटों का टूटा ठोस स्तूप है जिसका घेरा ७० गज़ है। यही कश्यप बुद्ध की समाधि का स्तूप है जिसे महाराज अशोक ने बनवाया था। इसके आकार से जान पड़ता है कि अपने समय में यह उत्तर देश के बहुत बड़े स्तूपों में रहा होगा। अब इसके ऊपर महादेव जी का लिङ्ग और सीता देवी की मूर्ति है जिनका पूजन होता है। असल में यह मूर्ति सीता देवी की नहीं है। १५० वर्ष हुए यहाँ एक वैरागी अयोध्या दास एक बरगद के वृक्ष के नीचे ठहरे थे। उनको खोदने में यह मूर्ति मिली जो गौतम बुद्ध की माता मायादेवी की है। वे साल वृक्ष के नीचे खड़ी हैं, दाहिना हाथ ऊपर उठा है जिससे वे वृक्ष की एक डाली पकड़े हैं, बायाँ हाथ कमर पर है। ऐसी ही अवस्था मे उन्होंने भगवान बुद्ध को जन्म दिया था।

२६५ टङ्कारा—( देखिये मोरवी )

२६६ टाफली—( देखिये जाम्बगाँव )

## ड

२६७ डलमऊ—( संयुक्त प्रदेश के रायबरेली जिले में एक तहसील का सदर स्थान )

इसका प्राचीन नाम दालभ्य आश्रम मिलता है और दालभ्य ऋषि का वह निवास स्थान था।

यह स्थान गंगा नदी के किनारे बसा है। गुप्तों का प्राचीन किला यहा था। उनके बहुत पीछे भर लोग यहां आये और भरों के बाद मुसलमानों ने यहां किला बनवाया।

डलमऊ में गंगा स्नान के मेले लगा करते हैं।

२६८ डल्ला सुल्तानपुर—(पंजाब प्रान्त के जालन्धर ज़िले में एक स्थान)

, यहां तामस वन बौद्ध सङ्घाराम था जहां महापुरुष कात्यायन ने 'अभिधर्म ज्ञान प्रस्ताव' ग्रन्थ लिखा था।

ह्वानच्वांग लिखते हैं कि 'तामस वन सङ्घाराम के बीच में २०० फीट ऊंचा स्तूप था और महापुरुष कात्यायन के यहां अभिधर्म ज्ञान-प्रस्ताव ग्रन्थ लिखने के कारण यह जगत प्रसिद्ध हो रहा था। सैकड़ों हज़ारों स्तूप यहां आस पास बने थे और अर्हतों की हड्डियां मिलती थीं।

अब यह सब स्तूप लोप हो गये हैं। जहां तामस वन सङ्घाराम था वहां पर बादशाही सराय बनी है।

दौलत खां लोदी ने इस जगह को फिर से बसाया था और नादिरशाह के आक्रमण के समय यहां ३२ बाज़ार और ५५०० दुकानें थीं। नगर के फिर से बसाने में स्तूप और पुरानी इमारतों का सामान काम आ गया है।

२६९ डेहरा—(अलवर राज्य में एक गांव)

. यहां शुक सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी चरणदास जी का जन्म हुआ था।

[ वि०सं० १७६० में डेहरा ग्राम में भार्गव ब्राह्मण के कुल में श्री चरण दास का जन्म हुआ था। कहा जाता है कि पांच वर्ष की अवस्था में डेहरा में नदी तट पर शुकदेव जी ने इन्हें दर्शन दिया था। और फिर फीरोजपुर के सन्निकट शुकतार में ११ साल की अवस्था में दर्शन दिया और विधिवत दीक्षा देकर अपना शिष्य बना लिया। इसके बाद अष्टाङ्ग योग की साधना करके इन्होंने दिल्ली में १४ वर्ष की समाधि लगाई। इससे उनके हृदय को शान्ति न हुई और भगवान कृष्ण के दर्शनार्थ चरण दास जी वृन्दावन पधारे। श्री कृष्ण भगवान ने उन्हें प्रेमाभक्ति के प्रचार की आज्ञा दी, और चरण दास जी दिल्ली आकर इसका प्रचार करने लगे। सम्राट मुहम्मद शाह ने सैकड़ों गांव उनको भेंट करना चाहे, और उनके अस्वीकार करने पर सम्राट ने उनके शिष्यों में उन्हें बांट दिया और बहुत से गांव अब भी उन्हीं

लोगों के पास हैं। वि० स० १८३६ में स्वामी चरणदास जी परम धाम को गये। यह महापुरुष शुक सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। ]

## त

७७० तख्तेभाई—( सीमा प्रान्त के मर्दान ज़िले में एक स्थान )

तख्तेभाई का प्राचीन नाम भीमा स्थान है। यहा भीमा देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है और इसकी यात्रा युधिष्ठिर ने की थी।

यह स्थान पेशावर से २८ मील पूर्वोत्तर और मर्दान से ८ मील पच्छिमोत्तर म है। ह्यानचाग ने भीमा देवी के मन्दिर को लिखा है कि एक अकेली पहाडी की चोटी पर था।

७७१ तपवद्री—( देखिए भविष्य बद्री )

७७२ तपोवन—( देखिए भविष्य बद्री व राजगृह )

७७३ तमलुक—( बङ्गाल म मिदनापुर जिले का एक कस्बा )

ब्रह्म पुराण वर्णित वर्गा भीमा का मन्दिर यहा है।

इस स्थान का प्राचीन नाम ताम्रलिप्ति था।

ताम्रलिप्ति का उल्लेख महाभारत, पुराणों तथा बौद्ध ग्रन्थों म है। यह प्राचीन काल में बहुत बड़ा बन्दरगाह था और पूर्वी द्वीप समूह, चीन तथा जापान से भारत का व्यापार यहाँ से विशेष रूप से होता था। कथासरित् स गर में इस बात का उल्लेख है। दशकुमारचरित के रचयिता दडिन के अनुसार यहा ७ वा श० म विन्दुवासिनी का मन्दिर था।

इत्सिग (चीनी यात्री) यहा रहा था।

इसी बन्दरगाह से विजय लङ्का विजय, का गये थे और लङ्का विजय की थी। यह नगर सुम्हराढ देश की राजधानी था, इसको डेढ हजार साल हुए। पहिले यह गगा जी के समुद्र के मुहाने पर स्थित था पर अब रूप न रायण नदी के किनारे पर है जो कि नदी की कई शाखाओं से मिल कर बन गई है।

कहा जाता है कि तमलुक महाभारत के महाराज मयूरध्वज की राजधानी थी (देखिये रतनपुर), पर 'जैमिनि भारत' के अनुसार मयूरध्वज की राजधानी नर्मदा नदी पर थी। इसके साथ यह भी विचारने योग्य है कि ब्रह्मदेश (Burma) का राजवश अपने को महाभारत के मयूरध्वज की सतान बताता है और मयूर ही उनकी ध्वजा का चिन्ह है। यह वश तमलुक ही से ब्रह्मदेश जा सकता था।

२७४ तरनतारन—( पंजाब प्रान्त के अमृतसर जिले में एक तीर्थ स्थान)

यहां पांचवें सिख गुरु अर्जुनसाहब का बनवाया हुआ गुरुद्वारा व सरोवर है।

गुरु अर्जुन साहब ने ८० बीघा जमीन नूरुद्दीन मुगल से खरीद कर यहां एक बड़ा सरोवर खुदवाया। उसके लिए बहुत बड़ा ईंटों का भट्टा लगाया गया मगर बहुत सी ईंटें नूरुद्दीन उठा ले गया और अपने मकान और सराय में लगा लीं। बाद को पंजाब केसरी महाराज रणजीतसिंह जी ने उन मकानों को खुदवा कर वे ईंटें भी इसी सरोवर में लगाईं।

एक कोढ़ी को गुरु अर्जुन साहब की आज्ञा से सरोवर तरन तारन में स्नान कराया गया और वह अच्छा हो गया था।

यह स्थान अमृतसर से १० मील है। गुरुद्वारा दरबार तरन तारन यहां है जिसको गुरु अर्जुन साहब ने बनवाया और उसमें निवास किया था।

२७५ तरीगाव—( देखिए सिहूर )

२७६ तलवराडी—( देखिये राह भोई की तलवराडी )

२७७ तक्षशिला—( देखिए शाहढेरी )

२७८ तामेश्वर—( देखिए महाथान टीह )

२७९ तारङ्गा—( गुजरात प्रान्त के जिला महीकाँठा में एक स्थान )

इन्द्र व सागर दत्त मुनि (जैन) को इस स्थान से मोक्ष प्राप्त हुआ था।

यहां कई धर्मशालायें और जैन मन्दिर हैं। पौष सुदी १५ व कार्तिक सुदी १५ को तीन दिन के लिये मेला लगता है।

२८० तालवड़ी—( पंजाब प्रान्त के अम्बाला जिला में एक ग्राम )

स्वाधीन भारत की ( पराधीन होने से पहिले ) विदेशियों पर अन्तिम विजय इसी स्थान पर हुई थी।

सन् ११९१ ई० में प्रसिद्ध दिल्ली पति महाराज पृथ्वीराज ने इस स्थान पर मोहम्मद गोरी को हराया था।

२८१ तालवन—( देखिए मथुरा )

२८२ तारकपुर—( संयुक्त प्रान्त के बुलन्दशहर जिले में एक स्थान )

इस स्थान पर राजा परीक्षित ने प्राण छोड़े थे और राजा जन्मेजय ने सर्प यज्ञ किया था।

राजा जनमेजय के पिता राजा परीक्षित को तक्षक नाग ने डस लिया था। इस पर क्रुद्ध होकर जनमेजय ने सर्प यज्ञ किया था जिसमें सारे नाग यज्ञ में भस्म कर डाले गये थे। महाभारत के अनुसार सर्प यज्ञ तक्षशिला में हुआ था। राजा परीक्षित अभिमन्यु के पुत्र थे। पाण्डव लोग परीक्षित को राजगद्दी पर बिठा कर आप वनवास और महायात्रा को चले गये थे।

ताहरपुर से तीन मील पूर्वोत्तर गंगाजी के किनारे 'अहार' नाम की बस्ती है। वहां के लोग इसे रुक्मिणी के पिता राजा भीष्म की राजधानी बताते हैं, पर यह सही नहीं है। यदि राजा भीष्म की राजधानी, कुण्डिन पुर, गङ्गा जी के तट पर होती तो जहाँ इस राजधानी की वाटिकाओं तक का वर्णन है, वहां गंगा तट पर होने का उल्लेख अवश्य पुराणों व महाभारत में होता। कुण्डिनपुर बरार प्रान्त में है। इसमें सन्देह नहीं कि अहार, जिसका पुराना नाम आभानगर था, एक प्राचीन स्थान है। सम्भव है कि यह पाण्डवों के एक प्रान्त की राजधानी रहा हो। कुछ लोगों का विचार है कि अहार द्रोणाचार्य की राजधानी अहिक्षेत्र है। परन्तु अहिक्षेत्र बरेली से १५ मील पूर्व और बदायू से २२ मील उत्तर रामनगर स्थान है। अहार वह स्थान नहीं है। ( देखिये कुण्डिनपुर और रामनगर )

२८३ तिक्वांपुर—( संयुक्त प्रदेश के कानपुर जिले में एक स्थान ) सुप्रसिद्ध महाकवि भूषण व महाकवि मतिराम का यह जन्म स्थान है।

[ भूषण जी कान्यकुब्ज ब्राह्मण रत्नाकर त्रिपाठी के पुत्र थे और तिक्वांपुर में १६७० वि० में इनका जन्म हुआ था। इनका नाम कुछ और ही था परन्तु चित्रकूट के सोलंकी राजा रुद्र ने भूषण की उपाधि दी, तब से इनका यही नाम प्रसिद्ध हो गया। भूषण छत्रपति महाराज शिवाजी के राजकवि थे और महाराज ने एक बार इनके बावन कवित्त पर बावन लाख रुपये दिये थे। भूषण जी के समान वीर रस का दूसरा कवि नहीं हुआ। यह पन्ना नरेश महाराज छत्रसाल के यहाँ भी रहे थे। शिवाजी के परलोकवासी हो जाने पर जब दक्षिण से यह उत्तर प्रदेश को आ रहे थे तो महाराज छत्रसाल के राज्य में से निकलना हुआ। महाराज छत्रसाल सीमा पर मिले और एक कहार को जगह भूषण की पालकी में अपना कन्धा लगा दिया। भूषण पालकी से कूद पड़े और तुरन्त छत्रसाल की प्रशंसा में एक ज़ोरदार कवित्त सुनाया। तब ही से यह छत्रसाल महाराज की भी प्रशंसा करने लगे पर शिवा जी को कभी नहीं भूलते थे। छत्रसाल की प्रशंसा में भी कहा है कि 'शिवा

नौ सराहौं के सराहौं छत्रसाल कौ'। यह महाराज छत्रसाल वह थे जिन्होंने दिल्ली सम्राट से टक्कर लेले के अपनी छोटी सी रियासत पन्ना को दो करोड सालाना की आमदनी का राज्य बना दिया था।

भूषण जी एक बार पहाडी राजाओं के यहां गये। उन दिनों शिवाजी महाराज स्वर्ग को सिधार चुके थे। राजा लोग समझे कि यह विदाई लेने आये हैं। भूषणजी ने उनके व्यवहार स यह बात भांप ली और जब विदाई दी जाने लगी तब उन्होंने कहा कि जिसको शिवा ने दिया है उसको दूसरा कोई क्या देगा, मैं तो देखने आया था कि इन दूरवर्ता पहाडियों पर भी महाराज शिवाजी का यश गाया जा रहा है या नहीं। यह कह कर वे वहाँ से चल दिये।

भूषण सदैव राजाओं की भांति और प्रतिष्ठा पूर्वक रहा करते थे और १७७२ वि० में वैकुण्ठवासी हुए। इनके एक कवित्त का उल्लेख नीचे किया जाता है :—

> इन्द्र जिमि जम्भ पर, बाडव सुग्रम्भ पर,
> रावण सदम्भ पर रघुकुल राज है।
> पौन वारिवाह पर, शम्भु रतिनाह पर,
> त्यों सहस्रबाहु पर राम द्विजराज है॥
> दावा द्रुम दण्ड पर, चीता मृगझुण्ड पर,
> "भूषण" वितुण्ड पर जैसे मृगराज है।
> तेज तम अंश पर, कान्ह जिमि कंस पर,
> त्यों म्लेच्छ वंश पर शेर शिवराज है॥]

[ महाकवि मतिराम जी, भूषण जी के छोटे भाई थे। इनका जन्म १६७४ वि० के लगभग, और शरीरान्त १७७३ वि० में अनुमान किया जाता है। भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ कवियों में से यह भी एक हैं। जैसे भूषण वीर रस के आचार्य थे वैसे मतिराम जी शृङ्गार रस के थे। इनकी कविता का उदाहरण नीचे दिया जाता है :—

> कुन्दन को रँग फीको लगै, झलकै अति अंगनि चारु गोराई।
> आँखिन में अलसानि चितौनि में मञ्जु विलासन की सरसाई॥
> को बिनु मोल बिकात नहीं, मतिराम लहे मुसुकानि मिठाई।
> ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि त्यों त्यों खरी निकरै सी निकाई॥]

२८४ तिलपत—( दिल्ली में कुतुब मीनार से १० मील दक्षिण पूर्व एक बस्ती )

इसका प्राचीन नाम तिलप्रस्थ है, और यह उन पाँच ग्रामों में से है जिन्हें श्रीकृष्ण ने दुर्योधन से पाण्डवों के लिए माँगा था।

२८५ तिलौरा—( देखिए भुइला डीह )

२८६ तीर्थपुरी—( पश्चिमी तिब्बत में कैलास से पश्चिम एक स्थान )

कहा जाता है कि भस्मासुर यहाँ भस्म हुआ था।

तीर्थपुरी सतलज नदी के किनारे है। कुलजू से आधे दिन का रास्ता है। यहाँ एक बहुत गरम गन्धक का सोता है और राख का एक ढेर है जिसको भस्मासुर के जले हुए शरीर की राख का ढेर बताया जाता है।

बिहार प्रान्त के शाहाबाद ज़िला में ससराम के पास एक पहाड़ी में गुप्तेश्वर महादेव के मन्दिर के नाम से एक गुफा है। उसको भी भस्मासुर के भस्म होने का स्थान बताया जाता है।

२८७ तुङ्गनाथ—( देखिए केदार नाथ )

२८८ तुरतुरिया—( देखिए नासिक )

२८९ तुलजापुर—( मध्यप्रदेश में खँडवा से ४ मील पश्चिम एक नगर )

यह ५२ पीठों में से एक है।

शङ्कर दिग्विजय में इसे 'भवानी नगर' और देवीभागवत में तुलजापुर कहा गया है।

श्री शङ्कराचार्य जी यहाँ पधारे थे।

दुर्गा जी ने महिषासुर दैत्य का वध यहां किया था।

स्कन्द पुराण, ७ वाँ अध्याय कहता है कि दुर्गा ने रामेश्वरम् की धर्म पुष्करिणी में महिषासुर को मारा था। वह दुर्गा का घूँसा खा कर यहाँ भाग कर जल में छिप गया था। देवी भागवत पुराण, ७ वाँ अध्याय, ३८ वाँ सर्ग बताता है कि दुर्गा ने महिषासुर को तुलजा भवानी में मारा था। यही ठीक प्रतीत होता है कि वह मारा यहाँ गया था। महा सरस्वती देवी के नाम से दुर्गा का मन्दिर यहाँ विद्यमान है।

२९० तुलसीपुर—( संयुक्त प्रदेश के गोंडा ज़िले में एक क़स्बा )

कुछ लोगों का अनुमान है कि इस स्थान पर प्राचीन मालिनी नगरी थी। यह ५२ पीठों में से एक है। यहाँ सती का दाहिना हाथ गिरा था।

कर्ण को जरासंध ने मालिनी नगरी दी थी जिस पर कर्ण ने दुर्योधन के अधीन राज्य किया था। विक्रमादित्य ने पुराने मठ के स्थान पर पाटेश्वरी देवी का मन्दिर बनवाया। इसके डेढ़ हजार वर्ष बाद रतननाथ ने उस जीर्ण मन्दिर को फिर से बनवाया। पर उसके दो सौ वर्ष पीछे औरङ्गजेब के समय में उसको तोड़ दिया गया लेकिन शीघ्र ही वर्तमान छोटा मन्दिर बन गया।

तुलसीपुर बलरामपुर राज्य के अन्तर्गत है। इस स्थान का पाटेश्वरी देवी का मन्दिर प्रसिद्ध है, इससे इस स्थान को देवी पाटन भी कहते हैं। चैत्र नवरात्र को देवी के दर्शन पूजन का बड़ा मेला होता है जिसमें एक लाख से अधिक आदमी आते हैं। पाटेश्वरी देवी ही के नाम पर बलरामपुर के वर्तमान महाराज सर पाटेश्वरी प्रसाद सिंहजी का नाम भी रक्खा गया है।

(२) विहार प्रान्त के नाथनगर का भी प्राचीन नाम मालिनी या चम्पा मालिनी था। उसे चम्पापुर व चम्पानगर भी कहते थे और यह बहुत प्रसिद्ध स्थान था। ( देखिये नाथ नगर )

२९१ तुसारन विहार—(संयुक्त प्रदेश के प्रतापगढ़ ज़िले में एक स्थान) यहां भगवान बुद्ध ने तीन मास उपदेश दिया था। पूर्व चार बुद्ध भी यहां आये थे।

बौद्ध आचार्य बुद्धदास ने 'महाविभाषा शास्त्र' ग्रन्थ यहां लिखा था।

ह्वानचांग लिखते हैं कि नगर के दक्षिण पूर्व में गंगा जी के तटपर महाराज अशोक का बनवाया हुआ २०० फीट ऊंचा स्तूप था जहां भगवान बुद्ध ने तीन मास तक उपदेश दिया था। उसके समीप एक स्तूप था जिस पर चार पूर्व बुद्धों के सिंहासन बने थे। यहां वे चला फिरा करते थे। इसके पास एक नीले पत्थर का स्तूप था जिसमें भगवान बुद्ध के नख और केश रखे थे। समीप ही एक सङ्घाराम था जिसमें दो सौ भिक्षुक रहते थे। यहां बौद्ध आचार्य बुद्धदास ने इसी स्थान पर 'महाविभाषा शास्त्र' ग्रन्थ लिखा था।

एक समय तुसारन विहार अवध के सबसे बड़े स्थानों में था।

विहार कस्बे के दक्षिण-पूर्व में आध मील लम्बा टीला, गंगा जी की पुरानी धारा के उत्तरीय किनारे पर खड़ा है और तुसारन कहलाता है। यह पुराने स्तूपों और सङ्घाराम का खण्डहर है।

२९२ तेनपुर ( देखिए गोविन्दपुर )

२९३ तेवर—( मध्यप्रदेश के जबलपुर जिला में एक स्थान)

यहां शिव जी ने त्रिपुरा दैत्य को मारा था।

इस स्थान का प्राचीन नाम त्रिपुरा, तिपुरा और चेदि नगरी थे।

चेदि राज्य एक विशाल राज्य था। इसके कई टुकड़े हो गये थे। कुलचूरी वंशीय चेदि राजाओं की राजधानी त्रिपुरा थी। (देखिए चन्देरी) हेमकोश में त्रिपुरा को चेदि नगरी भी लिखा गया है। कहा जाता है कि तारकासुर के तीन पुत्रों ने इस नगर को बसाया था। चेदि नगरी के कुलचूरी वंश ने २४८ ईस्वी में कुलचूरी या चेदि सम्वत् आरम्भ किया था।

जबलपुर से ६ मील पश्चिम नर्मदा तट पर तेवर एक छोटा स्थान है। यहां से आध मील दक्षिण पूर्व त्रिपुरा की तबाहियां हैं। इस स्थान को करन बेल कहते हैं और इसके समीप पुष्करणी एक पवित्र तालाब है।

## द

२९४ दण्ड विहार—(देखिए विहार)

२९५ दर्भशयन—(देखिए रामेश्वर)

२९६ दक्षिण गोकर्ण तीर्थ—(देखिए वैद्यनाथ)

२९७ दिल्ली—(देखिए इन्द्रप्रस्थ)

२९८ दिवर—(गोआ टापू के उत्तर में एक टापू)

इसका प्राचीन नाम दीपवती है।

स्कन्द पुराण वर्णित सप्तऋषियों का स्थापित किया हुआ सप्त कोटेश्वर शिव लिङ्ग यहाँ है।

सप्त कोटेश्वर महादेव का मन्दिर पञ्चगंगा के किनारे पर यहीं स्थित है।

२९९ दुर्वासा आश्रम—(कुल) (देखिए गोलगढ़)

३०० दुबाउर—(देखिए गोलगढ़)

३०१ दूँदिया—(देखिए अम्बर)

३०२ देवकुण्डा—(देखिए बक्सर)

३०३ देवगढ़—(देखिए वैद्यनाथ)

३०४ देवघर—(देखिए वैद्य नाथ)

३०५ देवदारु वन—(देखिये कारों)

३०६ देवपट्टन—(देखिए सोमनाथ पट्टन)

३०७ देवप्रयाग—( संयुक्त प्रान्त के हिमालय पर्वत पर टेहरी राज्य में एक स्थान )

रामचन्द्र जी ने यहाँ निवास किया था और लक्ष्मण जी भी यहाँ पधारे थे।

वशिष्ठ जी ने इस स्थान पर वास किया था।

पौराणिक कथा है कि ब्रह्मा ने यहाँ दश सहस्र और दश सौ वर्ष तक कठिन तप किया था।

इस स्थान का दूसरा प्राचीन नाम ब्रह्मतीर्थ है।

प्रा० क०—( स्कन्द पुराण, केदार खण्ड तीसरा भाग, पहला अध्याय) गंगा द्वार के पूर्व भाग में गंगा और अलकनन्दा के संगम के निकट देव प्रयाग उत्तम तीर्थ है जिस स्थान पर भागीरथी और अलकनन्दा का संगम है, और साक्षात श्री रामचन्द्र जी सीता और लक्ष्मण के साथ निवास करते हैं, उस तीर्थ का महात्म्य कौन वर्णन कर सकता है?

देवप्रयाग में जिस स्थान पर ब्रह्मा जी ने तप किया था वह ब्रह्मकुण्ड प्रसिद्ध हो गया। गंगा के उत्तर तट में शिवतीर्थ है। गंगा के निकट वैताल की शिला के पास वैताल कुन्ड है और उससे थोड़ी दूर पर सूर्य कुन्ड है। गंगा के दक्षिण भाग में ब्रह्म कुन्ड से ऊपर चार हाथ प्रमाण का वशिष्ठ कुन्ड है। वशिष्ठ तीर्थ के ऊपर ८० हाथ के प्रमाण पर वाराह तीर्थ है। सूर्य कुन्ड से एक बाण के अन्तर पर पौष्पमाल तीर्थ है। उससे ६ दण्ड आगे इन्द्रद्युम्न का तपस्थान इन्द्रद्युम्न तीर्थ है। उसके आधे कोस की दूरी पर बिल्व तीर्थ स्थित है, जहाँ महादेव जी सर्वदा निवास करते हैं।

( दूसरा अध्याय ) सतयुग में देवशर्मा नामक प्रसिद्ध मुनि ने देवप्रयाग में विष्णु भगवान का १० सहस्र वर्ष तक पत्ता खाकर और एक हजार वर्ष तक एक पाद से खड़ा रह कर उग्र तप किया, तब विष्णु भगवान ने प्रकट होकर मुनि से वर माँगने को कहा। देवशर्मा बोले कि हमारी निश्चल प्रीति तुम्हारे चरणों में रहे और यह पवित्र क्षेत्र कलियुग में सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाला हो। तुम सर्वदा इस क्षेत्र में निवास करो और जो पुरुष इस क्षेत्र में तुम्हारा पूजन और संगम में स्नान करें उनको परम गति मिले। भगवान ने कहा कि हे मुनि! ऐसा ही होगा। मैं त्रेतायुग में राजा दशरथ का पुत्र राम नाम से विख्यात होकर और कुछ दिनों तक अयोध्या का राज भोग करके इस स्थान पर आऊँगा। तब तक तुम इसी स्थान पर

निवास करो। फिर हमारा दर्शन पाकर तुम परम गति प्राप्त करोगे, तब से इस तीर्थ का नाम तुम्हारे नाम के अनुसार देवप्रयाग होगा। विष्णु भगवान ने त्रेतायुग में राजा दशरथ के घर राम नाम से विख्यात हो रावणादि के वध के पश्चात् आकर देवशर्मा को दर्शन दिया, और कहा कि हे मुनिवर! अब से यह तीर्थ लोक में प्रसिद्ध होगा, तुमको सायुज्य मुक्ति मिलेगी। ऐसा कह रामचन्द्र जी सीता और लक्ष्मण के सहित उस स्थान पर रह गये।

(तीसरा अध्याय) ब्रह्माजी ने सृष्टि के आरम्भ में दश सहस्र और दश सौ वर्ष समाधिनिष्ठ होकर कठिन तप किया। विष्णु भगवान प्रकट हुये और ब्रह्मा जी को वर दिया कि तुमको जगत की सृष्टि करने की सामर्थ्य होगी और इस स्थान का नाम ब्रह्मतीर्थ होगा।

(चौथा अध्याय) ब्रह्मतीर्थ के निकट महामति वशिष्ठ जी ने निवास किया।

(१० वां अध्याय) देवप्रयाग में त्रेता युग में लक्ष्मण के सहित श्री रामचन्द्र जी आये।

(११ वां अध्याय) श्री रामचन्द्र जी ने देव प्रयाग में जाकर विश्वेश्वर शिव की स्थापना की।

व० द०—देव प्रयाग के पास गगा उत्तर से आई हैं और अलकनन्दा पूर्वोत्तर से आकर गगा में मिल गई है। यहाँ रघुनाथ जी का बड़ा मन्दिर है जिसके शिखर पर सुन्दर कलश और छत्र लगे हैं। लोग कहते हैं कि रघुनाथ जी की मूर्ति शङ्कराचार्य जी की स्थापित की हुई है। रघुनाथ जी के मन्दिर से १०० सीढ़ी से अधिक नीचे भागीरथी और अलकनन्दा का सगम है। इस सगम पर अलकनन्दा के निकट वशिष्ठ कुन्ड और गगा के समीप ब्रह्म कुन्ड चट्टान में थे, जो सन् १८६४ ईस्वी की बाढ़ के समय जल के नीचे पड़ गये। बद्रीनाथ के पन्डे देवप्रयाग ही में रहते हैं। देवप्रयाग गढ़-वाल जिले के पाँच प्रयागों में से एक है। अन्य प्रयाग रुद्रप्रयाग, कर्ण प्रयाग, नन्दप्रयाग और विष्णु प्रयाग उससे आगे मिलते हैं।

सगम से उत्तर गगा के किनारा पर वाराह शिला, वैताल शिला, पौष्य माल तीर्थ, इन्द्रद्युम्न, बिल्वतीर्थ, सूर्यतीर्थ और भरत जी का मन्दिर है।

३०८ देववन्द—(सयुक्त प्रान्त के सहारनपुर जिले में एक नगर) इस स्थान का पुराना नाम द्वैतवन है।

स्वयम् न जाकर अपने बड़े पुत्र रामराय जी को भेज दिया। रामराय जी ने अपनी वार्ता से औरङ्गजेब को प्रसन्न कर लिया। एक बार औरङ्गजेब ने पूछा कि आपके ग्रन्थ में यह क्यों लिखा है कि 'मिट्टी मुसलमान की पेड़े पई कुम्हार'! रामराय जी ने औरङ्गजेब को खुश करने के लिए कह दिया कि लेखक ने 'मुसलमान' गलत लिख दिया है, यथार्थ में है—'मिट्टी बेईमान की पेड़े पई कुम्हार'जब यह समाचार गुरु हरिराय जी को मिला तो रामराय से वे इतने नाराज हुए कि लौटने पर उन्होंने उनका मुहं नहीं देखा, और निकाल दिया। रामराय जी एक दून (घाटी) को चले गये। वहां मरने पर उनका देहरा (समाधि) बन गया और इससे वह स्थान 'देहरादून' कहलाने लगा और आज कल संयुक्त प्रदेश के एक प्रसिद्ध जिले का सदर स्थान है।

कार्त्तिक बदी ८ सम्वत् १७१८ वि० को गुरु हरिराय जी ने कीर्त्तिपुर ही में शरीर छोड़ा, और उनके छोटे सुपुत्र श्री हरिकृष्ण जी आठवें गुरु हुये। आपका जन्म श्रावण बदी १०, वि० सं० १७१३ को हुआ था, और गुरुवाई की गद्दी के समय केवल सवा पांच वर्ष की अवस्था थी। उस अवस्था में भी आप बड़े ठाट बाट से गुरुवाई का दरबार करते थे और अपने अनेकों चमत्कार दिखलाए।

गुरु जी के बड़े भाई रामराय ने औरङ्गजेब से शिकायत की कि उसके होते हुए उसके छोटे भाई को गद्दी दी गई है। औरङ्गजेब ने गुरु हरिकृष्ण जी को बुला भेजा, और दिल्ली में गुरु जी कुछ दिन जाकर रहे। वह स्थान अब 'बँगलासाहेब' कहलाता है। वहीं आपको चेचक निकल आई और आप शहर से २-३ मील हट कर यमुना तट पर रहने लगे। वह स्थान अब 'बाला-साहेब' के नाम से प्रसिद्ध है। वहीं चैत्र सुदी चतुर्दशी वि० सं० १७२१ को सात वर्ष आठ महीने छब्बीस दिन की आयु में आप ने शरीर छोड़ा।

देहरा पातालपुरी में गुरुद्वारा है। कीर्तिपुर में गुरु हरिराय के जन्म स्थान पर 'गुरुद्वारा जन्मस्थान' और गुरु हरिकृष्ण के [illegible] के स्थान पर 'गुरुद्वारा हरिमन्दिर साहेब' है। गुरु हरिराय जी के श[illegible] छोड़ने के स्थान पर 'गुरुद्वारा शीशमहल' बना है।

२१५ देहू—(बम्बई प्रान्त के पूना जिले में एक स्थान)

यह स्थान संत तुकाराम जी की जन्मभूमि है और निवास स्थान था।

[सम्वत् १६६५ वि० में देहू में कनकाबाई ने श्री तुकाराम जी को जन्म दिया। समय पाकर इनकी चित्तवृत्ति अखण्ड नाम स्मरण में लीन होने लगी

और भगवत्कृपा से कीर्तन करते समय इनके मुख से अभंग वाणी निकलने लगी। बड़े बड़े विद्वान ब्राह्मण और साधु संत इनकी प्रकाण्ड ज्ञानमयी कविताओं को इनके मुख से स्फुरित होते देख इनके चरणों में नत होने लगे।

छत्रपति शिवाजी महाराज श्री तुकाराम जी को अपना गुरु बनाना चाहते थे पर संत तुकाराम ने उनको गुरु रामदास जी के शरण जाने का उपदेश दिया। शिवा जी महाराज इनकी हरिकथायें बराबर सुना करते थे। सं० १७०६ वि० में श्री संत तुकाराम जी इस लोक से चले गए।]

३१६ दोहथी—( संयुक्त प्रदेश के फैज़ाबाद जिले में एक स्थान )

यहां श्रावण ऋषि का आश्रम था और श्रवण आश्रम कहलाता था।

राजा दशरथ ने ऋषि-पुत्र श्रवणकुमार को यहीं धोखे से मार डाला था जिस पर श्रवण ऋषि ने भी वियोग में प्राण त्याग दिए थे, और दशरथ को शाप दिया था कि वे भी पुत्र वियोग में मरेंगे।

अवध में उन्नाव से २० मील दक्षिण पूर्व एक स्थान शरवन है। उसको भी कहा जाता है कि महाराज दशरथ ने वहां श्रवणकुमार को मारा था, परन्तु दोहथी सही स्थान प्रतीत होता है।

३१७ द्रोणगिरि—( देखिए सँदप्पा )

३१८ द्वारिका—( काठियावाड़ प्रदेश में बड़ौदा राज्य में एक स्थान )

भगवान कृष्ण ने इस स्थान को अपनी राजधानी बनाया था।

दुर्वासा ऋषि यहाँ आया करते थे।

प्राचीन सप्त पुरियों में से यह एक पुरी है।

मीराबाई द्वारिका में रणछोड़ जी में लीन हो गईं।

इस स्थान के नाम कुशास्थली व द्वारावती भी हैं।

श्री नेमनाथ जी ( बाईसवें तीर्थङ्कर ) के यहां गर्भ और जन्म कल्याणक हुए थे।

श्री शङ्कराचार्य्य जी का स्थापित किया हुआ यहां 'शारदा मठ' है।

प्रा० क०—(*महाभारत-सभापर्व १४ वां अध्याय*) मगध देश का राजा जरासन्ध अपने प्रताप से सम्पूर्ण पृथिवी को अपने अधिकार में कर पृथिवीनाथ बन गया। पृथिवी के बहुत से राजे उसके भय से उसके सहायक बन गए और बहुतेरे अपने देश को छोड़ कर भाग गए। अस्ति और प्राप्ति नामक जरासन्ध की दो पुत्री कंस से ब्याही थीं। जब कृष्ण ने कंस को मारा तब

द्वारिका के सब मन्दिरों में प्रधान और सबसे बड़ा और सुन्दर है। यह मन्दिर सात मंजिला और शिखरदार है, ४० फीट लम्बा और उतना ही चौड़ा तथा लगभग १४० फीट उंचा है। ऊपर की मंजिलों में जाने के लिये भीतर सीढ़ियां बनी है। मन्दिर की दीवार दोहरी है। दोनों दीवारों के बीच में परिक्रमा करने की जगह है। मन्दिर के भीतर चांदी के पत्तरों से भूषित किये हुये सिंहासन पर रणछोड़ जी की, जिनको द्वारिकाधीश भी कहते हैं, ३ फीट ऊंची श्यामल चतुर्भुज मूर्ति है। मूर्ति के अङ्ग में बहुमूल्य वस्त्र, गले में सोने की अनेक भांति की ११ मालायें, और सिर पर सुन्दर सुनहरा मुकुट है। मन्दिर की फर्श में श्वेत तथा नील सङ्गमरमर के टुकड़े जड़े हुये हैं, द्वार के चौखटों पर चांदी के पत्तर लगे हैं और छत से सुन्दर झाड़ लटकते हैं।

रणछोड़ जी के मन्दिर से दक्षिण त्रिविक्रम जी का शिखरदार मन्दिर है। पश्चिम में कुशेश्वर महादेव का मन्दिर है। पण्डे लोग कहते हैं कि जब कुश नामक दैत्य द्वारिका के लोगों को क्लेश देने लगा तब दुर्वासा ऋषि त्रिविक्रम भगवान को राजा बलि से मांग लाये। जब कुश दैत्य किसी भांति से नहीं मरा तब त्रिविक्रम जी ने उसको भूमि में गाड़ कर उसके ऊपर शिवलिङ्ग स्थापित कर दिया जो कुशेश्वर नाम से प्रसिद्ध हुआ। उस समय कुश ने कहा कि जो द्वारिका के यात्री कुशेश्वर की पूजन करें उनकी यात्रा का आधा फल मुझको मिले तब मैं इसके भीतर स्थिर रहूँगा। त्रिविक्रम जी ने कुश को यह वर दे दिया। कुश भूमि में स्थित हो गया।

रणछोड़ जी के भण्डार से दक्षिण सुप्रसिद्ध शारदामठ है। रणछोड़ जी के मन्दिर से नगर की परिक्रमा की यात्रा आरम्भ होती है। रास्ते में कैलास कुण्ड नामक एक छोटा पोखरा मिलता है। पोखरे के चारों बगलों में पत्थर की सीढ़िया बनी हैं। उसमें गुलाबी रङ्ग का पानी है। वहां के पण्डे कहते हैं कि राजा नृग गिरगिट होकर इसी कुण्ड में रहते थे और इसी स्थान पर उनका उद्धार हुआ था।

३१९ द्वितवरकूट—(देखिए सम्मेद शिखर)

## ध

३२० धनुष्कोटि--(देखिए रामेश्वर)

३२१ धनुषा---(देखिए सीतामढ़ी)

३२२ धरणीकोटा---(मद्रास प्रान्त के कृष्णा जिला मे एक स्थान)

बौद्ध महात्मा भावविवेक भगवान मैत्रेय बुद्ध की प्रतीक्षा में यहां रहे थे।

इस स्थान का प्राचीन नाम सुधन्य कटक है।

३२३ धवलकूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

३२४ धाड़ —( मध्यभारत के मालवा प्रदेश में एक राज्य )

धाड़ के प्राचीन नाम धारापुर और धारानगर हैं।

राजा भोज ने अपनी राजधानी धारापुर में नियत की थी।

धारा नगरी में भोज के समय विद्या की बड़ी उन्नति हुई। भोज ने अढ़ाई दिन का झोपड़ा नामक प्रसिद्ध विद्यालय यहीं स्थापित किया था। धाड़ इस समय एक रियासत की राजधानी है।

३२५ धाम —( भारतवर्ष में चार धाम हैं )

उत्तर में—बद्रिकाश्रम ( बद्रीनाथ ): दक्षिण में— रामेश्वर : पूर्व में— जगन्नाथपुरी : पश्चिम में— द्वारिकापुरी।

३२६ धोपाप—( संयुक्त प्रान्त के सुलतानपुर जिले में एक स्थान )

इस स्थान का प्राचीन नाम धूतपाप है।

श्री रामचन्द्र जी ने यहीं पर नदी में स्नान करके रावण-वध का प्रायश्चित्त किया था।

धोपाप गोमती नदी के किनारे पर बसा है। ( रावण-वध के प्रायश्चित के लिए रामचन्द्र जी ने हत्याहरण नामक स्थान पर भी स्नान किया था। हत्याहरण जिला सीतापुर में गोमती नदी के तट पर है। उन्होंने मुङ्गेर में गङ्गा जी में भी इस प्रायश्चित्त के लिए स्नान किया था। )

३२७ धोसी—( देखिए चौसा )

## न

३२८ नगर —( जयपुर राज्य में एक स्थान )

यह राजा मुचुकुन्द की राजधानी थी।

श्रीकृष्ण चन्द्र पर मथुरा में कालयमन ने चढ़ाई की। ये वहां से भाग कर मुचुकुन्द जिस गुफा ( मुचुकुन्द गुफा ) में सो रहे थे वहां बचने आए। मुचुकुन्द ने कालयमन को मार डाला। उसके बाद कृष्ण ने द्वारिका बसा कर वहां वास किया था।

अब भी नदिया में संस्कृत की अनेक पाठशालाएँ हैं जिनमें दूर दूर से विद्यार्थी आकर विद्या पढ़ते हैं। विद्यानगर में एक मन्दिर में चैतन्य महा प्रभु की मूर्ति है।

३३४ नन्द प्रयाग—( हिमालय पर्वत के गढवाल प्रान्त में एक स्थान )
यहाँ नन्द नामक धर्मात्मा राजा ने यज्ञ किया था।
यह गढवाल प्रदेश के पंच प्रयागों में से एक है।

( स्कन्द पुराण, केदार खण्ड प्रथम भाग, ५७ वाँ ५८ वाँ अध्याय ) नन्द गिरि ( नन्द प्रयाग ) तक पूर्ण क्षेत्र है। जो मनुष्य नन्द प्रयाग में स्नान करके नारायण की पूजा करता है उसको सब पदार्थ मिल जाते हैं। पूर्व काल में उस स्थान पर नन्द नामक धर्मात्मा राजा ने विधि पूर्वक यज्ञ किया था। उस स्थान पर नन्दा और अलकनन्दा के संगम में स्नान करने से मनुष्य शुद्ध हो जाता है।

नन्द प्रयाग की बस्ती अलकनन्दा के ऊपर कंडासु गाँव के समीप बसी है। बस्ती से आध मील नीचे ननवानी नदी, जिसको नन्दा भी कहते हैं, अलकनन्दा में मिली है।

३३५ नन्दि ग्राम—( देखिए अयोध्या )

३३६ नरवार—( ग्वालियर राज्य में मालवा में एक नगर )
यहा राजा नल की राजधानी थी और नलपुर कहलाती थी।
इसका प्राचीन नाम पद्मावती था और वह निषध देश की राजधानी थी।
पद्मावती में महाकवि भवभूति का जन्म हुआ था।
पुराणों के नौ नागों का यही राज्य था।
पद्मावती का वर्णन विष्णु पुराण और दूसरे पुराणों में आया है।
महाकवि भवभूति के मालती-माधव नाटक का भी यही क्षेत्र है।
यहाँ का गढ, राजा नल ने बनवाया था और वह मुसलमानों के समय तक बहुत प्रतिष्ठित माना जाता था।

भवभूति ने इस नगर की बडी बड़ाई लिखी है। सिकन्दर लोदी ने १५०८ ईस्वी में इसे बहुत कुछ नष्ट कर डाला। उससे पहिले यहाँ ग्वालियर के बराबर देव मन्दिर व मूर्तियाँ थीं।

पद्मावती में आठवीं शताब्दी में प्रसिद्ध विद्यालय था।

[ राजा नल धर्मात्मा और प्रजापालक नरपति थे। विदर्भ देश के महाराज ( देखिए बीदर ) ने अपनी पुत्री दमयन्ती का स्वयम्वर किया,

उसमें दमयन्ती ने जो उन दिनों भूमण्डल की राजकुमारियों में सबसे रूपवती मानी जाती थी, राजा नल को जयमाल पहिनाई।

एक बार राजा नल ने अपने भाई से जूआ खेला और उसमें अपना सारा राजपाट हार गये। भाई ने एक वस्त्र देकर नल और दमयन्ती दोनों को निकाल दिया। ये लोग जङ्गल में विचरते फिरे। नल ने एक समय एक पक्षी के पकड़ने को अपना वस्त्र उस पर फेंका। वह पक्षी वस्त्र सहित उड़ गया, और नल नग्न रह गये। दमयन्ती उस समय सो रही थीं। नल ने उनका आधा वस्त्र फाड़ कर आप ले लिया और उनको सोता हुआ अकेला छोड़ कर चल दिये। जाग कर दमयन्ती यह दशा देख बहुत घबड़ाई पर कठिनाइयाँ झेलती हुई किसी प्रकार अपने पिता के यहाँ तक पहुँच गई। नल की सर्वत्र खोज कराई गई परन्तु पता न चला।

दमयन्ती का दूसरा स्वयम्वर रचा जाने लगा। अयोध्यापति ऋतुपर्ण भी उसमें पधारे। राजा नल अद्वितीय सारथि थे, और अयोध्यापति के यहाँ इसी काम पर चाकरी कर ली थी। महाराज ऋतुपर्ण को वे रथ पर अयोध्या से विदर्भ देश लाये थे। दमयन्ती ने उन्हें पहिचाना और पति पत्नी पुन मिल गये।

महाराज ऋतुपर्ण ने नल को द्यूत विद्या (जूआ का खेल) सिखाया, और उसे सीख कर राजा नल फिर अपने भाई से जूआ खेलने गये, और अपना सारा राजपाट जीतकर फिर राजा हुए।]

३३७ नरसी ब्राह्मणी—( देखिए पण्ढरपुर )

३३८ नवल—( संयुक्त प्रान्त में कन्नौज से १६ मील दक्षिण पूर्व एक कस्बा )

इसके प्राचीन नाम नवदेव कुल व अलावि हैं।

भगवान बुद्ध ने १६ वा चर्तुमास यहाँ व्यतीत किया था।

महावीर स्वामी ने जैन धर्म के प्रचार को यहीं से उपदेशकों को भेजा था।

नवल गंगा तट पर बसा है और बँगरामऊ के समीप है।

३३९ नागार्जुनी पर्वत—( बिहार प्रान्त में गया से १६ मील उत्तर एक पहाड़ी )

इस पहाडी की नागार्जुनी गुफा में बौद्ध महात्मा नागार्जुन का निवास स्थान था।

पास की एक पहाड़ी में जिसे लोमश गिरि कहते हैं लोमश गुफा है जहाँ ऋषि लोमश ने वास किया था।

[ महात्मा नागार्जुन पश्चिम के निवासी थे और मगध में शिक्षा प्राप्त करने आये थे। पीछे इनकी और महाराज मिलिन्द की सुप्रसिद्ध वार्ता सांगल में हुई थी। ]

नागार्जुनी गुफा, लोमश गुफा और कई गुफायें इन छोटी पहाड़ियों में पहाड़ काट कर बनाई गई हैं। रास्ता होकर जाने से यह गुफायें गया से १६ मील पर हैं। वैसे सीधे १६ मील उत्तर में हैं।

मौखरी वंश की एक शाखा का अधिकार गया और उसके आसपास के प्रदेश में ई० पांचवीं छठी शताब्दी में था। नागार्जुनी पहाड़ी की गुफा से दो लेख मिले हैं, जिनमें इस शाखा के तीन शासकों यश वर्मा, शार्दूल वर्मा और अनन्त वर्मा का पता चलता है।

नागार्जुनी गुफा में एक बहुत सुन्दर अर्धनारीश्वर की मूर्ति है।

२४० नागेश—( हैदराबाद राज्य में अवढ़ा बस्ती में एक मन्दिर )

नागेश शिवलिङ्ग शिव के १२ ज्योतिर्लिङ्गों में से एक है।

प्रा० क०—( शिवपुराण -ज्ञान संहिता ३८ वां अध्याय ) शिव के १२ ज्योतिर्लिङ्गों में से नागेश लिङ्ग दारुका वन में स्थित है।

( ज्ञान संहिता, ५६ वां अध्याय ) चारों ओर से १६ योजन विस्तीर्ण, दारुका नामक राक्षसी का वन था। उसमें वह अपने पति दारुक सहित रहती थी। यह दोनों वहाँ के लोगों को कष्ट देते थे। इस पर वे लोग दुखी होकर और्व ऋषि की शरण में गये और उन्होंने शाप दिया कि यदि राक्षस लोग प्राणियों को दुख देंगे तो प्राण रहित होंगे। देवता लोग राक्षसों से युद्ध की तय्यारी करने लगे। दारुका को पार्वती का वरदान था कि वह जहाँ जाने की इच्छा करे वहीं दारुका का वन, पृथिवी, वृक्ष, महल और सब सामग्री सहित चला जावे। दारुका ने इस वरदान के प्रभाव से स्वगण सहित अपने वन को पश्चिम के समुद्र में स्थापित किया। राक्षस लोग स्थल पर न आते थे, परन्तु जो मनुष्य नौका से समुद्र में जाते थे उन्हें पकड़ ले जाते थे और दण्ड देते थे। एक बार इसी प्रकार एक वैश्य के आधीन बहुत से लोग नौकाओं में गये थे और उन सबको राक्षसों ने कारागार में बन्द कर दिया। वैश्य बड़ा शिव भक्त था और बिना शिव का पूजन किये भोजन नहीं करता था। कारागार में बन्द हुये उन को ६ मास व्यतीत हो गये। राक्षसों

ने एक दिन शिव जी का सुन्दर रूप वैश्य के सामने देख कर अपने राजा से सब समाचार कह सुनाया। राजा ने आकर वैश्य को मारने की आज्ञा दी। भयभीत होकर वैश्य ने शङ्कर को स्मरण किया। शिव जी अपने ज्योतिर्लिङ्ग और अपने सब परिवार के सहित प्रकट हुये। शिव जी ने वहाँ के राक्षसों को नष्ट भ्रष्ट कर डाला और वैश्य को वर दिया कि उस वन में अपने धर्म के सहित विद्यमान रहेंगे। दारुका ने पार्वती से अपने वंश की रक्षा के निमित्त प्रार्थना की। पार्वती जी के कहने से शिव जी ने स्वीकार किया कि कुछ काल तक दारुका वहाँ रह कर राज करे, और पार्वती का वचन स्वीकार कर के कहा कि मैं इस वन में निवास करूंगा। जो पुरुष अपने वर्णाश्रम में स्थित रह कर यहाँ मेरा दर्शन करेगा वह चक्रवर्ती होगा। ऐसा कह कर पार्वती जी सहित महादेव जी नागेश नाम से वहां स्थित हो गये।

*व० द०—अवढा बस्ती में अवढानागनाथ अर्थात नागेश, का शिखर* दार बड़ा मन्दिर है। मंदिर के पश्चिम और जगमोहन है। मन्दिर और जगमोहन दानों खाली हैं। मन्दिर के भीतर एक बगल में एक बहुत छोटी कोठरी में चार सीढियों के नीचे एक हाथ ऊँचा नागेश शिवलिङ्ग है। यात्री गण सीढी से दर्शन करते हैं। कोठरी में दिनरात दीप जलता है।

३४१ नागोर—( उडीसा प्रान्त के सथाल परगना में एक स्थान )

यहाँ वक्र मुनि का स्थान था।

नागोर में गढी का एक हाता बना है। हरिहरपुर परगना पूरा इस हाते के अन्दर घिरा है। ताँतीपारा गाँव के पास बकेश्वर तीर्थ स्थान है। एक बहुत बडे और पुराने मन्दिर में बकेश्वर शिव लिङ्ग है जिसे कहा जाता है कि वक्र मुनि ने स्थापित किया था। मन्दिर के पास एक पक्का कुन्ड है जिस में यात्री स्नान करते हैं। कहा जाता है कि इससे उनके पाप धुल जाते हैं। बडे मन्दिर के अतिरिक्त और बहुत मन्दिर और गरम व ठन्डे पानी के कुन्ड यहाँ हैं।

३४२ नाटक कूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

३४३ नाथद्वारा—( राजपूताने के मेवाड राज्य मे एक कस्बा )

यह वल्लभ सम्प्रदाय के वैष्णवों का मुख्य तीर्थ स्थान है।

श्री नाथ जी का प्रसिद्ध मन्दिर यहाँ है।

[ श्री वल्लभाचार्य जी के माता पिता श्री इलम्मा व लक्ष्मण भट्ट जी तैलङ्ग देश के रहने वाले तैलङ्ग ब्राह्मण थे। उनके काशी यात्रा के समय

बिहार प्रदेश के चम्पारण्य (चम्पारन) जिले में चौरा गाँव के निकट सम्वत १५३५ वि० में वल्लभाचार्य जी का जन्म हुआ। बहुत से महानुभाव इन्हें अग्नि का अवतार मानते हैं। इन्होंने काशी में विद्याध्ययन किया और सम्वत् १५४८ में दिग्विजय को निकले। पंढरपुर, त्र्यम्बक, उज्जैन, ब्रज, अयोध्या, नैमिषारण्य, काशी, जगन्नाथ और दक्षिण फिर कर सम्वत् १५५४ में इन्होंने पहला दिग्विजय समाप्त किया। श्री वल्लभाचार्य ने तीन बार पर्यटन करके सारे भारत में वैष्णव मत फैलाकर सम्वत् १५८७ वि० में, काशी में शरीर त्याग किया।

श्री वल्लभ के परम धाम पधारने के विषय में एक घटना प्रसिद्ध है। वे एक दिन हनुमान घाट पर गङ्गा स्नान को गये। जहाँ खड़े होकर वे स्नान करते थे वहाँ से एक उज्वल ज्योति शिखा उठी और बहुत से आदमियों के सामने श्री वल्लभ सदेह ऊपर उठने लगे और आकाश में लीन हो गये।]

श्री वल्लभाचार्य जी को उस सम्प्रदाय वाले श्री कृष्णचन्द्र का अवतार मानते हैं और देवताओं के समान पूजा करते हैं।

श्री अभयङ्कर शास्त्री, स्वामी वल्लभाचार्य जी का जन्म स्थान चम्पारण्य, जिला रायपुर मध्यप्रान्त, में बतलाते हैं पर भन्डारकर और अन्य विद्वान चम्पारण्य, बिहार, मानते हैं, और यही ठीक जान पड़ता है।

श्रीनाथ जी की मूर्ति पहिले ब्रज के गोकुल में थी। लगभग सन् १६७१ ईस्वी में जब औरङ्गजेब ने श्री नाथ जी के मन्दिर के तोड़ने की इच्छा की तब वल्लभाचार्य सम्प्रदाय के स्वामी इस मूर्ति को लेकर मेवाड़ चले गये और श्रीनाथद्वारा में उसकी स्थापना की।

श्री नाथ जी का मन्दिर वल्लभाचार्य गोस्वामियों के अधिकार में है। कार्तिक शुक्ल १ को यहाँ के अन्नकूट की तय्यारी देखने योग्य होती है। इस मन्दिर के लिए भारतवर्ष के सब भागों से वल्लभाचारी व्यापारी बहुत धन भेजते हैं।

२४८ नाथ नगर—( बिहार प्रान्त के भागलपुर जिला में एक कस्बा)

इस स्थान का प्राचीन नाम चम्पापुर तथा चम्पा नगर था।

चम्पा नगर का प्राचीन नाम मालिनी या चम्पा मालिनी भी था। यह अङ्ग देश की राजधानी थी। महाराज दशरथ के बहनोई रोमपाद यहीं के शासक थे।

महाभारत के समय यह देश कर्ण के अधिकार में था और चम्पा उनकी राजधानी थी।

चम्पा में ही विरज जिन पैदा हुये थे, जिन्होंने लङ्कावतार सूत्र की रचना की।

पालकाप्य मुनि का भी यही जन्म स्थान है, जिन्होंने हस्तायुर्वेद की रचना की है।

चम्पा के निवासी सोन कोलविस ने 'थेरीगाथा' लिखी थी।

जैनों के तीर्थङ्कर महावीर स्वामी ने यहाँ तीन चतुर्मास वास किया था।

स्वायमुन ने यहाँ 'दशवैकालिक सूत्र' की रचना की थी।

यहाँ श्री वास पूज्य स्वामी (बारहवें तीर्थङ्कर) के चार कल्याणक, गर्भ, जन्म, दीक्षा और कैवल्य ज्ञान हुए थे।

प्रा० च०—[श्री वास पूज्य स्वामी बारहवें तीर्थङ्कर, की माता का नाम विजया और पिता का नाम वासुपूज्य था। आप के गर्भ, जन्म, दीक्षा व कैवल्य ज्ञान कल्याणक चम्पापुरी (नाथ नगर) में हुये, और निर्वाण मन्दार पर्वत पर हुआ था। आपका चिन्ह भैंसा है।]

बिंबिसार की मृत्यु के बाद अजातशत्रु ने चम्पा को अपनी राजधानी बनाया, परन्तु उसके पुत्र उदायी ने फिर पाटलीपुत्र (पटना) में राजधानी स्थापित की।

दशकुमार चरित से ज्ञात होता है कि चंपा में दण्डिन (दश कुमार चरित के रचयिता) के समय में बहुत से धूर्त रहते थे।

बुद्ध भगवान के समय चंपा भारत की ६ बड़ी नगरियों में से था। अन्य नगरियाँ राजगृह, श्रावस्ती, अयोध्या, कौशाम्बी तथा काशी थीं।

व० द०—नाथ नगर में दो बड़े जैन मन्दिर व धर्मशाला हैं और भादों सुदी ११ से १५ तक मेला रहता है। चम्पापुरी, जो मुख्य स्थान है, नाथ नगर स्टेशन से एक मील व भागलपुर से ३ मील पर है।

संयुक्त प्रान्त के जिला गोंडा के तुलसीपुर का भी प्राचीन नाम मालिनी बताया जाता है।

३४५ नानकाना साहेब—(पाकिस्तानी पंजाब प्रान्त के जिला लाहौर में एक सिक्ख तीर्थ स्थान)

यहाँ गुरु नानक देव का जन्म हुआ था।

उदासीन सम्प्रदाय के प्रवर्तक श्री श्रीचन्द्र जी का भी यह जन्म स्थान है।

[गुरु नानक देव जी ने जिन्होंने सिक्ख धर्म की स्थापना की है, वैशाख सुदी ३ सम्वत् १५२६ वि० ( १५ अप्रैल १४६६ ई० ) में खत्री कुल के वेदी कालचन्द पटवारी के घर श्रीमती तृप्ता जी के उदर से यहाँ जन्म लिया था। इस स्थान का असल नाम राइभोई की तलवराडी अथवा तलवराडी था, पर गुरु नानक देव जी के नाम से अब नानकाना साहेब कहलाता है। द्वेष, ईर्षा, वैर, विरोध की प्रचण्ड आग से जलती हुई सृष्टि की अग्नि बुझाने को आपने सं० १५५४ वि० में देशाटन आरम्भ कर दिया। आपकी चार यात्रायें प्रसिद्ध हैं :—

(१) एमनाबाद, हरद्वार, दिल्ली, काशी, गया, जगन्नाथपुरी आदि।
(२) आबू पर्वत, सेतुबन्ध रामेश्वर, सिंहल द्वीप आदि।
(३) कश्मीर, गढ़वाल, हेमकूट, गोरखपुर, सिक्किम, भूटान, तिब्बत आदि
(४) बिलोचिस्तान, ईरान, काबुल, कन्धार, बग़दाद, मक्का आदि।

मक्का पहुंच कर गुरु जी काबा की ओर पैर करके सो गये। जब क़ाज़ी क्रुद्ध हुआ तो आपने कहा कि जिधर अल्लाह का घर न हो उधर मेरे पैर कर दीजिये। उसने जिधर पैर घुमाये उधर ही उसे काबा देख पड़ा।

वि० सं० १५७६ में पच्चीस वर्ष भ्रमण करने के बाद गुरु जी कर्तारपुर में, जिसे उन्होंने स० १५६१ वि० में स्वयम् आबाद किया था, रहने लगे। सं० १५४४ में आप का विवाह मूलचन्द जी की सुपुत्री सुलक्षणी देवी से हुआ था जिनसे आप के दो पुत्र श्री श्रीचन्द और बाबा लक्ष्मीदास उत्पन्न हुये थे, पर गुरु जी ने अपनी गद्दी अपने एक योग्य शिष्य श्री अङ्गद जी को दी और आसोज सुदी १० सं० १५९६ वि० ( २२ सितम्बर सन् १५३९ ई० ) को परलोक गमन किया। अन्तिम संस्कार करने के लिये सिख हिन्दू मुसलमानों में परस्पर विवाद हुआ। अन्त में जब गुरु जी का वस्त्र उठाया गया तब वहां गुरु जी का शरीर नहीं मिला, इसलिये आधा वस्त्र लेकर मुसलमानों ने क़ब्र बनाई और आधा वस्त्र हिन्दू सिखों ने लेकर संस्कार किया।]

[श्री श्रीचन्द्र जी गुरु नानक के प्रथम पुत्र थे और इनका जन्म भाद्रपद शुक्ल ९, सं० १५५६ में हुआ था। आप विद्याध्ययन को कश्मीर भेज दिये गये और अल्प काल में वेदों का अध्ययन कर लिया। जब पर्योढ़ता का

समय देखा तब आप भारत भ्रमण के लिये निकल पड़े। उत्तर भारत से दक्षिण भारत के प्राय. सब तीर्थों का आपने परिभ्रमण किया और आपके उपदेशों ने धार्मिक जगत में एक नवीन जाग्रति फैला दी। फिर कश्मीर जा कर आपने वेद भाष्यों की रचना की। आप उदासीन सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं और उसके द्वारा सनातन धर्म की दिग्विजय कराते हुये आप १५० वर्ष इस धरा धाम पर विद्यमान रहे, और जब आप के निर्वाण का समय आया तब चम्बा की पार्वत्य गुफाओं में जाकर तिरोहित हो गये।]

नानकाना साहेब के समीप 'गुरुद्वारा क्यारा साहेब' हैं। यहा गुरु नानक देव ने बचपन में गायें भैंसें चराई थीं। कुछ खेत गायें भैंसें चर गई। इसकी शिकायत हाकिम से की गई। पर जब गुरुनानक ने हाकिम को खेत दिखलाये तो सब खेत हरे भरे मिले।

'गुरुद्वारा माल साहेब' भी नानकाना साहेब मे है। यहा गुरु नानक गायें भैंसें चराते हुये बचपन में सो गये थे। मुह पर धूप आने लगी तो एक नाग फन बाढ कर मुह पर छाया कर के बैठ गया। यहा के जमींदार रायबोलार ने देखा कि किसी आदमी को सांप ने डक लिया है। जब वे पास आये तो साप वहा से हट गया।

नानकाना साहिब में बड़ा भारी गुरुद्वारा है जिसकी सालाना आमदनी क़रीब ख्वा लाख रुपये है।

**३४६ नान्नुर**— ( देखिए कातवा )

**३४७ नारायणसर**—(बम्बई प्रान्त के कच्छ नामक राज्य में एक बस्ती )

पौराणिक कथा है कि चन्द्रमा ने यहा तप किया था।

दक्ष प्रजापति के पुत्रों ने यहा तपस्या की थी।

प्रा० क०—( श्रीमद्भागवत, छठा स्कन्ध, ५ वा अध्याय ) दक्ष प्रजापति ने १० पुत्र उत्पन्न कर के उनको सृष्टि करने की आज्ञा दी। वे सब पश्चिम दिशा के नारायण सर नामक पुण्यदायक तीर्थ में, जहां सिन्धु नदी समुद्र में मिली है, जाकर सृष्टि उत्पत्ति की कामना से कठोर तप करने लगे। किंतु जब नारद जी ने वहा जाकर उनको शम का उपदेश दिया तब उन लोगो ने सृष्टि की कामना की इच्छा को छोड कर जिस मार्ग से फिर लौटना नहीं होता, उस मार्ग को ग्रहण किया। यह समाचार सुन कर दक्ष ने एक सहस्र पुत्र उत्पन्न कर के उनको प्रजा उत्पन्न करने की आज्ञा दी। वे लोग भी

नारायण सरोवर पर गये और उसके पवित्र जल के स्पर्श से विशुद्ध चित होकर सृष्टि की कामना से तप करने लगे। फिर नारद जी ने वहां जाकर उनको ज्ञान उपदेश देकर विरक्त कर दिया। वे लोग भी अपने भ्राताओं के मार्ग में चले गये।

( ब्रह्मवैवर्त पुराण, कृष्ण जन्म खण्ड, १२२ वां अध्याय ) चन्द्रमा ने देव गुरुवृहस्पति की स्त्री तारा को भादों सुदी ४ को हरण किया और भादों वदी ४ को छोड़ दिया। वृहस्पति ने तारा को ग्रहण कर लिया। उस समय तारा ने चन्द्रमा को शाप दिया कि जो मनुष्य तुम्हारा दर्शन करेगा वह कलकी और पापी होगा। तब चन्द्रमा ने नारायण सरोवर में जाकर नारायण की आराधना की। नारायण ने प्रसन्न हो कर चन्द्रमा से कहा कि हे चन्द्र! तुम सर्वदा कलकी नहीं रहोगे। जो मनुष्य भादों सुदी ४ को तुमको देखेगा वही कलकी होगा।

व० द०—नारायण सरोवर में आदिनारायण, लक्ष्मी नारायण और गोवर्द्धन नाथ जी के मन्दिर हैं। यहां बहुतेरे यात्री अपनी छाती पर छाप लेते हैं।

नारायण सर से १ मील दूर कोटेश्वर महादेव और नीलकण्ठ महादेव हैं। यहां बहुतेरे यात्री अपनी दाहिनी बाँह पर छापलेते हैं।

३४८ नालन्दा—( देखिए बड़गावा )

३४९ नासिक—( बम्बई प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान )

इस स्थान का पुराना नाम सुगन्धा है।

नासिक में गोदावरी के बायें किनारे का हिस्सा प्राचीन पचवटी है।

चित्रकूट से चलकर श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण और जानकी ने सीताहरण के समय तक यहां निवास किया था।

रावण ने सीता जी का हरण इसी स्थान से किया था। यहां गोदावरी में रामकुण्ड नामक स्थान पर रामचन्द्र जी ने दशरथ जी का पिण्ड दिया था।

नासिक से दो मील दूर गोदावरी नदी के बायें किनारे पर गौतम ऋषि का तपोवन है।

नासिक से कुछ मील दक्षिण और जटायु की मृत्यु का स्थान है।

नासिक से कई मील पूर्व अकोल्हा नामक गांव में अगस्त्य मुनि और सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम के स्थान हैं। यहीं पर अमृतवाहिनी नदी तीर्थ

है। *अगस्त्य का आश्रम आजकल अगस्त्याश्रम या अगस्त्यपुरी* कहलाता है।

अकोल्हा से कुछ मील पश्चिम साई खेडा नामक गाव मे मारीच के मारे जाने का स्थान है।

नासिक में रावण की बहन शूर्पणखा की नाक काटी गई थी।

नासिक ५२ पीठों मे से एक है जहा सती की 'नासिका' (नाक) गिरी थी।

श्री समर्थ गुरु रामदास ने नासिक में तप करके रामचन्द्र जी के दर्शन पाये थे।

प्रा० क०—( महाभारत, वनपर्व, ८३ वां अध्याय ) पचवटी तीर्थ मे जाने से बड़ा फल होता है और स्वर्ग मिलता है।

( वाल्मीकीय रामायण, अरण्य काण्ड, १३ वां सर्ग ) रामचन्द्र जी ने अगस्त्य मुनि के आश्रम पर जाकर उनसे अपने रहने का स्थान पूछा। मुनि बोले कि हे राघव! यहा से एक योजन पर गोदावरी नदी के समीप पचवटी नाम से विख्यात एकान्त, पवित्र तथा रमणीय देश है, तुम वहा जाकर आश्रम बना कर रहो। राम और लक्ष्मण अगस्त्य मुनि से विदा हो ऋषि के कहे हुये मार्ग से पचवटी को पधारे।

( १४ वा सर्ग ) रास्ते म जटायु गृद्ध से भेंट हुई।

( *१५ वा सर्ग* ) *रामचन्द्र जी पचवटी पहुँच कर लक्ष्मण से बोले कि* देखो यह गोदावरी नदी, जो अति दूर भी नहीं है, देख पडती है। लक्ष्मण जी ने मिट्टी के अनेक स्थान और बास के खभा, वृक्ष की शाखाओं की टट्टियों की दीवारों और पत्तों के छप्पर से मनोहर पर्णकुटी बनाई। उसमें वे लोग निवास करने लगे।

( १७ वा सर्ग ) एक समय रावण की बहन शूर्पणखा नामक राक्षसी वहां आई। वह रामचन्द्र जी की सुन्दरता देख काम से मोहित हो गई। वह उनके *पास जाकर बोली कि हे राम! तुम अपनी पत्नी को अङ्गीकार कर मुझे नहीं* मानते हो, मैं अभी इस मानुषी को भक्षण कर जाऊँगी। ऐसा कह वह सीता पर झपटी। रामचन्द्र उस को रोक कर लक्ष्मण से बोले कि इस राक्षसी को कुरूप करो। लक्ष्मण जी ने क्रोध कर खड्ग निकाल शूर्पणखा के नाक कान काट लिये।

( ४७—५४ वां सर्ग ) रावण सन्यासी का वेष धारण कर सीता जी के पास पहुँचा। सीताजी ने उसका अतिथिसत्कार किया। रावण बोला कि मैं राक्षसों का राजा रावण हूँ। तुम मेरी पटरानी बनो। ऐसा कह रावण सन्यासी वेष छोड़ अपने रूप को धारण कर सीता को रथ में बैठा कर चल दिया। रास्ते में सीता जटायु को वृक्ष पर बैठे हुए देखकर बोली कि हे जटायु! देखो यह पापी रावण मुझको अनाथ के समान हर ले जा रहा है। ऐसा सुन जटायु रावण से युद्ध करने लगा। अन्त में जटायु पङ्ख रहित हो भूमिपर गिर पड़ा। उसकी थोड़ी सांस रह गई। रावण सीता को ले लङ्का पहुँचा।

[ प्रजापति कश्यप की विनीता नामक स्त्री से गरुण और अरुण नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। अरुण के दो पुत्र हुए, एक सम्पाति दूसरे जटायु यह दोनों समस्त गृद्धों के राजा थे। जटायु पंचवटी के पास रहने लगे। रावण जब सीता जी को हर ले जाने लगा, तब जटायु सीता जी का विलाप सुनकर रावण पर टूट पड़े पर बहुत घायल हो गये और जब रामचन्द्र जी पहुँचे तब उनकी गोद में जटायु ने नश्वर शरीर को त्याग दिया। ]

व० द०—नासिक के लोग उसको पश्चिमी भारत की काशी कहते हैं। नासिक तीर्थ में बहुत यात्री जाते हैं। बारह वर्ष पर जब सिंह राशि के बृहस्पति होते हैं तब नासिक में बहुत बड़ा मेला होता है। गोदावरी के बायें किनारे के नासिक कस्बे को लोग पंचवटी कहते हैं। नासिक से १८ मील पश्चिम गोदावरी के निकास का स्थान त्र्यम्बक है। वहां से ६ मील पर चक्र-तीर्थ में गोदावरी नदी प्रगट हुई है। नासिक के पास नदी की धारा गर्मी के मौसम में बहुत छोटी रहती है। करीब ४५० गज की लम्बाई में गोदावरी के किनारे पर पत्थर की सीढ़िया बनी हुई हैं और नदी के मध्य में १२ पक्के कुण्ड तथा पोखरे बने हैं जिनमें से एक का नाम रामकुण्ड और राम गया है। लोग कहते हैं कि वनवास के समय श्री रामचन्द्र जी ने जिस स्थान पर गोदा-वरी में स्नान कर दशरथ जी को पिण्डदान दिया था उसी स्थान का नाम राम गया व राम कुण्ड हुआ। वहां पिण्डदान का बड़ा माहात्म्य है।

गोदावरी के किनारों पर तथा उसके भीतर बहुत से मन्दिर और स्थान हैं। नदी के बायें किनारे पर रामकुण्ड के पास ५० सीढ़ियों के ऊपर ७०० वर्ष का पुराना कपालेश्वर शिव का मन्दिर है। नदी के बायें किनारे से दे

मील दूर ६३ फीट लम्बा ६५ फीट चौड़ा और ६० फीट ऊंचा रामचन्द्र जी का उत्तम मन्दिर है। गोदावरी के बायें किनारे से ½ मील दूर कई आँठियों का एक वट वृक्ष है जिसको लोग पचवटी कहते हैं।

नासिक कस्बे से दो मील दूर गोदावरी नदी के बायें गौतम ऋषि का तपोवन है। पचवटी से आगे जाने पर लक्ष्मण जी का स्थान मिलता है जिससे आगे हनुमान जी की मूर्ति है। उससे आगे पहाड़ से गिरती हुई गोदावरी और कपिला नदी का सगम है। वहां पचतीर्थ नाम के ५ कुण्ड हैं (१) ब्रह्मयोनि (२) विष्णु योनि (३) रुद्र योनि (४)मुक्त योनि और (५) अग्नि योनि। पहले वाले तीनों कुण्ड एक में मिले हैं। अन्दर अन्दर एक से दूसरे मे और दूसरे से तीसरे मे जाना होता है। अग्नि योनि विशेष गहरा है। पूर्व कथित पचतीर्थों म सौभाग्य तीर्थ, कपिला सगम और शूर्पणखा तीर्थ मिल कर अष्ट तीर्थ बनते हैं। गोदावरी और कपिला के सगम के पार सप्त ऋषियों का स्थान है। एक जगह गोदावरी के किनारे पर शूर्पणखा की पाषाण प्रतिमा है।

लोग कहते हैं कि पचवटी से एक कोस दक्षिण जटायु की मृत्यु का स्थान, है और कई एक कोस पूर्व अकोल्हा नामक गांव में अगस्त्य मुनि के आश्रम का स्थान अगस्त्य कुण्ड, सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम का स्थान और अमृतवाहिनी नदी तीर्थ है। अकोल्हा से कई कोस पश्चिम साई खेडा नामक गांव में मारीच की मृत्यु का स्थान है।

मध्य प्रदेश के बिलासपुर जिले में एक स्थान तुरतुरिया है जो महानदी के पास है। कुछ लोगों का विचार है कि वहां रामचन्द्र जी रहे थे और सीता हरण वहा से हुआ था। तुरतुरिया मे महानदी के किनारे एक वटवृक्ष है। बताया जाता है कि खरदूषण की रामचन्द्र जी से लड़ाई वहा हुई थी। उस स्थान को पचवटी कहा जाता है। तुरतुरिया की पहाड़ी में एक गुफा है। कहते हैं कि शूर्पणखा की नाक यहीं काटी गई थी। और सीता जी का हरण करके जटायु से युद्ध करने रावण इसी पर्वत पर ठहरा था।

तुरतुरिया महानदी के दक्षिण में है। लगभग ३० मील पर नदी के उत्तर मे खरोद है जहाँ खरदूषण रहते थे और जिनके नाम से उसका नाम खरोद है। खरदूषण को कहा जाता है कि रावण के भाई थे। यह चार भाई थे। दूसरे दो भाई त्रिसिरा और जबल थे जो लवन और तुरतुरिया में रहते थे। लवन तुरतुरिया से लगभग १० मील उत्तर मे है।

खरोद से ४-५ मील दक्षिण में सेवरी नारायण है। इस स्थान पर महाराज रामचन्द्र ने शबरी के जूठे बेर खाये थे। इस प्रकार खरोद, सबन, तुरतुरिया और सेवरी नारायण सब ३० मील के घेरे के भीतर ही हैं। यह आबादी द्राविड़ जाति की थी खरदूषण और उसके भाई उनके सरदार थे। रावण भी उसी जाति का राजा था। इससे यह सब भाई कहलाते हैं। पंचवटी का यथार्थ में इसी स्थान पर होना बहुत सम्भव है।

अगस्त्य आश्रम---अकोल्हा के अतिरिक्त नासिक से २४ मील दक्षिण पूर्व अगस्त्य पुरी नामक स्थान में भी अगस्त्य ऋषि की कुटी थी। बम्बई प्रान्त के कोल्हापुर में भी उनका निवास स्थान था। संयुक्त प्रान्त में पटा से ४० मील दक्षिण-पश्चिम और सकिसा से एक ही मील पश्चिमोत्तर सराय अगहट स्थान पर भी अगस्त्य ऋषि रहे बतलाए जाते हैं। मद्रास प्रान्त के टिनावली जिला में अगस्त्य कूट पर्वत पर जहां से ताम्रपर्णी नदी निकलती है वे अब भी निवास करते विश्वास किए जाते हैं। गढ़वाल में रुद्र प्रयाग से १२ मील अगस्त्य मुनि नामक गांव में भी उनका आश्रम था। सतपुरा पहाड़ी ( वैदूर्यपर्वत ) पर भी उन्होंने निवास किया था। और पुष्कर (अजमेर) में भी इनका आश्रम था। इनके रचे हुये ग्रन्थों में 'अगस्त्य संहिता', 'अगस्त्य गीता', 'सकलाधिकार' आदि हैं।

३५० निकुम्भिला---(देखिए लङ्का )

३५१ निगलीवा---( देखिए भुइलाडीह )

३५२ निधिवन---(देखिए मथुरा )

३५३ निम्बपुर---( देखिए आना गन्दी )

३५४ निर्जरा कूट---( देखिए सम्मेद शिखर )

३५५ नीमसार---( संयुक्त प्रान्त के सीतापुर जिले में एक कस्बा )

यह स्थान प्राचीन नैमिषारण्य है।

यहीं अठारहों पुराण लिखे गये हैं।

त्रेतायुग में रामचन्द्र जी ने अयोध्या से यहीं आकर अश्वमेध यज्ञ किया था।

रोमहर्षण जी के पुत्र उग्रश्रवा ने शौनक जी के यज्ञ में पहुँच कर महाभारत की कथा यहां कही थी।

देवताओं ने नैमिषारण्य में महायज्ञ प्रारम्भ किया था।

पाण्डवों ने यहां आकर गोमती में स्नान किया था।

बलराम जी यहा आये थे और सूत जी, अर्थात् रोमहर्षण जी, का वध किया था।

सतयुग मे नेमिष नामक ऋषियों ने यहा १२ वर्ष का यज्ञ आरम्भ किया था

पूर्व काल में सारे भारतवर्ष म नेमिषारण्य तपस्वियों का प्रधान स्थान था।

ब्रह्मा का धर्म चक्र इसी स्थान पर प्रवर्तित हुआ था।

इसी स्थान पर लव और कुश महाराज रामचन्द्र से प्रथम बार आकर मिले थे।

वाल्मीकि मुनि यहा आये थे।

ललिता देवी ने इस स्थान पर घोर तप किया था।

नीमसार से ५ मील पर मिश्रिक मे दधीचि ऋषि ने भारी तपस्या की थी और देवताओं की प्रार्थना पर अपना शरीर छोड़ा था।

मिश्रिक से ८ १० माल दूर हत्याहरण में महाराज रामचन्द्र ने ब्राह्मण रावण के मारने के पाप से मुक्त होने को स्नान किया था। ( ऐसा स्नान धोपाप और मुङ्गेर में भी किया जाना बताया जाता है। )

मिश्रिक में सीता कूप के स्थान पर सीता जी भूमि में समा गई थीं।

प्रा० क०—( शखस्मृति, १४ वां अध्याय ) नेमषारण्य में पितर के निमित्त जो दिया जाता है उसका फल अक्षय होता है।

( व्यास स्मृति, चौथा अध्याय ) मनुष्य नैमिषतीर्थ म जाने से सब पापों से छूट जाता है।

( महाभारत, आदि पर्व प्रथम अध्याय ) सूत वशीय रोमहर्षण जी के पुत्र उग्रश्रवा जी नैमिषारण्य में शौनक जी के यज्ञ में पहुचे और व्यासकृत महाभारत की कथा कहने लगे।

( १६८ वां अध्याय ) देवताओं ने नैमिषारण्य में महायज्ञ प्रारम्भ किया था।

( वन पर्व, ८४ वां अध्याय ) पूर्व दिशा में नैमिषारण्य तीर्थ है जहां पवित्र गोमती नदी बहती है। वही देवताओं के यज्ञ का स्थान है।

( ८५ वां अध्याय ) पाण्डवों ने नैमिषारण्य में जाकर गोमती में स्नान किया।

(महाभारत शल्य पर्व, ३७ वां अध्याय) बलराम जी नैमिषारण्य में गये, जहां सरस्वती नदी बहने से बन्द हो गई है। वह वहां सरस्वती की निवृति देख कर विस्मित हो गये।

पहिले सतयुग में नैमिषनामक ऋषियों ने १२ वर्ष का यज्ञ आरम्भ किया था। उस यज्ञ में इतने मुनि आये कि सरस्वती के तीर्थ नगर के समान दीखने लगे। तट में कुछ भी अवकाश नहीं रहा। जब सरस्वती जी ने उन ऋषियों को चिन्ता से व्याकुल देखा तब अपनी माया से अनेक कुञ्जियों को अनेक कुञ्ज दिखाये। उसी दिन से इस स्थान का नाम नैमिष कुञ्ज है।

(३८ वां अध्याय) जब नैमिषारण्य में अनेक मुनि इकट्ठे हुये, तब वेद के विषय म अनेक प्रकार के शास्त्रार्थ होने लगे। वहां थोड़े से मुनि आकर सरस्वती का ध्यान करने लगे। यज्ञ करने वाले मुनियों के ध्यान करने से बाहर से आये हुए मुनियों की सहायता के लिये काचनाक्षी नामक सरस्वती नैमिषारण्य में आई।

(महाभारत, शान्ति पर्व, ३५५ वां अध्याय) पूर्व समय में जिस स्थान पर धर्म चक्र प्रवर्तित हुआ था उस नैमिषतीर्थ में गोमती नदी है।

(वाल्मीकीय रामायण, उत्तर काण्ड, १०४ सर्ग से ११० सर्गतक) महाराज रामचन्द्र ने अयोध्या से नैमिषारण्य में आकर अश्वमेध यज्ञ किया। उसी समय उनके पुत्र लव और कुश वाल्मीकि मुनि के साथ आकर उनसे मिले और महारानी सीता को पृथिवी देवी सिंहासन पर बिठा कर रसातल को ले गई।

(कूर्म पुराण ब्राह्मी संहिता उत्तरार्ध, ४१ वां अध्याय) ऋषियों ने ब्रह्मा से पूछा कि पृथिवी पर तपस्या के लिये सब से पवित्र स्थान कौन है? ब्रह्मा जी बोले कि हम यह चक्र छोड़ते हैं, तुम लोग उसके साथ जाओ जिस स्थान पर चक्र की नेमि अर्थात् पहिया गिरे, वही देश तपस्या के लिये उत्तम है। ऐसा कह ब्रह्मा ने चक्र छोड़ा। ऋषि लोग शीघ्रता से उसके पीछे चले। जिस स्थान पर चक्र की नेमि गिरी वहां ही पवित्र और सर्व पूजित नैमिष नामक क्षेत्र हुआ। शिव जी पार्वती सहित नैमिषारण्य में विहार करते हैं। वहां मृत्यु होने से ब्रह्मलोक मिलता है और यज्ञ, दान, श्राद्धादिक कर्म करने से सम्पूर्ण पाप का नाश हो जाता है।

(देवी भागवत प्रथम खण्ड दूसरा अध्याय) शौनक जी ने सूत जी से कहा कि कलि काल से डरे हुये हम लोग ब्रह्मा जी की आज्ञासे नैमिषारण्य में आये

हैं। पूर्व समय में उन्होंने हमें एक चक्र देकर कहा था कि जहां इसकी नेमि गिरे वह देश अतिपावन जानना। वहां कलियुग का प्रवेश कभी नहीं होगा। यह सुन कर हम उस चक्र को चलाते हुये चले आये। जब चक्र यहां पहुँचा तो उसकी नेमि टूट गई और वह उसी भूमि में प्रवेश कर गया। इसी से इस क्षेत्र का नाम नैमिष हुआ। यहां कलि प्रवेश नहीं करता। इससे मुनि, सिद्ध और महात्माओं के सङ्ग हम यहां बसते हैं (पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड प्रथम अध्याय में भी इस विषय का वर्णन है।)

(वाराह पुराण-१७० वां अध्याय) त्रयोदशी के दिन नैमिषारण्य के चक्रतीर्थ में स्नान करने से उत्तम गति प्राप्त होती है।

(स्कन्द पुराण-सेतुबन्ध खण्ड, १६ वां अध्याय) महाभारत युद्ध के आरम्भ के समय बलदेव जी द्वारिका से प्रभास आदि तीर्थों मे भ्रमते हुये नैमिषारण्य में पहुँचे। उनको देख कर नैमिषारण्य के समस्त तपस्वी आसनों से उठे। उन्होंने बड़े आदर से उनको आसन पर बिठाया। परन्तु व्यास जी के शिष्य सूत जी ने जो ऊंचे आसन पर बैठे थे, बल्देव जी को उत्थान नहीं दिया। यह देख कर बल्देवजी जी को बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ। उन्होंने कुश के अग्रभाग से सूत जी का सिर काट लिया। यह देख मुनियों ने हाहाकार किया और बल्देव जी से कहा कि आप को ब्रह्महत्या लगी, आप इसका प्रायश्चित्त कीजिये। (श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध के ७८ वें अध्याय में भी यह कथा है।)

(वामन पुराण, ७ वां अध्याय) पृथिवी में नैमिष तीर्थ, आकाश में पुष्करतीर्थ और पाताल में चक्रतीर्थ उत्तम हैं।

(३६ वा अध्याय) वेद व्यास जी ने दधीचि ऋषि के लिये मिश्रिक तीर्थ मे बहुत तीर्थ मिला दिये हैं। जिसने मिश्रिक तीर्थ मे स्नान किया, वह सब तीर्थों में स्नान कर चुका।

(शिव पुराण, ८ वां खण्ड, ५ वां अध्याय) श्री रामचन्द्र, ब्राह्मण रावण के वध करने से बहुत समय तक पश्चात्ताप करते रहे। निदान उन्होंने नैमिषारण्य के हत्याहरण तीर्थ मे अपने भाई सहित जाकर अपना पाप दूर किया और लक्ष्मण सहित स्नान करके शिवलिङ्ग की स्थापना की जिससे व पवित्र हो गये।

(१४ वां अध्याय) नैमिषक्षेत्र में ललितेश्वर शिव लिङ्ग है जिसका ललिता जगदम्बा ने स्थापित किया था। उसी स्थान पर ललिता ने कठिन

तप किया था। वहां एक दधीचीश्वर शिवलिङ्ग है जिसको दधीचि मुनि ने स्थापित किया था।

[ महर्षि दधीचि ब्रह्मा के पौत्र और अथर्वा ऋषि के पुत्र थे। यह बड़े भारी शैव थे और विष्णु भी इनसे परास्त होगये थे। एक बार जब देवताओं को असुरों ने जीत लिया तब इन्द्र और अन्य देवताओं ने इनसे इनकी हड्डियों का दान मांगा। महात्मा दधीचि ने अपना शरीर छोड़ दिया, और उनकी हड्डियों के अस्त्र से देवताओं ने असुरों पर विजय पाई। ]

[ महर्षि रोमहर्षण सूत जाति के थे। यह भगवान वेद व्यास के परम प्रिय शिष्य थे। भगवान व्यास ने इन्हें समस्त पुराणों को पढ़ाया और आशीर्वाद दिया कि तुम समस्त पुराणों के वक्ता हो जाओगे। यह सदा ऋषियों के आश्रमों में घूमते रहते थे और सब को पुराणों की कथा सुनाया करते थे। यद्यपि यह सूत जाति के थे, किन्तु पुराणों के वक्ता होने के कारण सब ऋषि इनका आदर करते थे और उच्चासन पर बिठा कर इनकी पूजा करते थे।

नैमिषारण्य में यह ऋषियों को कथा सुना रहे थे। बल्देव जी वहां आये, और सब ऋषियों ने उठकर उनका स्वागत किया। रोमहर्षण जी जो व्यास गद्दी पर थे, न उठे। इस पर बल्देव जी ने उनका सिर काट लिया। ऋषियों ने बल्देव जी को बहुत धिक्कारा और प्रायश्चित्त कराया, और महर्षि रोमहर्षण के पुत्र उग्रश्रवा को व्यास गद्दी पर बिठाया। तब से रोमहर्षण जी की जगह उग्रश्रवा जी पुराणों के वक्ता हुये। ]

[ नैमिषारण्य में अठासी हजार ऋषि कलियुग को बढ़ते देख, इकट्ठे हुये थे। उनमें शौनक ऋषि प्रधान थे। भृगुवंश में उत्पन्न होने से भार्गव और शुनक के अपत्य होने के कारण इनका नाम शौनक पड़ा। समस्त पुराणों और महाभारत को इन्हीं ही ने सूत जी ( महर्षि रोमहर्षण ) के मुंह से सुना था। सब पुराणों में 'शौनक उवाच' पहिले लिखा रहता है। ]

च० द०— नीमसार सीतापुर से २० मील पश्चिम की ओर है। इसकी बेढ़ कोस की परिक्रमा है जिसमें निम्नलिखित स्थान पड़ते हैं :—

( १ ) चक्रतीर्थ—गोलाकार लगभग १२० गज घेरे का पक्का कुण्ड है। ऊपर से नीचे तक चारों ओर पक्की सीढ़ियां और बीच में जालीदार दीवार है जिसके बाहर यात्री लोग स्नान करते हैं और भीतर अथाह जल है। इसी स्थान पर नेमि गिरी गई थी।

( २ ) पञ्च प्रयाग—एक पक्का सरोवर।
( ३ ) ललिता देवी—नीमसार का सबसे प्रतिष्ठित मन्दिर।
( ४ ) गोवर्द्धन महादेव ।
( ५ ) क्षेमकाया देवी ।
( ६ ) जानकी कुण्ड ।
( ७ ) हनुमान जी ।
( ८ ) काशी—एक पक्के सरोवर के किनारे एक मन्दिर में विश्वनाथ और अन्न पूर्णा हैं। यहाँ पिण्ड दान संस्कार बहुत होता है।
( ९ ) धर्मराज का मन्दिर।
( १० ) एक मन्दिर में शुकदेव जी की गद्दी, बाहर व्यास जी का स्थान और मैदान मे मनु और शतरूपा के अलग अलग चबूतरे हैं। शुकदेव जी और व्यास जी के यही स्थान थे।
( ११ ) व्यास गङ्गा—अब केवल बालू है। पहले यहाँ नदी था, और कहते हैं व्यास जी उसमें स्नान करते थे।
( १२ ) ब्रह्मावर्त—बालू से भरा हुआ पक्का सरोवर।
( १३ ) गङ्गोत्री—यह पक्का सरोवर भी बालू से भर गया है।
( १४ ) पुष्कर नामक सरोवर।
( १५ ) गोमती नदी।
( १६ ) दशाश्वमेध टीला—टीले पर एक मन्दिर में राम और लक्ष्मण जी की मूर्तियाँ हैं । इसी स्थान पर महाराज रामचन्द्र ने अश्वमेध यज्ञ किया था।
( १७ ) पाण्डव किला—एक लम्बे टीले पर मन्दिर मे श्री कृष्ण और पाण्डवों की मूर्तियाँ हैं। कहते हैं यहाँ पाण्डवों का किला था। यहाँ पर साधुओं के लिए गुफाए हैं।
( १८ ) एक मन्दिर मे बडे सिंहासन पर सूत जी की गद्दी—यह सूत जी का स्थान था। इसके निकट राधा, कृष्ण और बलदेव जी की मूर्तियाँ हैं।
और ( १९ ) एक मन्दिर में त्रेता के रामचन्द्र जी की मूर्ति है।
नीमसार मे भारतवर्ष के जितने तीर्थ हैं सबके स्थान मौजूद हैं। कहा जाता है कि कलियुग म सारे तीर्थ इसी स्थान पर कर दिये गये जिससे यहाँ आकर दर्शनों से सब तीर्थों के दर्शन का लाभ हो जावे।

हर अमावस्या को नीमसार में भारी मेला लगता है। लोग चक्रतीर्थ में स्नान करते हैं।

मिश्रिक—नेमिषारण्य से ५ मील पर सीतापुर की ओर मिश्रिक पवित्र तीर्थ है। अवध के सब से पुराने कस्बों में से यह एक है। यहाँ दधीचि कुण्ड नामक बड़ा भारी पक्की सुन्दर सरोवर है। कहा जाता है कि महाराज विक्रमादित्य ने इसके चारो ओर पक्की दीवार बनवाई थी। सरोवर के किनारे ऋषि दधीचि का पुराना मन्दिर खड़ा है जहाँ दधीचि ऋषि ने तपस्या की थी। पक्के सरोवर में मन्दिर के समीप वह कुण्ड है जहाँ देवताओं ने ऋषि के स्नान के लिए सब तीर्थों का जल इकट्ठा किया था। मन्दिर के महन्त के पास दस हजार की आय का इलाका मुआफी है। ऐसा प्रसिद्ध है कि एक समय देव गण एक बड़े संग्राम में दैत्यों से परास्त हुए। उन्होंने ब्रह्मा की आज्ञानुसार तपस्वी दधीचि के पास जाकर, अपना अस्त्र बनाने के लिये उनसे उनकी हड्डियाँ माँगी। दधीचि ने कहा कि मैं अपनी प्रतिज्ञानुसार सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करके तब अपनी हड्डियाँ दूँगा। देवताओं ने सम्पूर्ण तीर्थों का जल लाकर यहाँ के एक कुण्ड में प्रस्तुत कर दिया। भगवान् दधीचि ने उस कुण्ड में स्नान करके अपना शरीर छोड़ दिया। देवताओं ने उनकी हड्डियों के अस्त्र बनाकर उससे दैत्यों को जीता। सम्पूर्ण तीर्थों का जल मिश्रित होने के कारण इस स्थान का नाम मिश्रिक हुआ। जिस कुण्ड में दधीचि ने स्नान किया था उसका नाम दधीचि कुण्ड है।

मिश्रिक में सीता कूप है जहाँ कहा जाता है कि सीताजी भूमि में समा गई थीं।

३५६ नूरलिया—( देखिए लङ्का )
३५७ नेवासे—( देखिए आलन्दा )
३५८ नैनागिरि—( मध्य भारत के पन्ना राज्य में एक बस्ती )
यहाँ से श्री वर्दत्त मुनि ( जैन ) मोक्ष को पधारे थे।
यहाँ तेईसवें तीर्थङ्कर, श्रीमत्पार्श्वनाथ महाराज, का समोसरण आया था।
इस स्थान पर ३० से अधिक जैन मन्दिर हैं।
३५९ नौलास—( देखिए सरहिन्द )
३६० नौराही—( संयुक्त प्रान्त के फैजाबाद जिला में एक स्थान )
इस स्थान को रत्नपुरी भी कहते हैं।

श्री धर्मनाथ स्वामी ( पन्द्रहवें तीर्थङ्कर ) के यहा गर्भ, जन्म, दीक्षा तथा कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुये थे।

[ श्री धर्मनाथस्वामी, पन्द्रहवें तीर्थंकर, के पिता का नाम भानु और माता का नाम सुव्रता था। आप के गर्भ, जन्म, दीक्षा तथा कैवल्यज्ञान कल्याणक रत्नपुरी मे, और निर्वाण पार्श्वनाथ में हुआ था। आप का चिन्ह वज्रदण्ड है। ]

( नौराही सयू नदी के किनारे, अयोध्या से १२ मील पर एक बडा गाव है। यहा कई जैन मन्दिर हैं।

कहा जाता है कि जब अयोध्या से वनवास जाते समय अयोध्या निवासी श्री रामचन्द्र जी के साथ हो लिये थे, तब नौराही से श्री रामचन्द्र ने रात्रि मे ऐसे रथ हकँवाया कि सवेरे लोगों को नौ रास्तों से रथ के जाने का भ्रम हुआ, और इस प्रकार वे उनके पीछे न जा सके और नौराही से लौट आये। )

प

३६१ पञ्चनद— ( पजाब प्रदेश में जहाँ सतलज नदी चिनाब नदी में मिली है वहा से जहा चिनाब सिन्ध म गिरी है वहा तक का नदी भाग )

पञ्चनद के समीप अभीरों ने अर्जुन से गोपियों को छीना था।

प्रा० क०— ( महाभारत, मौशल पर्व, ७वा अध्याय ) अर्जुन ने ( यदु वशियों का नाश होने पर ) द्वारिका वासियों को लिए हुये प्रभास से चल कर वन, पर्वत तथा नदियों के तट पर निवास करते हुये पञ्चनद के समीप वर्ती किसी स्थान में निवास किया था। यहा अभीरों ने अर्जुन को परास्त करके वृष्णि और अधक वशीय स्त्रिया का छीन लिया।

( वन पर्व ८२ वां अध्याय ) पञ्चनद तीर्थ में जाने से ५ यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है।

महाभारत, द्रोण पर्व अ० ४० ४५, कर्ण पर्व अ० ४५ मे पञ्चनद का दूसरा नाम आरट्ट (सस्कृत रूप अराष्ट्र ) है, जहा अच्छे घाडे मिलते थे।

कौटिल्य के अर्थ शास्त्र ( भाग २ अ० ३० ) मे भी इसका उल्लेख है।

व० द०—सतलज नदी मुजफ्फर गढ जिले के नीचे दक्षिण कच्छ के निकट चिनाब में मिलती है। चिनाब नदी दक्षिण-पश्चिम मिठन कोट के निकट जाकर सिन्ध में गिरती है। सतलज के सगम से सिन्ध नदी के सगम

तक लगभग ५० मील की लम्बाई में निनाव नदी पञ्चनद करके विख्यात है।

३६२ पञ्च सरोवर— ( देखिये पुष्कर )

३६३ पटना—( बिहार की राजधानी )

इसके प्राचीन नाम पाटलिपुत्र, कुसुमपुर, पुष्पपुर और पालीबोथ्रा हैं।

रामचन्द्र जी ऋषि विश्वामित्र और लक्ष्मण सहित जनकपुर जाते समय यहां गंगा जी के पार उतरे थे।

भगवान बुद्ध ने अन्तिम बार नालन्दा से वैशाली जाते समय यहां गंगा जी को पार किया था।

संसार के सर्वश्रेष्ट सम्राट पियदर्शी महाराज अशोक की यह राजधानी थी।

महाराज अशोक का जन्म इसी नगर में हुआ था और भगवान बुद्ध के स्मारक में जो उन्होंने ८४,००० स्तूप बनवाए थे उनमें पहिला और सब से बड़ा स्तूप पटना ही में था। यहाँ के कुक्कुटारामविहार में महाराज अशोक के गुरु उपगुप्त रहा करते थे।

यूनानीसेना-विजयी महाराज चन्द्रगुप्त और भारतीय-नैपोलियन महाराज समुद्रगुप्त की भी यह राजधानी थी। पीछे महाराज समुद्रगुप्त ने पटना को छोड़ कर अयोध्या को अपनी राजधानी बनाया था।

महापुरुष कात्यान और कौटिल्य नीतिज्ञ चाणक्य यहाँ साम्राज्य के महा मन्त्री रहे थे।

प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य आर्य भट्ट की यह जन्मभूमि है ( ४७६ई०)।

सिक्खों के अन्तिम गुरु श्री गोविन्दसिंह जी का यहाँ जन्म हुआ था। जन्म स्थानपर सिक्खों के चार तख्तों में से एक तख्त 'पटना साहिब' है।

सुदर्शन सेठ (जैन) ने इस स्थान से निर्वाण प्राप्त किया था।

राजा राममोहनराय ने तीन साल पटना में अर्बी व फारसी का अध्ययन किया था।

भा० क०—पुराण के लेखनानुसार शिशुनागवंश के राजा अजातशत्रु के पोते उदयाश्व ने पाटलिपुत्र को बसाया था और उसे कुसुमपुर और पुष्पपुर भी कहते थे। यूनानियों ने इसको पालीबोथ्रा कहा है। औरङ्गजेब ने इसका नाम अपने पुत्र अजीम के नाम पर अजीमाबाद रक्खा था, पर वह चला नहीं। बौद्ध ग्रन्थ महापरिनिर्वाण सूत्र में लिखा है कि अन्तिम बार

नालन्दा से वैशाली जाते समय भगवान बुद्ध पातलीगाम में आये। उस समय यह नगर बसाया जा रहा था। भगवान बुद्ध ने कहा था कि यह बड़ा नगर होगा पर धोखा, खून, अग्नि, फरेब आदि से यह नष्ट हो जावेगा। इस प्रकार बुद्ध ग्रन्थों के अनुसार बुद्ध के जीवन के अन्तिम वर्षों में यह नगर बसा था।

यूनानी एलची, मेगस्थनीज जो सम्राट सिल्यूक्स की ओर से सम्राट चन्द्रगुप्त के दर्बार मे रहता था लिखता है कि पटना की लम्बाई १० मील और चौड़ाई दो मील है। उसके चारों ओर १५ गज गहरी और ३०० गज चौड़ी खाई है। नगर के चारों ओर चहार दीवारी है जिसमें ५७० बुर्ज और ६४फाटक हैं।

'महावंश' कहता है कि अजात शत्रु का राज्याभिषेक पाटलिपुत्र मे हुआ। यह भगवान बुद्ध के शरीर छोड़ने से ८ साल पहिले हुआ था, इससे प्रतीत होता है कि धीरे धीरे बहुत दिनों तक यह नगर बसता रहा।

महर्षि विश्वामित्र रामचन्द्र और लक्ष्मणजी को जब अपने आश्रम से मिथिलापुर ( सीता स्वयम्वर ) में ले गये थे तो गंगाजी को यहीं पार करके गये थे।

*वर्तमान पटना प्राचीन पाटलिपुत्र के बहुत थोड़े भाग पर है।* ७५० ई० में गङ्गा और सोन का बाढ़ मे बाकी सारा प्राचीन नगर पानी में चला गया।

[ नवें गुरु तेगबहादुर साहेब की पत्नी गुजरी देवी के गर्भ से सम्वत् १७२३ वि० में पूस सुदी सप्तमी को पटना में गुरुगोविन्दसिंह का जन्म *हुआ था। गुरु गोविन्दसिंह नौ साल के भी नहीं थे जब* औरङ्गजेब ने दिल्ली में इनके पिता का वध करवा दिया। स० १७३२ वि० से ही इन्हें आनन्दपुर में गुरुगादी का काम सम्भालना पड़ा। १७३४ वि० में लाहौर निवासी श्रीमती जीतो देवी से आप का विवाह हो गया। आप के चार पुत्र हुये जिनमें से दो मुगलों से युद्ध में मारे गये और दो को सरहिन्द के नवाब ने जिन्दा दीवार से चुनवा दिया। १७५६ वि० में गुरुजी ने सिक्ख खालसा समुदाय की सृष्टि की जिसके जोड का नर समाज शायद सारे संसार में न होगा। औरङ्गजेब के मरने पर गुरुजी की सहायता से बहादुर शाह गद्दी पर बैठा और उनका मित्र रहा। १७६४ वि० मे गुरुजी गोदावरी किनारे नदेण ग्राम में पहुँचे और वहाँ एक नया शहर 'अविचल नगर' बसाया। स० १७६५ वि० मे गुरुग्रन्थ साहेब को गुरु मानने का आदेश देकर गुरुगोविन्दसिंह जी घोड़े पर सवार होकर बाहर चले गये और कहा जाता है अन्तरधान हो गये। ]

व० द०—पटना चौक के पास एक गली की बगल में एक मन्दिर जिसे 'हरिमन्दिर' कहते हैं विद्यमान है। इसी स्थान पर गुरुगोविन्दसिंह जी का जन्म हुआ था।

चौक से तीन मील पश्चिम महाराजगज में बड़ी पाटनदेवी का मन्दिर है। लोग कहते हैं कि पार्वती का पट गिरने से यहाँ पाटनदेवी हुई, और इस शहर का नाम पटना पड़ा।

जहाँ रामचन्द्रजी ने गगाजी को पार किया था वह स्थान रामभद्रक कहलाता है।

२६४ पडरौना—( संयुक्त प्रान्त के देवरिया जिले में एक गाँव ) इसका प्राचीन नाम पावा था।

अपनी अन्तिम यात्रा में कुशीनगर (कसिया) जाते समय भगवान बुद्ध ने यहाँ विश्राम और स्नान किया था। उनके प्रधानशिष्य महाकश्यप ( बौद्ध ग्रन्थों के महात्मा कस्सप ) ने भी भगवान् के निर्वाण का समाचार पाकर कुशीनगर की यात्रा में यहाँ विश्राम किया था।

प्रा० क०—बौद्ध ग्रन्थों में लिखा है कि वैशाली में अपना अन्तिम काल निकट आने की घोषणा करके भगवान बुद्ध ने कुशी नगर की यात्रा की और मार्ग में पावा में विश्राम किया, जल पिया और स्नान किया। ह्यानचाँग ने लिखा है कि उस स्थान पर स्तूप बनवा दिया गया था।

व० द०—पडरौना, कसिया से १४ मील उत्तर है और वहाँ एक स्तूप के चिन्ह हैं। इस समय वह एक तहसील का सदर स्थान है।

आर्कियालाजिकल मुहक्मे के मिस्टर ए० सी० एल० कार्लायल का विचार है कि पावा वर्तमान फाजिल नगर गाँव के स्थान पर था जो कसिया से १२ मील पूर्व-दक्षिण में है। पर जेनरल सर ए० कनिङ्हम का मत है कि पडरौना प्राचीन पावा का स्थान है। जेनरल कनिङ्हम को बौद्ध स्थानों के पहिचानने की अद्भुत दैवी शक्ति थी। डाक्टर होइ (Hooy) का ख्याल है कि पपौर, जो बिहार प्रान्त के जिला छपरा में सिवान से २ मील पूर्व है, प्राचीन पावा है पर इस से कसिया की दूरी ठीक नहीं बैठती, और कसिया का कुशीनगर होना सिद्ध है।

'पावा पुरी' जो जिला पटना में है उससे इस 'पावा' से कोई सम्बन्ध नहीं है।

२६५ पण्ढरपुर—( बम्बई प्रान्त के शोलापुर जिले में एक कस्बा )

विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के आदि आचार्य श्री नामदेवजी का जन्म पढरपुर के *समीप नरसी ब्राह्मणी नामक गाँव में हुआ था।*

पढरपुर को उन्होंने निवास स्थान बना लिया था।

राँका जी परम भक्तों में यहाँ हुये हैं, और यही उनका जन्मस्थान था।

पढरपुर भक्त नरहरि सुनार की भी जन्मभूमि है।

माता पिता का परम भक्त पुण्डरीक ब्राह्मण यहाँ रहता था।

प्रा० क०—कथा है कि वामदेव नाम का एक ब्राह्मण पढरपुर में रहता था। उसकी पुत्री बाल विधवा हो गई। वामदेव ने उसे भगवान से ब्याह करके उन्हीं की सेवा में छोड़ दिया और वह भगवत भजन करने लगी। विवाह होने पर भगवान के प्रभाव से उसको गर्भ रह गया जिससे नामदेव का जन्म हुआ। *बालकपन ही से नामदेव भगवान में भक्ति रखते थे। एक समय इनके नाना* बाहर गये और भगवान के पूजन का भार नामदेव पर छोड़ गये। नामदेव समझते थे कि भगवान भोग खाते होंगे। उन्होंने तीन दिन तक दूध रक्खा परन्तु भगवान ने भोग न किया। नामदेव जी समझे कि उन्हें पूजन की रीति नहीं आती और उनके नाना लौट कर उनसे रुष्ट होंगे। तीन दिन तक नामदेव जी ने भी भोजन नहीं किया और जब फिर भी भगवान ने भोग ग्रहण न किया तब वह अपना गला काटने लगे। उसी समय भगवान ने प्रकट हो कर दूध पी लिया। जब वे बहुत सा दूध पी गये तब नामदेवजी ने कहा कि मैं भी तीन दिन का भूखा हूँ, मेरे लिए कुछ नहीं छोड़ते। तब भगवान ने हँस कर उन्हें प्रसाद दिया।

[ नामदेवजी का जन्म स० १३२७ वि० को नरसी ब्राह्मणी नामक स्थान में हुआ था। बड़े होकर वे अपना घरबार छोड़ कर पण्ढरपुर ही में जाकर बस गये। गुरुग्रन्थ साहेब में इनके साठ से अधिक पद मिलते हैं।

नामदेवजी १८ वर्ष पंजाब में रहे थे, पीछे पण्ढरपुर लौट आये।

पण्ढरपुर में श्री विट्ठल मन्दिर के महाद्वार की सीढ़ी पर १४०७ वि० में ८० साल की अवस्था में इन्होंने शरीर त्यागा। ]

[ पण्ढरपुर में परमभक्त राँकाजी अपनी पत्नी सहित जंगल से लकड़ी लेने जाया करते थे। एक दिन भगवान और नामदेवजी ने उनके मार्ग में स्वर्ण की थैली छोड़ दी। राँकाजी उससे बच कर चले गये, परन्तु नामदेवजी

और भगवान ने सूखी लकड़ी भी इकट्ठा करके रख दी थी। दूसरे की लकड़ी समझकर राँकाजी ने उसे भी नहीं छुआ परन्तु और लकड़ी न मिलने से वे वैसे ही अपने घर चले आये। वहीं उनको भगवान ने दर्शन दिया।

राँकाजी का जन्म महाराष्ट्र ब्राह्मण के घर वि० सं० १३४७ में पण्ढरपुर में हुआ था। १०५ वर्ष तक इस धरा धाम पर लीला करके सं० १४५२ वि० में वे परमधाम को पधारे। ]

[ पुण्डरीक ब्राह्मण अपने माता पिता का परम भक्त था। एक दिन कृष्ण भगवान रुक्मिणी सहित पुण्डरीक के यहाँ पहुँचे। परन्तु माता पिता के सम्मुख पुण्डरीक ने श्री कृष्ण की ओर ध्यान न दिया। कृष्णजी ने उनकी माता पिता पर भक्ति देख कर वर माँगने को कहा। पुण्डरीक ने कहा तुम जैसे हो वैसे ही यहां सर्वदा स्थित रहो। पुण्डरीक ने एक पाषाण दिया जिस पर कृष्ण भगवान स्थित हुये और विट्ठल अथवा विठोबा नाम से प्रख्यात हो गये। ]

[ नरहरि सुनार पण्ढरपुर के ही रहने वाले थे। यह ऐसे शिवभक्त थे कि कभी विट्ठलजी के मन्दिर की ओर भूल कर भी न जाते थे। एक महाजन ने विट्ठलजी की सोने की करधनी इन्हें बनाने को दी और कमर का नाप दे दिया। पर हर दफे करधनी या तो दो अंगुल छोटी हो जावे या दो अंगुल बड़ी हो जावे। अन्त में यह स्वयं नाप लेने गये और वहीं इन्हें परम ज्ञान प्राप्त हुआ। ]

व० द०— पंढरपुर कस्बे का एक भाग जिसमें विट्ठलनाथ जी का एक मन्दिर है पुण्डरीक क्षेत्र करके प्रसिद्ध है। वर्तमान मन्दिर सन् ८० ई० का बना हुआ है। इसकी लम्बाई ३५० फ़ीट और चौड़ाई १७० फीट है। चांदी के पत्र से मढ़ा हुआ एक स्तम्भ है जिसको यात्री गण अङ्कमाल कहते हैं। विट्ठलनाथ की मूर्ति पाण्डु वर्ण की है और उनके मन्दिर के पास अनेक पवित्र स्थल, देव मन्दिर और घाट बने हैं। यह स्थान भीमा नदी के तट पर है। यहां यात्रा नित्य आते हैं, परन्तु प्रति वर्ष ३ बड़े मेले आषाढ़, कार्तिक और चैत्र की शुक्ल पक्ष एकादशी को होते हैं। वैसे प्रत्येक मास शुक्ल पक्ष की एकादशी को भीड़ रहती है।

३६६ पपोंसा—( देखिए फफोसा )

३६७ पप्पौर— (देखिए पड़रौना )

३६८ पम्पासर— (देखिए आनागन्दी, व पवित्र सरोवर )

३६९ परणी ग्राम— ( देखिए वैद्यनाथ )

३७० परली—( देखिए जाम्बगाव )

३७१ परसागांव—( देखिए भुइलाडीह )

३७२ परासन—( देखिए काल्पी )

३७३ पवित्र सरोवर (कुल)—(पाच पवित्र सरोवर निम्नलिखित है)

मानसरोवर—उत्तर में (कैलास पर्वत के समीप, तिब्बत की सीमा पर) .

बिन्दु सरोवर—पूर्व मे ( भुवनेश्वर, उड़ीसा प्रान्त, में ) पम्पासर—दक्षिण मे (बिलारी ज़िला, मद्रास प्रान्त, में) पुष्कर—मध्य में (अजमेर में) नारायणसर—पश्चिम में (इन्डस नदी के मुहाने पर, कच्छ की खाडी में)

३७४ पशुपतिनाथ—( देखिए काठमांडू )

३७५ पॉडुआ—( बगाल प्रान्त के हुगली जिला में एक नगर )

इस स्थान के प्राचीन नाम रिक्षवन्त, मारपुर व प्रद्युम्ननगर हैं।

श्री कृष्णचन्द्र के पुत्र प्रद्युम्न ने शम्बरासुर को यहा मारा था।

श्रावस्ती के सम्राट विरुढक ने जब कपिलवस्तु के सम्राट पाण्डु को परास्त किया था तो पाण्डु यहा आकर रहने लगे थे।

भगवान बुद्ध के राज्य त्याग कर देने पर और अपने पुत्र को भी भिक्षु सङ्घ में ले लेने पर, उनके पिता के पश्चात् कपिलवस्तु का राज्य अन्य वशजों का मिला। जब पाण्डु कपिलवस्तु में राजा थे उन दिनों श्रावस्ती (सहेट महेट) के राजा विरुढक ने उन पर चढाई की और उन्हें परास्त किया। पाण्डु कपिलवस्तु छोड कर पाण्डुआ में आ बसे। उन्होने सिंहपुर ( जिला हुगली ) के राजा पाण्डु वासुदेव के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। बाद को पाण्डु वासुदेव लङ्का विजय के पश्चात् लङ्का की गद्दी पर बैठे थे।

एक दूसरा पाण्डुआ, जिसे फीरोजाबाद भी कहते हैं, मालदा के पास है। उसका सम्बन्ध पूर्ण वर्धन से है।

३७६ पाटन—( मध्यभारत के बिजावर राज्य म एक बस्ती )

यहां अकबर बादशाह के सुविख्यात मन्त्री बीरबल का जन्म हुआ था।

[महाराजा बीरबल का जन्म १५८५ वि० म पाटन म हुआ था। एक साधारण कान्यकुब्ज ब्राह्मण गगादास क यह पुत्र थ। कुछ लोगों का मत है कि इनका जन्म तिकावाँपुर [ जिला कानपुर ] में हुआ था। केवल अपने बुद्धि बल से बीरबल अकबर बादशाह के परम मित्र और भारी जागीरदार हुये थे और महाराजा की पदवी पायी थी। यह ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे और 'ब्रह्म' के उपनाम से कविता करते थे। हाजिर जवाबी में इनके जोड़ का कोई

दूसरा नहीं हुआ। कहते हैं कि इनके पिता मूर्ख थे। दरबारियों ने बादशाह द्वारा उन्हें एक बार दरबार में बुलवा कर बीरबल को झेपाना चाहा। बीरबल ने उन्हें सलाम करने तथा शाही अदब के साथ उचितरीति से बैठने के नियम सिखा दिए पर समझा दिया कि अन्य एक शब्द भी न बोलें और किसी के साधारण से साधारण प्रश्न का भी उत्तर न दें। उनके दरबार में आने पर अकबर ने उनसे कई साधारण प्रश्न किये पर वे एकदम मौन ही धारण किये रहे। इसपर बादशाह ने कहा बीरबल अगर बेवकूफ से साबिका पड़े तो कोई क्या करे? बीरबल ने जवाब दिया, जहाँपनाह! खामोशी अख्तियार करे। यह उत्तर 'जवाबे जाहिलाँ बाशद खमोशी' के आधार पर कहा गया था।]

( देखिए ओड़छा )

३७७ पाटनगिरि—( देखिए गन्नौनी )

३७८ पाण्डुकेश्वर—(हिमालय पर्वत के गढवाल प्रान्त में एक स्थान)

इस स्थान पर पाण्डु ने तप किया था। इसी स्थान के समीप पाँचों पाण्डवों युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव का जन्म हुआ था।

यहाँ पाँच बद्रियों में से एक, योगबद्री, का स्थान है।

पाण्डुकेश्वर से ६ मील पर वैखानस मुनि की तपोभूमि है।

प्रा० क०—(स्कन्दपुराण, केदार खण्ड, प्रथम भाग, ५८ वाँ अध्याय) राजापाण्डु ने मृगरूपधारी मुनि के शाप से दुखी हो कर तप किया। तभी से वह स्थान पाण्डु स्थान के नाम से प्रसिद्ध हो गया। उस समय विष्णु भगवान प्रकट हो कर बोले कि हे पाण्डु तुम्हारे क्षेत्र में धर्मादिकों के अंश से बलवान पुत्र उत्पन्न होंगे। ऐसा कह कर विष्णु चले गये। उस स्थान पर पाण्डुकेश्वर विराजते हैं।

( महाभारत आदि पर्व, ११८ वाँ अध्याय ) हस्तिनापुर के राजा पाण्डु हिमालय पर्वत के दाहिने छोर में घूमघाम कर अपनी कुन्ती और माद्री स्त्रियों के सहित पर्वत की पीठ पर बैठकर आखेट करने लगे। एक समय उन्होंने मैथुनधर्म में आसक्त एक मृग को मारा। कोई तेजस्वी ऋषिकुमार मृग का स्वरूप धारण करके मृगी से मिला था। उसने पाण्डु को शाप दिया की तुम जब काम युक्त होकर अपनी स्त्री से मिलोगे तब मृत्यु को प्राप्त होगे।

( ११९ वाँ अध्याय ) उसके उपरान्त राजा पाण्डु ने अपने और अपनी स्त्रियों के सब वस्त्र और भूषण ब्राह्मणों को देकर सारथियों और नौकरों को

हस्तिनापुर भेज दिया। पश्चात् वे अपनी दोनों स्त्रियों के साथ नागशत पर्वत को पधारे और हिमालय से होते हुए गन्ध मादन पर्वत पर जा पहुँचे। अन्त में वह इन्द्रद्युम्न ताल को प्राप्त करके हंसकूट को पीछे छोड़ कर शतशृङ्ग नामक पर्वत पर पहुँच कर तप करने लगे।

( १२३ वाँ अध्याय ) अनन्तर शतशृङ्ग पर्वत ही पर पाण्डु के युधिष्ठिर आदि ५ पुत्र जन्मे।

( १२५ वाँ अध्याय ) एक समय वसन्त ऋतु में माद्री को देखकर पाण्डु कामासक्त हो गए। उसी समय उनका देहान्त हो गया और माद्री इनके साथ सती हो गई।

( स्कन्द पुराण, केदार खण्ड, प्रथम भाग ५८ वाँ अध्याय ) बद्रिकाश्रम से ५ कोस पर वैखानस मुनि का आश्रम और यज्ञ भूमि है जिसके हवन के स्थान पर विन्दुमती नदी बहती है और अब तक जले हुए जौ और तिल देख पड़ते हैं।

( महाभारत, द्रोणपर्व, ५३ वाँ अध्याय ) राजा मरुत के यज्ञ में जिसकी सम्पूर्ण वस्तु स्वर्ण भूषित बनी था बृहस्पति के सहित सम्पूर्ण देवता हिमालय पर्वत के स्वर्ण शिखर पर एकत्र हुए थे।

(अश्वमेधपर्व, ६४ वाँ अध्याय) युधिष्ठिर आदि पाण्डवगण व्यासजी की आज्ञानुसार राजा मरुत के यज्ञ स्थान से नाना प्रकार के धन और रत्न लदवा कर हस्तिनापुर ले गए।

व० द०—पाण्डुकेश्वर चट्टी गढ़वाल ज़िले की बड़ी बस्तियों में से है। यहाँ सरकारी धर्मशाला और कई एक पनचक्कियाँ हैं। योगबद्री का शिखर दार मन्दिर पश्चिम मुख से खड़ा है। इसको लोग ध्यानबद्री भी कहते हैं। इनकी धातु की मूर्ति सुनहले मुकुट, छत्र और वस्त्र से सुशोभित है। पाण्डुकेश्वर से ६ मील अलकनन्दा के उस पार क्षीर गङ्गा और घृतगङ्गा अलकनन्दा में मिली है। उसी स्थान पर वैखानस मुनि ने तप किया था। लोग कहते हैं कि यज्ञ की राख अब तक पाई जाती है। राजा मरुत ने भी इसी स्थान पर यज्ञ किया था।

३७९ पाण्डरीक क्षेत्र—( देखिए पंढरपुर )

३८० पानीपत—( देखिए करनाल )

३८१ पारवती—( बिहार प्रान्त के पटना जिले में एक स्थान )

भगवान बुद्ध ने कबूतर बन कर यहाँ एक चिडीमार और उसके परिवार की भूख बुझाई थी।

प्रा० क०—एक चिडीमार और उसके परिवार की भूख देखकर भगवान बुद्ध ने कबूतर का रूप धर कर और उनके हाथ पड़कर उनकी भूख बुझाई थी। बाद को जब चिडीमार अपनी कृतज्ञता प्रकट करने भगवान के पास आया तब उन्होंने उपदेश दिया और वह शिष्य हो गया, और अन्त म अर्हत पद को प्राप्त हुआ।

फाहियान और हानचाग दोनों ने इस पहाड़ी की यात्रा की थी। जहाँ कबूतर का रूप धारण किया गया था वहाँ महाराज अशोक का बनवाया हुआ प्रसिद्ध कबूतर वाला सघाराम था। इसके अतिरिक्त यहाँ बहुतायत से सघाराम और बोधिसत्व का एक बड़ा मन्दिर था।

व० द०—पारवतीगाँव बिहार नगर से १० मील दक्षिण पूर्व और गिरियक से १० मील पूर्वोत्तर है। इसके समीप ५१० गज लम्बी और ३४० गज़ चौड़ी भूमि पुरानी इमारतों की निशानियों से भरी पड़ी है। इसके बीच म बोधिसत्व का प्रसिद्ध मन्दिर था। इस पहाड़ी के नीचे सकरी नदी बहती है। पहाड़ी पर एक खण्डहर ४०० फ़ाट लम्बा ४०० फ़ीट चौड़ा और १० १२ फ़ाट ऊँचा है। यह कबूतर वाले सघाराम की जगह है, और इसी के समीप महाराजा अशोक का स्तूप था।

३८१ पारशरामपुर—( सयुक्त प्रान्त के परतावगढ़ ज़िला में एक स्थान )

यह ५२ पीठों में से एक है जहां सती के शरीर का एक अङ्ग गिरा था।

३८३ पारसनाथ—( देखिए सम्मेद शिखर )

३८४ पावागढ—( गुजरात प्रान्त के पचमहाल जिला में एक स्थान )

जैनियों के मतानुसार इस पहाड़ी पर से श्रीरामचन्द्र के पुत्र लव और अकुश (कुश) निर्वाण को पधारे थे।

इस स्थान के पास कई जैन मन्दिर हैं ... इस स्थान के समीप कालिका देवी का मन्दिर है जहाँ सीढ़ियों पर चढ़कर जाना होता है। माघ सुदी १२ से १५ तक यहाँ मेला लगता है।

३८५ पावापुरी—( बिहार के पटना ज़िले में एक ग्राम )

इस स्थान का प्राचीन नाम अपापापुरी (पुण्यभूमि) था।

यहाँ श्री महावीर स्वामी, अन्तिम तीर्थङ्कर, को कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ था, और इस स्थान से वे मोक्ष को पधारे थ।

श्री महावीर स्वामी के मोक्ष स्थान पर सुन्दर सगमरमर का मन्दिर ग्राम के निकट एक बड़े व पक्के तालाब के मध्य मे है। बाहर से मन्दिर में जाने के लिए सदर फाटक से मन्दिर तक जँगलेदार पक्का पुल बना है। फाटक पर नित्य नौबत बजती है। यहां कुल चार मन्दिर हैं। महावीर स्वामी के निर्वाण गमन की तिथि कार्तिक बदी अमावास्या है। इस कारण कार्तिक बदी चौदस से अमावास्या तक यहाँ बहुत बड़ा मेला और रथ यात्रा होती है।

३८६ पिण्डार्क तीर्थ—( देखिए गोलगढ )

३८७ पिहोवा—( देखिए कुरुक्षेत्र )

३८८ पुनड्डा—( देखिए सीतामढ़ी )

३८९ पुरानाखेड़ा—( देखिए बिठूर )

३९० पुष्कर—( राजपूताने के अजमेर मेरवाड़ा मे एक तीर्थ )

पुष्कर तीर्थ सब तीर्थों में श्रेष्ठ माना गया है।

इसी स्थान पर क्षीर सागर में शयन करते हुए भगवान की नाभि से कमल पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए थे।

ब्रह्मा ने इस स्थान पर महायज्ञ किया था। पुष्कर, कुरुक्षेत्र गया, गगा और प्रभास पञ्चतीर्थ कहलाते हैं।

यहाँ अगस्त्य मुनि का एक आश्रम था।

राम लक्ष्मण और जानकी ने यहाँ स्नान किया था।

पूर्वकाल मे पुष्कर भारतवर्ष के ऋषियों का मुख्य स्थान था और यहाँ बहुत ऋषि गण निवास करते थे।

प्रा० क०—( पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड, १५ वाँ १६ वाँ अध्याय )

ब्रह्मा जी ने विचार किया कि हम सबसे आदि देव हैं। इससे जहाँ हम प्रथम विष्णु की नाभी से उपजे हुए कमल पर उत्पन्न हुए थे, वहाँ अपने यज्ञ करने के लिए अपूर्व तीर्थ बनावें। सो बनाना भी नहीं है क्योंकि वह स्थान तो है ही। इसके उपरान्त ब्रह्मा जी पुष्कर तीर्थ में आए और सहस्र वर्ष पर्यन्त वहां रहे।

इसके पीछे ब्रह्मा जी ने अपने हाथ का कमल वहीं फेंक दिया इसलिए वह स्थान 'पुष्कर' नाम से प्रसिद्ध हो गया। चन्द्र नदी के उत्तर और सरस्वती के पश्चिम नन्दन स्थान के पूर्व और कान्य पुष्कर के दक्षिण जितनी भूमि है ब्रह्मा जी ने उसमें यज्ञ की वेदी बना ली। उसमें प्रथम ज्येष्ठ पुष्कर नाम से

प्रसिद्ध तीर्थ बनाया जिसके देवता ब्रह्मा हैं। दूसरा मध्यम पुष्कर बनाया जिसक देवता विष्णु हैं। और तीसरा कनिष्ठ पुष्कर तीर्थ बनाया जिसके देवता रुद्र हैं।

सब ऋषियों ने पुष्कर में आकर जब पुराण, वेद, स्मृति और संहिता पढ़ी तब ब्रह्मा के मुख से वराह जी प्रकट हुए। वराह जी के मुख से प्रथम सब वेद वेदांग उत्पन्न हुए, और दाँतों से यज्ञ करने के लिए स्तम्भ प्रकट हुए। इसी प्रकार हाथ आदि अङ्गों से यज्ञ की बहुत सी सामग्री उत्पन्न हुई। वराह जी के दाँत के अग्र भाग पर्वत के शृङ्गों के समान ऊँचे थे जिस पर रख कर उन्होंने ब्रह्मा के हित के लिए प्रलय के जल के भीतर से पृथिवी को लाकर जहाँ पुष्कर तीर्थ बना है वहाँ स्थापित किया और आप अन्तरधान हो गए।

( १६ वाँ अध्याय ) सब तीर्थों में पुष्कर तीर्थ आदि है। यज्ञ पर्वत ( जहा ब्रह्मा जी ने पुष्कर में यज्ञ किया ) के समीप अगस्त्य जी का आश्रम है। ब्रह्मा जी ने कहा जो कोई पुष्कर तीर्थ की यात्रा करके अगस्त्य कुंड मे स्नान नहीं करेंगे उनकी यात्रा सफल नहीं होगी।

( स्वर्गखण्ड, दूसरा अध्याय ) पुष्कर में जहाँ ब्रह्मा जी यज्ञ कर रहे थे यज्ञ पर्वत की दीवार में नाग लोग जा बैठे। उनको थका हुआ देख जल की बड़ी धारा उत्तर को निकली। उसी से वहाँ नाग तीर्थ उत्पन्न हुआ। यह तीर्थ सर्पों के भय को नाश करता है।

( चौथा अध्याय ) राम, लक्ष्मण और जानकी ने पुष्कर मे विधि पूर्वक स्नान किया।

[ महर्षि अगस्त्य वेदों के एक मन्त्र द्रष्टा ऋषि हैं। इनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार की कथाएं मिलती हैं। पुलस्त्य की पत्नी हविर्भू के गर्भ से विश्रवा के साथ इनकी उत्पत्ति का वर्णन आता है। किसी किसी ग्रन्थ के अनुसार पुलस्त्य तनय दत्तोलि ही अगस्त्य के नाम से प्रसिद्ध हुए।

महर्षि अगस्त्य ने विदर्भ राज्य में पैदा हुई अपूर्व सुन्दरी और परम पतिव्रता लोपामुद्रा को पत्नी रूप में स्वीकार किया। वाल्मीकीय रामायण उत्तर काण्ड की अधिकांश कथायें इन्हीं के द्वारा कही हुई हैं। दक्षिण देश में आर्य सभ्यता की ज्योति लेकर यही गए थे और इन्होंने पहिले वहाँ धर्म का प्रचार आरम्भ किया था। इनके पिता महर्षि पुलस्त्य सप्तर्षि में से एक हैं और ब्रह्मा जी के मानस पुत्र थे।]

प० द०—पुष्कर अजमेर से ७ मील पर बड़ी सुन्दर बस्ती है। इसकी सीमा के अन्दर कोई भी मनुष्य जीव हिंसा नहीं कर सकता। इसके निकट भारत के सम्पूर्ण तालावों से अधिक पवित्रज्येष्ठ पुष्कर नामक तालाव है। पुष्कर के बहुतेरे पुराने मन्दिरों का औरङ्गजेब ने विनाश कर दिया। पुष्कर तालाव १½ कोस के घेरे में है और इसके किनारे पर बहुतेरे उत्तम घाट, राजपूताने के बहुत से राजाओं के बनवाए हुए अनेक मकान, धर्मशालाएं और मन्दिर हैं। पूर्व समय में असख्य यात्री यहाँ आते थे। अब भी लाखों यात्री आते हैं। कार्तिक शुक्ल ११ से पूर्णिमा तक ५ दिन पुष्कर स्नान की बडी भीड होती है।

ज्येष्ठ पुष्कर की परिक्रमा के अतिरिक्त पुष्कर तीर्थ की कई परिक्रमा की जाती हैं। पहली तीन कोस की, दूसरी ५ कोस की, तीसरी १२ कोस की, चौथी २४ कोस की जिनमें बहुतेरे ऋषियों के पुराने स्थान मिलते हैं।

ज्येष्ठ पुष्कर से सरस्वती नदी निकली है जो सागरमती में मिलने के पश्चात् लूनी कहलाती है और कच्छ के रन में जाकर गुप्त हो जाती है।

ज्येष्ठ पुष्कर से दो मील पर मध्यपुष्कर और कनिष्ठ पुष्कर हैं।

३९१ पेशावर—( सीमा प्रान्त का सदर स्थान )

इसका प्राचीन नाम पुरुषपुर था। बाद को परशावर हुआ।

भगवान बुद्ध का भिक्षा पात्र यहाँ रक्खा था। उनकी चिता का कुछ भाग भी यहाँ था।

कनिष्क का प्रसिद्ध सघाराम जिसमें आर्य्य पार्श्विक, मनोरथ, असङ्ग और वसुबन्धु जैसे सुविख्यात धर्माचार्य रहते थे, यहीं था।

वसुबन्धु की यह जन्म भूमि है।

फाहियान ने ४०२ ई० में लिखा है कि एक स्तूप में यहाँ भगवान् बुद्ध का भिक्षापात्र रक्खा था। आरम्भ मे यह पात्र वैशाली ( बसाढ़ ) में था जहाँ से यहाँ आया था। ह्वानच्वांग के समय ६३० ई० में भिक्षापात्र का स्तूप शहर के पश्चिमोत्तर में टूटा पड़ा था। भिक्षापात्र पारस (ईरान) ले जाया जा चुका था। इस समय अब यह पात्र कन्धार के समीप है और सर एच० रालिन्सन लिखते हैं कि मुसलमान उसको श्रद्धा पूर्वक पूजते हैं।

महाराज कनिष्क ने उस काल के सबसे बड़े स्तूप में, जिसका घेरा ½ मील और ऊँचाई ४०० फीट थी, भगवान् बुद्ध की चिता की कुछ विभूति भी यहाँ लाकर रक्खी थी।

महाराज कनिष्क का भारी संघाराम जो भारतवर्ष भर में प्रसिद्ध था पेशावर में था। ईसा की प्रथम शताब्दी के समय के सबसे बड़े धर्माचार्य आर्य्य पार्श्विक, मनोरथ और वसुबन्धु के यहाँ रहने से उसका नाम और भी फैल गया था। ह्वानच्वांग की यात्रा के समय तक यह इमारत बहुत कुछ टूट फूट चुकी थी पर उस समय भी आबाद थी।

अकबर ने यहाँ का नाम परशावर से बदल कर पेशावर किया था। पेशावर आजकल का बड़ा शहर है और अफगानिस्तान का पेरी (PARIS) कहलाता है पर पुराने निशानात लुप्त हो चुके हैं।

३९२ पैठण वा पैठन—( हैदराबाद राज्य के औरङ्गाबाद जिले में एक नगर )

प्राचीन काल में यह नगर प्रतिष्ठानपुर नाम से प्रसिद्ध था और विद्या के लिये प्रख्यात था। अब तक लोग इसको दक्षिण का प्रतिष्ठानपुर कहते हैं। ( उत्तर का प्रतिष्ठानपुर इलाहाबाद जिले में झूंसी है और केवल 'प्रतिष्ठान' विट्ठूर है।)

पैठन प्रसिद्ध सम्राट शालिवाहन की राजधानी थी जिन्होंने ७८ ई० में शक सम्वत आरंभ किया।

श्री एकनाथ महात्मा का यहाँ जन्म हुआ था और यहीं उन्होंने शरीर छोड़ा था।

भक्त कूर्मदास यहाँ जन्मे थे।

सन्त ज्ञानेश्वर ने यहाँ वास किया था।

[ महात्मा एकनाथ का जन्म सम्वत् १५८० वि० के लगभग, और शरीरान्त १६५६ वि० में हुआ था। इन्होंने गृहस्थाश्रम का दिव्य आदर्श संसार के सामने रक्खा था। लोगों का विश्वास है कि महाराज रामचन्द्र ने स्वयं उनका 'भावार्थ रामायण' ग्रन्थ लिखवाया था। ]

[ भक्त कूर्मदास, ज्ञानदेव और नामदेव जी के समकालीन एक ब्राह्मण थे। जन्म से ही इनके हाथ पैर नहीं थे। एक दिन पैठन में हरि कथा हो रही थी। यह ध्यान सुन कर रेंगते हुए वहाँ पहुँचे। कथा में पन्ढरपुर की आषाढ़ी कार्तिकी यात्रा का माहात्म्य सुना। यह यात्रा को चल पड़े और पेट के बल रेंगते रेंगते लहुल नामक स्थान में चार महीने में पहुँचे। एकादशी आ गई और पन्ढरपुर ७ कोस रह गया। यात्रियों के झुंड के झुंड

जाते देख यह रो पड़े। भगवान की विनती करते रहे। श्री विट्ठल भगवान ने वहीं आकर इन्हें दर्शन दिये।]

सन्त ज्ञानेश्वर जब बालक थे तब पैठन ही के ब्राह्मणों से उन्होंने शुद्धि पत्र प्राप्त किया था और यहीं एक भैंस में भी परम ब्रह्म का अंश प्रमाणित करने को उससे वेद मन्त्रों का उच्चारण करवाया था। यह चमत्कार ईश्वर का लीला थी। ज्ञानेश्वर जी उस समय निरे बालक थे। वे केवल यही कहते थे कि सब में केवल एक ब्रह्म है। (देखिए आलन्दी)

३९३ पोन्नुर—(मद्रास प्रदेश के चित्तूर जिला में एक ग्राम)

पोन्नुर प्रसिद्ध जैन कवि श्री एलाचार्य महाराज का निवास स्थान था।

हर रविवार को इन कवि के स्मरणार्थ यहाँ यात्रा होती है। पर्वत पर उनके चरण चिन्ह हैं।

३९४ पोरबन्दर—(काठियावाड़ के पश्चिमी भाग में एक राज्य की राजधानी)

पोरबन्दर को सुदामापुरी भी कहते हैं।

यह श्री कृष्णचन्द्र के सखा सुदामा की नगरी थी।

भारत के भाग्य विधाता राष्ट्र पिता महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधी जी की यह जन्म भूमि है (१८६९ ई०)।

श्री कृष्ण जी ने सांदीपन मुनि से उज्जैन में विद्याध्ययन किया था और उनके अन्य सहपाठियों में एक सुदामा भी थे। जब श्री कृष्ण जी मथुरा छोड़ कर द्वारिका में आकर बसे थे, उन दिनों सुदामा बहुत दरिद्रावस्था में थे। उनकी पत्नी ने उन्हें आग्रह करके श्री कृष्ण से मिलने को भेजा और कहा जाता है कि कहीं से माँग कर कुछ मुट्ठी चावल भी भेंट को बाँध दिये। सुदामा द्वारिका पहुँच कर बहुत सकुचाये और श्री कृष्ण का वैभव देख कर पत्नी के दिये हुये चावल छिपा लिये। यह बात श्री कृष्ण से छिप न सकी और खींचा खाँची में चावल जमीन पर बिखर गये। उनका एक एक दाना श्री कृष्णचन्द्र और उनकी रानियों ने बीन बीन कर खाया और सराहा कि ऐसी स्वादिष्ट वस्तु उन्हें जीवन पर्यन्त खाने को न मिली थी, सुदामा का श्री कृष्ण ने अनुपम आदर किया। द्वारिका से लौट कर सुदामा का सारा दरिद्र दूर हो गया।

पोरबन्दर नगर समुद्र के तट पर बसा है और मूल द्वारिका से, जहाँ श्री कृष्ण जी पहिले आकर बसे थे, १२ मील पर है। यहाँ के निवासी

जहाज बनाने में बड़े सिद्धहस्त हैं और अपनी नौकाओं पर दूर दूर तक व्यापार करने जाते हैं।

३९५ प्रभास कूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

३९६ प्रभास पट्टन—( देखिये सोमनाथ पट्टन )

३९७ प्रभास क्षेत्र—( देखिए फफोसा )

३९८ प्रमोद वन—( देखिए चित्रकूट )

३९९ प्रवर्षण गिरि—( देखिए आना गन्दी )

४०० प्रह्लादपुरी—( देखिए मुल्तान )

## फ

४०१ फफोसा—( संयुक्त प्रान्त के इलाहाबाद जिले में एक गाँव )

इसे पभोसा और पपोसा भी कहते हैं। यहाँ पद्मप्रभु स्वामी (छठे तीर्थंकर) के दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुये थे।

यहाँ एक पहाड़ी है जिसको प्रभास क्षेत्र कहते हैं। इस पर ११६ सीढ़ियाँ चढ़ने पर एक प्राचीन जैन मन्दिर मिलता है जिसमें प्रतिमायें हैं। यह स्थान कोसम ( प्राचीन कौशाम्बी ) से ३ मील पर है। कोसम में पद्म प्रभु स्वामी के गर्भ और जन्म कल्याणक हुए थ। ( देखिए कोसम )

४०२ फाजिल नगर—(देखिए पडरौना )

## ब

४०३ बँदर पुन्छ—( देखिए यमुनोत्री )

४०४ बकरौर—(बिहार प्रान्त में बोधिगया से आध मील पर एक गाँव)। एक पूर्व जन्म में भगवान बुद्ध यहाँ हस्ती रूप मे रहे थे।

ह्वानचाँग ने यहाँ की यात्रा की थी। एक राजा ने एक गन्ध हस्ति को पकड़ा था। इससे हस्ती रूप में बुद्ध का जन्म हुआ था। इस स्थान पर एक स्तूप बनवाया गया था।

बकरौर गाँव से मिला हुआ एक टूटा स्तूप मौजूद है जिसका घेरा १५० गज और ऊँचाई १७ गज है। यह १५½इन्च × २½ इन्च की ईंटों से बना है।

४०५ बकेश्वर तीर्थ—( देखिए नागोर )

४०६ बक्सर—( विहार के शाहावाद जिले में एक कस्बा )

इसके प्राचीन नाम वेदगर्भ पुरी, विश्वामित्र आश्रम, सिद्धाश्रम, व्याघ्रसर और व्याघ्रपुर मिलते हैं।

यह विश्वामित्र ऋषि का आश्रम है।

ताड़का-वन इसी स्थान पर था, और यहीं रामचन्द्र जी ने ताड़का को मारा था।

यहीं राम और लक्ष्मण को विश्वामित्र जी ने धनुष विद्या सिखलाई थी।

सिद्धाश्रम वामनदेव का जन्मस्थान है। यहीं वामनावतार हुआ था। जब विश्वामित्र जी के यज्ञ में राक्षस उत्पात करने लगे तब वह अयोध्या आकर राम और लक्ष्मण को अपने यज्ञ की रक्षा के लिये राजा दशरथ से माँग ले गये थे। रामचन्द्र जी ने विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा सिद्धाश्रम में की थी और महर्षि ने उनको और लक्ष्मण को धनुष विद्या सिखाई थी। यहीं से विश्वामित्र जी राम और लक्ष्मण को मिथिलापुर ले गये थे जहाँ धनुष यज्ञ में सीता जी के स्वयम्वर में रामचन्द्र जी ने सीता जी को पाया था।

बक्सर में गंगा जी के तट पर चरित्र वन महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ का स्थान है जहाँ अब भी नदी से कट कट के जो भूमि गिरती है उसमें यज्ञ के चिन्ह देख पड़ते हैं। यहां एक मन्दिर में रामचन्द्र जी और लक्ष्मण जी की मूर्तियाँ हैं और नीचे की तह में महर्षि विश्वामित्र हैं। कहा जाता है इसी स्थान पर विश्वामित्र ने राजकुमारों को शस्त्र विद्या सिखाई थी। यहाँ से लगभग एक मील पर ताड़का के मारे जाने का स्थान है। उस स्थान से गंगा जी तक एक नाली सी बनी है। लोग कहते हैं इसी राह से ताड़का का शरीर खींच कर गंगा जी में डाला गया था।

बक्सर के पश्चिम थोरा नदी के तट पर, जहाँ वह गंगा जी से मिली है एक ऊँची जगह है। उसी को वामनावतार का स्थान कहा जाता है। भादों मास में यहां वामन अवतार का मेला लगता है।

पवित्र स्थान होने के कारण गंगा जी के किनारे यहां बहुत से अच्छे घाट और मन्दिर बने हैं।

विश्वामित्र आश्रम—विश्वामित्र जी का आश्रम गया से २५ मील पश्चिमोत्तर देवकुण्डा में भी बताया जाता है। सरस्वती के पश्चिमी तट पर स्थाणु तीर्थ-कुरुक्षेत्र में भी इनका निवास रहा था, और कौशिकी ( कोसी )

नदी के तट पर भी इन्होंने वास किया था। पर इनका मुख्य निवास स्थान वक्सर ही था।

४०७ वक्सर घाट—( संयुक्त प्रान्त के रायबरेली जिला में एक घाट )
यहाँ भगवान कृष्ण ने वत्सासुर को मारा था।

यह घाट गंगा जी के किनारे पर है। यहाँ बहुत से मेले लगते हैं पर इसमें दो बहुत बड़े हैं—एक कार्तिक पूर्णमासी और दूसरा माघ की अमावास्या को। इनमें हज़ारों लोग गंगा जी में स्नान को आते हैं। कहा जाता है कि यहाँ नागेश्वर नाथ का मन्दिर भी कृष्ण जी का बनवाया हुआ है।

४०८ बखर—( देखिए बसाढ़ )

४०९ बटद्रवा— ( आसाम प्रान्त के नौगाँव जिला में एक गाँव )
यहाँ स्वामी शङ्करदेव का जन्म हुआ था।

[ स्वामी शङ्करदेव का जन्म बटद्रवा ग्राम में १३७१ शकाब्द में कायस्थ कुल में हुआ था। इनको लोग शङ्कर का अवतार मानते हैं। आप आसामी साहित्य के पिता माने गये हैं। १२० वर्ष की अवस्था में एक वृक्ष के नीचे समाधि लगा कर शंकर देव जी साकेत लोक को पधारे। ]

बटद्रवा आज आसाम में हिन्दुओं का एक प्रधान तीर्थ स्थान है।

४१० बटेश्वर —( संयुक्त प्रान्त के आगरा जिले में एक कस्बा )
यह स्थान नौऊखलों में से एक है जहाँ से प्रलय के समय जल निकल कर सारी पृथिवी को डुबो देगा।

इस स्थान पर प्राचीन सूर्य्यपुर या सूरजपुर नगर था। इसे सुरपुर भी कहते थे और कहा जाता है कि भगवान् कृष्ण के नाना शूरसेन का यह बसाया हुआ है।

बटेश्वर आगरा शहर से ३५ मील दक्षिण-पूर्व यमुना नदी के किनारे पर है। कार्तिक पूर्णिमा को यहां का प्रसिद्ध मेला लगता है जो दो सप्ताह तक रहता है और जिसमें लगभग दो लाख आदमी जमा होते हैं, और ५० हजार से ऊपर जानवर, विशेषकर घोड़े बिकने को आते हैं। भदावर के राजा बदन सिंह ने यहाँ १०० से अधिक शिवमन्दिर बनवाये थे।

बटेश्वर से दो मील उत्तर 'औंधा खेड़ा' है। इस पर कई जैन मन्दिर हैं। इससे आध मील पर एक गढ़ी के चिन्ह हैं। यह गढ़ी और औंधा खेड़ा प्राचीन नगर के स्थान बतलाये जाते हैं। इस खेड़े से एक मील पूर्व और बटेश्वर

से एक मील पूर्वोत्तर 'पुराना खेड़ा' है। नदी के कारण औंधे खेड़े से उजाड़ कर प्राचीन नगर यहां बसा था और फिर यहाँ से भी नष्ट हो गया। पुराने खेड़े पर कई हिन्दू मन्दिर हैं।

४११ बड़गाँवाँ—( बिहार प्रान्त मे राजगृह से ७ मील उत्तर एक गाँव )

यहाँ प्राचीन काल मे जगत विख्यात बौद्ध विद्या केन्द्र नालन्दा था।

भगवान बुद्ध ने यहां तीन मास देवताओं के हित के लिए उपदेश दिया था। इसके अतिरिक्त चार मास और भी निवास किया था।

महाराज अशोक ने नालन्दा विहार की स्थापना की थी। द्वितीय ईस्वी सदी के प्रसिद्ध महात्मा नागार्जुन ने यहा विद्याध्ययन किया था।

नालन्दा से चार मील पूर्व-दक्षिण आर्य्य सारि पुत्र, जो भगवान बुद्ध के दाहिने हाथ कहे जाते हैं, का जन्म हुआ था, और डेढ मील दक्षिण-पश्चिम आर्य्य मुग्दल ( मौग्दलायन ) जो भगवान बुद्ध के बाँए हाथ कहलाते हैं, का जन्म हुआ था।

परम पूज्य जैन महात्मा महावीर ( अन्तिम तीर्थंकर ) ने यहाँ चौदह चौमास वास किया था।

[ संस्कृत ग्रन्थों मे महात्मा सारिपुत्र को शारिपुत्र, शारद्वती पुत्र और शालिपुत्र आदि कहा है। इनका पहला नाम उपतिश्य था। उनकी पदवी धर्म सेना पति की थी। 'सुत्त निपात' नामक ग्रन्थ में लिखा है कि भगवान बुद्ध ने पूछे जाने पर कहा था कि उनके न रहने पर सारिपुत्र ही धर्म चक्र का प्रवर्तन और सचालन करेंगे। सारिपुत्र के नाम से बौद्ध ग्रन्थों मे अनेक आख्यान लिखे मिलते हैं।

सारिपुत्र के बाद भगवान बुद्ध के द्वितीय शिष्य मौग्दलायन, मोग्गल्लान या मुग्दल थे। सारिपुत्र और मुग्दल दोनों ही ज्ञानामृत की खोज मे अलग अलग चले थे और दोनों ने निश्चय किया था कि यदि एक को अमृत मिला तो वह दूसरे को भी बतलावेगा। सारिपुत्र को भगवान बुद्ध के उपदेशों का पता चला। उन्होंने मुद्गल को सूचना दी और दोनों भगवान के चरणों में साथ-साथ पहुँचे। ]

बडगावाँ जिसे बड़ागाँव भी कहते हैं, इस समय एक साधारण ग्राम है। यहा १६०० फीट लम्बे और ४०० फीट चौड़े ईंटों के खेड़े उस स्थान को

बता रहे हैं जहां पहिले प्रसिद्ध विद्या क्षेत्र था। उसके आस-पास ऊँचे-ऊँचे टीले, पुरानी धर्मशालाओं और मन्दिरों के चिन्ह हैं।

फाहियान व ह्वानचाङ्ग ने यहाँ की यात्रा की थी और ह्वानचाङ्ग ने पाँच साल रह कर धर्मग्रन्थ पढ़े थे। उन दिनों विद्यालय के प्रधान श्री शील-भद्र थे जिन्होंने १५ मास ह्वानचाँग को योग शास्त्र पढ़ाया था। ह्वानचाङ्ग ने लिखा है कि यहाँ एक ताल था जिसमें नालन्दा नाग एक समय में रहा करता था। आजकल जो करगरिया पोखरा कहलाता है यह वही ताल है। जिस स्थान पर भगवान बुद्ध ने तीन मास देवताओं को शिक्षा दी थी वहां एक विशाल धर्मशाला बनायी गयी थी। उसका उजड़ा खेड़ा इस समय ५३ फीट ऊँचा और ७० फीट लम्बा-चौड़ा है। दूसरे स्थान पर जहाँ बुद्ध भगवान ने चार मास वास किया था, एक भारी विहार बनवा दिया गया था। उसके स्थान पर अब ६० फीट ऊँचा खेड़ा खड़ा है। एक व्यक्ति ने जहाँ भगवान बुद्ध से जीवन-मरण के विषय पर बहस की थी वहाँ एक स्तूप बनवाया गया था। उसका टीला बलनताल के पास इस समय मौजूद है।

जहां आर्य्य मौद्गलायन का जन्म हुआ था वह स्थान इस समय जग दीश पुर कहलाता है और बड़गावाँ से डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिम में है। इसका प्राचीन नाम कुलिका था।

आर्य्य सारिपुत्र का जन्म नालन्दा से लगभग ४ मील पर कल्पिनाक के समीप हुआ था।

कन्नौज के सुप्रसिद्ध चक्रवर्ती सम्राट हर्षवर्धन ने १०० गाँव नालन्दा विद्याक्षेत्र के खर्च को लगा रखे थे। बड़े बड़े धनी मानी लोगों ने अन्य जायदादें दे रखी थीं। यह विद्या क्षेत्र सारे संसार में विख्यात था, पश्चिमी ससार के लिए पूर्वकाल में जो रोम ( इटली की राजधानी ) और एथेन्स ( यूनान की राजधानी ) थी, वैसा पूर्वी ससार के लिये ७०० ईस्वी तक नालन्दा था।

४१२ बड़वानी—( देखिए चूलगिरि )
४१३ बड़ागाँव—( देखिए बड़गावाँ )
४१४ बदरिया—( देखिए सोरों )
४१५ बद्रिकाश्रम
वा
बद्रीनाथ—( हिमालय पर्वत के गढ़वाल राज्य में एक प्रसिद्ध स्थान )

यहाँ जगद्गुरु शङ्कराचार्य जी ने व्यास जी के रचे हुए सूत्रों पर भाष्य बनाया था।

यह स्थान पुराणों का मन्द्राचल, नर नारायण आश्रम, महाक्षेत्र और गन्धमादन पर्वत है।

भारतवर्ष के चार प्रसिद्ध धामों में से यह एक है।

जगद्गुरु शङ्कराचार्य ने बद्रीनाथ की मूर्ति को स्थापित किया था।

श्री वेद व्यास इस स्थान पर पधारे थे और पास ही अपना आश्रम बनाया था। बद्रीनाथ के निकट मनाल नामक स्थान में महर्षि व्यास का आश्रम था और वहीं उन्होंने महाभारत और पुराणों की रचना की थी।

मनु पराशर जी ने यहाँ धर्म की शिक्षा दी थी।

यहाँ नर-नारायण ने तप किया था।

पाण्डव लोग इस स्थान पर आए थे।

नारद जी ने यहाँ तपस्या की थी।

भक्त प्रह्लाद यहाँ पधारे थे।

कृष्ण की आज्ञा से उद्धव यहाँ तप करने आए थे।

राजा ध्रुव ने यहाँ तप किया था और यहीं से उनका स्वर्गवास हुआ था।

बद्रीनारायण से सवा दो मील पर वसुधारा है जहाँ पूर्व काल में अष्ट वसुओं ने तप किया था।

चन्द्रमा ने भी यहीं तप किया था।

वैवस्वत मनु ने बद्रीनाथ में तपस्या की थी।

बद्रिकाश्रम से एक मील पर राजा पुरुरवा ने उर्वशी के साथ विहार किया था।

प्रा० क०—( पराशर स्मृति, पहला अध्याय ) ऋषिगण धर्म तत्व को जानने के लिए व्यास जी को आगे करके बद्रिकाश्रम में गए थे। व्यास जी ने *ऋषियों की सभा में बैठे हुए महर्षि पराशर की पूजा करके उनसे पूछा कि* हे पिता! आप चारों वर्णों के करने योग्य उनका साधारण आचार मुझ से कहिए। ऐसा सुन पराशर जी ने धर्म का निर्णय कहा।

( महा भारत, वन पर्व, १२ वां अध्याय ) अर्जुन बोले कि हे कृष्ण! पूर्व जन्म में तुम एक सौ वर्ष तक वायु भक्षण करके ऊर्ध्ववाहु होकर विशाल

बद्रिकाश्रम में एक चरण से खड़े रहे थे। कृष्ण बोले, हम तुम हैं और तुम हमारे रुप हो अर्थात् तुम नर हो और हम नारायण हैं। हम दोनों नर-नारायण ऋषि, समय पाकर जगत में प्राप्त हुए हैं।

( १४१ व १४५ वां अध्याय) युधिष्ठिर बोले ! अब हम लोग उस उत्तम पर्वत को देखेंगे जहाँ विशाल बद्रिकाश्रम तथा नर-नारायण का स्थान है। लोमस ऋषि ने कहा कि यह महानदी अलकनन्दा बद्रिकाश्रम से आती है। इसी के जल को शिव ने अपने शिर पर धारण किया है। यही नदी गङ्गाद्वार में गई है। जिस समय पाण्डवलोग गन्धमादन पर्वत पर पहुंचे उस समय महा वर्षा और आँधी आई। दूर जाने पर उन्होंने कैलास पर्वत केनीचे नर और नारायण के आश्रम को देखा और वे उसी स्थान पर रहने लगे।

( १८७ वां अध्याय ) सूर्य के पुत्र वैवस्वत मंनु ने बद्रिकाश्रम में जाकर ऊर्ध्व बाहु होकर दस सहस्त्र वर्ष तक घोर तप किया।

( शान्ति पर्व, ३४ वां अध्याय ) नर और नारायण ने बद्रिकाश्रम का अवलम्बन करके माया में शरीर से निवास करते हुए तपस्या की थी।

( ३४४ वां अध्याय ) नारद ने नर-नारायण के आश्रम में देव प्रमाण से सहस्त्र वर्ष तक वास करके अनेक प्रकार से नर-नारायण मंत्र का विधि पूर्वक जप किया और वे नर-नारायण की सब प्रकार से पूजा करते हुए उनके आश्रम में निवास करने लगे।

( वाराह पुराण, ४८ वां अध्याय ) काशी का विशाल नामक राजा शत्रुओं से पराजित होकर बद्रिकाश्रम में जाकर गन्धमादन पर्वत की कन्दराओं में तप करने लगा।

(देखो भागवत, ८ वां स्कन्ध, पहला अध्याय) नारद जी पृथिवी पर्य्यटन करते हुए नर नारायण आश्रम में पहुँचे और टिक कर नारायण से प्रश्न करने लगे।

( आदिब्रह्मपुराण, ६८ वां अध्याय ) कृष्ण बोले कि हे उद्धव ! तुम गन्धमादन पर्वत पर नर नारायण के स्थान पवित्र बद्रिकाश्रम में तप की सिद्धि के लिए जाओ। कृष्ण की आज्ञा से उद्धव वहाँ गए।

( श्रीमद्भागवत, १२ वां अध्याय ) राजा ध्रुव ३६ हज़ार वर्ष राज्य करने के उपरान्त अपने पुत्र को राज तिलक देकर बद्रिकाश्रम को चले गए और

यहाँ बहुत समय तक भगवान के स्वरूप का ध्यान करके विमान पर चढ़ ध्रुव लोक में चले गए।

(गरुड़ पुराण, पूर्वार्द्ध, ८१ वां अध्याय) नर नारायण का स्थान बद्रिकाश्रम भक्ति मुक्ति का देने वाला है।

(स्कन्दपुराण, केदारखण्ड, प्रथम भाग ५७ वाँ अध्याय) गन्धमादन पर्वत पर बद्रिकाश्रम में कुवेरादिक शिलाओं और नाना तीर्थों से सुशोभित नर नारायण का पवित्र आश्रम है।

(५८ वा अध्याय) बद्रीनाथ के धाम से पश्चिम आध कोस पर उर्वशी कुण्ड है। उसी स्थान पर राजा पुरुरवा ने पाँच वर्ष उर्वशी के साथ रमण करके पुत्रों को उत्पन्न किया था।

बद्रीनाथ के वाम भाग में सब पापों का नाश करने वाला वसुधारा तीर्थ है। स्नान करके धर्म शिला पर बैठकर यहाँ अष्टाक्षर मंत्र से आठ लाख जप करने से विष्णु के समान रूप मिलता है। वहाँ सोमतीर्थ है जहाँ चन्द्रमा ने तप कर के सुन्दर रुप पाया।

(६२ वा अध्याय) गङ्गाद्वार से ३० योजन पूर्व भोग और मोक्ष का देने वाला महाक्षेत्र बद्रिकाश्रम है। मनुष्य एक बार बद्रीनाथ के दर्शन करने से ससार में फिर जन्म नहीं लेता। बद्रीनाथ का नैवेद्य भोजन करने से अभक्ष भक्षण का दोष छूट जाता है।

(वामन पुराण, ७८ वा अध्याय) प्रह्लाद जी कुब्जाम्रक तीर्थ (हृषीकेश) में गए। यहाँ से वे बद्रिकाश्रम तीर्थ चले गए।

वि० द०—अलकनन्दा के दाहिने किनारे पर टेहरी गढ़वाल के राज्य मे बद्रीनाथ की बस्ती है। बद्रीनाथ की सबसे ऊँची चोटी समुद्र के जल से २३,२०० फीट ऊँची है। पूर्व और पश्चिम वाले पहाड़ों को लोग जय और विजय कहते हैं। पर्वतों के बीच में समुद्र से १०,४०० फीट की ऊचाई पर उत्तर-दक्षिण लम्बा ढलुआ मैदान है जिसमें अलकनन्दा बहती है और बद्रीनाथ की पुरी है। साधारण लोग ३ या ५ अथवा ७ रात्रि वहाँ वास करते हैं परन्तु गरीब लोग जाड़े के भय से उसी दिन या एक रात्रि निवास करके चले आते हैं।

बद्रीनाथ जी का मन्दिर अलकनन्दा के दाहिने किनारे पर पत्थर से बना हुआ ४५ फीट ऊंचा है। मन्दिर के भीतर एक हाथ ऊंची बद्री नारायण की

द्विभुजी श्यामल मूर्त्ति विद्यमान है। बहुमूल्य वस्त्राभूषण और विचित्र मुकुट से सुशोभित यह ध्यान में मग्न बैठी है। ललाट पर हीरा लगा है और ऊपर सोने का छत्र है। पास ही लक्ष्मीजी, नर-नारायण, नारद, गणेश, सोने के कुवेर, गरुड़ और चाँदी के उद्धव हैं। कहा जाता है कि पहले बद्रीनारायण-गुप्त थे। सन् ईस्वी की नवीं सदी में श्री जगद्गुरु शङ्कराचार्य ने इन की मूर्त्ति को नदी में पाया और मन्दिर बनाकर स्थापित किया। भगवान बद्री-नारायण जी को प्रातः समय कुछ जलपान और शाम को कच्ची रसोई का भोग लगता है। प्रति दिन तीन मन का भोग लगता है, जिसको यात्री लोग जाति भेद के विचार विना, जगन्नाथपुरी के प्रसाद के समान,भोजन करते हैं। छः महीने जब जाड़े में पट बन्द रहते हैं तब बद्रीनारायण का पूजन जोशी मठ में होता है।

बद्रिकाश्रम में ऋषि गङ्गा, कूर्मधारा, प्रह्लाद धारा, तप्त कुण्ड और नारद कुण्ड इन पाँच को पञ्चतीर्थ कहते हैं।

(१) ऋषि गङ्गा-बद्रीनारायण के मन्दिर से चौथाई मील पर और बद्रीनाथ की बस्ती से थोड़े ही दक्षिण अलकनन्दा में मिली है।

(२) बद्रीनाथ के मन्दिर से कुछ दक्षिण एक दीवार में कूर्म्म का मुख बना है जिससे झरने का पानी एक हौज में गिरता है। इसे कूर्म धारा कहते हैं।

(३) कूर्मधारा से उत्तर एक चबूतरे के नीचे एक नल द्वारा एक हौज में झरने से गर्म जल गिरता है जिस को प्रह्लाद धारा कहते हैं।

(४) बद्रीनाथ के मन्दिर के सामने ६५ सीढ़ियों के नीचे अलकनन्दा के दाहिने किनारे पर खुले हुए मकान में पन्द्रह-सोलह हाथ लम्बा और बारह-तेरह हाथ चौड़ा तप्त कुण्ड है। कुण्ड में ढ़ाई हाथ ऊंचा गर्म जल रहता है। यात्रियों को इस बर्फीले देश में तप्त कुण्ड के गर्म जल में स्नान करते समय बड़ा सुख मिलता है।

(५) तप्तकुण्ड के पास पूर्वोत्तर के कोने पर अलकनन्दा में नारदशिला नामक पत्थर का एक बड़ा ढोंका है जिसके नीचे अलकनन्दा का पानी सङ्कीर्ण गुफा से गिरता है। इसको नारद कुण्ड कहते हैं।

बद्रिकाश्रम में नारदशिला, वाराहशिला, मार्कण्डेयशिला, नृसिंहशिला और गरुड़ शिला प्रसिद्ध हैं। वाराहशिला नारदशिला से पूर्व अलकानन्दा में

है, और मार्कण्डेयशिला तथा नृसिंहशिला एक ही जगह नारदशिला से दक्षिण अलकनन्दा में हैं। गरुड़शिला तप्तकुण्ड से पश्चिम एक कोठरी में है। ये पाँचों शिलाएँ पत्थर के बड़े बड़े ढोके हैं।

बद्रीनाथ के मन्दिर से लगभग ४०० गज उत्तर अलकनन्दा के दाहिने किनारे पर ब्रह्म कपाली चट्टान है जिस पर बैठकर यात्रीगण पितरों को पिण्डदान करते हैं।

बद्रीनाथ से सवा दो मील उत्तर वसुधारा तीर्थ है। आषाढ़ और श्रावण के महीनों में बर्फ कम होने पर कोई-कोई यात्री वसुधारा में स्नान करने को जाते हैं। वहाँ पूर्वकाल में अष्ट वसुओं ने तप किया था। वहाँ ऊँचे पहाड़ से वसुधारा नामक बड़ी धारा गिरती है। वसुधारा के आगे बर्फीला पर्वत है।

बद्रीनारायण के मन्दिर का पट ज्येष्ठ की सक्रान्ति से दो चार दिन पहले शुभ सायत मे खुलता है और अगहन की सक्रान्ति के कुछ दिन पीछे शुभ सायत मे बन्द हो जाता है। जाड़े के दिनों में पाण्डुकेश्वर से उत्तर कोई नहीं रहता। बद्रीनाथ का पुजारी सुयोग्य दक्षिणी नम्बोरी ब्राह्मण बनाया जाता है जिसको रावल कहते हैं। रावल विवाह नहीं करता परन्तु पाण्डुकेश्वर, जोशीमठ और टेहरी आदि पहाड़ी बस्तियों का कोई कोई ब्राह्मण या क्षत्रिय अपनी पुत्री को बद्रीनाथ की पूजा चढ़ाता है। वहाँ की परम्परा के अनुसार वही लड़की रावल की स्त्री होती है। रावल अपनी स्त्री का बनाया हुआ भोजन नहीं करता। ब्राह्मण स्त्री से जो सन्तान होती है वह ब्राह्मण और क्षत्रिय स्त्री से जो सन्तान होती है वह क्षत्रिय कहलाती है। रावल के मरने पर रावल के पुत्र उत्तराधिकारी नहीं होते किन्तु नया रावल दक्षिण से बुलाया जाता है।

बद्रीनाथ की आमदनी लगभग पचास हजार रुपया सालाना है। आय और व्यय के प्रबन्ध के लिए अब सरकारी इन्तिजाम है। बद्रीनाथ के सब पण्डे देव प्रयाग के रहने वाले हैं। ये लोग सुफल करने के समय अपने यात्री के दोनों हाथों को फूलों की माला से बाँध देते हैं और जितनी अधिक दक्षिणा कबूल करवा सकते हैं कबूल करवा कर तब यात्री को फूल माला के बन्धन से मुक्त करते हैं।

बद्रीनारायण में कितनी ही धर्मशालाएँ और ऐसे घर बने हैं जिनमें यात्री लोग टिकते हैं। कई रजवाड़ों और साहूकारों के सदाव्रत बराबर जारी रहते हैं।

४१६ बनारस—(संयुक्तप्रान्त के एक जिले का सदर स्थान)

(आदि ब्रह्म पुराण, ११ वाँ अध्याय) जब दिवोदास काशी में राज्य करता था, उस समय शिवजी पार्वती की प्रीति के निमित्त हिमालय के समीप रहने लगे। पार्वती की माता मेना ने कहा कि हे पुत्री! तेरे पति महादेव सब काल में दरिद्री बने रहते हैं, उनमें कुछ शील नहीं है। यह वचन सुन पार्वती क्रोध कर शिव से बोलीं कि मैं इस जगह नहीं रहूँगी, जहाँ आप का स्थान है, वहाँ मुझको ले चलिए। तब महादेवने तीनों लोक में सिद्धक्षेत्र काशीपुरी में बसने के लिए विचारा परन्तु उस समय राजा दिवोदास काशी में राज्य करता था। शिवजी निकुम्भ पार्षद से बोले कि हे राक्षस! तू अभी जाकर कोमल उपाय से काशीपुरी को शून्य बना दे। निकुम्भ ने काशीपुरी में कुण्ड नामक नापित से स्वप्न में कहा कि तू मेरा स्थान बना दे, मैं तेरा कल्याण करूँगा। तब नापित राजा के द्वार पर निकुम्भ की मूर्ति स्थापित कर नित्य पूजा करने लगा। निकुम्भ पार्षद पूजा को पाकर काशी वासियों को पुत्र, द्रव्य और आयु इत्यादि देने लगा। परन्तु राजा की रानी को एक पुत्र माँगने पर उसने वरदान नहीं दिया। इससे राजा ने क्रोध में आकर निकुम्भ के स्थान का नाश कर दिया। तब निकुम्भ ने राजा को शाप दिया कि बिना अपराध, तूने मेरा स्थान गिरा दिया है, इसलिए तेरी पुरी आप ही आप शून्य हो जायगी। इसी शाप से काशी शून्य हो गई। (राजा गोमती के तीर जा बसा।) तब महादेव पार्वती के सहित काशी में अपना स्थान बनाकर रहने लगे।

दिवोदास के राज्य के समय काशी शून्य हो गई थी क्योंकि निकुम्भ ने काशी को शाप दिया था कि एक हजार वर्ष तक वह शून्य रहेगी।

(शिवपुराण-१ खण्ड-चौथा अध्याय) सदाशिव ने उमा के साथ विहार करने के लिए एक लोक बनाया। उस स्थान को किसी समय वे नहीं छोड़ते थे इसी कारण उसको अविमुक्त क्षेत्र कहते हैं। यह स्थान सम्पूर्ण सृष्टि के जीवों को आनन्द देने वाला है। इसीलिए उसका नाम आनन्दवन है। और यह स्थान शिव-रूप, तेज स्वरूप और अद्वितीय है। इसी से उसका नाम काशी रक्खा गया।

(२ खण्ड १७ वाँ अध्याय) सम्पूर्ण तीर्थों [illegible] ७ पुरियों को बहुत बड़ा कहा है, उनमें से काशी की बड़ाई सर्वोपरि है।

(६ वाँ खण्ड-पाँचवाँ अध्याय) स्वायम्भुव मन्वन्तर में मनु के कुल में राजा रिपुंजय (दिवोदास) हुआ। उसने काशी में तप करके ब्रह्मा से यह वरदान माँग लिया कि देवता आकाश में स्थित हों और नागादि पाताल

में रहकर फिर पृथिवी में न आवें। इस वृत्तान्त को सुनकर शिवजी भी अपना लिङ्ग काशी में स्थित कर अपने गणों सहित मन्दराचल पर चले गए। इसी लिङ्ग का नाम 'अविमुक्त' हुआ जो काशी में वर्तमान है। ( यही कथा काशी खण्ड के ३६ वें अध्याय में है। ) सब देवताओं के पृथिवी छोड़कर चले जाने पर दिवोदास काशी में राज्य करने लगा।

( ७ वाँ अध्याय ) शिवजी को काशी बिना नहीं रहा गया इसलिए कुछ दिनों के पश्चात् उन्होंने ६४ योगिनियों को दिवोदास से काशी छुड़ाने के लिए भेजा। जब काशी में योगिनियों की युक्ति नहीं चली तब वे मणिकर्णिका के आगे स्थित हो गईं।

( ८ वाँ अध्याय ) फिर शिवजी ने सूर्य को काशी में भेजा। एक वर्ष बीत गया। सूर्य की भी कुछ न चली तब वे अपने १२ शरीर धारण कर काशी में स्थित हुए, जिनके नाम ये हैं—

१-लोलार्क, २-उत्तरार्क, ३-साम्बादित्य, ४- द्रौपदादित्य, ५-मयूखादित्य, ६-खखोलकादित्य, ७-अरुणादित्य, ८-वृद्धादित्य, ६ केशवादित्य, १०-विमलादित्य, ११-कनकादित्य, १२-यमादित्य।

शिवजी ने फिर ब्रह्मा को काशी में भेजा। ब्रह्मा दश अश्वमेध यज्ञ करके काशी में रह गए।

( ११ वाँ अध्याय ) शिवजी की आज्ञा से गणपति काशी में गए। ( १२ वाँ अध्याय ) गणपति का विलम्ब देख शिवजी ने विष्णु को काशी में भेजा।

( १४ वाँ अध्याय ) गणपति के कहने के अनुसार १८ वें दिन विष्णु ने ब्राह्मण का रूप धर राजा दिवोदास के गेह पर जाकर उसे ज्ञान का उपदेश देकरराज्य से विमुक्त कर दिया और गरुड़ को शिव के समीप भेजा।

( १५ वाँ अध्याय ) राजा दिवोदास ने एक बहुत सुन्दर शिवमन्दिर बनवाकर 'नरेश्वर' के नाम से शिवलिङ्ग स्थापित कियाऔर विमान पर बैठकर शिवपुरी को प्रस्थान किया। जिस स्थान से राजा शिवपुरी को गया, वह स्थान भूपालश्री के नाम से बड़ा तीर्थ हुआ और लिङ्ग 'दिवोदासेश्वर' नाम से प्रसिद्ध है। उसकी पूजा करने से फिर आवागमन का भय नहीं रहता।

( ८ वाँ खण्ड-३२ वाँ अध्याय ) प्रलय के उपरान्त शिवजी सब सृष्टि को अपने में लीन करके अकेले थे। तब उनका कोई वर्ण और रूप न था। उसी

निर्गुण ब्रह्म ने सगुण रूप धरने का विचार किया और तुरन्त पाँच भौतिक शरीर धर सगुण रूप होकर शिव 'हर' के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके शम्भु, महेश और बहुत से नाम हुए। फिर उस सगुण ब्रह्म ने अपने शरीर से शक्ति को उत्पन्न किया और एक से दो स्वरूप हो गए। उन्हीं शिव और शक्ति ने अपनी लीला के निमित्त पाँच कोस का एक क्षेत्र निर्माण किया जिसको आनन्दवन, काशी, वाराणसी, अविमुक्तक्षेत्र, रुद्रक्षेत्र, महाश्मशान आदि बहुत नामों से मनुष्य जानते हैं। शिव और शक्ति ने उस स्थान में बहुत विहार किया।

( ३३ वाँ अध्याय ) अनन्तर शिवने अपने लिङ्ग अविमुक्त अर्थात् विश्वनाथ को उसी काशी में स्थापित कर दिया।

( लिङ्ग पुराण, पूर्वार्द्ध ६१ वाँ अध्याय ) अविमुक्त क्षेत्र काशी में जाकर किसी प्रकार से देह छोड़ने वाला पुरुष निःसन्देह शिवसायुज्य को प्राप्त होता है।

( ९२ वाँ अध्याय ) पूर्व काल में शिवजी विवाह करने के उपरान्त पार्वती और नन्दी आदि गणों को साथ लेकर हिमालय के शिखर से चल और अविमुक्त क्षेत्र में आकर अविमुक्तेश्वर लिङ्ग को देख वहाँ ही उन्होंने निवास किया। शिवजी बोले कि हे पार्वती! देखो हमारा यह आनन्दवन शोभित हो रहा है। यह वाराणसी नामक हमारा गुप्त क्षेत्र सब जीवों को मुक्ति देने वाला है। हमने कभी इस क्षेत्र का त्याग नहीं किया और न करेंगे, इसीसे इसका नाम अविमुक्त क्षेत्र है। यहाँ किसी समय भी जीव शरीर को त्यागे वह मोक्ष ही पाता है। हमारा भक्त जैगीषव्य मुनि इसी क्षेत्र के माहात्म्य से परम सिद्धि को प्राप्त हुआ।

( पद्म पुराण, सृष्टि खण्ड १४ वाँ अध्याय ) वरुणा और अस्सी नदियों के मध्य में अविमुक्त नामक स्थान है। काशीपुरी के निकट गङ्गा उत्तर वाहिनी और सरस्वती पश्चिम वाहिनी है। एक वृषभ और एक गाय जो यहाँ छोड़ देता है वह परमपद को जाता है।

( स्वर्गखण्ड, ५७ वाँ अध्याय ) विराट पुरुष के ७ धातु और ७ पुरियाँ हैं, जिनमें अस्सी-वरुणा के बीच में काशी है, जिसमें योग दृष्टि वाले योगी लोग रहते हैं।

( गरुड़ पुराण, प्रेतकल्प, सत्ताईसवाँ अध्याय ) अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काँची, अवन्तिका और द्वारावती, ये सात पुरी मोक्ष देने वाली हैं।

(कूर्म पुराण, ब्राह्मी संहिता, ३० वाँ अध्याय) शिवजी ने कहा कि हमारी पुरी वाराणसी सब तीर्थों में उत्तम है। हम काल रूप धर कर यहाँ रह, सब जगत का संहार करते हैं। चारों वर्ण के मनुष्य, वर्णशङ्कर, स्त्री, म्लेच्छ, कीट, मृग, पक्षी और अन्य सकल जन्तु जिनकी मृत्यु काशी में होती है, व वृषभ पर चढके शिवपुरी में जाते हैं। काशी में मृत्यु होने पर किसी पापी को नरक में नहीं जाना पड़ता।

( पातालखण्ड, ५१ वाँ अध्याय ) चन्द्र ग्रहण में काशी का स्नान मोक्ष दायक होता है।

( अग्नि पुराण, ११२वाँ अध्याय ) महादेवजी ने पार्वती से कहा कि वाराणसी महातीर्थ है, जो यहाँ के बसने वालों को मुक्ति प्रदान करती है। यहाँ स्नान, जप, होम, श्राद्ध, दान, निवास और मरण इन सबों ही से मुक्ति प्राप्त होती है।

( महाभारत, वनपर्व, ८४ वाँ अध्याय ) तीर्थ सेवी पुरुष को काशीपुरी में जाकर वहाँ शिवकी पूजा करनी चाहिए। कपिल कुण्ड में स्नान करने से राजसूय यज्ञ का फल होता है। वहाँ से अविमुक्तेश्वर तीर्थ में जाना चाहिए। उन देवाधिदेव के दर्शन करते ही पुरुष ब्रह्म हत्या से छूट जाता है। वहाँ प्राण छोड़ने से मोक्ष होता है।

( भीष्म पर्व, २४ वां अध्याय ) काशीराज कुरुक्षेत्र के युद्ध में पाण्डवों की ओर थे। ( कर्णपर्व, ५ वां अध्याय ) वसुदान के पुत्र ने काशीराज को मारा।

( लिङ्ग पुराण, ९२ वां अध्याय ) शिवजी ने कहा कि काशी में ब्रह्माजी ने गौवों के पवित्र दुग्ध से कपिलाह्रद नामक तीर्थ रचा है और वृषभध्वज रूप से हमारा स्थापन किया है।

(शिवपुराण, ६ वां खण्ड, १७ वा अध्याय) जिस समय शिवजी पार्वती के सहित मन्दराचल से काशी में पहुँचे, उसी समय गोलोक से सुन्दर, सुमना, शिला, सुरभी और कपिला ये पाँच गौएँ आकर उनके सम्मुख खड़ी हुईं। शिव जी ने प्रसन्नता से उनकी ओर देखा। इससे गौवों के थनों में से दूध टपक कर एक कुण्ड होगया, जो कपिलाह्रद नाम से प्रसिद्ध है। शिवजी ने कहा कि जो मनुष्य इस ह्रद में तर्पण और श्राद्धादिक कर्म करेगा उसको गया से भी अधिक फल प्राप्त होगा।

( ५ वां खण्ड, ५५ वां अध्याय ) महिषासुर के पुत्र गजासुर ने ब्रह्माजी से वरदान प्राप्त करके पृथिवी को जीत लिया परन्तु जब काशी में आकर उसने उपद्रव किया तब शिवजी ने गजासुर के शिर को त्रिशूल से छेद दिया। उस समय वह पवित्र होकर शिव से विनय करने लगा। शिवजी ने गजासुर को वरदान दिया कि तेरा यह शरीर हमारा लिङ्ग होकर कृत्तिवासेश्वर के नाम से विख्यात हो, जिस के केवल दर्शन से ही मोक्ष प्राप्त होगी। यह कहकर शिवजी ने गजासुर को परम गति दी।

(६ वां खण्ड, २१ वां अध्याय) राजादिवोदास के काशी छोड़ने पर जब शिवजी काशी में पहुँचे तब हिमांचल गिरजा को देखने और उसको धन देने के निमित्त बहुत से मुक्ता, मूँगा और हीरा आदि धन अपने साथ लेकर काशी में आए परन्तु उन्होंने काशी का ऐश्वर्य देखा तब अति लज्जित हुए। शिव से भेंट नहीं की और रात भर में एक शिवालय बनवाकर चन्द्रकान्ति मणि का शिवलिङ्ग उसमें स्थापित किया। जो कुछ धन द्रव्य शिवालय बनवाने से रह गया था, वह इधर उधर फेंक कर वे गृह चले गए। हिमाचल ने जो रत्न फेंक दिए थे, वे अपने आप इकट्ठे होकर एक शिवलिङ्ग बन गए।

( ३३ वां अध्याय ) एक दिन शिवजी ने संसार के लाभ के निमित्त यह समझा कि ब्रह्मा ने हमारी आज्ञा से सृष्टि उत्पन्न की तो सब ब्रह्माण्ड के जीव अपने अपने कर्मों में बंधे रहेंगे, वे हमारे रूप को क्यों कर जान सकेंगे, ऐसा विचार कर शिवजी ने पाँच कोस तक काशी को जो अपने त्रिशूल पर उठा रक्खा था धरती में छोड़ दिया और अपना लिङ्ग अविमुक्त अर्थात् विश्वनाथ को भी काशी में स्थापित कर दिया और कहा कि काशी प्रलय में भी नष्ट न होगी।

य० द०—काशी में इतने पौराणिक स्थान हैं कि वर्तमान स्थानों का पुराण से सम्बन्ध जानने के लिए वर्तमान स्थान व पौराणिक दोनों का, एक ही साथ लिखना सुविधाजनक है। इससे यहाँ किया गया है।

बनारस शहर गङ्गाजी के बाएँ किनारे पर वरुणा अस्सी के बीच बसा है। वरुणा नदी इलाहाबाद के उत्तर में निकली है और १०० मील बहकर बनारस में गङ्गाजी से मिल गई है। यह नदी बनारस के पूर्वोत्तर में बहती है। और अस्सी नो बहुत छोटी नदी है नगर के दक्षिण पश्चिम में बहती हुई गङ्गाजी से मिल जाती है।

भारतवर्ष के पुराने शहरों में बनारस सब से उत्तम और सुन्दर है।

पुराणों में लिखे हुए, कितने ही शिव लिङ्ग, देवमूर्तियाँ, देवमन्दिर और कुण्ड लुप्त होगए हैं, कितने नए स्थापित हुए और बने हैं तथा कितने ही स्थान बदल गए हैं। मुसलमानी राज्य के समय बहुत से पुराने मन्दिर तोड दिए गए थे। पौराणिक स्थानों का विवरण निम्नलिखित है।

१—वरुणा-सङ्गमघाट—यहाँ वरुणा नदी पश्चिम से आकर गङ्गा नदी में मिल गई है जिसके तट में सङ्गम से पूर्व (अर्थात् वरुणा के बाएँ) 'वशिष्ठेश्वर' अर्त्वीश्वर शिव हैं। यह घाट काशी के अति पवित्र ५ घाटों में से एक है। दूसरे चार पचगङ्गा, मणिकर्णिका, दशाश्वमेध और अस्सी सङ्गम घाट है।

वरुणा,सङ्गम के पास विष्णु 'पादोदक' तीर्थ और 'श्वेतद्वीप' तीर्थ हैं। भादो सुदी १२ को वरुणासङ्गम पर स्नान और दर्शन की भीड़ होती है और महावारुणी के समय भी यहाँ भीड़ होती है।

सङ्गम की ऊची भूमि पर सीढियों के सिरे पर आदिकेशव का पत्थर का शिखरदार मन्दिर और जगमोहन है। आदिकेशव की श्याम रङ्ग की सुन्दर चतुर्भुजमूर्ति दो हाथ लम्बी विराजमान है। काशी के द्वादश आदित्यों में से मण्डलाकार केशवादित्य हैं।

आदिकेशव के मन्दिर से आगे सङ्गमेश्वर का, जो काशी के ४२ लिङ्गों में से एक हैं, शिखरदार मन्दिर है।

(लिंग पुराण, ५२ वा अध्याय) वरुणा और गङ्गा नदियों के सङ्गम पर ब्रह्मा जी ने सङ्गमेश्वर नामक लिङ्ग स्थापन किया।

(शिवपुराण, ६ वा खण्ड, १२ वां अध्याय) शिवजी ने राजा दिवोदास को काशी से अलग करने के लिए विष्णु को मन्दाराचल से काशी में भेजा। विष्णु ने पहले गङ्गा और वरुणा के सङ्गम पर जाकर और हाथ पाँव धोकर सचैल स्नान किया। उसी दिन से वह स्थान 'पादोदक' तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। विष्णु ने उस स्थान पर अपने स्वरूप को पूजा, वही मूर्ति आदि केशव के नाम से प्रसिद्ध है। (१३ वा अध्याय) विष्णु अपने पूर्ण स्वरूप से केशवी रूप धर वहां स्थित हुए।

२—पच गङ्गा घाट—यह घाट काशी के पाँच अति पवित्र घाटों में से एक है, यहाँ नदियाँ गुप्त रह कर गङ्गा में मिली हैं। इसी से इस घाट का नाम पच गङ्गा है। पच गङ्गा में विष्णु काची तीर्थ और विन्दु तीर्थ हैं।

लगभग ३०० वर्ष हुए अम्बेर (जयपुर) के राजा मानसिंह ने इस घाट को पत्थर से बनवाया था। घाट के कोने के पास पत्थर का एक दीप शिखर है, जिस पर लगभग एक हजार दीप रखने के लिए अलग अलग स्थान बने हैं, जिन पर उत्सव के समय दीप जलाए जाते हैं। कार्तिक भर पंचगङ्गा घाट पर कार्तिक स्नान की भीड़ रहती है।

(स्कन्द पुराण, काशी खण्ड, ५६ वां अध्याय) प्रथम ही धर्मनद का पुण्य धूतपापा में मिल गया था। किरणा, धूतपापा, सरस्वती, गङ्गा और यमुना इन पाँचो के योग होने से पञ्चनद जिसको पंच गंङ्गा कहते हैं, विख्यात हुआ है। इसका नाम सतयुग में धर्मनद, त्रेता में धूतपापा, द्वापर में बिन्दु तीर्थ था और कलियुग में पंचनद है।

३—मणिकर्णिका घाट—यह घाट काशी के अति पवित्र पाँच घाटों में से है। दूसरे चारों से भी यह अधिक पवित्र और विख्यात है। इसके ऊपर मणिकर्णिका कुण्ड है इससे इस घाट का यह नाम पड़ा है। इन्दौर की महारानी अहल्या बाई ने, जिन्होंने सन् १७६५ ई० से सन् १७६५ तक राज्य किया, इस घाट को बनवाया था। गङ्गा और मणिकर्णिका के बीच में विष्णु के चरण चिन्ह हैं, जिसके पास मरे हुए राजा लोग और दूसरे मान्य-गण जलाए जाते हैं

कुन्ड से दक्षिण-पश्चिम अहल्या बाई का बनवाया हुआ विशाल मन्दिर है।

मणिकर्णिका कुण्ड, सिरे पर लगभग ६० फीट लम्बा और नीचे लगभग २० फीट लम्बा और दो फीट चौड़ा है। गङ्गा से कुण्ड की पैंदी तक गंगा से पानी आने के लिए एक नाला है। कभी कभी कुन्ड मे केवल दो-तीन फीट ऊँचा पानी रहता है।

यहाँ नित्य स्नान करने वालों की भीड़ रहती है और सैकड़ों आदमी जप-पूजा करते हुए बैठे देख पड़ते हैं। काशी मे आने वाले यात्री प्रथम मणि-कर्णिका कुन्ड और गंगा में स्नान करके तब [illegible]नाथ का दर्शन करते हैं।

(शिव पुराण, आठवाँ खन्ड, ३२ वां अध्याय) शिव जी ने अपनी बाँई भुजा से विष्णु को प्रकट किया। विष्णु ने शिव की आज्ञा से तप करने के निमित्त काशी मे पुष्करिणी को खोदा और अपने पसीने से उसे भर कर वे तप करने लगे। बहुत दिनों के उपरान्त उमा सहित सदाशिव वहाँ प्रकट

हुए, शिव जी ने अपना शिर हिलाया और विष्णु की स्तुति कर अपनी प्रसन्नता प्रकट की। उसी दशा में शङ्कर के कान से मणि उस स्थान पर गिर पड़ी जिससे वह स्थान मणिकर्णिका के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

४—दशाश्वमेध घाट—यह घाट शहर के घाटों के मध्य में और काशी के अति पवित्र घाटों में से एक है। यहाँ प्रयाग तीर्थ है। माघ मास में स्नान की भीड़ होती है। यहाँ जल के भीतर रुद्र सरोवर तीर्थ है। मणिकर्णिका के घाट को छोड़ कर काशी के सब घाटों से अधिक लोग यहाँ देख पड़ते हैं।

एक खुले हुए मन्डप में एक स्थान पर दशाश्वमेधेश शिव लिङ्ग और दूसरे स्थान पर पीतल के सिंहासन में एक छोटी मूर्त्ति है जिसको लोग शीतला देवी कहते हैं। शहर में शीतला रोग फैलने के समय इन देवी की विशेष पूजा होती है।

(शिव पुराण, ८ वां खन्ड, ६ वां अध्याय) शिव जी ने राजा दिवोदास को काशी से विरक्त करने के लिए ब्रह्मा को काशी में भेजा। ब्रह्मा ने काशी में जाकर राजा दिवोदास की सहायता से १० अश्वमेध यज्ञ किए। वही स्थान दशाश्वमेध के नाम से प्रसिद्ध है। ब्रह्मा भी उस स्थान पर ब्रह्मेश्वर शिव लिङ्ग स्थापित करके रह गए।

५—अस्सी सङ्गम घाट—काशी के पाँच अति पवित्र घाटों में से सबसे दक्षिण का अस्सी नामक कच्चा घाट है, यह हरद्वार तीर्थ है। दक्षिण की ओर एक नाला के समान लगभग ४० फीट चौड़ी 'अस्सी' नामक नदी गङ्गा जी में मिली है।

(स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ४६ वां अध्याय) मार्गशीर्ष में कृष्ण पक्ष की ६ को अस्सी सङ्गम पर स्नान और पिन्ड दान करने से पितर तृप्त होते हैं।

६—त्रिलोचन घाट—तेलिया नाले से आगे पत्थर से बाँधा हुआ 'त्रिविष्टप तीर्थ' है, जो त्रिलोचन घाट के नाम से प्रसिद्ध है।

त्रिलोचन घाट से ऊपर 'त्रिलोचन नाथ' का शिखर दार मन्दिर है। 'त्रिलोचन मन्दिर के घेरे से बाहर पूर्व ओर एक मन्दिर में काशी के अष्ट महालिङ्गों में से 'नर्मदेश्वर' और दूसरे मन्दिर में ४२ शिव लिङ्गों में से 'आदि महादेव' हैं। आदि महादेव के घेरे में एक दूसरे मन्दिर में अष्टमदा लिङ्गों में से पार्वतीश्वर लिङ्ग है।

(स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ६६ वां अध्याय) श्रावण शुक्ल चतुर्दशी को आदि महादेव के पूजन करने से बहुत लिङ्गों की पूजा का फल मिलता है।

( ७५ वां अध्याय ) वैशाख शुक्ल तृतीया को त्रिलोचन के पूजन से प्रमोद कृत पाप निवृत्त होता है।

(६० वा अध्याय) चैत्र शुक्ल तृतीया को पार्वतीश्वर की पूजा करने से सौभाग्य मिलता है।

७—महथा घाट—त्रिलोचन घाट से आगे पत्थर से बँधा हुआ महथा घाट मिलता है, जिसके ऊपर नर नारायण का मन्दिर है यहाँ पौष की पूर्णिमा को स्नान की भीड होती है।

( शिव पुराण, काशी खन्ड, ६१ वां अध्याय) पौष मास में नर नारायण के दर्शन पूजन से बद्रिकाश्रम तीर्थ की यात्रा का फल होता है और गर्भवास का भय छूट जाता है।

८—लाल घाट—'गोपी गोविन्द' तीर्थ लाल घाट के नाम से प्रसिद्ध है। घाट पत्थर से बँधा हुआ है। अगहन की पूर्णिमा को यहाँ स्नान की बड़ी भीड होती है। घाट से ऊपर एक मन्दिर में काशी के प्रसिद्ध ४२ लिङ्गों में से 'गोमेश्वेश्वर' शिव लिङ्ग और गोपी-गोविन्द की मूर्ति है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ६१ वा अध्याय ) गोपी गोविन्द के पूजन से भगवान् की माया स्पर्श नहीं करती। (८४ वां अध्याय) गोपी गोविन्द तीर्थ में स्नान करने से गर्भवास छूट जाता है।

६—राजमन्दिर घाट—स्नान करने को यहाँ बडा लम्बा घाट है। घाट के ऊपरएक पुश्ता है। यहा हनुमान जी के मन्दिर में लक्ष्मीनृसिंह की मूर्त्ति है।

(काशी खन्ड, ६१ वा अध्याय और ८४ वां अध्याय) लक्ष्मीनृसिंह के दर्शन से भय छूट जाता है और लक्ष्मीनृसिंह तीर्थ में स्नान करने से निर्वाण पद मिलता है।

१०—दुर्गाघाट—घाट के पास नृसिंह जी की मूर्ति है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ६१ वां अध्याय ) वैशाख शुक्ल चतुर्दशी को 'दर्पनृसिंह' के दर्शन पूजन करने से संसार भय निवृत्त होता है।

११—रामघाट—२०० वर्ष से अधिक हुए इस बडे घाट को जयपुर के महाराजा ने बनवाया था। यहाँ राम तीर्थ है। रामनवमी के दिन यहाँ स्नान की बड़ी भीड होती है। घाट के सिरे पर जयपुर के महाराज के बनवाए हुए एक मन्दिर म राम और जानकी जी की धातु विग्रह बहुत सुन्दर मूर्ति है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ८४ वा, अध्याय ) चैत्र शुक्ल नौमी को राम तीर्थ यात्रा से सर्व धर्म का फल होता है।

१२—सक्टा घाट—यह पत्थर से बाँधा हुआ घाट यम तीर्थ है। घाट पर एक मन्दिर में यमेश्वर और एक मन्दिर में काशी के १२ आदित्यों में से 'यमादित्य' हैं। कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया को यहाँ स्नान की भीड होती है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ५१ वां अध्याय ) भरणी, मङ्गल और चतुर्दशी के योग पर यम तीर्थ में तर्पण श्राद्ध करने से पितरों के ऋण से मुक्ति होती है।

१३—सेन्धिया घाट पर 'मङ्गलीश्वर' और 'बुधेश्वर' शिवलिङ्ग और गली की दूसरी ओर के मन्दिर में 'बृहस्पतीश्वर' शिवलिङ्ग और कई देव मूर्त्तियाँ हैं।

( स्कन्द पुराण, काशीखन्ड, १५ वा अध्याय से १७ वे अध्याय तक ) बुद्धाष्टमी के योग में बुधेश्वर के पूजन करने से सुबुद्धि प्राप्त होती है। गुरु पुष्य योग में बृहस्पतीश्वर के पूजन से महापातक निवृत होता है और भौम युक्त चतुर्थी होने पर मङ्गलीश्वर के पूजन करने से ग्रह बाधा की निवृत्ति होती है।

सेन्धिया घाट हीन दशा मे है। देखने से जान पडता है कि यह बहुत उत्तम बना हुआ था। सन् १८३० ई० के लगभग ग्वालियर की महारानी बैजाबाई ने इसको बनवाया था। घाट की सीढ़िया पर एक बड़ा मन्दिर है, जिसके नीचे का भाग वर्षा काल मे पानी में डूब जाता है। यह घाट 'वीर तीर्थ' है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ८४ वा अध्याय ) वीर तीर्थ में स्नान कर के वीरेश्वर के पूजन करने से सन्तान प्राप्ति होती है।

१४—ललिता घाट—ललिता तीर्थ पर साधारण ललिता घाट है। घाट से ऊपर काशी की ६ दुर्गाओं मे से 'ललिता देवी' का मन्दिर है जहाँ आश्विन कृष्ण द्वितीया को दर्शन पूजन का मेला होता है। घाट के ऊपर गली में काशी के ४२ लिङ्गों में से करुणेश्वर शिव लिङ्ग है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ७० वा अध्याय ) आश्विन कृष्ण द्वितीया को ललिता देवी के दर्शन पूजन करने से सौभाग्य फल मिलता है। ( ६४ वां अध्याय ) प्रतिमास के सोमवार को करुणेश्वर की यात्रा करने से काशी वास का फल मिलता है।

१५—मीरघाट—यहाँ विशाल तीर्थ है। इस घाट की पत्थर की सीढ़ियाँ सादी हैं।

मीरघाट के ऊपर छोटे छोटे मन्दिरों और दीवार से घेरा हुआ, काशी के पवित्र कूपों में से 'धर्म कूप' है। घेरे के बाहर कूप से पश्चिम 'विश्वबाहुका देवी' का मन्दिर है। धर्म कूप से दक्षिण-पश्चिम काशी की ६ गौरियों में से 'विशालाक्षी गौरी' का मन्दिर है। यहाँ भादों की कृष्णा तीज को दर्शन की भीड़ होती है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ७० वा अध्याय ) भाद्र कृष्ण तृतीया को विशाल तीर्थ की यात्रा और विशालाक्षी के दर्शन पूजन करने से सकल मनोरथ सिद्ध होते हैं।

( ७८ वां अध्याय ) कार्तिक शुक्ल अष्टमी को धर्म कूप में स्नान और धर्मेश्वर के दर्शन करने से सर्व धर्म करने का फल मिलता है।

( ८० वां अध्याय ) चैत्र शुक्ल ३ को धर्म कूप में स्नान और धर्मेश्वर आशा विनायक तथा विश्वबाहुका देवी के दर्शन पूजन और व्रत करने से मनोरथ सिद्ध होता है।

१६—मान मन्दिर घाट—अनुमानतः ३०० वर्ष हुए आम्बेर के राजा मान सिंह ने इस घाट को बनवाया था।

घाट से ऊपर एक उत्तर के मन्दिर में 'सेतुबन्ध रामेश्वर' शिवलिङ्ग है।

( स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ६६ वा अध्याय ) प्रतिमास की नवमी तिथि को काशी के सेतुबन्ध रामेश्वर का दर्शन और पूजन करना चाहिए।

१७—चौसठ घाट—बंगाल के राजा दिगपति ने इस घाट को बनवाया था। घाट से ऊपर आँगन के बगलों में मकान हैं। पूर्व मुख के ३ द्वार वाले मकान में सर्वाङ्ग पीतल से जड़ी हुई काशी की ६४ योगिनियों में से प्रसिद्ध गजानना 'चतुःषष्ठी देवी' के नाम से प्रसिद्ध हैं। आगे सिंह है। पूर्व बगल के मकान में ऐसी ही सर्वाङ्ग में पीतल जड़ी हुई 'भद्र काली' की मूर्ति है। चैत्र प्रतिपदा के दिन चतुःषष्ठी देवी की पूजा का बड़ा मेला होता है।

( शिव पुराण, ६ वां खन्ड, ७ वा अध्याय ) शिव जी ने दिवोदास राजा से काशी छुड़वाने के निमित्त ६४ योगिनियों को भेजा। जब काशी में योगिनियों की युक्ति न चली तब वे मणिकर्णिका के आगे स्थित हो गईं।

(स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ४५ वां अध्याय) आश्विन को नवरात्रि में ६ दिन पर्यन्त, प्रतिमास की कृष्ण पक्ष १४ को और चैत्र प्रतिपदा के दिन ६४ योगिनियों के दर्शन-पूजन करने से वर्ष पर्यन्त विघ्न नहीं होता।

१८—केदार घाट—यह घाट काशी के उत्तम घाटों में से एक है। २५ सीढ़ियों के ऊपर 'गौरी कुन्ड' नामक एक चौखूँटा कुन्ड है।

गौरी कुन्ड से ४० सीढ़ियों के ऊपर 'केदारेश्वर' शिव का मन्दिर है। भीतर अनगढ और चिपटे केदारेश्वर लिङ्ग है।

(स्कन्द पुराण, काशी खन्ड, ७७ वा अध्याय) मङ्गलवार को अमावस्या हो तो केदार घाट पर और गौरी कुन्ड मे स्नान करके पिण्डदान करने से १०१ कुल का उद्धार होता है। चैत कृष्ण १४ का व्रत करके तीन चुल्लू केदारोदक पीने से मनुष्य शिव रूप होता है और जो केवल पूजन ही करते हैं उनके ७ जन्म का पाप छूट जाता है।

१९—तुलसी घाट—इस घाट की शक्ल पुराना है। यह 'गङ्गासागर' तीर्थ है। काशी खन्ड के छठवें अध्याय में लिखा है कि गंगासागर में स्नान करने से सर्व तीर्थ में स्नान करने का फल मिलता है।

तुलसी घाट से ऊपर तुलसीदास जी का मन्दिर है। घुमाव से तुलसीदास जी की गद्दी के पास पहुँचना होता है जिसके पास तुलसीदास जी की खड़ाऊँ और एक हाथ से छोटा एक नाँव का टुकड़ा रक्खा हुआ है। बहुत प्राचीन होने से खड़ाउँवा का लकड़ी गला जाती है इससे उन पर कपड़े लपटे गए हैं। यहाँ के अधिकारी कहते हैं कि खड़ाऊँ तुलसीदास जी की है और जिस नाँव पर वे पार उतरते थे उसी नाँव का यह टुकड़ा है।

इसी स्थान पर तुलसीदास जी रहते थे। सम्वत् १६८० ( सन् १६२३ ई० ) में यहाँ ही तुलसीदास जी का देहान्त हुआ था।

२०—विश्वनाथ का मन्दिर ज्ञानवापी से दक्षिण काशी के मन्दिरों मे सबसे अधिक प्रख्यात 'विश्वनाथ' शिव का मन्दिर है और सम्पूर्ण शिव लिङ्गों में विश्वनाथ अर्थात् विश्वेश्वर शिव प्रधान हैं।

विश्वनाथ का शिखरदार मन्दिर ५१ फीट ऊँचा पत्थर का सुन्दर बना हुआ है। मन्दिर के चारों ओर पीतल के किंवाड लगे हुए एक एक द्वार हैं। मन्दिर के पश्चिम गुम्बजदार जगमोहन और जगमोहन के पश्चिम इससे मिला हुआ 'दण्डपाणीश्वर' का पूर्व मुख का शिखरदार मन्दिर है। इन मन्दिरों को सन् ईसवी की १८ वी सदी मे इन्दौर की महारानी अहल्या बाई ने बनवाया था। विश्वनाथ के मन्दिर के शिखर पर और जगमोहन के गुम्बज के ऊपर ताँबे के पत्तर पर सोने का मुलम्मा है जिसको पंजाब केसरी

महाराज रणजीत सिंह ने अपनी अन्त की बीमारी ( सन् १८३६ ई० ) में करवाया था।

( शिव पुराण, काशी खंड, ३८ वां अध्याय ) विश्वनाथ के समान दूसरा लिङ्ग नहीं है। इनके हरेश्वर मंत्री, ब्रह्मेश्वर वेद-पुराण सुनाने वाले, भैरव कोतवाल, तारकेश्वर धर्माध्यक्ष, दंडपाणी चोबदार, वीरेश्वर भंडारी, ढुंढिराज अधिकारी और दूसरे सब लिङ्ग प्रजापालक हैं।

विश्वनाथ के मन्दिर से पश्चिमोत्तर शिव की कचहरी है। विश्वनाथ के आंगन के पश्चिम की खिड़की से उसमें जाना होता है। यहाँ एक मंडप में और इससे बाहर कई पंक्तियों में लगभग १५० शिव लिङ्ग हैं।

२१—ज्ञानवापी-विश्वनाथ के मन्दिर से उत्तर ४८ खम्भों पर चारों ओर से खुला हुआ पत्थर का सुन्दर मंडप है जिस को ग्वालियर की महारानी बैजबाई ने सन् १८२८ ई० में बनवाया था। इसी में पूर्व किनारे पर 'ज्ञानवापी' नाम से विख्यात एक कूप है। औरंगजेब ने जब विश्वनाथ के पुराने मन्दिर को तोड़ दिया, लोग कहते हैं कि तब विश्वनाथ शिव लिङ्ग इसी में चले गए।

( स्कन्द पुराण, काशी खंड, ३३ वां अध्याय ) ज्ञानोदग तीर्थ के स्पर्श मात्र से सब पाप छूट जाते हैं और अश्वमेध का फल मिलता है। शिवतीर्थ, ज्ञानवापी, ज्ञानतीर्थ, तारकाख्य तीर्थ और मोक्ष तीर्थ इसके नाम हैं।

विश्वनाथ के मन्दिर के फाटक के पश्चिम एक गली ढुंढराज तक गई है। एक मकान में महावीर जी और कोने के मकान मे अक्षयवट नामक एक वट वृक्ष है जिसको यात्री लोग अङ्कमाल करते हैं।

२२ –अन्नपूर्णा का मन्दिर—अक्षयवट से पश्चिम गली के बाएँ, अन्नपूर्णा का मन्दिर है। पूना के पहले बाजीराव पेशवा ने सन् १७२५ ई० में वर्तमान मन्दिर को बनवाया था। आँगन के मध्य में एक उत्तम मन्दिर है, जिसमें चाँदी के सिंहासन पर अन्नपूर्णा की पीतलमयी मूर्ति पश्चिम मुख से बैठी है।

( शिवपुराण, छठवां खंड, १ ला अध्याय ) गिरिजापति काशी में स्थित हुए और उन्होंने काशी को अपनी राजधानी बनाया। गिरिजा भी काशी में रह गई जो अन्नपूर्णेश्वरी देवी के नाम से प्रसिद्ध हुई।

( स्कन्दपुराण, काशीखड, ६१ वा अध्याय ) चैत्रशुक्ल अष्टमी और आश्विनशुक्ल अष्टमी के दिन अन्नपूर्णा के दर्शन पूजन करके १०८ परिक्रमा करने से पृथिवी परिक्रमा का फल मिलता है।

२२—कामेश्वर का मन्दिर—कामेश्वर शिवलिंग काशी के ४२ शिव लिंगो में से है। इनका मन्दिर मत्स्योदरी तालाब के पूर्व और त्रिलोचन घाट के उत्तर, त्रिलोचन मुहल्ले की गली में है। एक ओर पीतल के हौज मे 'कामेश्वर' शिवलिङ्ग है और मोड़ पर चढ़ी मत्स्योदरी देवी है।

( स्कन्दपुराण, काशी खड, ७ वा अध्याय ) वैशाख शुक्ल चतुर्दशी को 'मत्स्योदरी तीर्थ' की यात्रा से सर्व तीर्थ की यात्रा का फल मिलता है।

( ८५ वां अध्याय ) चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को कामेश्वर के दर्शन पूजन करने से बहुत पुण्य होता है।

२३—ओंकारेश्वर का मन्दिर—मत्स्योदरी से उत्तर कोयला बाजार के पास, ओंकारेश्वर मुहल्ले में काशी के ४२ लिंगों में से ओंकारेश्वर शिव लिंग है।

( कूर्म्मपुराण, ब्राह्मी सहिता, ३१ वा अध्याय ) मत्स्योदरी के तट पर पवित्र और गुप्त 'ओंकारेश्वर' शिव लिङ्ग है।

२४—विन्दुमाधव का मन्दिर—पचगगाघाट के एक बिना शिखर के मन्दिर म बड़े सिंहासन पर छोटी श्यामल चतुर्भुज 'विन्दुमाधव' की मूर्त्ति है।

( स्कन्द पुराण, काशी खड, ६० वा अध्याय विष्णु ने पञ्चनद तपस्वी अग्नि विन्दु ब्राह्मण को वर्दान दिया कि मैं इस स्थान पर विन्दुमाधव के नाम से स्थित हूँगा और इस स्थान का नाम तुम्हारे नाम के अनुसार विन्दु तीर्थ होगा।

२५-गभस्तीश्वर —लक्ष्मण बाला के उत्तर एक छोटे मन्दिर में काशी के अष्ट महालिङ्गो में से 'गभस्तीश्वर' शिव लिंग है। गभस्तीश्वर के मन्दिर के पास एक कोठरी म काशी की ९ गौरियों म से 'मङ्गला' गौरी की मूर्त्ति है।

( स्कन्दपुराण, काशी खण्ड, ४९ वा अध्याय ) अर्कवार को गभस्तीश्वर और मङ्गला गौरी के दर्शन करने से फिर जन्म नहीं होता और चैत्र शुक्ल तृतीया के दिन मङ्गलागौरी क पूजन करने से सौभाग्य मिलता है।

२६—चन्द्रकूप—एक मन्दिर में 'सिद्धेश्वरी देवी हैं जिन के पास सिद्धेश्वर और कलियुगेश्वर तथा काशी के ४२ लिङ्गों में से चन्द्रेश्वर शिव लिङ्ग है। आँगन में चन्द्रकूप नामक एक पक्का कुँआ है।

(स्कन्दपुराण, काशीखंड, १४ वां अध्याय प्रतिमास की अमावस्या को चन्द्रकूप यात्रा से भुक्ति-मुक्ति मिलती है और सोमवती अमावस्या को चन्द्रकूप पर श्राद्ध करने से गया श्राद्ध का फल मिलता है।

२७ ढुंढिराज गणेश—अन्नपूर्णा के मन्दिर के पश्चिम, गली के बाएँ बगल पर कोठरियों में बहुत से शिव लिंग और देव मूर्तियां हैं, जिससे थोड़े ही पश्चिम गली की मोड़ पर दाहिनी ओर एक छोटी कोठरी में काशी के प्रसिद्ध देवताओं में से एक 'ढुंढिराज गणेश' हैं। इन के चरण, शुण्ड, ललाट और चारों भुजाओं पर चाँदी लगी है।

(गणेशपुराण, उत्तरखण्ड, ४८ वां अध्याय) राजा दिवोदास के काशी छोड़ने पर शिवजी ने काशी में आकर सुन्दर बने हुए मन्दिर में गउकी के पाषाण से बनी हुई ढुंढिराज जी की मूर्त्ति की स्थापना की।

(स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, ५७ वां अध्याय) माघ शुक्ल चौथ को ढुंढिराज के पूजन से आवर्ष विघ्न की निवृत्ति होती है और काशी वास का फल मिलता है।

२८ दण्डपाणि—ढुंढिराज के पास से उत्तर जो गली गई है, उसके बाएँ एक कोठरी में दण्डपाणि खड़े हैं, जिनके दाहिने बाएँ 'शुभ्रम-विभ्रम' दो गण खड़े हैं और आगे कई लिंग हैं।

(शिवपुराण, ६ वां खण्ड, २ अध्याय) शिवजी ने आनन्दवन में हरिकेश नामक तपस्वी को वरदान दिया कि काशीपुरी की तुम रक्षा करो और शत्रुओं को दण्ड दो तुम दण्डपाणि के नाम से प्रसिद्ध होगे। उस दिन से दण्डपाणि काशी में स्थित रहते हैं। वीरभद्र ने दण्डपाणि का अनादर किया इससे उनको काशी का वास न मिला। वे दूसरे स्थान पर जा रहे।

अगस्त्य मुनि को भी दण्डपाणि की सेवा न करने से काशी छोड़ देनी पड़ी।

२९-चित्रघण्टादेवी—चाँदनी चौक में उत्तर नन्दू नाऊ की गली में काशी की ६ दुर्गाओं में से 'चित्रघण्टा' दुर्गा हैं। यहाँ चैत्र शुक्ल तृतीया और आश्विन शुक्ल तृतीया को दर्शन पूजन का मेला होता है। काशी

खण्ड के ७० वे अध्याय में लिखा है कि जो नित्य घण्टादेवी का दर्शन करता है उस मनुष्य के घातक को चित्रगुप्त नहीं लिखते।

३ पशुपतीश्वर—गली के बाहर पूर्व, कुछ दक्षिण दूर जाने पर एक छोटे मन्दिर में काशी के अष्ट महालिंगो में से अनगढ चिपटा 'पशुपतीश्वर' शिव लिंग है। मन्दिर में मार्बल का फर्श लगा हुआ है।

(स्कन्दपुराण,काशीखण्ड, ६१ वा अध्याय) चैत्र शुक्ल चतुर्दशी को पशुपतीश्वर के दर्शन पूजन करने से यमराज का भय छूट जाता है।

३१—कालभैरव—इनको भैरवनाथ भी लोग कहते हैं। भैरवनाथ मुहल्ले में शिखरदार मन्दिर में सिंहासन के ऊपर 'काल भैरव' की पाषाण प्रतिमा है। इनके मुख मण्डल और चारों भाथा में चाँदी लगी है। मन्दिर के द्वार तीन ओर हैं। मन्दिर और जगमोहन दोनों में श्वेत और नीले मार्बल का फर्श है। दरवाजे के बाएँ ओर पत्थर का एक बडा कुत्ता और दोनों ओर सोंटे लिए दो द्वारपाल खडे हैं। भैरव के वर्तमान मन्दिर को सन् १८२५ ई० में पूना के बाजीराव पेशवा ने बनवाया था। यहाँ के पुजारी मोरपंख के सोंटे से बहुतेरे यात्रियो की पीठ ठोकते हैं। पापी लोगों को दण्ड देने के लिए काल भैरव काशी के कोतवाल हैं।

(शिवपुराण, ७वां खण्ड, १५ वा अध्याय) ब्रह्मा और विष्णु के परस्पर झगडे के समय दोनों के मध्य में एक ज्योति प्रकट हुई जिसको देख, ब्रह्मा ने अपने पाचवें मुख से कहा कि हे विष्णु! उस ज्योति में किसी मनुष्य का स्वरूप दिखाई देता है। इतने में एक मनुष्य नील लोहित वर्ण चक्र भाल त्रिशूल हाथ में लिए सर्पों का भूषण बनाए देख पड़ा। ब्रह्मा ने कहा कि तुम तो हमारे भ्रमध्य से उपजे हुए रुद्र हो, हमारी शरण में आओ, हम तुम्हारी रक्षा करेंगे। ब्रह्मा का ऐसा गर्व देख शिवजी ने महाकोप करके भैरव को उत्पन्न किया और कालराज, काल भैरव, पाप भक्षक आदि नाम उसका रक्खा। भैरव ने अपनी बाईं उंगली के नख से ब्रह्मा का पाँचवां शिर काट लिया (१६ वां अध्याय) ब्रह्म हत्या शिव से प्रकट होकर भैरव के पीछे पीछे दौड़ने लगी। (१७ वां अध्याय) भैरव,ब्रह्मा का शिर हाथ में लेकर सब देशो की परिक्रमा कर जब काशी में आए तब ब्रह्म हत्या पृथिवी के नीचे चली गई। भैरव के हाथ से ब्रह्मा का शिर धरती में गिर पडा। उसी स्थान का नाम कपाल मोचन तीर्थ हुआ।

मार्ग शीर्ष कृष्णाष्टमी को भैरव का जन्म हुआ। उसी तिथि को भैरव का व्रत होता है। अष्टमी, चतुर्दशी और रविवार को भैरव के दर्शन पूजन से बड़ा फल मिलता है।

३२—मध्यमेश्वर शिवलिङ्ग स्पर्शी नाग के उत्तर एक मन्दिर में काशी के ४२ लिङ्गों में से 'मध्यमेश्वर शिवलिंग है।

( लिंगपुराण, ६२ वाँ अध्याय ) शिवजी ने कहा कि काशी में मध्यमेश्वर नामक लिंग आप ही प्रकट हुआ है।

( स्कन्द पुराण, काशी खण्ड, ६७ वा अध्याय ) शिवजी ने कहा चैत्र शुक्ल अष्टमी को मध्यमेश्वर के दर्शन और मन्दाकिनी में स्नान करने से २१ कुल का उद्धार होता है।

३३—रत्नेश्वर—वृद्धकाल जाने वाली सड़क पर वृद्धकाल मुहल्ले में एक छोटे से मन्दिर में काशी के ४२ लिंगों में से 'रत्नेश्वर' शिवलिंग है।

( स्कन्द पुराण, काशी खण्ड, ६७ वाँ अध्याय ) फाल्गुण कृष्ण १४ को रत्नेश्वर की यात्रा से स्त्री, रत्नादि और ज्ञान प्राप्त होते हैं।

३४—हरतीर्थ ( हंसतीर्थ )—आलमगिरी मस्जिद से पूर्व दक्षिण हरतीर्थ नाम से प्रसिद्ध एक बड़ा सरोवर है जिसका नाम काशी खण्ड में रुद्र कुण्ड है और लिखा है कि कौआ इस सरोवर में गिरने से हंस हो गया। इसीलिए इस सरोवर का नाम 'हंस तीर्थ' हो गया। सरोवर के पश्चिम घाट के ऊपर एक छोटे मन्दिर में हंसेश्वर और रुद्रेश्वर शिवलिंग हैं। इस मन्दिर में काशीखण्ड में लिखे हुए देवता हैं।

( स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, ६७ वाँ अध्याय ) आर्द्रा चतुर्दशी के योग होने पर इस तीर्थ में स्नान और हंसेश्वर तथा रुद्रेश्वर के पूजन करने से मनुष्य रुद्र लोक पाता है।

३५—वृद्ध कालेश्वर—विश्वेश्वरगंज बाजार से जो उत्तर सड़क गई है उसके मोड़ के पास वृद्धकाल मुहल्ला है। रत्नचूड़ामणि कूप से वृद्धकाल पर्यन्त के स्थान को काशी खण्ड में अवन्तिका पुरी लिखा है। काशी के ४२ लिंगों में से 'वृद्ध कालेश्वर' का मन्दिर वृद्धकाल मुहल्ले में है। यह मन्दिर काशी के पुराने मन्दिरों में से है।

३६—मृत्युंजय—इनका नाम काशी खण्ड में 'अल्पमृत्यु हरेश्वर' लिखा है। वृद्धकालेश्वर के मन्दिर से दक्षिण-पश्चिम एक गली के बगल पर मृत्युंजय

का छोटा सा मन्दिर है, जिसके चारों ओर दर्वाजे हैं। पीतल के हौज में मृत्युंजय शिवलिंग है। यहाँ पूजा, पाठ और दर्शन की भीड़ रहती है।

३७-गोरखनाथ का मन्दिर—मन्दाकिनी मुहल्ले में ऊँची भूमि पर जिसको गोरखटीला कहते हैं, एक आगन के बीच में एक शिखरदार बड़ा मन्दिर है जिसमें ऊँची गद्दी पर गोरखनाथ का चरण चिन्ह है। मन्दिर के बाँए कोने के पास गहरे हौज में काशी के ४२ लिंगों में से 'वृषेश्वर' शिवलिंग है। यहाँ गोरख सम्प्रदाय के साधु लोग रहते हैं।

३८ बड़े गणेश—सदर सड़क से थोड़ी दूर पर बड़े गणेश का मन्दिर है, जिसको लोग 'महाराज विनायक' और 'वक्रतुण्ड विनायक' भी कहते हैं। मन्दिर के शिखर पर सुनहला कलश और पताका लगी है। गणेश की विशाल मूर्त्ति के हाथ, पाँ और मूड तथा सिंहासन पर चाँदी लगी है और छत्र मुकुट सुनहले हैं। गणेशजी के बगल में उनकी स्त्रिया सिद्धि और बुद्धि की मूर्तियाँ हैं जिनके मुख मण्डल चाँदी के हैं। माघकृष्ण ४ को यहाँ दर्शन की बड़ी भीड़ होती है।

(स्कन्दपुराण, काशी खंड, १०० वाँ अध्याय) माघ कृष्ण ४ को वक्रतुण्ड की यात्रा से वर्ष पर्यन्त विघ्न नहीं होता।

३९-ज्येष्ठेश्वर—भूत भैरव से पूर्व एक बड़े मठ में 'जैगीषव्येश्वर' शिवलिंग है। इसी जगह जैगीषव्य गुफा गुप्त है। यहां बहुतेरे शिवलिंग और देव मूर्तियाँ गुप्त हैं। यह ज्येष्ठेश्वर शिवलिंग काशी पुरी मुहल्ले में काशी के ४२ लिंगों में से है।

(शिवपुराण, ७ वाँ खंड, ६ वाँ अध्याय) शिवजी ने मन्दराचल से काशी में जाकर ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्दशी को जैगीषव्य की गुफा के निकट निवास किया और वहाँ से ज्येष्ठेश्वरलिंग का स्थापित होना और ज्येष्ठनाम देवी का प्रकट होना सुना।

४०-कबीरचौरा—कबीरचौरा मुहल्ले में बड़े बड़े आँगन के चारों ओर मकान, और मध्य में सुनहले कलश तथा पताका वाले गुम्बजदार छोटे मन्दिर में कबीर जी का चरण चिन्ह, तथा एक बगल के दो मञ्जिले मकान में कबीर जी की गद्दी है। गद्दी के निकट कबीर जी की टोपी, रामानन्द स्वामी और कबीर जी की तस्वीरें हैं। पैर धोकर जाना होता है। आँगन से बाहर दीवारों से घेरा हुआ बड़ा बाग है। कबीरजी रामानन्द स्वामी के १२ चेलों में सब से प्रसिद्ध थे।

४१—लाठ भैरव—कपाल मोचन के उत्तर ६ गज लम्बे और इतने ही चौड़े घेरे के भीतर ७ फीट ऊँची और ७ फीट के घेरे की पत्थर के ऊपर ताँबे में मढ़ी हुई भैरव की लाठ है, जिसको 'लाठ भैरव' और 'कपाल भैरव' भी कहते हैं। इसकी पूजा होती है। पहले यह लाठ मंदिर के घेरे में था, जो (मन्दिर) औरंगजेब के हुक्म से तोड़ दिया गया।

भादों शुक्ल पूर्णिमा को कपाल मोचन तीर्थ (लाठ भैरव के तलाब) में स्नान और लाठ भैरव के दर्शन की बड़ी भीड़ होती है।

(स्कन्द पुराण, काशी खंड, १०० वाँ अध्याय) भाद्रशुक्ल पूर्णिमा को कुल स्तम्भ की यात्रा से भैरवी यातना का भय निवृत होता है।

४२—लोलार्क कुण्ड—यह भदैनी महल्ले में तुलसी घाट से थोड़ी ही दूर पर एक प्रसिद्ध कुँआ है जिसको महारानी अहल्याबाई के बाद अमृतराव और कूच बिहार के राजा ने बनवाया था। कुएँ का व्यास १५ फीट है जिसके एक ओर बिना पानी का चौखूँटा बड़ा हौज है। उसके तीन ओर ऊपर से नीचे तक पत्थर की ४० सीढ़ियाँ और एक ऊँचा मेहराब है जिससे होकर नीचे सीढ़िया द्वारा कुँआ में पैठना होता है। यहाँ भाद्रपद कृष्ण षष्ठी को मेला होता है। सब लोग लोलार्क तीर्थ में स्नान करते हैं। लोलार्क कुण्ड की सीढ़ी पर काशी के १२ आदित्यों में से लोलार्कादित्य हैं। कुण्ड के ऊपर दक्षिण 'लोलार्केश्वर' शिवलिंग है।

(स्कन्द पुराण, काशी खंड, ४६ वाँ अध्याय) शिवजी ने राजा दिवोदास को काशी से विरक्त करने के लिए सूर्य को काशी में भेजा। शिव के कार्य के लिए आने पर सूर्य का मन लोल (चंचल) हुआ, इस कारके उनका नाम लोलार्क पड़ा। कार्य सिद्ध न होने पर वह दक्षिण दिशा में असरसी के सङ्गम के निकट स्थित हुए। मार्गशीर्ष की सप्तमी, षष्ठी व रविवार को वहाँ यात्रा करने से मनुष्य पाप से छूट जाते हैं। लोलार्क के दर्शन करने से वर्ष भर का पाप निवृत्त होता है। सूर्य ग्रहण में यहाँ स्नान दान करने से कुरुक्षेत्र से अधिक फल मिलता है। माघ शुक्ला सप्तमी को असरसी सङ्गम पर स्नान करने से सात जन्म का पाप छूट जाता है। प्रत्येक रविवार को लोलार्क की यात्रा करने से क्षुधादि रोग नहीं होते।

४३—दुर्गाकुण्ड—असरसी घाट से आध मील पश्चिम दुर्गा कुण्ड महल्ले में दुर्गाकुण्ड नामक बड़ा सरोवर है जिसके पास पत्थर से बना हुआ काशी की नौ दुर्गाओं में से 'कूष्माण्डाख्या दुर्गा' का उत्तम मन्दिर है। सरोवर

और मन्दिर दोनों को पिछले शतक मे रानी भवानी ने बनवाया था। मन्दिर में नक्काशी का सुन्दर काम है।

दुर्गा कुण्ड के पास एक बाग मे सुविख्यात गुरु भास्करानन्द स्वामी दिगम्बर वेष में रहते थे।

( देवी भागवत, ३ स्कन्द, २४ वा अध्याय ) देवी जी सुबाहु राजा पर प्रसन्न हुईं। राजा ने कहा हे देवी! जब तक काशीपुरी रहे तब तक आप इसकी रक्षा के निमित्त दुर्गानाम से प्रसिद्ध होकर निवास करें। देवी ने कहा जब तक पृथिवी रहेगी तब तक हम काशी वासिनी होंगी।

( स्कन्द पुराण, काशी खंड, ७२ वा अध्याय ) अष्टमी, चतुर्दशी और मङ्गलवार को काशी की दुर्गा का सर्वदा पूजन करना चाहिए। नवरात्रा मे यत्न से दुर्गा की पूजा करने से विघ्न नाश होता है। आश्विन के नवरात्रि में दुर्गाकुण्ड में स्नान करने से दुर्गति नाश होती है और दुर्गा की पूजा करने से ६ जन्म का पाप छूट जाता है।

४४—मातृ कुण्ड— खिगिरा के टीला से पूर्व दूर लाटा पुरा मे 'मातृ कुंड तीर्थ' है। काशी खंड के ९७ वे अध्याय मे लिखा है कि इस कुण्ड में स्नान करने से मातृदेवी की कृपा से मनोवाँछित फल मिलता है और मनुष्य माता के ऋण से छुटकारा पाता है।

४५—पिशाच मोचन कुण्ड एक बडा सरोवर है। पूर्व के घाट से ऊपर 'कपर्दीश्वर' शिवलिंग, और एक इमली के वृक्ष के नीचे पिशाच का एक बड़ा शिर, बाल्मीकि मुनि और कई शिवलिंग तथा देवमूर्त्तियां हैं। कुण्ड के उत्तर बाल्मीकि टीले के ऊपर 'वाल्मीकेश्वर' और काशी के ५६ विनायकों में से 'हेरम्ब विनायक' हैं।

( शिवपुराण, ६ वा खण्ड, १० वां अध्याय ) कपर्दीश्वर लिङ्ग की कौन बड़ाई कर सकता है। उसी स्थान पर विमलोदक है। त्रेतायुग मे वाल्मीकि ऋषि इसी कुण्ड विमलोदक पर स्नान कर तप करते थे। एक दिन ऋषि ने एक बड़े भयानक पिशाच को देख और उस पर प्रसन्न हो उसको कुण्ड के भीतर शिव लिङ्ग दिखा कर स्नान कराया और उस के सर्वाङ्ग में भस्म लगा दी जिस से वह पिशाच मुक्ति पाकर सुन्दर शरीर धर शिव लोक को चला गया। उसी समय से यह कुण्ड पिशाच मोचन नाम से प्रसिद्ध हुआ।

( स्कन्दपुराण काशी खड, ५४ वा अध्याय ) मार्गशीर्ष शुक्ल १४ को पिशाच मोचन कुण्ड मे स्नान, पिण्डदान और कर्पदीश्वर शिव के दर्शन करने से पितरो की पिशाच योनि से मुक्ति होती है।

४६-बकरिया कुण्ड सिकरौर से राजघाट को जो सडक आई है उसके दक्षिण 'वर्करा' कुण्ड है जिस को बकरिया कुण्ड कहते हैं। यह अब गड्ढा के समान एक पुराना कच्चा तालाब है जिस में मिट्टी खोदी जाती है और वर्षाकाल में पानी रहता है। दक्षिण ओर टूटे फूटे छोटे पक्के घाट की निशानी देख पड़ती है जिस पर काशी के १२ आदित्यो में से 'उत्तरार्क' है।

स्कन्दपुराण, काशी खड, ४७ वां अध्याय मे बकरिया कुण्ड का वृत्तान्त और उस में पौष मास में स्नान करने का माहात्म्य कहा गया है और लिखा है कि पौष मास के रविवार को उत्तरार्क की यात्रा करने से काशीवास का फल प्राप्त होता है।

४७ कपाल मोचन—बकरिया कुण्ड से लगभग एक मील पूर्व 'कपाल मोचन कुण्ड' नामक एक बड़ा सरोवर है जो चारों ओर पत्थर की सीढियों से घेरा हुआ है। भाद्रशुक्ल पूर्णिमा को यहाँ स्नान और लाट भैरव के दर्शन पूजन का मेला होता है। कपालमोचन पञ्चपुष्करिणियों मे से एक है, शेष चार पुष्करिणियों के नाम हैं:—ऋणमोचन, पापमोचन, ऐतरणी, वैतरणी।

( शिवपुराण, ६ वा खड, १ अध्याय ) ब्रह्मा बोले कि भैरव ने हमारे पाँचवे शिर को काट डाला क्योंकि मैंने उस मुख से शिव की निन्दा की थी इसलिए भैरव को हमारे शिर काटने से ) चाण्डाली हत्या लगी, इससे संसार भर में फिर कर काशी मे आने पर तुरन्त उनकी हत्या जाती रही। जहाँ पर कि भैरव ने हमारा शिर गिराया वहाँ बड़ा तीर्थ हो गया और कपाल मोचन के नाम से ख्यात हुआ।

४८—रेवड़ी तालाब—जैनारायण कालेज के पास एक कच्चा तालाब है जिसे अब रेवड़ी तालाब कहते हैं। यह पुराणों का 'रेवती तीर्थ' है।

काशी की परिक्रमा ४६ मील की है। इसे पञ्चकोशी यात्रा कहते हैं और मणिकर्णिका घाट से आरम्भ होती है। इसमें स्थान स्थान पर देवता और सड़क के किनारे बड़े बड़े वृक्ष हैं। हर मास में पञ्चकोशी यात्रा की जाती है, पर यहाँ के लोग अगहन और फाल्गुन महीने में विशेष कर यह यात्रा करते हैं। फाल्गुन मास में ठाकुर जी यात्रा के लिए जाते हैं। उस समय स्थान-

स्थान पर रामलीला और कृष्णलीला होती है और सङ्ग में गवैए लोग भी गाने बजाते और अबीर उड़ाते चलते हैं।

*श्री सुपार्श्वनाथ व पार्श्वनाथ तीर्थङ्करों के स्थान बनारस के भेलपुरा मुहल्ले में हैं।*

कहा जाता है कि काशी की पचकोशी के भीतर मनुष्यों की सख्या से अधिक देव मूर्त्तियों की सख्या है।

[ **श्री सुपार्श्वनाथ** ( सातवें तीर्थङ्कर ) की माता का नाम पृथ्वी और पिता का नाम प्रतिष्ठित था। इनका चिन्ह स्वस्तिका है। गर्भ, जन्म, दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक आपके काशी में और निर्वाण पार्श्वनाथ में हुआ था।

**श्री पार्श्वनाथ** तेईसवें तीर्थङ्कर ) की माता वामा और पिता अश्वसेन थे। चिन्ह आपका सूर्य्य है। आपके गर्भ और जन्म कल्याणक काशी में हुए थे और दीक्षा तथा कैवल्यज्ञान रामनगर में हुए। निर्वाण का स्थान पार्श्व नाथ है ! ]

[**श्री कबीरदास**—का जन्म काशी की एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था।लज्जा के मारे वह नवजात शिशु को लहरतारा के ताल के पास फेंक आई।नीरू नाम का जुलाहा उस बालक को अपने घर उठा लाया और पाला पोसा। एक अमुद्रित प्राचीन पुस्तक कहती है की किसी महान योगी के औरस और प्रतीति नामक देवाङ्गना के गर्भ से भक्त प्रहलाद ही कबीर के रूप में स० १४५५ वि० में प्रकट हुए थे।

एक दिन पहर रात रहते ही कबीर पचगङ्गा घाट की सीढ़ियों पर जा पड़े। यहां से रामानन्द जी स्नान करने को उतरा करते थे। रामानन्द जी का पैर कबीर जी पर पड़ गया। रामानन्द जी चट "राम-राम" बोल उठे। कबीर ने इसे ही श्री गुरु मुख से प्राप्त दीक्षा मान लिया और स्वामी रामानन्द को अपना गुरू कहने लगे। उनकी इस युक्ति का कारण यह था कि रामानन्द जी उन्हें शिष्य नहीं बना रहे थे।

कबीर जी पढ़े लिखे नहीं थे पर उनकी वाणी का क्या कहना है। बुढ़ापे में कबीर जी का काशी में रहना लोगों ने दूभर कर दिया। यश और कीर्ति की उन पर वृष्टि सी होने लगी और उससे तङ्ग आकर वे मगहर (जिला बस्ती) चलेगए। ११६ वर्ष की अवस्था में वहीं से वे परमधाम को गए ]

[श्री रैदास का जन्म ईस्वी सन् की १५ वीं सदी में काशी में हुआ था और यह कई बार कबीर साहेब के सत्सङ्ग में शामिल हुए थे। बचपन से ही रैदास साधु सङ्गी थे, इससे इनके पिता रघु इनसे रुष्ट रहा करते थे। बात यहा तक बढ़ी कि उन्होंने रैदास को घर से निकाल दिया। रैदास जी जूता टाँकते जाते और हरि भजन करते जाते थे। पूरे १२० वर्ष के होकर रैदास जी ब्रह्म में लीन हो गए। उनके पन्थ के अनुयायियों का विश्वास है कि वे सदेह गुप्त हो गए। रैदास जी जाति के चमार थ। हरिजन लोग प्राय अपने को "रैदासी" ही कहते हैं ]

[ बाबा किनाराम अघोरी का जन्म काशी से कुछ दूर गङ्गा के दक्षिण तट पर रामगढ गाव मे वि० स० १६८४ म क्षत्रिय कुल मे हुआ था। तेरह साल की अवस्था मे इनके गौने का दिन निश्चित हुआ। एक दिन सबेरे उठते ही उन्होंने कहा 'वह माई तो पिता के पास पहुँच गई'। सब लोग बहुत बिगडे पर जब गौने को जाने लगे तब खबर आई कि कन्या अचानक मर गई और रथी गङ्गा तट पर रखी है सब लोग मृतक सस्कार को चले। अब लोग इन्हे बचन सिद्ध सन्त समझने लगे।

कुछ दिनों बाद इन्होंने वैराग्य के आवेश मे आकर घर से निकल कर बलिया के कारो नामक गाँव मे जाकर बाबा शिवाराम जी का शिष्यत्व स्वीकार किया और गुरू की आज्ञा से फिर घर लौट आए। माता पिता ने दूसरा विवाह करना चाहा तब ये फिर घर से निकल गए। चारो धामो और तीर्थों की यात्रा करके घर लौटे। हजारो यात्री इनके दर्शनार्थ आने लगे। यात्रियों को जल का कष्ट होते देख इन्होने एक कुँआ और उसके चारों ओर एक बरामदा बनवा दिया। बरामदा पाटने के बजाय उस पर कपडे रख दिए और कहते हैं कि, कहा 'बाबा तू पक्का हो जा'। बरामदा पक्का हो गया। यह कुँआ रामसागर कहलाता है और मौजूद है।

अपनी तीसरी यात्रा में बाबा किनाराम जूनागढ गए थे। वहाँ के नवाब ने सब हिन्दू साधुओं को बन्दी कर लिया था कहता था कि तुम फकीर हो तो चमत्कार दिखाओ नहीं तो यह जाना बदला। किनाराम भी पकडे गए। जेल गए तो और साधुओं से चक्की चलवाई जा रही थी। इन्होने कहा "छोड़ दो यह माई अपने आप ही चलेगी" चक्की आपसे आप चलने लगी। नवाब ने इस पर सब साधुओं को छोड़ दिया। कहते हैं कि, स० १८२६ वि० म १४२ वर्ष की अवस्था म इन्होने जीवित समाधि ले ली। ]

[पंडित ब्रह्मशंकर जी मिश्र का जन्म काशी के सुप्रसिद्ध ब्राह्मण कुल में १८ मार्च १८६६ को हुआ था। आपके पिता का नाम पंडित रामदत्त था। आपकी धर्म पत्नी का नाम श्रीमती नेहया जी है। आपने एम० ए० तक शिक्षा प्राप्त करके नवम्बर १८८५ ई० में गुरु हुजूर साहब की शरण ली, और ६ दिसम्बर १८९८ ई० को स्वयम् गुरू पद प्राप्त किया। आप एका उन्टेन्ट जनरल एलाहाबाद के कार्य्यालय में काम करते थे और वहीं सत्सङ्ग भी करते थे। १२ अक्टूबर १९०७ ई० को आप बनारस ही से परमधाम को पधारे। बनारस में कबीरचौरा मुहल्ले में आपका समाधि मन्दिर है और 'स्वामी बाग' के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ प्रतिवर्ष आश्विन शुक्ल पंचमी तथा नवमी को आप का वार्षिक भण्डारा हुआ करता है।]

सुप्रसिद्ध कवि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का भी जन्म और निवासस्थान काशी था। सं० १९०७ वि० में इनका जन्म अग्रवाल वैश्य कुल में हुआ था और केवल ३४ वर्ष की अवस्था पाकर भी (१९४१ वि० में इनका काशी में शरीरान्त हुआ) इन्होंने ऐसा अलौकिक चमत्कार दिखलाया कि सभी लोग मुग्ध हो गए और सब ने मिल कर इन्हें 'भारतेन्दु' की उपाधि से विभूषित किया। वर्तमान हिन्दी की इनके कारण इतनी उन्नति हुई कि इनको उसका जन्मदाता कहने में भी अत्युक्ति न होगी। आपकी कविता का उदाहरण है—

हरिचन्द जू यामैं न लाभ कछू,
हमैं बातन क्यों बहरावती हौ।
सजनी मन हाथ हमारे नहीं,
तुम कौन को का समझावती हौ॥

काशी में निम्नलिखित और अच्छे कवि हो गए हैं—गजन (दो सौ वर्ष पूर्व), रघुनाथ (दो सौ वर्ष पूर्व), हरिनाथ (पौने दो सौ वर्ष पूर्व), ब्रह्मदत्त (डेढ सौ वर्ष पूर्व), जय गोपाल (सवा सौ वर्ष पूर्व), दीन दयाल गिरि (सौ वर्ष पूर्व), बलवान सिंह (सौ वर्ष पूर्व) और सरदार (पचास वर्ष पूर्व)।

वर्तमान काल में काशी की सब से बड़ी बात यहाँ का हिन्दू विश्वविद्यालय है जो महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी तथा देवी एनीबेसेंट के उद्योग से बना है। यह विद्या क्षेत्र संसार की एक अद्वितीय वस्तु है और एक साधारण मनुष्य का उसे खड़ा कर देना केवल चमत्कार कहा जा सकता है। इसके बीच में भी मालवीय जी ने विश्वनाथ का एक विशाल मन्दिर

भृगु आश्रम— बलिया के अतिरिक्त, बम्बई प्रान्त के भड़ोच में भी भृगुऋषि का आश्रम था। जबलपुर से १८ मील पश्चिम भेड़ाघाट भी भृगुतीर्थ कहलाता है।

४२६ बसाढ— (बिहार प्रान्त के मुजफ्फरपुर जिले में एक ग्राम)

इस स्थान पर बौद्ध ग्रन्थों का सुप्रसिद्ध वैशाली नगर था।

लिच्छवी क्षत्रियों की यह राजधानी थी।

भगवान बुद्ध ने यहाँ कई चौमास वास किया था।

यहीं उन्होंने महापरि निर्वाण, अर्थात् अपना शरीर छोड़ने, का समय आने की सूचना दी थी और भिक्षुओं को अन्तिम उपदेश दिया था।

बौद्धों की दूसरी धर्म सभा ४४३ बी० सी० में महात्मा रेवत के सभापतित्व में यहाँ हुई थी।

भगवान बुद्ध के शिष्य आनन्द के शरीर की आधी भस्म यहाँ रक्खी गई थी।

प्रा० क०—बौद्ध ग्रन्थों में वैशाली नगर का बहुत वर्णन मिलता है। यहीं पर आम्रवाटिका थी जिसे अम्बापाली ने भगवान बुद्ध को दान में दिया था।

वैशाली प्रदेश आधुनिक मुजफ्फरपुर जिला का दक्षिणी भाग था। इसके उत्तर में विदेह राज्य और दक्षिण में मगध राज्य था।

ह्वानच्वाङ्ग ने ६४० ई० के लगभग लिखा है कि वैशाली नगर के भीतर व बाहर इतनी धार्मिक इमारतें हैं कि उनकी गिनती करना असम्भव है। बौद्ध भिक्षुओं के रहने के विहार के समीप एक स्तूप था जहाँ भगवान बुद्ध ने अपना शरीर छोड़ने का समय निकट आ जाने की सूचना दी थी। उससे आगे बढ़कर एक स्तूप था जहाँ भगवान बुद्ध व्यायाम किया करते थे। दूसरा स्तूप था जहाँ उन्होंने कुछ धार्मिक ग्रन्थ सुनवाए थे। एक स्तूप था जिसमें आनन्द के शरीर की आधी भस्म रक्खी थी। शेष आधी राजगिर में एक स्तूप में थी।

वैशाली के राज भवन से एक मील पश्चिमोत्तर एक स्तम्भ था जिस पर सिंह बना था। इसके दक्षिण में एक तालाब था जो बानरों ने भगवान बुद्ध के लिए खोदा था। इस हृद (ताल) के पश्चिम में एक स्तूप था जहाँ बानरों ने वृक्ष पर चढ़ कर भगवान बुद्ध के कमण्डल को मधु (शहद से)

भर दिया था। ह्रद के दक्षिण में एक स्तूप था जहाँ वानरों ने भगवान बुद्ध को मधु अर्पण करना चाहा था।

व० द०—बसाढ पटना से २७ मील उत्तर को है और यहाँ एक पुरानी गढी के चिन्ह हैं। गढी के दक्षिण फाटक से पश्चिम की ओर दूर तक ईंटों के रोडे चले गए हैं और यही पुराने स्तूपों की जगह हैं। एक खेडे के ऊपर एक मुसल्मान की कब्र है और चैत में यहाँ एक मेला लगता है जिसमें हजारों यात्री आते हैं। मेला सूर्य महीनों (Solar) के हिसाब से लगता है, चन्द्रमा (Lunar) के हिसाब से नहीं। इससे यह स्पष्ट है कि यह बौद्ध मेला है, मुसल्मानी मेला नहीं है।

बसाढ गढ़ी से दो मील उत्तर-पश्चिम एक गाम्र बखर है। यहाँ एक सिंह स्तम्भ मौजूद है। स्तम्भ के दक्षिण में एक ताल है। यह वही ताल जान पडता है जो वानरों ने भगवान बुद्ध के लिए खोदा था। इस ताल के दक्षिण और पश्चिम में ईंटों के खेडे पडे हैं जो पुराने स्तूपों के जगह बताते हैं। 'मानधानी सूत्र' से पता चलता है कि जिस कुटागार भवन में भगवान् बुद्ध ने अपने शिष्यों को अन्तिम उपदेश दिया था वह इसी वानरों वाले तालाब के किनारे पर था।

जिस समय भगवान बुद्ध ने अपने आने वाले निर्वाण के समय की घोषणा की और वैशाली छोड़ कर जाने लगे तो वहाँ के लिच्छिवी निवासी विलाप करते हुए उनके साथ हो लिए। लगभग ३० मील तक वे उनके साथ चले गए। वहाँ भगवान बुद्ध ने उनको रोक दिया और योग बल से अपने और उनके बीच एक ऐसी खाइ उत्पन्न कर दी जिसे वे पार न कर सके। वहाँ से भगवान बुद्ध ने अपना भिक्षा पात्र उन्हें दे कर बिदा कर दिया। यह स्थान केसरिया है जो बसाढ से ३० मील उत्तर पश्चिम में है। भिक्षा पात्र देने के स्थान पर एक टूटा हुआ स्तूप है जिसके पास एक बड़ा खाई है।

ह्वानचाङ्ग लिखते हैं कि कसरियाँ में भगवान बुद्ध ने एक पूर्व जन्म में महादेव नामक एक चक्रवर्ती राजा होकर राज किया था।

पद्मपुराण की कथा है कि राजा बेन चक्रवर्ती की रानी कमलावती अपने पुण्य प्रताप से कमल पर खडी होकर नहाया करती थी। एक दिन कमल, रानी कमलावती का बोझ न सह सका और वे डूब गईं। राजा अपनी प्रजा से बहुत कम कर लिया करते थे। पीछे कर बढा दिया था और प्रजा पर बड़ा

अत्याचार करने लगे थे उसी का यह फल हुआ। राजा ने भी इसके पीछे सपरिवार समाधि ले ली। रानी के निवास का स्थान वैशाली में पुराने स्तूपों के खेड़े से ६ फर्लाङ्ग पूर्वोत्तर में अब भी 'रनवास' कहलाती है और टूटे फूटे खेड़े की शक्ल में है। )

वैशाली से हाल में अनेक प्राचीन वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं। जिनमें मिट्टी के खिलौने और मुहरें मुख्य हैं। इन मुहरों में गुप्त सम्राट कुमार गुप्त प्रथम, गोविन्द गुप्त तथा अनेक अफसरों की ब्राह्मीलेख-युक्त मुहरें विशेष उल्लेखनीय हैं जिनसे गुप्त कालीन इतिहास पर बहुत प्रकाश पड़ा है। गुप्तकाल में वैशाली में मुहरें बनाने का केन्द्र था।

डाक्टर होई (Dr. Hoey) चिराँद को, जो छपरा से ६ मील पूर्व है, वैशाली समझे थे परन्तु पीछे जो खुदाई हुई है उससे बराढ़ का वैशाली होना सिद्ध है। चिराँद के लोग उस स्थान को महाभारत के महाराज मयूर्ध्वज की राजधानी बतलाते हैं पर मयूर्ध्वज की राजधानी रतनपुर या तमलुक है। ( देखिए रतनपुर और तमलुक )। चिराँद' के लोग इसे च्यवन ऋषि का आश्रम भी बतलाते हैं ( देखिए चौसा )। इसमें सन्देह नहीं कि चिराँद एक प्राचीन और पवित्र स्थान था।

४२७ वसुधारा तीर्थ—( देखिए बद्रीनाथ )

४२८ बाँसेडीला—( संयुक्त प्रान्त के गोंडा जिले में एक स्थान )

इसका प्राचीन नाम सेतव्या है।

यहाँ काश्यप बुद्ध का जन्म हुआ था।

यह गाँव बलरामपुर से ६ मील और श्रावस्ती ( सहेट महेट ) से १७ मील पूर्व में है।

४२९ बागपत—( संयुक्त प्रान्त के मेरठ ज़िला में एक स्थान )

बागपत का प्राचीन नाम भागप्रस्थ है और यह उन पाँच ग्रामों में से एक है जिनको श्रीकृष्ण ने दुर्योधन से पाण्डवों के लिए मांगा था।

बागपत मेरठ से ३० मील पश्चिम में है।

४३० बागान—( सीमाप्रान्त के बन्नू ज़िले में एक बस्ती )

इसका प्राचीन नाम तारा पथ है। महाराज रामचन्द्र ने अपने साम्राज्य के बाँटने में यह स्थान लक्ष्मण जी के पुत्र अङ्गद को दिया था।

बागान सिन्धु नदी पर है और काला बाग व कारी बाग भी कहलाता है।

४३१ बाघेरा—( देखिए बाराह क्षेत्र )

४३२ बाण तीर्थ—( देखिए सोमनाथ पट्टन )

४३३ बाद—( संयुक्त प्रान्त के मथुरा ज़िले में एक गाँव )

राधावल्लभी सिद्धान्त के प्रवर्तक श्री हितहरिवंश जी का यहां जन्म हुआ था।

[मथुरा में गोकुल के पास बाद ग्राम में सं० १५३० वि० में राधावल्लभीय सिद्धान्त के प्रवर्तक **गोस्वामी श्री हित हरिवंश** जी का जन्म हुआ। आप के पिता का नाम केशवदास मिश्र और माता का नाम तारावती था। ये लोग देववन्द जिला सहारनपुर )के रहने वाले थे। यात्रा को आए थे और उसमें हित हरिवंश जी का प्राकट्य हुआ था। कहते हैं कि थोड़ी अवस्था में ही श्री राधिका जी ने इन्हें गुरु मन्त्र दिया था। इनका बाल्यकाल और कौमार्य अलौकिक घटनाओं से पूर्ण है। श्रीहितहरिवंश आदि ग्रन्थों में इनके विविध चरित्रों का वर्णन है। वृन्दावन में निवास कर सं० १६०६ वि० में इन्होंने निकुञ्ज धाम को गमन किया।]

४३४ वाराह क्षेत्र—( नेपाल राज्य में धौलागिरि शिखर पर एक तीर्थ स्थान )

भगवान विष्णु ने इस स्थान पर वाराह अवतार लेकर शरीर छोड़ा था।

इसका दूसरा नाम कोका मुख भी है।

प्रा० क०—( मत्स्य पुराण, १६२ वां अध्याय ) जहां जनार्दन भगवान वाराह रूप धारण कर सिद्ध होकर पूजित हुए हैं वह वाराह तीर्थ है।

( आदि ब्रह्मपुराण, १०५ वां अध्याय ) त्रेता और द्वापर की सन्धि में पितरगण दिव्य मनुष्य रूप होकर मेरु पर्वत की पीठ पर विश्वदेवों सहित स्थिर हुए। चन्द्रमा से उत्पन्न हुई कान्तियुक्त एक दिव्य कन्या हाथ जोड़ कर उनके आगे खड़ी हुई और पितरों से बोली कि मैं चन्द्रमा की कला हूँ, तुम को बरुंगी। मैं पहले ऊर्जा नाम वाली थी, पश्चात् स्वधा हुई और अब मेरा नाम कोका है। पितृदेव उस पर मोहित हो गए। तब विश्वदेवा पितरों को योग से भ्रष्ट देख,उनको त्याग कर स्वर्ग चले गए। चन्द्रमा ने अपनी आत्मा को न देख पितरों को शाप दिया कि तुम योग से भ्रष्ट हो जाओ, और इसने जो तुम पर मोहित हो पति भाव से तुम को बरा है इस कारण से यह नदी हो कर लोक में कोका नाम से प्रसिद्ध हो और इस पर्वत के शिखर पर स्थित रहे। ऊर्जा, कोका नदी नाम से विख्यात होकर वहाँ पर वेग से बहने लगी। इसी तरह पाप युक्त होकर पितर दस हज़ार वर्ष तक वास करते रहे। सब लोक

स्वधाकार और पितरों से रहित हुए और दैत्यादि बली हो गए और विश्वदेवों से रहित पितरों को देख कर चारों ओर से घिर आए। उन्हें आते देख कोका ने क्रोध से युक्त हो अपने वेग से हिमाचल को डुबा कर पितरों को घेर लिया, परन्तु राक्षसादिक भय देने के लिए वहीं स्थित हो गए। पितर जल में दुखित हो भी हरि की शरण में गए और उनकी बहुत स्तुति की। तब विष्णु ने दिव्य मूर्त्ति शूकर रूप धारण कर जल में डूबे हुए पितृगणों का उद्धार किया। बाराह जी ने कहा कि कोका के जल का पान पापों का नाश करता है। इस तीर्थ में स्नान करने वाला धन्य है। माघ मास के शुक्ल पक्ष में प्रातःकाल कोका में स्नान करे और पाँच दिन वहां ठहरे। एकादशी और द्वादशी यहाँ रहने योग्य है।

( नृसिंह पुराण, ३६वा अध्याय ) बाराहजी ने कोका नामक तीर्थ में बाराह रूप छोड कर वैष्णवों के हित के लिए उसको उत्तम तीर्थ बना दिया।

( गरुड पुराण, पूर्वार्द्ध, ८१वां अध्याय, पद्मपुराण सृष्टि खण्ड, ११वा अध्याय; कूर्म पुराण, उपरि भाग, ३४वा अध्याय ) कोका मुख तीर्थ सम्पूर्ण काम को देने वाला है।

( महाभारत, वनपर्व, ८७ वां अध्याय ) गया की ओर कौशिकी नामक नदी है। विश्वामित्र वहीं ब्राह्मण बने थे।

( वाल्मीकीय रामायण,बालकाण्ड ३४ वां सर्ग ) विश्वामित्र ने रामचन्द्र से कहा कि कौशिकी नदी हिमवान पर्वत से निकली है और मैं उसके स्नेह से उसके पास निवास करता हूँ।

( बाराह पुराण, उत्तरार्द्ध, पहला अध्याय ) कोकामुख क्षेत्र जिसको शूकर क्षेत्र भी कहते हैं भागीरथी गङ्गा के निकट है। कोका मुख के समीप मत्स्य शिला नामक एक पवित्र तीर्थ है जिसमें पर्वत के ऊपर जल की धारा गिरती है। बाराह जी बोले कि, कोका मुख हमारा क्षेत्र पाँच योजन विस्तार का है।

व० द०— बाराहक्षेत्र कोशी नदी के किनारे पर है। एक साधारण मन्दिर में चतुर्भुज बाराह जी की मूर्ति है। उत्तर ओर कोकरा नदी बहती है। कार्त्तिक पूर्णिमा के दिन स्नान और जल चढ़ाने की यहां बड़ी भीड होती है। मेला चार दिन पहिले से चार दिन बाद तक रहता है।

कुछ लोग सोरों ( जिला एटा-संयुक्त प्रान्त ) को बाराह क्षेत्र कहते हैं परन्तु यह पुराणों से प्रमाणित नहीं होता। ( देखिए सोरों )

बस्ती ( संयुक्त प्रान्त ) से ७ मील उत्तर में भी एक ग्राम वाराहक्षेत्र कहलाता है और उधर के लोग इसी को वाराह अवतार की जगह बतलाते हैं। इस वाराहक्षेत्र व सोरों मे, दोनों जगह, वाराह जी के मन्दिर हैं और मेले लगते हैं।

बस्ती वाले वाराहक्षेत्र का पुराना नाम व्याघ्रपुर था। यह भगवान बुद्ध की माता, माया देवी, के पिता राजा सुपरबुद्ध की राजधानी थी और इसे कोली भी कहते थे।

बघेरा जो अजमेर से ४७ मील पूर्व-दक्षिण राजपूताना के जयपुर राज्य में एक कस्बा है, उसको भी वाराह क्षेत्र कहा जाता है। बघेरा का पुराना नाम व्याघ्रपुर था और यहाँ एक १६०० फीट लम्बी और ६०० फीट चौडी भील के किनारे वाराहजी का विशाल मन्दिर खड़ा है। झील का नाम वाराह सागर है और बताया जाता है कि वाराह अवतार इस स्थान पर हुआ था। मन्दिर में चौबीसों घंटे दीप जलता है। वाराह जी के पुराने मन्दिर को औरङ्गजेब ने तोड़ डाला था इसके उसके पश्चात् यह नया मन्दिर बनवाया गया है। बघेरा में सूअर कभी नहीं मारा जाता। लोगों का विश्वास है कि यदि किसी ने मारा तो मारने वाला बच नहीं सकता। यहाँ प्राचीन सिक्के जिन पर 'श्री आदि वाराह' खुदा है अक्सर मिलते हैं। कहते हैं कि इस स्थान का नाम सत्युग में तीर्थराज, त्रेता में कृतबिन, द्वापर में बसन्तपुर और कलियुग के आरम्भ में व्याघ्रपुर था।

आर्कियालाजिकल मुहकमे के मिस्टर ए० सी० एल० कार्लायल का विचार है कि बघेरा का प्राचीन स्थान ही वाराह भगवान के अवतार का क्षेत्र हो सकता है। वे कहते हैं कि वाराह अवतार ने डूबी हुई पृथिवी को फिर से निकाला है और प्रत्यक्ष है कि बघेरा के आस पास का देश और राजपूताना बाद को जल से बाहर निकले हैं। मेरा ( लेखक का ) स्वयम् भी यही विचार है। काशी नदी के किनारे वाले वाराह क्षेत्र की पुरानी कथा भी यही बताती है कि तमाम जलमय हो गया था तब वाराह जी ने आकर वहां रक्षा की और भूमि को जल से निकाला।

नरसिंह पुराण ने कहा है कि, कौशी नदी के किनारे वाराहक्षेत्र में वाराह जी ने शरीर छोड़कर उसे पवित्र स्थान बनाया। इस से माना जा सकता है कि बघेरा में वाराह अवतार हुआ था और वाराह क्षेत्र में उन्होंने शरीर छोड़ा

तथा रास्ते में सोरों व बस्ती के वाराह क्षेत्र में भी कुछ समय बिताया हो अर्थात् वहाँ भी डूबी हुई जमीन जल से बाहर आई हो।

श्रीनगर ( कश्मीर ) से ३२ मील बरामुला में भी वाराह अवतार का होना बतलाया जाता है। यह निश्चय है कि कश्मीर की घाटी एक समय जल से भरी हुई थी और भूमि भी पीछे जल से बाहर आई है।

पद्मपुराण की कथा है कि चम्पावती नगर के राजा चन्द्रसेन ने एक मृग के आखेट में बाण मारा परन्तु निकट जाकर देखा तो मृग के स्थान पर एक वृद्ध तपस्वी को तड़पते पाया। ऋषि के शाप से उनका सारा शरीर काला पड़ गया। मानि ऋषि के कहने पर चन्द्रसेन ने बसन्तपुर में वाराह सागर में स्नान करके आरोग्य लाभ किया था। बाघेरा ( बसन्तपुर ) से एक मील पर एक ताल है जिसे सन्कादिक ऋषि का कुण्ड कहते हैं। बाघेरा में कई प्राचीन मन्दिरों के चिन्ह हैं और मिली हुई एक नदी बहती है जिसे डांगर नदी कहते हैं। कहा जाता है कि यह पुराणों की बाबा नदी है।

चम्पावती नगर ( जहाँ के राजा चन्द्रसेन थे ) का वर्तमान नाम चातसू है और यह जगह इन दिनों जयपुर राज्य में, जयपुर से २५ मील दक्षिण है। यह स्थान बहुत प्राचीन है और कहा जाता है कि इसे तम्बावती भी कहते थे।

चित्तौड़ से ११ मील उत्तर एक अति प्राचीन स्थान नगरिया है। यहीं प्राचीन तम्बावती है जिसे राजा हरिश्चन्द्र ने बसाया था। ( देखिए नगरिया )

४३५ बालाजी—(मद्रास प्रान्त के उत्तरी अर्काट जिले में तिरुपती कस्बे से ६ मील दूर एक प्रख्यात मन्दिर )

शुक, भृगु, प्रह्लाद, अम्बरीष आदि महर्षियों ने यहाँ तप किया था।

इसका दूसरा नाम वैकुण्ठगिरि है। वैंकटेश्वरनारायण तथा बालाजी विश्वनाथ की मूर्तियों को यहाँ स्वामी रामानुजाचार्य ने स्थापित किया था।

कहा जाता है कि श्रीरामचन्द्र, सीता व लक्ष्मण लङ्का से लौटते समय यहाँ एक रात्रि ठहरे थे।

बलदेव जी यहाँ आए थे।

प्रा० क० ( श्रीमद्भागवत, दशम स्कन्ध, ७९ वां अध्याय ) बलदेव जी भी शैल से चलने के पश्चात् द्रविड़ देश में परम पवित्र श्री वैंकट पर्वत का दर्शन करके काञ्चीपुरी में गए।

रामानुज स्वामी के शिष्य अनन्ताचार्य ने अपनी 'श्री वैंकटाचल इतिहास माला' नामक संस्कृत पुस्तक में वैंकटेश जी का प्राचीन वृत्तान्त लिखा है कि

स्वर्णमुखरी के तीर पर वैङ्कटाचल नामक पर्वत है जिसके ऊपर सिद्ध और मुनिजन तप करते हैं। इस पर चाण्डाल, यवन आदि, वेद, से बाह्यलोग चढ़ नहीं सकते। शुक्र, भृगु, प्रह्लाद आदि महर्षि और राजर्षिगण पर्वत को विष्णु का अंश समझकर उस पर नहीं चढ़े। उन्होंने उसके निकट तप किया था। पर्वत के ऊपर स्वामिपुष्करणी के पश्चिम किनारे पर पृथिवी को अङ्क में लिए हुए शूकर भगवान स्थित हैं।

गरुड़ ने वैकुण्ठ से वैङ्कटाचल को लाकर द्रविड़ देश में स्वर्ण मुखरी नदी के तट पर रक्खा और भगवान की क्रीड़ा वापी स्वामिपुष्करणी को भी लाकर उस पर स्थापित किया। वैङ्कटगिरि पर लक्ष्मी देवी, पृथिवीदेवी और नीलादेवी के सहित विष्णु भगवान विराजने लगे।

विष्णु भगवान वैवस्वत मन्वन्तर के प्रथम सत्युग म वायु के तप से प्रसन्न होकर गङ्गा से दो सौ योजन दक्षिण और पूर्व के समुद्र से पाँच योजन पश्चिम म वैङ्कटगिरि के ऊपर स्वामिपुष्करणी के तट पर, सूर्य मंडल के तुल्य विमान (मन्दिर) में लक्ष्मी और देवताओं के सहित आ विराजे। वह कल्प के अन्त तक उस विमान में निवास करेंगे। भगवान की आज्ञा से शेष जी ने पर्वत रूप अर्थात् वैङ्कटगिरि बन कर पृथिवी पर निवास किया।

व० द०—तिरुपदी कस्बे से लगभग १ मील दक्षिण स्वर्णमुखी नदी बहती है। तिरूमला पहाड़ी के ऊपर की तिरुपदी जहाँ बाला जी का प्रसिद्ध मन्दिर है, बसी है। रामानुज स्वामी के सम्प्रदाय की पुस्तक 'प्रपन्नामृत' के ५१ वें अध्याय म लिखा है कि श्रीरामानुज स्वामी ने वैङ्कटाचल के पास गोविन्दराज को स्थापित किया था। गोविन्दराज भुजङ्ग पर शयन किए हुए विष्णु की मूर्ति हैं। गोविन्दराज के मन्दिर के पास श्री भट्टनाथ दिव्य सूरि की कन्या गोदा देवी का मन्दिर है जिसको रामानुज स्वामी ने स्थापित करवाया था। वैङ्कटाचल की चोटी समुद्र के जल से लगभग २५०० फीट ऊँची है। तिरुपदी से ६ मील पर श्री बाला जी का मन्दिर है। जूता पहिन कर पहाड़ के ऊपर कोई नहीं जाता। बाला जी का मन्दिर पत्थर की तीन दीवारों से घिरा हुआ है। मन्दिर का हाता ४१० फीट लम्बा और २६० फीट चौड़ा है।

बाला जी को दक्षिण भारत के लोग वैङ्कटेश, वैङ्कटाचल पदी आदि नामों से पुकारते हैं किन्तु उत्तरी भारत के अधिक लोग उनको बाला जी कहते हैं। इनकी झाकी अतिमनोहर है।

बालाजी मे राजसी कारखाना है। भोग राग का खर्च बे हिसाब है। चौसठ सिंहासनों में चांदी-सोना के पत्तर जड़े हुए हैं। प्रतिवर्ष दशहरे के दिन बड़े धूम धाम से रथयात्रा होती है। हर साल लगभग एक लाख पचीस हजार यात्री श्री वेङ्कटेश भगवान का दर्शन करते हैं।

मन्दिर के पास १०० गज लम्बा और ५० गज चौड़ा स्वामिपुष्करणी नामक एक सरोवर है जिसके चारों तरफ पत्थर काट कर सीढियाँ बनाई गई हैं। यात्री लोग उसी में स्नान करके बाला जी का दर्शन करते हैं। बद्रीनारायण के समान यहाँ भी प्रसाद में छूत नहीं है।

मन्दिर के पास हुंडी नाम से प्रसिद्ध एक तरह के हौज के समान एक पात्र बना है जिसका मुख ऊपर से बन्द है। रुपया, पैसा, गहना, सोना, चांदी, धान्य, मसाला, केसर, फूल, फल, इत्यादि वस्तु जो जिसके मन में आता है, वह इस हुंडी मे डाल देता है जिसको नियत समय पर मन्दिर के अधिकारी निकाल लेते हैं। बहुतेरे व्यापारी या दूसरे लोग अपने घर मे बालाजी के निमित्त रुपए पैसे निकालते हैं जिसको कानगी कहते हैं। मन्दिर की वार्षिक आमदनी लगभग दो लाख रुपया है। खर्च भी भारी है।

बालाजी से ३ मील दूर, पहाड़ी की ऊँची-नीची चढ़ाई उतराई के बाद पापनाशिनी गङ्गा मिलती है। दो पहाड़ियों के बीच में बहती हुई धारा दूर से आई है और वहां पहाड़ी पर ऊपर से नीचे गिरती है। उसके नीचे यात्री लोग खड़े होकर स्नान करते हैं।

४३६ वाल्मीकि आश्रम—( देखिए बिठूर )

४३७ बासर वा बासिर—( पंजाब प्रान्त के जिला अमृत सर में एक स्थान )

यहाँ सिक्खों के तीसरे गुरु श्री अमरदासजी का जन्म हुआ था।

[ संवत् १५३६ वि० में बासिर गाँव में तेजभान भल्ले खत्री के घर श्री सुलक्षणीदेवी के उदर से गुरु अमरदास जी का जन्म हुआ था। यह वैष्णव थे और बड़े आचार विचार से रहते थे पर हृदय को शान्ति नहीं मिलती थी। इसी प्रकार ६० साल बीत गए। एक दिन इनके कान में प्रातःकाल कुछ सुन्दर शब्द की मधुर ध्वनि पड़ी। यह शब्द इनके भाई के घर से आरहे थे। वहाँ जाकर मालूम हुआ कि इनके भाई के लड़के की नव विवाहिता स्त्री गारही थी। उसने बताया कि ये शब्द गुरु नानक के थे जिनकी गद्दी पर उस समय उसके पिता श्री अङ्गददेव जी विराजमान थे। यह तुरन्त जाकर

अङ्गददेव जी के शिष्य हो गए और रात दिन खडूर साहेब में उनकी सेवा में लग गए।

अपने हाथ से यह तीन मील से जल लाकर गुरु को स्नान कराया करते थे। एक दिन रात्र के समय अँधेरे में पैर फिसल गया और एक जुलाहे के घर के सामने यह मये घड़े के गिर पड़े। उसने अपनी स्त्री से पूछा, इस समय कौन गिरा। वह बोली! 'वही होगा अमरू निथावा ( निधरा ), उसके न घर है न घाट, इसी से न रात का होश है न दिन का होश'। इस घटना की सूचना गुरू अङ्गददेव जी तक भी पहुँची। उन्होंने इन्हें छाती से लगा लिया और उस दिन उस जल से आप स्नान न करके अपने हाथ से अमरदास जी को स्नान कराया और गुरुआई की गद्दी उनको देकर बोले कि यह 'अमरूनिथावा' नहीं, यह आज से श्री गुरु अमरदासजी निथावों के थान होंगे। १६०८ वि० में गुरु अमरदास जी गद्दी पर बैठे। आपने खडूर साहब को छोड़ कर गोइँदवाल को अपना निवास स्थान बनाया और १६३१ म परलोक गमन किया। ]

वासिर में एक सिक्ख गुरुद्वारा है।

( ४३८ बिठूर—( संयुक्त प्रान्त के कानपुर जिले म एक तीर्थ स्थान ) )

बिठूर ब्रह्मावर्त तीर्थ करके प्रसिद्ध है।

इसका नाम बर्हिष्मती पुरी भी था और अन्य प्राचीन नाम उत्पलारण्य, प्रतिष्ठान तथा उत्पलारत्नकानन हैं।

राजा स्वायम्भुव मनु और ध्रुव जी का जन्म बिठूर म हुआ था।

बिठूर राजा मनु की राजधानी थी।

ध्रुव के पिता उत्तानपाद की भी यही राजधानी थी। ( पर देखिए लौरिया नवन्दगढ )

पृथिवी को रसातल से ले आने के पश्चात् शरीर कँपाते समय श्री वराह भगवान के रोम झड़ कर यहाँ गिर थे।

राजा पृथु ने यहाँ यज्ञ किए थे।

( बिठूर से ६ मील पर बेलारुद्रपुर में महर्षि वाल्मीकि का जन्म हुआ था। इसी स्थान पर महर्षि का निवास और कुटी थी। सीता जी, रामचन्द्र जी द्वारा वनवास दिए जाने पर यहीं रही थीं। लव और कुश का जन्म इसी बेलारुद्रपुर म हुआ था। यहीं वाल्मीकि जी द्वारा आदि ग्रन्थ रामायण की रचना हुई थी। )

यहाँ लव और कुश ने शत्रुघ्न, भरत, लक्ष्मण और राम को युद्ध में परास्त किया था।

ग्रा० क०—(श्री भद्भागवत, तीसरा स्कन्ध, २१ वां अध्याय)

भगवान विष्णु ने कर्दम मुनि से कहा कि ब्रह्मा के पुत्र राजा मनु ब्रह्मावर्त्त में रहते हैं और सात द्वीप नवखण्ड का पालन पोषण करते हैं, वह परसों यहाँ आकर तुमको अपनी पुत्री दे जाँयगे। नियत दिन पर राजा मनु ने विन्दु सरोवर के निकट जाकर कर्दम मुनि को अपनी पुत्री दे दी। जब स्वायम्भुव मनु अपने देश ब्रह्मावर्त्त को लौट आए तब प्रजागण उनको आदर पूर्वक वर्हिष्मती पुरी में ले गए। यहाँ ही वराह जी के अङ्ग झाड़ने से उनके रोम गिरे थे, जिनसे हरे रङ्ग के कुश और काश हो गए जिनके द्वारा मुनि जन यज्ञ पुरुष की यज्ञों द्वारा आराधना करते हैं। मनुजी ने वराह भगवान से भूमि को पाकर उसी स्थान पर कुश और काश की 'बर्हि' चटाई बिछाकर यज्ञ भगवान की पूजा की; इसीलिए वह पुरी वर्हिष्मती कहलाई। राजा मनु अपनी वर्हिष्मतीपुरी मे निवास करने लगे।

(चौथा स्कन्ध, १६ वां अध्याय) राजा पृथु ने मनु के क्षेत्र ब्रह्मावर्त्त मे जहाँ प्राची सरस्वती (पूर्व वाहिनी गङ्गा) है, १०० अश्वमेध यज्ञ करने का सङ्कल्प किया।

(२१ वा अध्याय) गङ्गा और यमुना के मध्य के क्षेत्र में राजा पृथु निवास करते थे।

(वाल्मीकीय रामायण, उत्तर कांड, ५३ वां सर्ग) रामचन्द्र ने अपनी सभा मे भद्र नामक दूत से पूछा कि आजकल पुरवासी लोग भाइयों सहित मेरे और सीता के विषय मे क्या कहते हैं। भद्र बोला कि हे प्रभो! सर्वत्र यही बात फैल रही है कि राघव, रावण को मार कर फिर अपने घर सीता को ले आए, यह बात अच्छी नहीं है। रामचन्द्र ने कहा कि हे लक्ष्मण, तुम कल प्रात:काल सीता को रथ पर चढ़ाकर गङ्गा उस पार जहाँ महर्षि वाल्मीकि का आश्रम है और तमसा नदी बहती है, निर्जन देश मे छोड़ आओ।

(५६ वां सर्ग) लक्ष्मण प्रात:काल सीता से बोले कि हे वैदेही! तुम ने गङ्गा तट के ऋषियों के आश्रम मे जाने के लिए महाराज से कहा था सो मैं तुमको वहाँ ले चलता हूँ। ऐसा वचन सुन, सीता और प्रसन्न हो नाना प्रकार के सुन्दर वस्त्र और धन ले रथ मे बैठीं।

(५७ वां सर्ग ) लक्ष्मण सुमन्त को रथ के सहित इसी पार छोड़ कर सीता सहित नौका द्वारा गङ्गा पार पहुँचे और अत्यन्त दीन हो बोले कि हे वैदेही ! महाराज ने पुरवासियों के अपवाद के डर से तुमको त्याग दिया । यहाँ गङ्गा तीर पर महाऋषियों का तपोवन है और यहाँ वाल्मीकि मुनि जो मेरे पिता के मित्र हैं, रहते हैं, तुम उन्हीं के चरण की छाया में रहकर निवास करो। इसके पश्चात् लक्ष्मण सीता को छोड़ कर गङ्गा पार हो सुमन्त के सहित अयोध्या चले आए ।

(५६ वां सर्ग ) इधर मुनियों के बालकों ने जाकर वाल्मीकि मुनि से कहा कि किसी महात्मा की पत्नी गङ्गा तीर पर रो रही है । मुनि ने शिष्यों के सहित वहाँ पहुँच कर जानकी से कहा कि हे भद्रे ! जगत् में जो कुछ है यह सब मैं जानता हूँ । तुम रामचन्द्र की प्यारी पटरानी, राजा जनक की पुत्री और पाप रहित हो । अब तुम्हारा भार हमारे ऊपर हुआ । ऐसा कह महर्षि ने सीता को अपने आश्रम में लाकर उन्हें मुनियों की पत्नियों को सौंप दिया ।

( ७६ वां सर्ग ) कुछ दिनों के पश्चात् जिस रात में शत्रुघ्न ने मधुवन जाते हुए वाल्मीकि मुनि के पर्णशाला में निवास किया था उसी रात्रि में सीता के दो पुत्र उत्पन्न हुए । मुनि ने कुश मुष्टि अर्थात् कुश के अग्रभाग और लव अर्थात् कुश अधोभाग से बालकों की रक्षा, वृद्ध मुनि पत्नियों से करवाई, इसीलिए यथा क्रम लव और कुश दोनों के नाम हुए ।

पद्मपुराण और जेमिनि पुराण में रामचन्द्रजी का अश्वमेध का घोड़ा महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में लव से पकड़ लिए जाने पर लव और कुश के, रामचन्द्र और उनकी सेना से युद्ध का वर्णन है, जिसमें लव और कुश को विजय प्राप्त हुई थी ।

महाभारत, वामन पुराण और मत्स्य पुराण में ब्रह्मावर्त्त तीर्थ की महिमा का बखान है ।

(तुलसी शब्दार्थ प्रकाश-द्वितीय भेद ) राजा मनु और ध्रुव का जन्म बिठूर में हुआ था ।

[ सृष्टि के आरम्भ में जब ब्रह्मा ने सनकादि पुत्रों को उत्पन्न किया और वे निवृत्ति परायण हो गए तब इन्हें बड़ा क्षोभ हुआ और इनका शरीर दो भागों में विभक्त होगया । दाहिने भाग से स्वायम्भुव मनु उत्पन्न हुए जिन्होंने सृष्टि का कार्य चलाया ]

[ स्वायम्भुव के पुत्र उत्तानपाद के सुनीति और सुरुचि नामक दो स्त्रियाँ थीं। सुनीति से ध्रुव और सुरुचि से उत्तम उत्पन्न हुए। राजा सुरुचि को चाहते थे और उसके पुत्र को खिला रहे थे। ध्रुव भी आकर अपने पिता की गोद में बैठ गए। सुरुचि ने इन्हें उतरवा दिया। ध्रुव रोते हुए अपनी माता के पास गए। वह निस्सहाय थी केवल रोने लगीं और ध्रुव को परमात्मा की ओर मन लगाने की शिक्षा दी। ध्रुव पाँच ही वर्ष के बालक थे, पर वह घर से निकल पड़े। देवर्षि नारद ने इन्हें भगवान के आराधना की शिक्षा दी। मथुरा जाकर ध्रुव ने आराधना की और भगवान के दर्शन पाए। उन्होंने इन्हें वह स्थान दिया जो संसार में किसी ने नहीं पाया। भगवान ने इन्हें लौट जाकर राज्य करने को कहा और यह अपने पिता के पास लौट कर चले गए। इनके पहुँचने पर इनके पिता इन्हें सिंहासन देकर स्वयम् वन में वास करने को चले गए। ]

[ महर्षि वाल्मीकि का जन्म अंगिरा गोत्र के ब्राह्मण कुल में हुआ था पर डाकुओं के संसर्ग में रहकर यह लूट मार और हत्यायें करने लगे। एक दिन नारदजी चले आ रहे थे, यह देखते ही उन पर झपटे। उनके पास केवल वीणा थी उसे छीन लिया। उसका उपयोग न समझ इन्होंने नारदजी को उसे देकर कहा कि इसका क्या करते हो सो करो। नारद जी ने हरिकीर्तन सुनाया और वाल्मीकि जी का हृदय पिघल गया। नारदजी ने इन्हें राम नाम की शिक्षा दी और न जाने कितने वर्ष एक ही जगह बैठ कर यह नाम के रटन में निमग्न हो गए। उनके सम्पूर्ण शरीर पर दीमक का पहाड़ सा जम गया। दीमक के घर को 'वाल्मीक' कहते हैं, इसी से इनका नाम वाल्मीकि पड़ गया, पहिले नाम रत्नाकर था। संसार में लौकिक छन्दों के आदि कवि यही हैं। सीता जी ने अपने अन्तिम वनवास के दिन इन्हीं महर्षि के आश्रम में बिताये थे और यहीं लव और कुश का जन्म महारानी सीता से हुआ था। ]

ब० द०—बिठूर गङ्गा के दाहिने किनारे पर स्थित है। पुराने बिठूर में ब्रह्मघाट प्रधान है। गङ्गा के खास घाट की सीढ़ियों पर लगभग एक फुट ऊँची लोहे की नाल खड़ी हुई है। इसको पंडा लोग ब्रह्मा की खूंटी कहते हैं। स्मृतियों में सरस्वती और दृषद्वती नदियों के मध्य के देश को अम्बाले जिले में है ब्रह्मावर्त देश लिखा है किन्तु ब्रह्मावर्त तीर्थ करके बिठूर ही प्रसिद्ध है।

ब्रह्मा घर्तघाट से करीब दो मील दक्षिण बर्हिष्मतीपुरी है, जिसमें मनु की उत्पत्ति हुई और शिला था जिसको लोग बरहट भी कहते हैं। ब्रह्मावर्त घाट से थोड़ा उत्तर ध्रुव शिला नामक ध्रुव के स्थान का टीला है।

बिठूर से ६ मील पश्चिम गङ्गाजी से डेढ मील दक्षिण, बैलारुद्रपुर एक बस्ती है, जिस का पूर्वकाल में द्वैलय कहते थे। द्वैलय का अपभ्रंश वैलय और वैलय से बैला होगया है। लोग कहते हैं कि बैलारुद्र पुर महर्षि वाल्मीकि का जन्मभूमि है। यहाँ एक पुराना कूप है। ऐसा प्रसिद्ध है कि वाल्मीकि जब वधिक का काम करते थे तो इसी कूप में छिप कर रहते थे। वहाँ से दो मील दक्षिण तमसा नदी है जिसे लोन नदी भी कहते हैं।

कहा जाता है कि जब लक्ष्मण गङ्गा के तीर सीता को छोड़कर अयोध्या चले गए तब महर्षि वाल्मीकि के शिष्यों ने बैलारुद्रपुर से डेढ मील दूर वर्तमान बरुआ गाँव के निकट गंगा के तीर पर सीता को देखा और यह समाचार मुनि को जा सुनाया। मुनि ने बरुआ के निकट जाकर जब सीता को नहीं पाया तब उनको खोजते व गङ्गा के तीर तीर पश्चिम को चले। उन्होंने वहाँ से एक मील दूर जहाँ खोजकीपुर गाँव है गंगा के किनारे सीता को पाया। उस स्थान पर गंगा का किनारा ऊँचा था इसलिए मुनि ने गर्भवती जानकी को वहाँ ऊपर नहीं चढाया किन्तु उसके एक मील आगे, तरी गाँव के समीप वह उनको ऊपर चढाकर बैलारुद्रपुर अपने आश्रम में लाये। जब जानकी के यमज पुत्र जन्मे तब महर्षि वाल्मीकि ने इस गाँव के स्थान को उत्पन्न वन का जङ्गल होने से मन्त्र से कील दिया था, इस कारण अब तक इस गाँव के सम्पूर्ण निवासी निर्भय रह कर अपने मकानों में किंवाड नहीं लगाते हैं। किंवाड लगाने वाला सुखी नहीं रहता। चार गाँव में चोरी नहीं करता है। वहाँ ही महर्षि वाल्मीकि जी ने आदिकाव्य वाल्मीकीय रामायण को बनाया था इससे अब तक उस स्थान का दर्शन करने बडे बडे लोग जाते हैं।

बिठूर में अहल्या बाई और बाजीराव पेशवा के बनवाए कई एक घाट हैं और घाटों के ऊपर अनेक देव मन्दिर बने हुए हैं। इनमें वाल्मीकेश्वर शिव का मन्दिर प्रधान है। बिठूर में प्रति वर्ष कार्तिक पूर्णिमासी को गंगा स्नान का बड़ा मेला १५ रोज रहता है।

गंगा के किनारे एक पुराने किले के अवशेष, ध्रुव के पिता उत्तानपाद के किले के टुकड़े कहे जाते हैं।

४३९ बिन्दुसर—( देखिए गंगोत्री, भुवनेश्वर व पवित्र सरोवर )

४४० विपुलाचल पर्वत—( देखिए राजगृह )

४४१ विरहना—( राजपूताने के जयपुर राज्य में साभर के पास एक स्थान )

यहाँ दादूजी का देहान्त हुआ था।

दादूपन्थी सम्प्रदाय का यह मुख्य स्थान है।

४४२ बिसपी—( बिहार प्रान्त के दरभंगा जिले में एक स्थान )

यहाँ कवीन्द्र महात्मा विद्यापति का जन्म हुआ था।

[ महामहोपाध्याय विद्यापति ठाकुर का जन्म मैथिल ब्राह्मण कुल में सम्वत् १४२० वि० के लगभग बिसपी में हुआ था। यह पूर्ण महात्मा थे और इनके पद मिथिला में काम काज के अवसर पर गृहस्थों के यहाँ गाए जाते हैं। बिहारी और बंगाली इनकी कविता को परमपूज्य दृष्टि से देखते हैं। हिन्दी में पहले नाटककार विद्यापति जी ही हैं। इनकी कविता चैतन्य महाप्रभु को बहुत प्रिय थी और यह पूर्वीय प्रान्तों के गले का हार हो रही है। विद्यापतिजी दीर्घायु हुए थे। ]

४४३ बिहार—( बिहार प्रान्त के पटना जिला में एक कस्बा )

इसके प्राचीन नाम उद्दण्डपुर, दण्डपुर, व यशोवर्मनपुर हैं।

प्रा० क०—यहाँ दण्डी सन्यासियों की बड़ी आबादी थी। कहा जाता है कि एक सन्यासी के योग बल की प्रशंसा सुनकर एक मुसलमान पीर ने उन्हें भ्रष्ट करने को गौमांस का भोजन भेजा। सन्यासी ने धन्यवाद सहित उसे वापस कर दिया। जब वह खोला गया तो सब मिठाई निकली।

यह स्थान १२०० ई० में मगध की राजधानी था। बिहार प्रान्त की राजधानी १५४१ ई० तक बिहार नगर में ही थी। इसी वर्ष शेरशाह ने यहाँ से हटाकर पटना राजधानी बनाई।

पालवंश के प्रथम राजा गोपाल ने बिहार में एक बड़ा बौद्धमठ बनवाया था। सातवीं शताब्दी में जब ह्वेन्तसाङ्ग भारत आए तो उन्होंने यहाँ चन्दन की लकड़ी की बनी हुई बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की मूर्ति को देखा था।

व० द०—बिहार नगर का असल नाम यशोवर्मनपुर था, पर यशोवर्मनपुर के बजाय लोग इस स्थान को जयपुर कहने लगे और यहाँ एक बहुत बड़ा विहार होने के कारण इसका नाम दंड विहार हो गया जो पीछे केवल बिहार कहलाने लगा।

अब एक लांबी पतली सड़क के किनारे यह कस्बा बसा है। पुराने बड़प्पन के चिन्ह सब तरफ टूटे-फूटे दिखाई देते हैं और भरे पड़े हैं।

एक दूसरा विहार गांव, बङ्गाल प्रान्त के बोगरा जिले में है। यह पुराना बौद्ध विहार था और यहाँ विहारों के खंडहर पड़े हैं। यह विहार भासु-विहार के समीप है। ( देखिए-भासु विहार )

४४४ बीदर—( हैदराबाद राज्य में एक जिले का सदर स्थान )

यह स्थान प्राचीन विदर्भ नगरी है।

इसका दूसरा प्राचीन नाम वैदूर्य्य पट्टन है। इसी के समीप अरुण ऋषि का अरुणाश्रम था।

सुप्रसिद्ध विदर्भ देश के राजा, दमयन्ती के पिता और राजा नल के श्वसुर भीम की यह राजधानी थी।

प्रा० क०—विदर्भ देश आधुनिक बरार व खान्देश प्रदेश है।

(महा भारत, अरण्यपर्व,५३ वां अध्याय) विदर्भ नगरी में एक अति पराक्रमी राजा भीम था। एक समय महर्षि दमनक राजा के समीप आए और उनके बरदान से राजा के एक कन्या और तीन पुत्र उत्पन्न हुए। कन्या का नाम दमयन्ती रक्खा गया और उसके रूप की प्रशंसा चारों ओर फैल गई। निषधदेश (नरवार) में राजा वीरसेन के पुत्र राजा नल थे। राजा नल दमयन्ती की प्रशंसा सुनकर उस पर मोहित थे। दमयन्ती ने भी नल के यश का गान सुना था। एक समय कुछ सुवर्ण के हंस जङ्गल में आए। वहीं उस समय राजा नल दमयन्ती के प्रेम में व्याकुल होकर चले गए थे, और उन्होंने एक हंस को पकड़ लिया। हंस ने नल से अपने छोड़े जाने की प्रार्थना की और कहा कि यदि वह उसे छोड़ देगा तो वह दमयन्ती से जाकर उस की प्रशंसा करेगा। नल ने हंस को छोड़ दिया और वह उड़ कर दमयन्ती के उपवन में जा पहुँचा। ऐसे सुन्दर हंस को देख कर दमयन्ती ने उसे पकड़ने का प्रयत्न किया। हंस ने नल के गुण वर्णन करके दमयन्ती से कहा कि पृथिवी पर उसके समान पुरुष नहीं है और वह उसी को वरे।

राजा भीम ने दमयन्ती का स्वयम्बर रचा। उसमें सब स्थानों के राजाओं को निमन्त्रण दिया गया था। इन्द्र, वरुण यम और अग्नि भी दमयन्ती के पाने की लालसा से पहुँचे परन्तु दमयन्ती ने नल ही के गले में माला डाली और दोनों का विवाह हो गया।

व० द०—बीदर एक पुराना कस्बा है। मुसलमानों के समय में माही-राज्य के टूटने पर यह एक स्वतंत्र राज्य बन गया था।

रुक्मिणी के पिता राजा भीष्म भी विदर्भ देश के राजा थे। पर उनकी राजधानी कुण्डिनपुर मानी जाती है। ( देखिए कुण्डिनपुर )। विदर्भ देश का दूसरा प्रसिद्ध नगर भोजकट पुर था। पुराणों में उल्लिखित भोज राजा यहीं रहते थे। यह स्थान अब भोजपुर कहलाता है जो भोपाल राज्य में भिलसा से ६ मील पर है। उन दिनों विदर्भ देश वर्तमान भूपाल तक फैला हुआ था। श्रीकृष्ण से पराजित होकर रुक्मिणी के भाई रुक्मी ने नर्मदा नदी के उस पार भोजकटपुर को बसाया था।

४४५ वीरसिंह—( बङ्गाल प्रान्त के मेदिनीपुर जिले में एक स्थान)

यहाँ दया मूर्त्ति ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का जन्म हुआ था।

[ सन् १८२० ई० में वीरसिंह ग्राम में श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम ठाकुरदास बन्ध्योपाध्याय था। स्त्रियों की दशा सुधारने का बीड़ा हिन्दू समाज में आपने अपने समय में उठाया था। उनकी अधोगति आपसे देखी न गई। आपने बालिकाओं के लिए ५० ६० स्कूल खोले। विद्यादान और दीन सेवा आपके जीवन की मुख्य वासना थी। विद्यासागर का परोपकारिता और दानशीलता इनके अमर यश की स्तम्भ शिला है। दीन की दरिद्रता और विधवा का दुःख इनके लिए सर्वथा असह्य था। १८९१ ई० में आपका परलोक गमन हुआ।

४४६ वृन्दावन—( देखिए मथुरा )

४४७ वृषभानुपुर—( देखिए मथुरा )

४४८ बेटद्वारिका—( कच्छ की खाड़ी में बड़ौदा राज्य के अन्तर्गत एक टापू व ग्राम )

बेटद्वारिका श्रीकृष्ण का विहार स्थल माना जाता है।

यहाँ श्रीकृष्ण ने शङ्खासुर को मारा था।

बेटद्वारिका टापू के उत्तरी किनारे के पास बेटद्वारिका ग्राम है। यहाँ बड़े घेरे के भीतर दो मंजिले, तिमंजिले पाँच महल बने हैं। घेरा पूर्व से पश्चिम को लगभग ६० फीट लम्बा और उत्तर से दक्षिण को लगभग ६० फीट चौड़ा है। रणछोड़जी, अर्थात् श्रीकृष्ण, के महलों के दक्षिण सत्यभामा और जाम्बवती के महल; पूर्व, साक्षी गोपाल का मन्दिर; उत्तर रुक्मिणी और राधा के महल हैं। जाम्बवती के महल में जाम्बवती के मन्दिर के पूर्व लक्ष्मीनारायण

का मन्दिर है, और रुक्मिणी के महल में रुक्मिणी के मन्दिर से पूर्व गोवर्धन नाथ का मन्दिर है। सब मन्दिरों के किवाड़ों में चाँदी के पत्तर लगे हैं, छतों में झाड़ लटकते हैं, मूर्तियों की झाँकी मनोरम है सत्यभामा, जाम्बवती, रुक्मिणी और राधा इन चारों के भंडार कारखाने तथा भंडार के मालिक अलग-अलग हैं। चारों महलों के भंडारों से भाँति-भाँति के भोग की सामग्री नियमित समय पर बनाकर रणछोड़ जी के मन्दिर में भेजी जाती है। यहाँ दिन रात में १३ बार भोग लगता है।

बेटद्वारका में गोमती द्वारिका (अर्थात द्वारिका) से अधिक राग भोग का प्रबन्ध रहता है। दिन रात में नौ बार आरती लगती है। नित्य मन्दिरों के पट १२ बजे दिन में बन्द हो जाते हैं और ४ बजे खुल कर फिर रात में ६ बजे के बाद बन्द होते हैं।

श्री कृष्ण के महल से लगभग डेढ़ मील दूर बेट द्वारिका के टापू के भीतर शङ्खोद्धार नामक तीर्थ में शङ्ख तालाब नामक पोखरा और शङ्खनारायण का सुन्दर मन्दिर है। सिंहासन तथा मन्दिर के किवाड़ों में चांदी के पत्तर लगे हैं। पंडा लोग कहते हैं कि श्रीकृष्ण भगवान ने इस स्थान पर शङ्खासुर का उद्धार किया था। इसीलिए इसका नाम शङ्खोद्धार तीर्थ हुआ।

खाड़ी से लगभग दो मील दक्षिण-पश्चिम गोमती द्वारिका के मार्ग में गोमती द्वारिका से १३ मील पूर्वोत्तर गोपी तालाब नामक कच्चा सरोवर है। मार्ग में पीले रङ्ग की भूमि पड़ती है। गोपी तालाब के भीतर की पीतरङ्ग को मिट्टी ही पवित्र गोपीचन्दन है।

४४९ बेताल वरद—(देखिए रामेश्वर)

४५० बेलग्राम—(देखिए उड्डपापुर)

४५१ बेसनगर—(मध्य भारत के भोपाल राज्य में एक स्थान)

इसे राजा रुक्माङ्गद ने बसाया था और इसका प्राचीन नाम विश्वनगर था। चितियागिरि और वेश नगर भी इसके नाम थे।

कथा है कि विष्णु का विमान यहाँ रुका था।

प्रा० क०—[परम भागवत महाराज रुक्माङ्गद अयोध्या के महाराज ऋतध्वज के पुत्र थे। यह इक्ष्वाकुवंश में बड़े प्रतापी राजा हो गए हैं। राज्य करते-करते थक कर अपने पुत्र धर्माङ्गद को राज्य देकर वे हिमालय की ओर तप करने चले गए पर एक अप्सरा विश्वमोहिनी पर आसक्त हो गए और उसके नाम से विश्व नगर बसा कर उसके साथ उसमें निवास करने लगे थे।]

एक बार विष्णु भगवान का विमान विश्व नगर के कांटों में फँस गया और यह कहा गया कि जिसने एकादशी का व्रत किया हो वही उसे कांटों से छुड़ा पायेगा। वह दिन एकादशी का था। एक तेलिन जो अपने पति से लड़ कर भूखी रह गई थी, वही उस विमान को छुड़ा सकी और विष्णु भगवान की आज्ञा पाकर विमान का एक पाया पकड़ उसके साथ स्वर्ग को चलने लगी। इस पर राजा रुक्माङ्गद और समस्त नगरवासी विमान के पाए को पकड़ कर स्वर्ग को चले गए।]

महाराज अशोक पटना से उज्जैन जाते समय वेसनगर में ठहरे थे। बुद्ध घोष ने इस स्थान का नाम 'वेशनगर' लिखा है पर महावंश में इसको 'चितियागिरि' कहा गया है।

वेसनगर प्राचीन दशार्ण देश की राजधानी था। अशोक ने यहाँ के सर्दार की 'देवी' नामक पुत्री से विवाह किया था, जिससे महेन्द्र और संघ मित्रा पैदा हुए थे जिन्हें धर्म प्रचारार्थ अशोक ने लङ्का भेजा था।

व० द०—वेसनगर, वेतवा और बेस नदियों के बीच में बसा है। दोनों नदियों का सङ्गम त्रिवेणी कहलाता है क्योंकि वेतवा नदी की एक और शाखा यहाँ मिली है। त्रिवेणी से आध मील पर पहाड़ी चट्टान में दो चिन्ह हैं जिन्हें विष्णु का चरण चिन्ह माना जाता है। कार्त्तिक कृष्ण पक्ष की एकादशी को यहाँ बड़ा मेला लगता है।

पुराने नगर के चिन्ह पाँच मील के घेरे में हैं और कितनी ही मूर्त्तियाँ यहाँ मौजूद हैं जिनमें एक सात फुट की, एक स्त्री की मूर्त्ति है। यह शायद उसी तेलिन की है जिसने भगवान विष्णु के विमान को काटों से छुड़ाया था। यह नगर भारत के प्राचीन नगरों में से एक है।

४४२ बैजनाथ—( देखिए वैद्यनाथ )

४४३ बैलारुद्रपुर—( देखिए विठूर )

४४४ बोधिगया—( देखिए गया )

४४५ बोरास—( देखिए सरहिन्द )

४४६ ब्रजमण्डल—( देखिए मथुरा )

४४७ ब्रह्मपुरी—( देखिए मान्धाता )

४४८ ब्रह्मा की वेदी—( ब्रह्मा की पाँच वेदी हैं )

पूर्व वेदी—गया पश्चिम वेदी—पुष्कर (अजमेर) उत्तर वेदी—समन्त

पद्मश ( कुरुक्षेत्र ) ' दक्षिण वेदी—विर्जा ( जाजपुर ) मध्य वेदी प्रयाग (इलाहाबाद)।

४५९ ब्रह्मावर्त—( सरस्वती तथा दृसद्वती नदियों के मध्य का प्रदेश ) आर्य्य लोग सबसे पहले यहीं बसे थे और इसके पश्चात् ब्रह्मर्षि देश पर फैले। ब्रह्मावर्त का दूसरा नाम कुरुक्षेत्र भी हुआ। ब्रह्मर्षि देश, ब्रह्मावर्त और यमुना के बीच का प्रदेश था जिसमें मत्स्य, पान्चाल और सूरसेन के प्राचीन राज्य थे।

ब्रह्मावर्त वर्तमान थानेसर, कर्नाल, सोनपत व पानीपत की भूमि है।

४६० ब्लैकपोल—( देखिए लङ्का )

## भ

४६१ भड़ौच—( देखिए शुक्ल तीर्थ )

४६२ भदरसा—( देखिए अयोध्या )

४६३ भदरिया—( बिहार प्रान्त के भागलपुर जिला में एक बस्ती ) इस स्थान का प्राचीन नाम भद्दिय है।

बौद्ध धर्म की सुप्रसिद्ध भिक्षुनी विशाखा की यह जन्मभूमि है। अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी ने दो चौमासे यहाँ निवास किया था।

भगवान बुद्ध ने भद्दिय में तीन मास व्यतीत किए थे।

[ विशाखा, अङ्ग देश के कोटाध्यक्ष धनुञ्जय की पुत्री थीं। जब यह सात साल की थीं तब भगवान बुद्ध ने भद्दिय के जातियावन विहार में ३ मास निवास किया था। इसी समय इन पर भगवान बुद्ध का प्रभाव पड़ा था। विशाखा के पिता इसके पश्चात् साकेत चले आए क्योंकि अङ्गदेश को मगध के सम्राट ने जीत लिया और अपने राज्य में मिला लिया था। विशाखा का विवाह श्रावस्ती ( सहेट महेट ) के कोटाध्यक्ष के पुत्र पूर्णवर्धन या पुन्य वर्धन के साथ हुआ था। बौद्ध धर्म में भगवान बुद्ध की माता और पत्नी को छोड़ कर दूसरा कोई स्त्री इतनी प्रसिद्ध नहीं है। श्रावस्ती का सुविख्यात पूर्वाराम विहार इन्हीं देवी का बनवाया हुआ था। ]

भदरिया, भागलपुर से ८ मील दक्षिण है।

४६४ भदिया—(देखिए साची व अयोध्या)

४६५ भद्दिलपुर—( देखिए साञ्ची )

४६६ भरतकुण्ड—( देखिए अयोध्या )

४६७ भरत कूप—( देखिए चित्रकूट )

४६८ भरद्वाजाश्रम—( देखिए इलाहाबाद )

४६९ भवन—( देखिए कागड़ा )

४७० भविष्यबद्री—( हिमालय पर्वत पर संयुक्त प्रान्त में गढवाल में एक स्थान )

महर्षि अगस्त्य ने इस स्थान पर तपस्या की थी।

अग्नि ने यहाँ तप किया था।

प्रा० क०—( स्कन्द पुराण, केदार खंड, ५८ वाँ अध्याय ) गन्धामादन के दाहिने भाग में धवली गङ्गा के तट पर भविष्य बद्री है। पूर्वकाल में महर्षि अगस्त्य ने इस स्थान पर हरि की आराधना की थी। उस स्थान पर दो पवित्र धारा हैं जिसमें एक धारा का जल गर्म है। इस स्थान पर अग्नि ने तप किया था।

व० द०—जोशीमठ से ६ मील पूर्व तपोवन है। उस देश के लोग कहते हैं कि हनुमानजी ने इसी स्थान पर कालनेमि राक्षस को मारा था। तपोवन से ५ मील दूर धवली गङ्गा के निकट पचबद्री में से एक, भविष्य बद्री, का मन्दिर है जिसको तपबद्री भी कहते हैं।

तपोवन से दक्षिण की ओर काठ गोदाम है। उस मार्ग से भोटिये व्यापारी जो खास करके शोके कहलाते हैं और पुराणों में शक लिखे गए हैं, जानवरों पर जिन्स लाद कर व्यापार करते हैं। भोटिए लोग भारत, नैपाल और तिब्बत इन तीनों देशों की सीमाओं के निकट और सीमाओं पर बसे हैं। भोट देश में व्यास जी ने तप किया था। इसलिए उस देश को व्यासखंड भी कहते हैं। कैलास पर्वत और मानसरोवर उस देश के निकट हैं। महाभारत शान्ति पर्व के ३२७ वें अध्याय में लिखा है कि कि व्यासदेव हिमालय की पूर्व दिशा का अवलम्बन करके विचित्र पर्वत पर शिष्यों को वेद पढ़ाते थे। उनके पुत्र शुकदेव उस आश्रम में गए।

४७१ भाल तीर्थ—( देखिए सोमनाथ पट्टन )

४७२ भासु विहार—(पाकिस्तानी बंगाल के बोगरा जिले में एक स्थान)

यहाँ भगवान बुद्ध ने देवजनों को उपदेश दिया था। पूर्व के चार बुद्धों ने भी यहाँ वास किया था।

हानचाङ्ग ने अपनी भारत यात्रा में लिखा है कि जहाँ भगवान बुद्ध ने देवों को उपदेश दिया था वहाँ महाराज अशोक का बनवाया हुआ स्तूप मौजूद था और उसी के समीप वह स्थान था जहाँ पूर्व चार बुद्ध व्यायाम किया करते

थे। वहाँ से थोडी दूर पर एक बौद्ध विहार था जिसमें ७०० भिक्षु रहते थे। पूर्व देश के सारे विद्वान यहाँ महायान का ज्ञान प्राप्त करने आते थे।

भासु विहार में दस गज ऊँचे ईंटों के स्तूप चिन्ह हैं। वहाँ से हटकर गाँव में (जिसे विहार कहते हैं), प्राचीन बौद्ध विहार के खण्डहर पडे हैं।

यहाँ से चार मील पर महास्थान है जिसको ह्वानचाङ्ग ने 'पोशीपो' के नाम से लिखा है। भगवान बुद्ध के देवों को उपदेश देनेवाला स्तूप 'पोशीपो' से चार ही मील पर था।

४७३ भिलसा—(देखि साँची व मालवा)

४७४ भीमताल—(हिमालय पर्वत पर नैनीताल जिले में एक स्थान)

यहाँ भीम ने महादेव जी का तप किया था।

(स्कन्द पुराण, केदारखण्ड प्रथम भाग, ८१ वाँ अध्याय) एक भीम तीर्थ है जहाँ पूर्वकाल में भीम ने महादेवजी का तप किया था। यहीं भीमेश्वर महादेव स्थित हैं। भीमताल का तालाब करीब एक मील लम्बा और चौथाई मील चौड़ा है। पूर्व किनारे पर भीमेश्वर शिव का मन्दिर, कुछ बङ्गले और मकानात हैं।

४७५ भुइलाडीह—(संयुक्त प्रान्त के बस्ती जिले में एक स्थान)

अनुमान किया जाता है कि यह प्राचीन कपिलवस्तु है।

महर्षि कपिल का यहाँ आश्रम था। भगवान बुद्ध के पिता शुद्धोधन की यह राजधानी थी।

भगवान बुद्ध का बाल्यकाल यहीं बीता था। यहीं से अपने पिता, पुत्र और पत्नी को छोड़कर वे सत्य की खोज में चले गए थे।

बुद्ध होकर यहीं अपने पिता को उन्होंने धर्मोपदेश दिया था।

प्रा० क०—ह्वानचाङ्ग ने अपनी यात्रा में लिखा है कि भगवान बुद्ध की पूज्य माता महारानी महामाया के रहने के कमरे पर बाद को एक विहार बना था। उसी के समीप स्तूप था जहाँ ऋषि असीता ने राजकुमार सिद्धार्थ का जन्म-पत्र बताया था। नगर से आध मील पर दक्षिण दिशा में एक स्तूप था जहाँ राजकुमार सिद्धार्थ बुद्ध होकर अपने पिता से मिले थे। नगर के बाहर एक और स्तूप था जहाँ राजकुमार की हालत में उन्होंने अपने वंश के सब कुमारों को शस्त्र विद्या में पराजित किया था। कुमारी यशोधरा के पिता ने अपनी पुत्री का विवाह राजकुमार सिद्धार्थ के साथ करने से इंकार कर दिया था क्योंकि उनका विचार था कि सिद्धार्थ क्षत्रियोचित गुणों से वञ्चित हैं। इस पर राजकुमार ने शस्त्र विद्या के अखाड़े में सब कुमारों को परास्त किया

था। इसमें उनके चचेरे भाई देवदत्त भी थे। देवदत्त को लौटती समय एक हाथी मिला जो राजकुमार सिद्धार्थ को वापिस लाने जा रहा था। देवदत्त ने उसको मारकर रास्ते में डाल दिया। राजकुमार सिद्धार्थ जब उधर से निकले तो उन्होंने उसे उठाकर दूर फेंक दिया। जहाँ यह हाथी गिरा था वहाँ गढा हो गया था जिसे हस्तीगर्त कहते थे। जहाँ से राजकुमार ने हाथी फेंका था वहाँ एक स्तूप बना दिया गया था। कपिल वस्तु नगर उन दिनों बडा शोभायमान था और बड़ी श्रद्धा से लोग उसकी रज माथे चढाते थे।

नं० ७०— भुइलाडीह, बस्ती शहर से १५ मील पश्चिमोत्तर में है। राजभवन का स्थान डीह कहा जाता है। इसमें एक स्थान पर एक कोठरी निकली है जो २६ फीट लम्बी, १५ फीट चौड़ी और ११ फीट ऊँची है। इसकी ईंट बहुत पुरानी हैं और एक एक ईंट १६ इंच लम्बी ९ इंच चौड़ी और २¾ इंच मोटी है। ऐसे चिन्ह जिनसे ऐसा जान पड़ता है कि मानो इस कोठरी के ऊपर बाद को मन्दिर बनाया गया हो मालूम पड़ते हैं। अनुमान होता है कि महारानी महामाया के रहने का यही भवन था जहाँ भगवान बुद्ध उनके गर्भ में आए थे। इस कोठरी से ४०० फीट पूर्वोत्तर एक स्तूप के निशान हैं जो नीचे ६० गज के घेरे में हैं, पर ऊँचाई दो गज रह गई है। जान पड़ता है कि [illegible] अशोका वाला स्तूप यही है।

भुइलाडीह से १००० गज दक्षिण, परसा गाँव की डीह पर कुछ चिन्ह हैं जो कदाचित् राजकुमार सिद्धार्थ के बुद्ध होकर लौटने पर अपने पिता से मिलने के स्थान के स्तूप के हैं।

भुइलाडीह से ३०० गज दक्षिण पूर्व एक स्तूप के चिन्ह हैं जो जैतापुर गाँव से ७५० गज पूर्व में हैं। यह शायद शस्त्र विद्या जीतने के स्थान वाला स्तूप है।

जैतापुर गाँव और भुइलाडीह के बीच में एक गढ़ा है जिसे हाथी कुंड कहते हैं। यह हस्ती गर्त का स्थान हो सकता है। हाथी कुंड से २२० गज पूर्वोत्तर एक स्तूप के निशान हैं, यह स्तूप उस स्थान पर बनाया हुआ हो सकता है जहाँ से हाथी फेंका गया था।

भुइलाडीह से १० मील पूर्व नागर चौक है जिसे कोली अर्थात् महारानी महामाया के पिता राजा सुप्रबुद्ध की राजधानी माना गया है। महारानी कपिल वस्तु से कोली अपने पिता के घर जा रही थीं तब दोनों स्थानों के बीच लुम्बिनी उपवन में उन्होंने भगवान बुद्ध को जन्म दिया था।

भुइलाडीह और बाराह क्षेत्र के बीच में एक स्थान शिवपुर है और आर्कियालाजिकल मुहकमे के मिस्टर ए० सी० एल० कालायल का विचार है कि लुम्बनी उपवन शिवपुर के पास रहा होगा, मगर महाराज अशोक का स्तम्भ जो भगवान बुद्ध के जन्म स्थान पर गाडा गया था वह बस्ती जिले के बाहर उत्तर में, नैपाल राज्य में गडा है। स्तम्भ के कारण उसी नैपाल वाले स्थान को जन्म स्थान मानकर लुम्बनी नाम से पुकारा जाता है। वहाँ वाले उसे रोमिनदेई कहते हैं और अशोक के स्तम्भ को देवी जी करके पूजते हैं। कोई कारण नहीं जान पडता कि वह स्तम्भ दूसरे स्थान से उखाड कर वहां क्या गाडा गया हो। यदि वह अपने स्थान पर है तो भुइलाडीह कपिल वस्तु, और बाराह क्षेत्र काली नहीं हो सकते।

बस्ती शहर से दक्षिण-पश्चिम पाँच मील पर एक ग्राम 'नगरखास' है। जेनरल ए० कनिङ्घम ने, जिनको बौद्ध स्थानों के ढूंढने की एक दैवी शक्ति थी, कहा था कि शायद नगरखास कपिल वस्तु होगा। जेनरल कनिङ्घम आर्कियालाजिकल मुहकमे के अधिष्ठाता थे पर इस मुहकमे की ओर से भुइलाडीह व बाराह क्षेत्र ही कपिल वस्तु व काली समझे जा रहे हैं। नगर खास के कपिलवस्तु होने से लुम्बनी वाली कठिनाई दूर नहीं होती बल्कि और बढ जाती है क्योंकि नगर खास भुइलाडीह से और भी सात-आठ मील दक्षिण में है और महाराज अशोक का स्तम्भ भुइलाडीह व बाराह क्षेत्र से भी बहुत ज्यादा उत्तर में है।

उसका-बाजार से ३८ मील पश्चिमोत्तर नैपाल राज्य में एक गाँव निगलीवा है। डाक्टर फ्यूरर ( Dr Fuluer ) इसको कपिल वस्तु ठहराते हैं। लुम्बनी या रोमिनदेई से निगलीवा ८ मील पश्चिमोत्तर में है और उस गाँव में कुछ पुराने खण्डहर हैं। श्री पी० सी० मुकर्जी तिलौरा गाँव को जो निगलीवा से ३½ मील दक्षिण पश्चिम है, कपिलवस्तु बताते हैं। लुम्बनी के हिसाब से यही स्थान ठीक पड़ सकते हैं इनमें निगलीवा सही कपिलवस्तु हो सकता है और कदाचित है।

४७६ भुवनेश्वर—(उड़ीसा प्रान्त के पुरी जिले में एक कस्बा)
यह पुराणों का प्राचीन एकाम्रकानन या एकाम्र क्षेत्र है।
भगवती ने कीर्ति और बास नामक दैत्यों को पैर से कुचल कर यहाँ मारा था।

म्रा० क०—( आदि महापुराण, ४० वा अध्याय ) सम्पूर्ण पापों को हरने वाला कोटिलिङ्ग से युक्त काशी के समान शुभ एकाम्र क्षेत्र है। पूर्वकाल में वहाँ एक आम का वृक्ष था। इसलिए वह क्षेत्र एकाम्रक्षेत्र के नाम से विख्यात हो गया। श्री महादेवजी सब लोगों के हित के लिए वहाँ विराजमान हैं। पृथिवी के समस्त तीर्थ, नदी सरोवर, तालाब, बावली, कूप और समुद्रों से एक एक बूँद इकट्ठा करके सब देवताओं सहित इस क्षेत्र में बिन्दुसर तीर्थ रचा गया। बिन्दुसर में स्नान करके जो भक्ति पूर्वक देवता, ऋषि, मनुष्य और पितरों को तिल और जल से विधानपूर्वक तर्पण करेगा उसको अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होगा। इस तीर्थ में पिंडदान देने से पितरों को अक्षय तृप्ति होती है। यहाँ शिव जी का विधि पूर्वक पूजन करने से २१ पुश्त का उद्धार होता है और मनुष्य शिवलोक में जाता है। यह क्षेत्र महादेव के चारों दिशाओं में ढाई योजन में विस्तृत है। यहाँ भास्केश्वर महादेव हैं जिन को पूर्व काल में सूर्य ने पूजा था।

( स्कन्द पुराण, उत्तर खण्ड )नीलगिरि अर्थात् पुरुषोत्तमपुर (जगन्नाथ, पुरी) से तीन योजन दूर श्री महादेव जी का क्षेत्र एकाम्रक वन है। पूर्वकाल में महादेव जी पार्वती के सहित अपने ससुर हिमाचल के घर में निवास करते थे। एक दिन उस नगर की स्त्रियों ने पार्वती से हँसी की कि, "हे देवी! तुम्हारे पति अपने ससुर के गृह में अनेक प्रकार के सुख भोग करते हैं, तुम कहो वह अपने घर को कब जायँगे?" पार्वती की माता ने पूछा कि "पुत्री! तुम्हारे पति में कौन सा ऐसा अपूर्व गुण है कि तुम उनको इतना प्रिय समझती हो?" पार्वती ने लज्जित हो कर महादेव से कहा कि "हे स्वामिन! आप को ससुराल में रहना उचित नहीं है, आप दूसरे स्थान में चलें।" शिव जी पार्वती की बात का कारण समझ कर उनके साथ ससुराल से चल दिए और भागीरथी के उत्तर तट पर वाराणसी नगरी बसा कर उसमें रहने लगे। द्वापर युग में वाराणसी के काशिराज नामक राजा ने घोर तपस्या करके महादेव जी को प्रसन्न किया। महादेवजी ने राजा को ऐसा वरदान दिया कि मैं आवश्यकता होने पर युद्ध में तुम्हारी सहायता करूँगा। एक समय विष्णु भगवान ने क्रोध करके काशिराज पर अपना सुदर्शन चक्र चलाया। महादेव जी राजा की रक्षा के लिए अपने गणों के साथ रणभूमि में उपस्थित हुए। उन्होंने क्रोध करके पाशुपत अस्त्र छोड़ा, पर विष्णु के प्रभाव से वह व्यर्थ हो गया। उस पाशुपत अस्त्र से काशी पुरी जलने लगी, तब महादेव जी घबड़ाकर विष्णु

भगवान की स्तुति करने लगे। उस समय भगवान ने कहा कि, "हे धूर्जटे! तुम्हारा पाशुपतास्त्र अजेय है; किन्तु मेरे चक्र के सामने उसकी शक्ति न चलेगी। यदि वाराणसी को स्थिर रखने की तुम्हारी इच्छा हो तो तुम पुरुषोत्तम क्षेत्र के नीलगिर के उत्तर कोण में जाकर पार्वती के साथ निवास करो।" ऐसा सुनकर महादेव जी नन्दी, भृङ्गी आदि अनेक गणों और पार्वती जी को सङ्ग में लेकर एकाम्रकानन में चले गए। तब से वह स्थान मुक्ति देने में काशी के समान प्रसिद्ध हुआ।

(कूर्म पुराण, उपरिभाग, ३४ वा अध्याय) पूर्व देश में एकाम्रनामक शिव तीर्थ है। जो मनुष्य उस तीर्थ में महादेवजी की पूजा करता है वह गणों का स्वामी होता है। वहाँ के शिव भक्त ब्राह्मणों को थोड़ी सी भूमिका दान देने से सार्वभौम राज्य मिलता है। मुक्ति चाहने वाले मनुष्य को वहाँ जाने से मुक्ति मिलती है।

(दूसरा शिव पुराण, ८ वा खण्ड, पहिला अध्याय) पुरुषोत्तम क्षेत्र में जगन्नाथ जी के गुरू स्वरूप भुवनेश्वर महादेव विराजते हैं, जिनके दर्शन करने से सम्पूर्ण पाप विनष्ट हो जाते हैं।

व० द०—भुवनेश्वर में लगभग पांच हजार की बस्ती है और वह, भुवनेश्वर रामेश्वर कपिलेश्वर और भास्करेश्वर के मन्दिरों में मध्य में बसी है। यह कस्बा छठी शताब्दी, बी० सी० से पाँचवी शताब्दी ए० डी० तक उड़ीसा की राजधानी रहा। राजा ययात केशरी ने लगभग ५०० ई० के भुवनेश्वर के वर्तमान बड़े मन्दिर का काम आरम्भ किया और चौथी पुश्त में सन् ६५६ ई० में राजा ललित केशरी के समय में यह मन्दिर बनकर तैयार हो पाया। मन्दिर, भुवनेश्वर बस्ती के समीप ही है और कारीगरी तथा बनावट में जगन्नाथ जी के मन्दिर से भी अच्छा है। प्रधान मन्दिर की ऊंचाई १६० फीट है और प्रत्येक इंच, खास करके खड़े हिस्से, नक्काशी के काम से पूर्ण हैं। मन्दिर में अंधेरा रहता है इसलिए दिन में भी भीतर दीप जलाया जाता है। बहुतेरे यात्री नृत्यमण्डप के भीतर जगन्नाथ पुरी के समान एक ही पंक्ति में बैठ कर भोग लगी हुई कच्ची रसोई खाते हैं, पर मंडप से बाहर कोई नहीं खाता। बड़े मन्दिर के उत्तर विन्दु सरोवर नामक परम पवित्र बड़ा तालाब है और पूर्वोत्तर में छठी सदी के आरम्भ का बना हुआ हीन दशा में भास्करेश्वर शिव का मन्दिर है। भुवनेश्वर के देवीपाद ताल के चारों ओर १०८ योगिनियों के

मन्दिर है कहा जाता है। कि यहीं भगवती ने कीर्ति और वास नामक दैत्यों को पैर से रौंद कर मार डाला था।

राजा नृपति केशरी ने लगभग सन् ९५० ई० में कटक नगर बसा कर भुवनेश्वर छोड़ कटक को अपनी राजधानी बनाया। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की जन्मभूमि कटक ही है।

४७७ भूतपुरी—( मद्रास प्रान्त के चिंगिलपट जिले में एक बस्ती )

यहाँ श्री रामानुजाचार्य्य का जन्म हुआ था।

श्री रामानुज सम्प्रदाय की 'प्रपन्नामृत' नामक पुस्तक में लिखा है कि पूर्व के समुद्र के तट से १२ कोस दूर तुण्डरि देश में भूतपुरी नामक सुन्दर नगरी है।

'भूतपुरी माहात्म्य' में लिखा है कि विष्णु ने सूर्य्यवंशी राजा युवनाश्व के पुत्र राजा हरित को वर दिया था कि तुम इसी शरीर से ब्राह्मण हो जाओगे, तुम्हारे ही वंश में हमारे अंश शेष जी ( रामानुज स्वामी ) जन्म लेंगे।

भूतपुरी में 'अनन्त सरोवर' तालाब के पास स्वामी रामानुजाचार्य्य का बड़ा मन्दिर बना हुआ है।

४७८ भृगु आश्रम—( कुल ) ( देखिए बलिया )

४७९ भेत गाँव— ( हिमालय पर्वत पर संयुक्तप्रान्त के टेहरी राज्य में एक गाँव )

इस स्थान पर वृकासुर ने जिसको भस्मासुर भी कहते हैं शिव का बड़ा तप करके यह वरदान पाया था कि जिसके मस्तक पर वह हाथ धरे, वह भस्म हो जाय।

( श्री मद्भागवत, १० वा स्कन्ध, ८८ वां अध्याय ) शकुनि दैत्य का पुत्र वृकासुर केदार तीर्थ में जाकर अपने शरीर को छुरी से काट-काट कर अग्नि में हवन करने लगा। जब सातवें दिन उसने अपने सिर को काटना चाहा तब शिव ने अग्नि कुंड से निकल कर उसका हाथ पकड़ लिया और प्रसन्न होकर उससे वर माँगने को कहा। दैत्य बोला कि जिसके सिर पर मैं अपना हाथ रख दूँ वह उसी समय भस्म हो जाय। शिव जी ने हँसकर उसको वह वरदान दे दिया। जब वृकासुर शिवजी के मस्तक पर हाथ रखने के लिए चला तब शिव जी वहाँ से भागे। दैत्य उनके पीछे दौड़ा। महादेव जी सम्पूर्ण देशों में भ्रमण करके जब बैकुंठ में विष्णु के सामने होकर भागे तब विष्णु ने ब्रह्मचारी भेष होकर वृकासुर से पूछा कि तू इतना घबड़ाकर कहाँ जाता है? जब उसने उनसे सब वृत्तान्त कहा, तब विष्णु ने कहा कि तू अज्ञानी है कि बावले

महादेव के बचन का विश्वास करता है। तू अपने सिर पर हाथ धरके पहले उस वरदान की परीक्षा कर ले। यह सुनते ही वृकासुर ने परमेश्वर की माया से उस बचन को सत्य मानकर जैसे ही अपने सिर पर हाथ रक्खा वैसे ही वह भस्म हो गया।

भेत गाँव में छोटे बड़े बहुत से मंदिर हैं। यहाँ एक छोटे कुण्ड में झरने का पानी गिरकर बाहर निकलता है। उसी स्थान पर वृकासुर ने शिवजी का तप करके उनसे वर माँगा था।

जिस स्थान पर भस्मासुर स्वयम् अपने शिर पर हाथ रख कर भस्म हुआ था वह स्थान तीर्थपुरी है। (देखिए तीर्थ पुरी)

४८० भोजपुर—(देखिए बीदर)

४८१ भोपाल (मध्य भारत में एक राज्य)

महाराज भोज ने यहाँ झील का बाँध बाँधा था जिससे इसका नाम भोजपाल हुआ और अब भोपाल है।

अँग्रेजों की ताकत बढ़ने के पहले भोपाल के नवाब, महाराज ग्वालियर के आधीन थे। अँग्रेजों ने उन्हें 'स्वतंत्र' बनाकर अपने आधीन कर लिया था।

## म

४८२ मँकनपुर—(संयुक्त प्रदेश के कानपुर जिले में एक स्थान)

यहाँ ऋषिशृंग का निवास स्थान था।

इस स्थान पर से राजा दशरथ की भेजी हुई अप्सराएँ ऋषि शृङ्ग को मोह कर अयोध्या यज्ञ कराने ले गई थीं।

लोग कहते हैं कि ऋषि शृङ्ग के पिता विभाडक ऋषि ने इस स्थान को, जिससे उनके पुत्र का ब्रह्मचर्य नष्ट न हो, मन्त्र से कील दिया था कि जो स्त्री यहाँ आएगी भस्म हो जावेगी।

अब इस स्थान पर मदारशाह की दरगाह है, परन्तु अब तक कोई स्त्री वहाँ नहीं आती। बसन्त पंचमी से एक मेला जो दस-पन्द्रह दिन रहता है, यहाँ आरम्भ होता है और अब वह मदारशाह की दरगाह का ही मेला हो गया है।

ऋषि शृङ्ग आश्रम—शृङ्गी ऋषि के आश्रम कई स्थानों पर माने गए हैं जिनमें मँकनपुर एक है। दूसरा स्थान सिंगरौर, एलाहाबाद से २१ मील

पश्चिमोत्तर में है। तीसरा स्थान ऋषिकुंड, बिहार प्रान्त में भागलपुर से २८ मील पश्चिम है। पहिले गंगाजी इस स्थान के समीप से बहती थीं। मैसूर राज्य में शृङ्गेरी से ६ मील पर ऋष्य शृङ्ग पर्वत पर इनका जन्म होना बतलाया जाता है। महाभारत के अनुसार इनका आश्रम बिहार में कौशिकी नदी (कोसी नदी) के किनारे चम्पा नगरी से २४ मील पर था

४८३ मखौड़ा—( देखिए अयोध्या )

४८४ मगहर—( संयुक्त प्रान्त के बस्ती ज़िले में एक कस्बा )

कबीरदास जी यहाँ से स्वर्ग को पधारे थे।

'निर्भय ज्ञान सागर' में लिखा है कि लोगों ने अन्तकाल में कबीरदास जी से काशी में शरीर छोड़ कर मुक्ति पाने को कहा। उन्होंने कहा कि मैं मगहर में (*जहाँ के लिए कहावत है कि मगहर मरे सो गदहा होय*) मर कर मुक्ति लूँगा। मगहर में जाकर उन्होंने राजा वीरसिंह देव बघेल और बिजिली खां पठान को उपदेश दिया। सन् १५२० ई० के लगभग कबीरदास ने वहाँ शरीर छोड़ा और बिजिली खां ने दफ़न कर दिया। वीरसिंह देव ने इस पर युद्ध की तैयारी की। लड़ाई छिड़ने पर आकाशवाणी हुई कि क़ब्र में मुर्दा नहीं है। खोदने पर वहाँ कबीर जी का शरीर नहीं मिला, एक फूल रक्खा था।

जिस स्थान पर बिजिली खां पठान ने कबीर जी के मृतशरीर को भूमि समर्पण किया था, उस स्थान पर घेरे के भीतर शिखरदार समाध मन्दिर है। यह समाध मन्दिर मगहर बस्ती के पूर्व है, और मुसलमान कबीर पन्थियों के अधिकार में है।

४८५ मङ्गलगिरि—( मद्रास प्रान्त के कृष्णा ज़िले में एक कस्बा )

यहाँ नृसिंह जी का मन्दिर है जिसका पुराणों में वर्णन है।

( नृसिंह पुराण, ४४ वां अध्याय ) नृसिंह भगवान सब लोगों के हित के लिए श्री शैल के शिखर पर देवताओं से पूजित। चिरकाल तक और अपने भक्तों के हित के लिए इसी स्थान पर स्थित हो गए।

मङ्गलगिरि कस्बे में ११ खन के भारी गोपुर से सुशोभित लक्ष्मी नृसिंह का विशाल मन्दिर है। मन्दिर में सर्वदा दीप जलता है। नृसिंह जी के मुख में पना अर्थात् गुड़ या शक्कर का शर्बत पिलाया जाता है। इसी कारण से लोग उनको पना नृसिंह और गुड़ोदक पान नृसिंह कहते हैं।

४८६ मणिचूड़ा—( बम्बई प्रान्त के पूना ज़िले में एक स्थान )

यहाँ शिवजी ने खँडोबा ( खांडेराव ) अवतार लेकर मल्ल और मल्ली असुरों को मारा था।

मणिचूड़ा पूना से ३० मील पूर्व है।

४८७ मण्डलगाँव—(देखिए अर्जुन गाँव)

**४८८ मत्ते की सराइ**—( पंजाब प्रान्त के फीरोजपुर जिले में एक स्थान )

यहाँ सिक्खों के द्वितीय गुरु श्री अङ्गद देव का जन्म हुआ था।

[ सिक्ख मत के द्वितीय गुरु श्रीअङ्गद देव जी का जन्म वैशाख बदी परिवा, सं० १५६१ विक्रमाब्द ( ३१ मार्च १५०४ ई० ) को मत्ते की सराइ में हुआ था। आपके पिता श्री फेरूमल खत्री और माता श्रीमती दया कुँवरि थीं। पहिला नाम आपका लहणा था। खदूर ग्राम में देवीचन्द खत्री की पुत्री बीबी खीवी जी के साथ आपका विवाह हुआ। बाबर की चढ़ाई के समय मत्ते की सराइ भी लूट ली गई इसलिए भाई लहणाजी ने अपना निवास स्थान वहाँ से हटा कर खड्डूर साहब में बना लिया। यह पहिले देवी के उपासक थे। सं० १५८६ वि० में ज्वाला देवी की यात्रा को जाते समय कर्तारपुर में श्री गुरु नानकदेवजी से आपकी भेंट हो गई और आप उनके अनन्य शिष्य हो गए और श्री गुरुदेव ही की सेवा में रहने लगे। गुरु नानक जी ने आषाढ़ सं० १५९६ वि० में आप का नाम लहणा से बदल कर 'अङ्गद' रक्खा और अपनी गद्दी पर स्थापित कर दिया। गुरुदेव के स्वर्गवास पर आप खड्डूर साहब को वापिस चले गए।

सब से पहिला काम जो गुरु अङ्गद देव जी ने किया वह श्री नानक देव जी की वाणी तथा शब्दों का सकलित करना था। यह वाणी विशेष कर पंजाबी बोली में होने के कारण इसको लिखने के लिए एक नवीन लिपि की आवश्यकता हुई क्योंकि इससे पहिले कोई पञ्जाबी साहित्य नहीं था, और न पञ्जाबी लिपि ही की आवश्यकता हुई थी। इस कमी को पूरा करने के लिए सं० १५९८ वि० में गुरु अंगद देव जी ने एक लिपि निर्माण की जो अब *'गुरुमुखी'* के नाम से प्रसिद्ध है। चेतसुदी ४, सं० १६०९ वि० (२९ मार्च १५५२ ई० ) को गुरु जी ने शरीर त्याग किया।

सिक्ख मत में दसों गुरुओं को एक ही ज्योति माना जाता है। बहुधा गुरुओं ने वाणी भी जो उच्चारण की है वहाँ अपना नाम सर्वत्र 'नानक' ही लिखा है। इस ज्ञान के लिए कि यह कौन से नानक की वाणी है, शब्दों के

पहिले 'महला' शब्द लिख कर अङ्क लगा दिया गया है। जैसे—'श्लोक महला २' जहाँ लिखा है उससे यह समझा जायगा कि वह द्वितीय गुरु का उच्चारण किया हुआ है।]

४८९ मथुरा—(संयुक्त प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान)

मथुरा पृथिवी के सब से पुराने नगरों में से एक नगर है, और भारत वर्ष की प्रसिद्ध सप्तपुरियों में से एक पुरी है।

मथुरा नगरी के स्थान पर मधुवन नामक वन था और सत् युग में मधु दैत्य उसमें निवास करता था।

श्री रामचन्द्र के समय में मधुवन में मधु का पुत्र दुराचारी लवण रहता था।

रामचन्द्र जी के भ्राता शत्रुघ्न ने लवण को मारकर मथुरा नगरी बसाई थी और मथुरा में राज्य किया था।

ध्रुव जी ने इस स्थान पर तप किया था और भगवान से अटल ध्रुव स्थान पाया था।

राजा अम्बरीष ने यहाँ आकर व्रत किया था।

राजा बलि ने यहाँ यज्ञ किया था।

श्रीकृष्ण भगवान ने यहाँ जन्म लिया था।

श्रीकृष्ण का मामा कंस मथुरा का राजा था। यहां श्री कृष्ण ने उसको मार कर अपने माता-पिता को बन्दीगृह से मुक्त किया था, और उग्रसेन को राज्य दिया था।

यहाँ श्री कृष्ण ने दन्तवक्र को मारा था।

मथुरा से ६ मील दक्षिण पूर्व महावन (गोकुल) है। यह नन्द और यशोदा का निवास स्थान था। यहाँ वसुदेव कृष्ण को छोड़ कर यशोदा की पुत्री को बदले में लेगए थे। पूतना राक्षसी यहीं मारी गई थी।

मथुरा से ६ मील उत्तर यमुना नदी के दाहिने किनारे पर वृन्दावन है। सतयुग में इस स्थान पर राजा केदार की पुत्री वृन्दा ने तप किया था। इसका नाम कालिकावर्त भी था। गोकुल छोड़ कर बालक कृष्ण को लेकर नन्द वृन्दावन में आ बसे थे। वृन्दावन में श्रीकृष्ण ने कालियनाग को नाथा था। केशी असुर यहीं मारा गया था। वृन्दावन में बलराम जी ने धेनुक और प्रलम्ब असुरों को मारा था। राधा जी और गोपिकाएँ वृन्दावन में श्रीकृष्ण

के साथ क्रीडा किया करती थीं। श्री कृष्णचन्द्र ने रासलीला और चीर हरण लीला इसी स्थान पर की थी।

शुक सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी चरणदास जी का वृन्दावन में भगवान् कृष्ण के दर्शन हुए थे।

राधावल्लभी सिद्धान्त के प्रवर्तक श्री हितहरिवंश ने वृन्दावन में वास किया और शरीर छोडा था।

मथुरा से १४ मील पर गोवर्धन पर्वत है। इसको श्रीकृष्ण ने अपने एक हाथ पर उठा लिया था। इस पर्वत को गिरिराज भी कहते हैं।

मथुरा से २८ मील पर बरसाना है। यहाँ राधिका जी अपनी जन्मभूमि ऋष्टिग्राम (वर्तमान रावल) से आकर रही थीं और यहीं उनके पिता रहते थे। राधिकाजी जब एक साल की थीं रावल से बरसाना ले आई गई थीं।

मथुरा से २ मील पर ताल वन है। यहाँ धेनुकासुर मारा गया था।

मथुरा से १ मील पर चौरासी है। यहां से श्री जम्बू स्वामी (जैन) केवल निर्वाण को पधारे थे।

श्रीकृष्ण का पुत्र साम्ब मथुरा की कृष्ण गंगा में स्नान करके कुष्ट रोग से मुक्त हुआ था। (पर देखिए कनारक)

मथुरा में सोम को विष्णु का दर्शन हुआ था।

सप्त ऋषियों ने मथुरा में तप किया था।

मथुरा के निधिवन में तानसेन के गुरु तथा टट्टी सम्प्रदाय के आद्याचार्य्य स्वामी हरिदास की समाधि है। सम्राट अकबर साधुवेष रख कर इनका गान सुनने यहाँ आए थे।

सूर्यावतार आचार्य्य निम्बार्क का यहाँ निवास स्थान था।

मीराबाई मथुरा वृन्दावन के मन्दिरों में भगवान के सामने कीर्त्तन किया करती थीं।

महाराज अशोक के गुरु उपगुप्त और उपगुप्त के गुरु शानवासी का मथुरा में निवास स्थान था।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने मथुरा में ढाई साल रह कर स्वामी विरजानन्द जी से धर्म्म ग्रन्थों को पढ़ा था।

मथुरा के चारों ओर ८० मील तक का घेरा ब्रजमडल कहलाता है।

भगवान गौतम बुद्ध ने मथुरा में उपदेश दिया था। यहां एक स्तूप में उनके नख (नाखून) रखे थे।

पूर्व चार बुद्ध भी मथुरा में आये और रहे थे।

प्रसिद्ध बौद्ध महापुरुष सारि पुत्र, मुद्गल, पूर्व मैत्रायणी पुत्र और उपालि तथा भगवान बुद्ध के पुत्र राहुल व भिक्षुणी अनन्ता के चिता का सामान मथुरा स्तूप में रखा था।

प्रा० का०—(पद्म पुराण, पातालखण्ड, ६९ वां अध्याय) मथुरा देश जिसका नाम मधुवन है, विष्णु को अभिन्न प्रिय है। मथुरा मंडल सहस्त्रदल कमल के आकार का है। इस देश में १२ वन प्रधान हैं—

१—भद्रवन, २ श्रीवन, ३ लोहवन, ४ भाण्डीरवन, ५-महावन, ६ तालवन, ७ खदिरवन, ८ बहुलवन, ९-कुमुदवन, १०-काम्यवन, ११-मधुवन, १२ वृन्दावन। उनमें से सात यमुना के पश्चिम तट पर और पांच पूर्व ओर हैं। इन वनों में भी तीन अत्यन्त उत्तम हैं—गोकुल में महावन, मथुरा में मधुवन और वृन्दावन। इन बारहों को छोड़ कर और भी बहुत से उपवन हैं।

(वाराह पुराण, १५२ वाँ अध्याय) मथुरा मण्डल का प्रमाण २० योजन है।

(वाल्मीकीय रामायण, उत्तरकाण्ड ७३, ७४ और ७५ वां सर्ग) एक दिन यमुना तीर निवासी ऋषिगण श्री रामचन्द्र की सभा में आए। भार्गव मुनि कहने लगे कि हे राजन! मधुरा में मधुनामक दैत्य बड़ा वीर्यवान और धर्मनिष्ठ था। भगवान रुद्र ने अपने शूलों में से एक शूल उत्पन्न कर उसको दिया और कहा जो तुम से संग्राम करने को उद्यत होगा, उसको यह भस्म कर फिर तुम्हारे हाथ में चला आवेगा। तुम्हारे वंश में तुम्हारे पुत्र के पास जब तक यह शूल रहेगा तब तक वह सब प्राणियों से अवध्य रहेगा। ऐसा वर पाकर मधु ने अपना घर बनवाया। मधु का पुत्र लवण हुआ जो लड़कपन से ही पाप कर्म करता आया। मधु दैत्य अपने पुत्र का दुराचार देख शोक को प्राप्त हो इस लोक को छोड़ समुद्र में घुस गया परन्तु अपने पुत्र को शूल देकर वर का वृत्तान्त सुना दिया था, हे रामचन्द्र! अब लवण अपने दुराचार से तीनों लोकों को विशेष कर तपस्वियों को सन्ताप दे रहा है। वह प्राणी मात्र को विशेष कर तपस्वियों को खाता है। उसका निवास मधुवन में है।

श्री रामचन्द्र ने यह वृत्तान्त सुन लवण के वध की प्रतिज्ञा की और शत्रुघ्न को युद्ध यात्रा में तत्पर देख उनसे कहा कि मैं मधु के नगर का राजा तुमको बना दूँगा। तुम वहाँ जाकर यमुना के तीर पर नगर और सुन्दर देशों को बसाओ।

( ८२ व ८३ वां सर्ग ) लवण अन्त में शत्रुघ्न के बाण से मारा गया। शत्रुघ्न ने सावन मास में उस पुरी को जिसे अब मथुरा कहते हैं बसाने का कार्य आरम्भ किया। बारहवें वर्ष में अच्छी भाँति से यमुना के तार पर अर्द्ध चन्द्राकार पुरी बस गई।

(वाराहपुराण, १५२ वा अध्याय) कपिलऋषि ने अपने तप के प्रभाव से वराह जी की मूर्त्ति का निर्माण किया। कपिल जी से इन्द्र ने उसको लिया। इन्द्रपुरी से रावण लङ्का को ले गया। रामचन्द्र, रावण को जीतने पर कपिल वराह को लङ्का से अयोध्या मे लाए। शत्रुघ्न ने लवणासुर के बध करने पर उस मूर्त्ति को अयोध्या से लाकर मथुरा मे दक्षिण दिशा में स्थापित किया।

( देवी भागवत, चौथा स्कन्ध, २० वा अध्याय ) यमुना नदी के किनार मधुवन में मधु दैत्य का पुत्र लवण रहता था। शत्रुघ्न जी ने उसे मारकर वहाँ मथुरा नामक पुरी बनाई और पीछे वहाँ का राज्य अपने पुत्रों को देकर आप निज धाम को चले गए। जब सूर्य वंश का नाश हुआ तब उस पुरी के राजा यदुवंशी हुए जिनमे शूरसेन के पुत्र वसुदेव थे।

( विष्णु पुराण, प्रथम अङ्क, २२ वा अध्याय ) जिस वन में मधु दैत्य रहता था उस वन का नाम मधुवन हुआ। मधु के पुत्र का नाम लवण था जिसको शत्रुघ्न जी ने मारकर उसी वन में मथुरा नामक पुरी बसाई।

( गरुड पुराण, प्रेत कल्प, २७ वां अध्याय ) अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काँची, अवन्तिका और द्वारिका, ये माता पुरियाँ मोक्ष देने वाली हैं।

( श्रीमद्भागवत, चौथा स्कन्ध, ८ वा अध्याय ) ध्रुव जी नारद जी की आज्ञानुसार मथुरा में आकर एकान्त चित्त हो भगवान का ध्यान करने लगे। जब उनके तप से सपूर्ण विश्व का श्वास रुक गया तब भगवान ने मधुवन म आकर ध्रुव को वरदान दिया कि तुमको अटल ध्रुव स्थान मिलेगा।

(९ वा स्कन्ध चौथा अध्याय ) भगवान वसुदेव ने राजा अम्बरीष के भक्तिभाव से प्रसन्न हो उसको सुदर्शन चक्र दे दिया था। राजा ने एक वर्ष तक अखण्ड एकादशी का व्रत करने का सङ्कल्प किया और व्रत के अन्त में कातिक महीने में मथुरा पुरी में जाकर व्रत किया।

( वाराह पुराण, १४६ वा अध्याय ) मथुरा में सूर्य तीर्थ में राजा बलि ने सूर्य की आराधना की और सूर्य से एक मणि पाई।

जहाँ ध्रुव ने तप किया था वह ध्रुव तीर्थ है।

(१५१ वां अध्याय) मथुरा के पश्चिम में आधे योजन पर धेनुकासुर की भूमि में तालवन है। तालवन में धेनुकासुर मारा गया था।

( १४७ वा व १४८ वां अध्याय ) सोम तीर्थ यमुना के गंगा में है। यहां सोम को विष्णु का दर्शन हुआ था।

( आदि ब्रह्मपुराण, ७४ व ७५ वां अध्याय ) जब नारद मुनि ने कंस से कहा कि देवकी के आठवें गर्भ में भगवान जन्म लेंगे तब कंस ने देवकी और वसुदेव को अपने गृह में रोक रक्खा। जब बलदेव रोहिणी के गर्भ में आ चुके, तब भगवान ने देवकी के गर्भ में प्रवेश किया। जिस दिन भगवान ने जन्म लिया, उसी दिन गोकुल में नन्द की पत्नी यशोदा के गर्भ से योगनिद्रा भी उत्पन्न हुई। जब वसुदेव कृष्ण को लेकर अर्ध रात्रि में चले, तब योग माया के प्रभाव से मथुरा के द्वारपाल निद्रा से मोहित हो गए। अति गम्भीर यमुना जी थाह हो गईं। वसुदेव पार उतर कर गोकुल में गए जहाँ योगनिद्रा से मोहित नन्द गोप की स्त्री यशोदा के कन्या हुई थी। वसुदेव अपने बालक को यशोदा की शय्या पर सुला और उनकी कन्या को लेकर शीघ्र ही लौट आए।

( ७७ वा अध्याय ) पूतना राक्षसी गोकुल में जाने पर कृष्ण द्वारा मारी गई। जब यमुलार्जुन वृक्षों के गिरने से कृष्ण बच गए, तब नन्दादि सब गोप उत्पातों से डर कर गोकुल को छोड़ वृन्दावन में जा बसे।

( ७८ वा अध्याय ) कृष्ण ने कालियनाग का दमन किया।

( ७६ वां अध्याय ) बलराम जी ने धेनुक और प्रलंबासुर को मारा। कृष्ण के उपदेश से व्रजवासियों ने इन्द्र को छोड़ कर गोवर्धन पर्वत का पूजन किया।

( ८० वा अध्याय ) इन्द्र ने क्रुद्ध होकर संवर्तक मेघों को भेजा। मेघ गौओं के नाश के लिए भयानक वर्षा करने लगे। कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को उखाड़ कर एक हाथ पर धारण कर लिया।

(८२ वां अध्याय ) कंस ने अक्रूर से कहा कि वसुदेव के पुत्र विष्णु के अंश से उत्पन्न हुए हैं और मेरे नाश के लिए बढ़े हैं, तुम उन्हें यहाँ बुला लाओ। चतुर्दशी के दिन मेरे धनुष यज्ञ में चाणूर और मुष्टिक के सङ्ग उन दोनों का मल्ल युद्ध होगा। कुवलयापीड़ हस्ती वसुदेव के दोनों पुत्रों को मारेगा।

कस का भेजा हुआ केशी दैत्य वृन्दावन में आया और कृष्ण के पीछे मुह फाड़ कर दौड़ा। कृष्ण ने अपनी बाँह को उसके मुख में डाल दिया जिससे वह मर गया।

( ८४ वाँ अध्याय) वलदेव और कृष्ण ने कुवलयापीड़ हस्ती को मारा। कृष्ण चाणूर और बलदेव मुष्टिक के सङ्ग युद्ध करने लगे। अन्त में जब दोनों दैत्य मारे गए तब कृष्ण कूद कर मञ्च पर चढ गए, उन्होंने कस के शिर के बालों को खींच कर उसको नीचे पटक दिया और वह मर गया।

( वाराह पुराण, १७१ वां अध्याय ) कृष्ण का पुत्र साम्ब नारद के उपदेश से मथुरा के वट सूर्य नामक स्थान में जाकर कृष्ण गङ्गा में स्नान कर सूर्य की आराधना करने लगा। थोडे ही दिनों में कृष्ण गङ्गा के तट पर सूर्य भगवान ने अपने हाथसे साम्ब का शरीर स्पर्श किया। उसी समय साम्ब दिव्य शरीर हो गया। [ साम्ब के कुष्ठ रोग से मुक्त होने की कथा कनारक के सम्बन्ध में भी प्रचलित है। ]

( ब्रह्मवैवर्त पुराण, कृष्ण जन्म खण्ड, ११ वा अध्याय ) सत्युग में केदार नामक राजा था जो जैगीषव्य ऋषि के उपदेश से अपने पुत्र को राज्य दे वन में चला गया। केदार के वृन्दा नामक पुत्री कमला के अंश से थी। जिस स्थान पर वृन्दा ने तप किया वही स्थान वृन्दावन के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

( वाराह पुराण, १५० वा अध्याय ) जहाँ हम (कृष्ण ) ने गौओं और गोप बालकों के साथ अनेक भाँति की क्रीडा की है वह वृन्दावन क्षेत्र है। वृन्दावन में जहाँ केशी असुर मारा गया वहाँ केशी तीर्थ है। वृन्दावन में द्वादश तीर्थ हैं वहाँ ही हमने कालिया सर्प का दमन किया था और सूर्य को स्थापित किया।

( श्रीमद्भागवत, १६वां अध्याय ) वृन्दावन में कालीदह में काली नाग के रहने से उसका जल खौलता था। एक दिन कृष्ण जी कदम के वृक्ष पर चढ कालीदह में कूद पडे। काली नाग क्रोध करके दौड़ा। कृष्ण ने उसके सिर का मर्दन करके काली सर्प को कालीदह से निकाल दिया।

( ब्रह्मवैवर्त पुराण, कृष्ण जन्म खड, २७ वां अध्याय ) व्रज की गोपियों ने एक मास दुर्गा के स्तव पढ कर व्रत किया और व्रत समाप्ति के दिन नाना विधि और नाना रङ्ग के वस्त्रों को यमुना तट पर रख कर स्नान के लिए जल में नङ्गी पैठीं और जल क्रीड़ा करने लगीं। कृष्ण के सखाओं ने उन वस्त्रों को

लेकर दूर स्थान पर रख दिया। श्री कृष्ण कुछ वस्त्र ग्रहण कर कदम्ब के वृक्ष पर चढ़ गए। जब राधा ने कृष्ण की स्तुति की तब गोपियों के वस्त्र मिल गए। वे व्रत समाप्त करके अपने अपने घर चली गईं।

( ब्रह्मांड पुराण, उत्तर खंड, राधा हृदय छठा अध्याय ) वृषभानु गोकुल का राजा था। उसके एक पुत्री हुई। परमाराध्या देवी उग्र तपस्या द्वारा राधिता होकर राध्य हुई थी इस कारण वृषभानु ने उस कन्या का नाम राधा रक्खा।

बौद्धकाल में मथुरा बौद्धमत का एक केन्द्र था। ह्वानचाङ्ग की यात्रा के समय यहाँ केवल पाँच देव मन्दिर थे और बौद्ध संघारामों की संख्या २० थी जिन में २००० भिक्षु रहते थे। उस से पहिले बौद्धों का और ज़्यादा ज़ोर यहाँ था। फ़ाहियान की यात्रा के समय यहाँ ३००० भिक्षु रहते थे।

नगर से एक मील पूर्व महात्मा उपगुप्त का बनाया हुआ संघाराम था जिसके बीच में एक स्तूप में भगवान बुद्ध के नख रक्खे थे। इससे चार मील दक्षिण पूर्व एक सूखा हुआ तालाब और स्तूप थे जहाँ एक वानर ने भगवान बुद्ध को मधुदान दिया था। भगवान ने उसे स्वीकार करके भिक्षुओं को शर्बत बनाकर बाँटने को दे दिया। इस पर वानर मारे खुशी के उछला और तालाब में गिर कर मर गया। कहते हैं दूसरे जन्म में उस को नर शरीर मिला।

इस ताल के उत्तर में एक और पवित्र स्थान था जहाँ पूर्व काल के ४ बुद्ध व्यायाम करते थे। इस स्थान के चारों ओर सैकड़ों स्तूप थे जहाँ १२५० अर्हत ( जीवनमुक्त ) ध्यान लगाया करते थे। महात्मा सारि पुत्र, मोगलायन, पूर्व मैत्रायणी पुत्र, उपालि, राहुल ( भगवान बुद्ध के पुत्र ) और भिक्षुणी अनन्ता की चिता का सामान मथुरा में अलग-अलग स्तूपों में रक्खा था।

महात्मा उपगुप्त वह महात्मा थे जिन्होंने महाराज अशोक को बौद्धों के पवित्र स्थान, स्तूपों और स्तम्भों के बनाने के लिए बताए थे। अशोक उनके शिष्य थे।

[सूर्यावतार आचार्य्य निम्बार्क के काल के विषय में बड़ा मतभेद है। इनके भक्त इन्हें द्वापर में हुआ बताते हैं। वर्तमान अन्वेषक ग्यारहवीं शताब्दी का सिद्ध करते हैं।

कहा जाता है गोदावरी तट पर अरुणाश्रम में अरुण मुनि की पत्नी जयन्ती देवी के गर्भ से यह अवतीर्ण हुए थे। कुछ लोग इनको सूर्य का और कुछ सुदर्शन चक्र का अवतार मानते हैं। लोगों का विश्वास है कि इनके उपनयन में स्वयम् देवर्षि नारद ने इन्हें गोपाल मंत्र की दीक्षा दी थी। इन

का मत द्वैताद्वैत के नाम से प्रसिद्ध है। कहते हैं इनका नाम पहिले नियमानन्द था। एक बार रात्रि हो जाने से इनके एक अतिथिने मथुरा में भोजन करने से इन्कार कर दिया। इससे इन्हें दुःख हुआ, पर देखते क्या हैं कि इनके आश्रम के पास एक नीम के वृक्ष पर सूर्य निकला हुआ है। अतिथि के भोजन के बाद वह अस्त हो गया। तब से इनका नाम निम्बार्क हुआ।]

व० द०—इस समय मथुरा के मुख्य स्थान निम्नलिखित हैं —

ध्रुवघाट—मथुरा में ध्रुव घाट पर पिण्ड दान होता है। घाट के पास एक टीले पर मन्दिर में ध्रुवजी की मूर्त्ति है। इसी स्थान पर उन्होंने तप किया था।

अम्बरीष टीला एक ऊँचा टीला है। कहा जाता है कि इस स्थान पर अम्बरीष ने वास किया था।

मोक्षतीर्थ और सप्त ऋषियों का टीला—इस टीले पर सफेद मिट्टी मिलती है जिस को लोग यज्ञ की विभूति कहते हैं। टीले पर साधुओं का मठ है। पूर्व काल में सप्त ऋषियों ने यहाँ तप किया था।

राजा बलि का टीला—इस टीले पर काले ढेले निकलते हैं। इनको भी लोग यज्ञ की विभूति कहते हैं। यहाँ पर राजा बलि ने यज्ञ किया था।

केशवदेव जी का मन्दिर—जिस स्थान पर श्रीकृष्ण भगवान का जन्म हुआ था वहाँ केशवदेवजी का विशाल मन्दिर खड़ा है। यह स्थान मथुरा के सब देव मन्दिरों में अधिक माननीय है।

पोतराकुण्ड—जन्म भूमि के पास पोतरा कुण्ड नामक पत्थर का उत्तम सरोवर है। कृष्ण चन्द्र के जन्म के समय के पोतरा, अर्थात् पोतड़ेन, इस में धोए गए थे।

कंस का किला—अब इस किले का केवल ढेर मात्र रह गया है। परन्तु कुछ मकानों के खण्डहर और टूटी फूटी दीवारें अब तक विद्यमान हैं। राजा कंस का यही किला था।

विश्राम घाट—श्री कृष्ण ने कंस को मारकर यहीं पर विश्राम किया था इससे इसका नाम विश्रामघाट पड़ा। कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया के दिन इसी घाट पर यमुना स्नान के लिए प्रति वर्ष भारत के सब प्रदेशों से लाखों यात्री मथुरा में आते हैं। यमुना स्नान का महत्त्व सब स्थानों से अधिक मथुरा में है और मथुरा के सब स्थानों से अधिक इस घाट पर है। इस घाट पर ऊपर से नीचे

तक पत्थर की सीढ़ियाँ हैं और ऊपर पत्थर का फर्श है। यहाँ प्रति दिन सन्ध्या को यमुना जी की आरती होती है।

रावणटीला—रावणटीला नामक एक टीला है। कहा जाता है कि रावण ने यहां तप किया था।

कृष्णगङ्गा—यमुना में पत्थर से बना हुआ एक घाट कृष्णगङ्गा घाट है। यहां साम्ब ने स्नान करके कुष्ठ रोग से मुक्ति पाई थी।

सामघाट—एक दूसरा पत्थर का घाट है। यहाँ साम तीर्थ है जहाँ साम को विष्णु का दर्शन हुआ था।

मथुरा में अनेक विशाल मन्दिर बने हैं और बारहों महीने यात्रियों की भीड़ रहा करती है। यहाँ का अन्नकूट प्रसिद्ध है। कार्त्तिक सुदी प्रतिपदा को सबेरे मथुरा के मन्दिरों में अन्नकूट के दर्शन की बड़ी भीड़ होती है। मन्दिरों में नाना प्रकार की मिठाई, पक्वान, कच्ची रसोई, व्यंजन, चटनी आदि भोजन की सामग्री जगमोहन में पृथक्-पृथक् पात्रों में रख कर भगवान का भोग लगाई जाती है।

मथुरा का प्रधान मेला कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया को होता है। कार्त्तिक शुक्ल अष्टमी को एक छोटा गोचरण का मेला, दशमी को कंस वध का लीला और अक्षय नवमी तथा प्रबोधिनी एकादशी को परिक्रमा होती है। मथुरा नगर की ५ कोस की परिक्रमा विश्रामघाट से आरम्भ होकर करीब ६ घण्टे में फिर उसी जगह समाप्त हो जाती है।

मथुरा से ६ मील दक्षिण पूर्व यमुना के बाँय किनारे पर गोकुल है। गोकुल से लगभग एक मील दूर पर महावन (पुराना गोकुल) है। पुराने समय में यह गोकुल के नाम से प्रसिद्ध था। यहां पुराने गढ़ की जगह पर करीब ३० एकड़ में ईंटें फैली हुई देख पड़ती हैं। महावन में अधिक हृदयग्राही नन्द का महल है जिसके एक भाग पर हिन्दू और बौद्ध मन्दिरों के सामान से औरंगजेब ने अस्सी खम्भा मसजिद बनवाया है। इसी महल में कृष्ण को छोड़कर वसुदेव, यशोदा की पुत्री को ले गए थे। नन्द के महल में कृष्ण की बाललीला दिखाई गई है। पायेदार मकान में पालना है। दधिमथन के लिए पत्थर का मांटा और मथानी रक्खी है। भादों बदी अष्टमी को कृष्ण जन्म के उत्सव में यहाँ हजारों यात्री आते हैं।

गोकुल में नए मन्दिर बन गए हैं और ३५० वर्ष से अधिक से वल्लभ सम्प्रदाय का यह प्रधान स्थान है।

मथुरा से ६ मील उत्तर यमुना के दाहिने किनारे पर वृन्दावन है। इसके समान पवित्र स्थान भारतवर्ष में बहुत थोड़े माने जाते हैं। जो मनुष्य व्रज में वास करते या उसमें जन्म बिताना चाहते हैं वे वृन्दावन में ही निवास करते हैं।

जिस स्थान पर काली नाग नाथा गया था वह स्थान कालीदह कहलाता है। कालीदह को यमुना जी ने अब छोड़ दिया है।

केशी दैत्य जहाँ मारा गया था वह जगह केशी तीर्थ करके प्रसिद्ध है।

जहाँ पर श्रीकृष्ण भगवान ने चीर हरण लीला की थी वहाँ पर चीर हरण घाट बना हुआ है। घाट पर एक पुराना कदम्ब का वृक्ष है।

वृन्दावन में कई सदाव्रत लगे हैं। यहाँ बड़े बड़े विशाल मन्दिर बने हैं। रूप स्वामी नामक वैष्णव, नन्द गाँव में गौओं के लिए खिड़क बनवा रहे थे उस समय उन्हें खोदने पर एक मूर्ति मिली जिसका नाम गोविन्द देवजी कहा गया। जयपुर के महाराज मानसिंह ने १५९० ई० में गोविन्द देवजी का मंदिर बनवाया और उसमें इस मूर्ति की स्थापना कर दी। जब औरङ्गजेब ने इस मंदिर को तोड़ने का हुक्म दिया तब जयपुर को उस समय के महाराज उस मूर्ति को जयपुर उठा ले गए और अब वह महल के सामने विशाल मन्दिर में वहाँ स्थापित है।

वृन्दावन का रंगजी का मन्दिर, मथुरा वृन्दावन के समस्त मंदिरों में बड़ा और उत्तम है। इसके बनने में ४५ लाख रुपए लगे हैं और १८४५ ई० से १८५१ ई० तक छः वर्ष में बना है। मथुरा के प्रसिद्ध सेठ राधाकृष्ण और गोविन्ददास ने इसको बनवाकर ५३ हजार सालाना बचत की जायदाद मंदिर के नाम अर्पण कर दी। इसका प्रबंध एक कमेटी ( समिति ) द्वारा होता है। मंदिर में सोने और चाँदी की बहुमूल्य बहुत सी चीजें हैं। पौष सुदी ११ से माघ बदी ५ तक रंगजी के मंदिर में वैकुण्ठोत्सव की बड़ी धूमधाम रहती है।

वृन्दावन के ललित निकुञ्ज नामक राधारमण के मंदिर को लखनऊ के शाह कुन्दन लाल ने दस लाख रुपया के खर्च से बनवाया है।

श्रावण मास के शुक्ल पक्ष के आरम्भ से पूर्णिमा तक सब मंदिरों में झूलन का बड़ा उत्सव होता है। उस समय हजारों यात्री दर्शन के लिए वृन्दावन में आते हैं। कार्तिक, फाल्गुन और चैत्र में भी यात्रियों की भीड़ होती है।

मथुरा से १४ मील पर गोवर्धन पर्वत है। यह पहाड़ी ४ मील से अधिक लम्बा है परन्तु इसकी चौड़ाई और ऊँचाई बहुत कम है। औसत ऊँचाई लगभग १०० फीट से अधिक नहीं है।

पहाड़ी के पास मानसी गङ्गा नामक एक बहुत बड़ा तालाब है जिसके चारों तरफ पत्थर की सीढ़ियाँ हैं और अनेक देव मन्दिर हैं। मथुरा के यात्री कार्तिक अमावास्या की रात में मानसीगङ्गा पर दीपदान करते हैं। यहाँ के समान दीपोत्सव किसी भी तीर्थ में नहीं होता।

मथुरा से २८ मील पर बरसाना नामक गाँव है। यहाँ लाडिली जी (राधा) का बड़ा मन्दिर है। अन्य मन्दिरों में राधिका जी के पिता वृषभानु आदि की मूर्तियाँ हैं और वृषभानु कुंड नामक पक्का सरोवर है।

बरसाने और गोवर्धन के निवासी कृष्ण का नाम छोड़कर केवल राधाजी की जय पुकारते हैं।

मथुरा के आसपास ८४ कोस का घेरा ब्रजमंडल कहलाता है। ब्रज का फाग विख्यात है। ऐसी धूम की होली भारतवर्ष में और कहीं नहीं होती। लोग बरसाने में धूम धाम से फाग खेलने जाते हैं।

ब्रजकी भाषा भारत के सब खंडों की भाषा से मीठी है। अकबर को ब्रज में आकर इतना आनन्द आया था कि उसने कहा था कि यहाँ की भूमि पर तो लोटने को जी चाहता है।

मथुरा के पुराने क़िले से एक मील पश्चिम जहाँ इस समय कटरा है, वहाँ उपगुप्त का संघाराम था। उपगुप्त के गुरु स्थनवासी का भी यहीं निवास था। यह बौद्धों के तीसरे आचार्य थे। (कुल मिलाकर बौद्धों में २८ आचार्य हुए हैं।) इस स्थान से तीन मील दक्षिण-पूर्व में एक तालाब है। यह वह जगह है जहाँ भगवान बुद्ध ने वानर का दिया हुआ मधु (शहद) स्वीकार किया था।

मथुरा में बौद्ध काल की अनेक चीजें मिली हैं जिनमें भगवान बुद्ध की मूर्तियाँ प्रधान हैं।

सभी कृष्ण भक्त, महात्मा और कवि मथुरा-वृन्दावन में रहकर अपना जीवन सफल करते रहे हैं पर मथुरा निवासियों में निम्नलिखित अच्छे कवि हो गए हैं—

कुमार मणिभट्ट—(दो सौ वर्ष पूर्व)<br>
सूदन—(पौने दो सौ वर्ष पूर्व)<br>
हठी—(डेढ़ सौ वर्ष पूर्व)<br>
ग्वाल—(सवा सौ वर्ष पूर्व)

**४९० मदनपल्ली**—( मद्रास प्रान्त के पश्चिम गोदावरी जिले में एक स्थान)

श्री कृष्ण मूर्त्ति जी की यह जन्म भूमि है।

कृष्ण मूर्त्ति जी के पिता मदनपल्लो में तहसीलदार थे, उन दिनों इनका जन्म वहाँ हुआ था। पीछे वे पेन्शन लेकर अद्यार के थियासोफिकल सोसाइटी में अवैतनिक काम करने लगे। उस समय एक दिन सहसा देवी एनीबेसेन्ट कृष्ण मूर्त्ति जी के पास से निकलीं इनकी आयु उस समय ग्यारह-बारह सालकी थी। देवी एनीबेसेन्ट ने तुरन्त कृष्ण मूर्त्ति जी को, जिन्हें कृष्ण जी कह के पुकारा जाता है, उनके पिता स माँग लिया, और उनकी शिक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया। कहा जाता है कि दिव्य दृष्टि से उन्हें प्रतीत हुआ था कि कृष्ण मूर्त्ति का शरीर इस पृथिवी पर वर्तमान काल में महर्षि मैत्रेयजगद्गुरु की आत्मा का वाहन होगा, जैसे ईसा का शरीर ईसा के अन्तिम तीन साल मे मसीह की आत्मा का वाहन रहा बताया जाता है।

कृष्ण मूर्त्ति जी साल में चार मास भारतवर्ष, चार मास अमेरिका और चार मास योरप में भ्रमण करके उपदेश देते रहे हैं। उनके उपदेश के प्रचार के लिए एक सङ्घ जिसका नाम तारा सङ्घ ( Order of the star in the east ) था, बनाया गया था। इसकी शाखाएँ पृथिवी के प्रत्येक देश में थीं और प्रत्येक भाषा में मासिक पत्रिकाएँ निकलती थीं। परन्तु कृष्ण जी धार्मिक विषयों के सङ्गठन के विरुद्ध हैं। उन्होंने ऐसी ही एक सस्था अपने लिये बनते देख न केवल तारा सङ्घ को तोड दिया वरन सब पत्रिकाओं को भी बन्द कर दिया। उनका कहना है कि मजहब इसी प्रकार बनते हैं, और मजहब का होना मनुष्य जाति की आध्यात्मिक उन्नति के लिए सबसे भारी रुकावट है।

सङ्घ के टूटने की घटना द्वितीय महायुद्ध से बहुत वर्ष पहले की है। अब तो महायुद्ध ने अमेरिका व यूरोप में उथल पुथल कर रक्खी है, पर इससे पहले विलायत के विचारवान पुरुष कृष्ण मूर्त्ति जी की बातों को बड़े ध्यान से देख रहे थे और उनकी शिक्षा पर विचार कर रहे थे।

हालैन्ड के एक लार्ड (राजा) ने अपना राज्य उनको अर्पण कर दिया। उन्होंने अस्वीकार किया तो उसने उसे तारा सङ्घ के अर्पण कर दिया। यह भी अस्वीकार हुआ। युद्ध से पहले प्रति वर्ष हजारों आदमी विलायत के सब स्थानों से एक सप्ताह हालैन्ड देश में ओमेन में इकट्ठे होकर कृष्ण जी का उपदेश ग्रहण करते थे।

अमेरिका वालों ने कैलीफोर्निया के ओहे में अपना केन्द्र बनाया है। हजारों अमेरिका वासी इस स्थान पर जमा होकर कृष्ण जी का वचन सुनते रहे हैं। इसी प्रकार काशी में राजघाट पर एक स्थान बनाया गया है जहाँ कृष्ण जी आकर रहते और उपदेश देते हैं।

कृष्ण जी का कथन है कि उनकी वाणी को कदापि प्रमाण न माना जाय क्योंकि ऐसा करने से लोग बजाय स्वयम् सोचने और समझने के, प्रमाण का सहारा लेने लगते हैं और इससे निज उन्नति नहीं होती। वे कहते हैं कि उनको कदापि दिव्य पुरुष न माना जावे, केवल उनकी बातें सुन कर उस पर विचार किया जावे, और जिस बात को चित्त ग्रहण न करे उसे स्वीकार न किया जावे, क्योंकि बिना समझे प्रमाण-स्वरूप स्वीकार करने से कोई लाभ नहीं होता। समझने के योग्य होने के लिए, वे कहते हैं कि, मनुष्य को अपने पुराने विचारों को निकाल कर दूर कर देना चाहिए क्योंकि बन्धनों के रहते हुए जीवन की धारा खुलकर नहीं बहने पाती।

श्रीमती ग्लेटीसवेकर, एक अमेरिकन महिला, लिखती हैं :—"कृष्ण जी को चमत्कार दिखाने में भी अरुचि है। उनका कथन है कि जो उच्च जीवन नहीं व्यतीत करना चाहते, वे चमत्कार देख कर कभी उच्च जीवन न व्यतीत करने लगेंगे। वे केवल अपने सांसारिक सुख तथा आराम के लिए चमत्कार चाहते हैं। परन्तु जो लोग कृष्ण जी के समीप रहते हैं उनका कहना है कि बिना जाने ही वे चमत्कार कर रहे हैं। इसके उदाहरण में श्रोमन के कैम्प की एक बात बताई गई। उस अवसर पर कृष्ण जी ने अंग्रेजी में जनता को उपदेश दिया था। अपनी माता के साथ एक जर्मन बालक भी व्याख्यान सुन रहा था। व्याख्यान समाप्त होने पर बालक ने कहा कि ऐसी अच्छी वार्ता तो मैंने कभी भी नहीं सुनी थी। बालक अंग्रेजी नहीं जानता था और जब बालक ने सारे व्याख्यान की कथा को कह सुनाया तो उसकी माता सन्नाटे में आ गई।"

श्री कृष्ण मूर्ति जी कहते हैं :—

"हे मित्र! तुमको निर्जीव मन्दिरों के बोझ की क्या आवश्यकता जब जीवन गली-गली नाच रहा है,

हे मित्र! तुम भय से, मृत्यु के भय से, उदासी और शोक के भय से क्यों छिपते फिरते हो,

जब कि जीवन तुम्हारे चारों ओर लहलहाते खेतों में आनन्द मना रहा है।

हे मित्र ! तुम थोड़े दिनों का आराम क्यों ढूँढते हो ?
जब कि जीवन तुम को अपना अनन्त ज्ञान प्रदान करता है।
मैं जीवन हूँ, मैं प्रियतम हूँ,
मैं वह ज्वाला हूँ जिसके सामने कोई अपवित्र वस्तु ठहर नहीं सकती।

आओ मेरे साथ आओ !
जीवन के मार्ग में—
प्रेम के मार्ग में चलो
जहाँ मृत्यु की पहुँच नहीं है।"

हमारे ऋषियों और मुनियों ने जो बातें बताई हैं वह, उनके चले जाने के बाद अब मृतक शब्दों का रूप धारण करके हमारे सामने हैं। परन्तु प्रतीत होता है कि कृष्ण जी के मुँह से वेही बातें जीती जागती निकल कर इस काल में वही लाभ पहुँचा रही हैं जो पुराने ऋषि मुनियों के समय में उनकी उपस्थिति में उनकी वाणी मनुष्य जाति को पहुँचती थी।

मदनपल्ली तीस हजार आदमियों की बस्ती है, और समुद्रतल से तीन हजार फीट ऊपर होने के कारण जलवायु अत्युत्तम है। कृष्ण मूर्त्ति जी की यादगार में मदनपल्ली के निकट एक कालेज खोला गया है जिसका प्रबन्ध बड़ी उत्तम रीति से चल रहा है।

४९१ मदिया गांव—( देखिए मँदावर )

४९२ मदुरा—( मद्रास प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान )

रामायण और महाभारत में वर्णित पाण्ड्य राज्य की यह राजधानी थी।

मदुरा ५२ पीठों में से एक है। यहां सती की एक आँख गिरी थी। इस स्थान का दूसरा नाम मीनाक्षी है।

श्री यामुनाचार्य का यहीं जन्म हुआ था। ये श्री रामानुजाचार्य के परम गुरू थे।

मत सम्बन्ध यहा निवास करते थे।

प्रा० क०—( महाभारत, सभापर्व, ५१ वा अध्याय ) चोलनाथ और पाण्ड्यनाथ, राजा युधिष्ठिर के राज सूय यज्ञ के समय इन्द्रप्रस्थ में आए।

( वाल्मीकीय रामायण, किष्किन्धा काण्ड, ४१ वां सर्ग ) सुग्रीव ने श्री जानकी जी को खोजने के लिए अङ्गद, हनूमान आदि वानरों को भेजा

और उनसे कहा कि तुम लोग दक्षिण में जाकर पाण्डयों के नगर में प्राकार का द्वार देखोगे।

( आदि ब्रह्मपुराण, ११ वा अध्याय ) दुष्यन्त का पुत्र ध्रुत्थाम, ध्रुत्थाम का पुत्र अथाक्रीड, और अथाक्रीड के चार पुत्र हुए अर्थात् पाण्ड्य, केरल, कोल और चोल जिनके नाम से पाण्ड्य, केरल ( वर्त्तमान कोचीन व तिरुवा कूर राज्य और मलाबार ) कोल और चोल ये चार देश विख्यात हुए हैं।

( शिवभक्त विलास, ३० वां अध्याय ) दक्षिण दिशा के मधुरानामक नगर में मीनाक्षी नाम्नी देवी और पाण्ड्य राजाओं से पूजित परमेश्वर विराज मान हैं।

[ श्री यामुनाचार्य्य का जन्म १०१० वि० स० में मदुरा में हुआ था। जब यह १२ साल के थे तब इन्होंने पाण्ड्यराज के सबसे प्रधानाचार्य पण्डित को शास्त्रार्थ में हराया था। पांडय राज को यह कदापि ख्याल न था कि यह ऐसा कर सकेंगे, इससे अपनी रानी से बाजी लगाने में वह बैठे थे कि यदि बालक ने आचार्य को हरा दिया तो वे उसे आधा राज्य दे देंगे। उन्होंने यामुनाचार्य को आधा राज्य दे दिया और यह बड़ी दक्षता से सिंहासन पर बैठ कर राज्य काज चलाने लगे। कुछ वर्ष पीछे यह राजपाट छोड़कर श्री रङ्गम जी के सेवक हो गए। श्रीरामानुजाचार्य के यह परम गुरू थे। ]

[ सतसम्बन्ध का जन्म लगभग ६३६ ई० में हुआ था। चार वर्ष की अवस्था में इनके पिता इनको सरोवर में स्नान कराने ले गए। जब इनके पिता स्वयम् नहाने लगे तब एक निकटवर्ती मन्दिर में सतसम्बन्ध को पार्वती और शिव के दर्शन हुए। माता पार्वती ने आध्यात्मिक शक्ति से परिपूर्ण दूध इन्हें पिलाया। इनमें ज्ञान का प्रकाश बल उठा, मुख से गीत की धारा फूट पड़ी और घूम घूम कर यह लोगों को श्री उमा शम्भु का यश सुनाने लगे। मदुरा में विरोधियों ने इनकी कुटी में आग लगा दी पर कुछ हानि न कर पाये। पाण्ड्य राज्य में जैन धर्म के स्थान पर इन्होंने शैव धर्म की फिर से स्थापना की। दक्षिण भारत के शैवाचार्य्यों में यह सर्व श्रेष्ठ माने जाते हैं। ]

म० द०—मदुरा भगा नदी के किनारे पर बसा हुआ है। इस नदी का प्राचीन नाम कृतमाला था। मीनाक्षी देवी और सुन्दरेश्वर शिव का मन्दिर रेल्वे स्टेशन से करीब एक मील पश्चिम ८४५ फीट लम्बा और ७२५

फीट चौड़ा अर्थात लगभग २२ गीरे में बना है। बाहर का दीवार करीब २१ फीट ऊँची है। उसके चारा बगलों पर प्रतिमाओं से पूर्ण रत्नों से चित्रित ग्यारह मंज़िला ग्यारह कलशवाला एक ही समान एक एक गोपुर है। उनमें से एक गोपुर १५२ फीट ऊँचा १०५ फीट लम्बा और ६६ फीट चौड़ा है। मीनाक्षी के मन्दिर के आगे सोने का मुलम्मा किया हुआ एक बड़ा स्तम्भ है। सुनहले स्तम्भ से उत्तर सुन्दरेश्वर शिव के मन्दिर के द्वार का गोपुर है। उस मन्दिर के पास के कमरों में मीनाक्षी और सुन्दरेश्वर के वाहन रक्खे हुए हैं। उनमें से सुनहला पालकी का मूल्य उस समय के पन्द्रह हजार रुपयों से कहीं अधिक और २ चाँदनी का मूल्य, जिनमें बेशक़ीमती चोर हैं, अठारह अठारह हज़ार रुपयों से ज्यादा है। वहीं चाँदी से मढ़ा हुआ एक रथ और एक नन्दी (बैल) भी है। मन्दिर के द्वार पर एक बड़ा सुनहला स्तम्भ है। भारत में मदुरा का बड़ा मन्दिर बहुत ही विशाल और अति सुन्दर है।

बड़े मन्दिर के पूर्व तिरुमलई नायक का बनवाया हुआ ३३३ फीट लम्बा और १०५ फीट चौड़ा एक उत्तम मण्डप है। उसके छत के नीचे ४ क़तारों में भिन्न भिन्न तरह की सङ्ग तराशी के १२० स्तम्भ लगे हैं जिनमें से मध्य के दो कतारों में दोनों तरफ पाँच-पाँच स्तम्भों में नायक वंश के राजाओं की मूर्तियाँ बनी हैं, जिनमें तिरुमला नायक की मूर्ति के ऊपर चाँदनी बनी हुई है। उसके पीछे दो मूरतें हैं गाँव की सूरत तञ्जौर की शाहज़ादी तिरुमलई नायक की है। दरवाजे के पास शिकार खेलने वालों और शिकारों का झुण्ड है। कहा जाता है कि इन सब चीजों के बनाने में उन दिनों डेढ़ करोड़ रुपया खर्च पड़ा था। ऐसा उत्तम सङ्गतराशी का काम दूसरी जगह देखने में नहीं आता। मदुरा के मन्दिर में अतुल धन है।

मदुरा के रेलवे स्टेशन से ३ मील पूर्व रामेश्वर के मार्ग में वैग नदी के उत्तर १२०० गज़ लम्बा और इतना ही चौड़ा तेप्पकुलम तालाब है। उसके चारों तरफ पत्थर के घाट तथा सड़क, मध्य में गुरुवा टापू पर एक शिखरदार बड़ा मन्दिर और प्रत्येक कोन पर एक छोटा मन्दिर है। टापू पर सुन्दर वाटिका लगी है। तालाब में सर्वदा पानी रहता है। प्रति वर्ष उत्सव के समय उस तालाब के किनारे एक लाख दीप जलाए जाते हैं। उसी समय मदुरा के बड़े मन्दिर की उत्सव मूर्तियों को मन्दिर से लेजाकर तालाब में बेड़े पर घुमाया जाता है।

मदुरा हिन्दुस्तान के बहुत पुराने शहरों में से है। यह पुराने समय से हिन्दुस्तान के दक्षिणी भाग, पाण्ड्य देश, की राजधानी था। यहाँ सुन्दर पगड़ियाँ जिनके किनारों पर सुनहला काम बनता है, और कई प्रकार के अच्छे लाल कपड़े तैयार होते हैं।

शक शातवाहन काल में मदुरा से रोमसाम्राज्य का व्यापार तथा प्रणिधि सम्पर्क जोरों पर था।

४९३ मद्रास—( मद्रास प्रान्त की राजधानी )

राधा स्वामियों के पाँचवें गुरु 'साहब जी महाराज' सर आनन्द स्वरूप ने २४ जून, सन् १९३७ ई० को यहाँ शरीर छोड़ा था।

मद्रास में अदयार स्थान समाज भर की थियासाफिकल सोसाइटी का केन्द्र है।

देवी एच० पी० ब्लैवटस्की (*H. P. Blavatasky*), कर्नल एच० एस० अलकट (H. S olcott), देवी बेसेन्ट ( Annie Besant), महाशय सी० डब्ल्यू० लेडबिटर, ( C W. Lead beater ) जैसे महात्माओं का अदयार निवास स्थान रहा है। यहीं देवी बेसेन्ट व कर्नल अलकट ने शरीर छोड़ा था। महात्मा कृष्ण मूर्ति ने भी यहाँ वास किया और बाल काल बिताया है।

डाक्टर जी० एस० एरेन्डेल ( G. S. Arundale ) भी यहीं निवास करते थे और यहीं उन्होंने शरीर छोड़ा। उनकी पत्नी रुक्मिणी देवी यहीं वास करती हैं। श्री जिनराजदास जी भी यह निवास स्थान है।

अदयार की वायु मानों मन के मैल को हर लेती है—'अयस देवोत्थ वायु'।

४९४ मध्यमेश्वर—( देखिए केदारनाथ )

४९५ मनारगुड़ी—( मद्रास प्रान्त के तंजौर जिले में एक नगर )
यह स्थान श्री जीवेन्द्र स्वामी ( जैन ) की जन्मभूमि है।

४९६ मन्दार गिरि—(बिहार के भागलपुर जिले में एक पहाड़ी )
कहा जाता है कि इसी पर्वत से देवताओं ने समुद्र को मथा था।
इस स्थान पर श्री वासु पूज्य स्वामी ( बारहवें तीर्थंकर ) को मोक्ष प्राप्त हुआ था।

यह पहाड़ी भागलपुर से ३२ मील दक्षिण की ओर है और ७०० फीट ऊँचा है। इसके ऊपर दो प्राचीन मन्दिर हैं। पहाड़ी के चारों ओर बीच में खुदा हुआ निशान है, जैसे मथने में इस्तेमाल होने से पड़ गया हो पर यह खोदा हुआ है।

[ एक जैन ग्रन्थ में श्री वासु पूज्य स्वामी का मोक्ष स्थान चम्पापुरी लिखा है परन्तु उसका कारण यह है कि चम्पापुरी का प्रमाण ८६ मील लम्बा और ७२ मील चौड़ा लिखा है और यह स्थान ( मन्दारगिरि ) चम्पापुरी ( वर्तमान नाथ नगर ) से ३२ मील पर है।]

बद्रीनाथ के लिए कुछ पुराण कहते हैं कि वह मन्दारगिरि पर है। महाभारत का कहना है कि मन्दारगिरि बद्रीनाथ के उत्तर में है और यह कि शिवजी पार्वतीजी से व्याह करके वहाँ रहे थे। इससे ज्ञात होता है कि कई पर्वतों को मन्दारगिरि कहा गया है।

४९७ मन्दावर—( संयुक्त प्रान्त के बिजनौर जिले में एक स्थान )

इसका प्राचीन नाम मदिपुर है।

बौद्ध महात्मा गुण प्रभा ने यहाँ १०० ग्रन्थ लिखे थे।

महायान पन्थ के प्रमुख आचार्य वसु बन्धु ने हीनयान पन्थ के प्रमुख आचार्य सङ्घभद्र को यहाँ विवाद में जीता था। आचार्य सङ्घभद्र का यह निवास स्थान था और यहीं उन्होंने तथा उनके प्रसिद्ध शिष्य महात्मा विमल मित्र ने शरीर छोड़ा था।

मदिपुर से थोड़ी दूर जङ्गल में मालिनी नदी के किनारे पर कण्व ऋषि का आश्रम था, उसी के पास शकुन्तला का जन्म हुआ था। कण्व ऋषि के आश्रम में शकुन्तला का पालन पोषण हुआ था, और वहीं उनसे राजा दुष्यन्त से भेंट हुई थी।

प्रा० क०—ह्वानचाङ्ग के समय में इस स्थान का नाम मदिपुर था और शहर का घेरा ३½ मील था। नगर से ½ मील दक्षिण एक छोटा संघाराम था जहाँ महात्मा गुणप्रभा ने एक सौ ग्रन्थ लिखे थे। इससे आध मील उत्तर एक बड़ा संघाराम था जो आचार्य सङ्घभद्र की वहाँ अचानक मृत्यु हो जाने से प्रसिद्ध हो गया था। बौद्ध ग्रन्थ लिखते हैं कि महायान पन्थ के प्रमुख आचार्य वसु बन्धु से धर्म विवाद में हारकर, हीनयान पन्थ के प्रमुखाचार्य सङ्घभद्र का शरीर जल कर तुरन्त राख हो गया था। उनकी राख की मज्जा-

ग्राम से २०० कदम पर एक स्तूप में रक्खा गया था। ये दोनों प्रसिद्ध बौद्ध आचार्य ईस्वी सम्वत् के आरम्भ में हुए हैं। महात्मा विमल मित्र जब अपने गुरू आचार्य सङ्घभद्र के स्तूप के पास से निकले तो उन्होंने अपने हृदय पर हाथ रख कर आह भर कर कहा कि मैं ऐसा ग्रन्थ लिखूँ जो महायान पन्थ को भारत से निकाल दे और वसु बन्धु का नाम मिटा दे। इस पर महायान वाले लिखते हैं कि, विमलमित्र का कलेजा फट गया और शरीर छूट गया। इनकी चिता की विभूति को भी एक स्तूप में रक्खा गया था।

मालिनी नदी यहाँ से थोड़ी दूर पर है, इसके किनारे कण्व ऋषि का आश्रम था और शकुन्तला यहीं पली थी। इस नदी के किनारे किनारे शकुन्तला, दुष्यन्त के यहाँ हस्तिनापुर को गई थी। यहीं के जङ्गल में शकुन्तला का जन्म हुआ था। शकुन्तला नाटक में और शतपथ ब्राह्मण में कण्व ऋषि के इस आश्रम का उल्लेख है।

**प० द०**—मन्दावर कस्बा ¾ मील लम्बा और ½ मील चौड़ा है। पुराना खेड़ा जो प्राचीन गढ़ी व नगर के स्थान पर है ½ मील लम्बा, ¼ मील चौड़ा और १० फीट जमीन से ऊँचा है। इससे मील भर पूर्वोत्तर में दूसरा खेड़ा है जिस पर मदिया गाँव बसा है। पहले यह दोनों खेड़े एक ही आबादी के भाग थे। दोनों के बीच में एक ताल है जिसे कुण्डा ताल कहते हैं। बौद्धों का कहना है कि महात्मा विमल मित्र की मृत्यु हुई तो भूचाल आ गया और उस समय जमीन फट कर यह तालाब बन गया।

गुण प्रभा के सङ्घाराम के स्थान पर अब लालपुर ग्राम बसा हुआ है। लालपुर के आध मील उत्तर हिदायत शाह का मकबरा है और मस्जिद है। यह वह जगह है जहाँ आचार्य सङ्घभद्र का सङ्घाराम था। हिदायतशाह के मकबरे से दो सौ कदम पश्चिमोत्तर में एक और मकबरा एक बाग में है। इस स्थान पर आचार्य सङ्घभद्र का स्तूप था। महात्मा विमलमित्र का स्तूप इस बाग के निकट पीर वाली तालाब के तट पर था।

**कण्व आश्रम**—मन्दावर के अतिरिक्त कण्व ऋषि का एक आश्रम चम्बल नदी पर कोटा (राजपूताना) से ४ मील पर भी था और उसमें धर्म रत्य रहते थे, इसका उल्लेख महाभारत के वनपर्व में है। एक और आश्रम इनका नर्मदा नदी के तट पर था जिसका उल्लेख पद्मपुराण में है।

श्री मद्भागवत का कहना है कि पिण्डारक तीर्थ (गोलगढ़-काठियावाड़) में भी कण्व ऋषि रहे थे।

४६८ मल्लिकार्जुन—( मद्रास प्रान्त मे कृष्णा जिले मे एक स्थान )
यहाँ शिव जी के १२ ज्योतिर्लिङ्गों में से मल्लिकार्जुन नामक लिङ्ग है।
यह श्री शैल तीर्थ है और श्री पर्वत अथवा श्रीशैलपर्वत यहाँ है। पौराणिक कथा है कि एक पूर्व जन्म में पारवती जी ने यहाँ तपस्या की थी।
प्रह्लाद के पिता हिरण्यकश्यप ने यहां तप किया था।
इसके समीप प्राचीन सिद्धपुर नामक नगर था।
बल्देव जी इस स्थान पर आए थे।
श्री शङ्कराचार्य ने यहाँ तपस्या की थी।
जगद्गुरु श्री सदानन्द शिव योगी यहाँ निवास करते थे।

प्रा० क०—( महाभारत वन पर्व, ८५ वां अध्याय ) श्री पर्वत पर जाकर नदी में स्नान करके शिव जी का पूजन करने से अश्वमेध का फल प्राप्त होता है।

( लिङ्ग पुराण, ९२ वां अध्याय ) जो मनुष्य श्री शैल पर्वत पर निवास करता है उसको दूसरे जन्म में पाशुपति योग प्राप्त होता है। काशी जी के समान यहाँ भी प्राण त्याग करने से प्राणी की मुक्ति हो जाती है।

( गरुड़ पुराण, पूर्वार्द्ध, ८१ वां अध्याय ) भारतवर्ष में श्री शैल एक उत्तम तीर्थ है।

( पद्मपुराण, उत्तर खण्ड, १९ वां अध्याय) श्री शैलका माहात्म्य सुनने से मनुष्य बाल हत्यादि पापों से छूट जाता है। यहाँ मल्लिकार्जुन शिव सर्वदा स्थित रहते हैं। वहाँ की पाताल गङ्गा में स्नान करने से मनुष्य के सम्पूर्ण पाप छूट जाते हैं। यहाँ स्वर्ग के समान सुखदाई सिद्धपुर नामक नगर है।

(सौर पुराण, ६९ वां अध्याय ) श्री पर्वत पर चारों ओर सिद्ध और मुनि देख पड़ते हैं। मल्लिकार्जुन ज्योतिलिङ्ग में महेश्वर सदा निवास करते हैं।

( शिव पुराण, ज्ञान संहिता, ३५ वां व ३६ वां अध्याय) कार्त्तिकेय और गणेश दोनों कुमार अपना विवाह पहले करने के लिए विवाद करने लगे। उनके माता पिता, पार्वती और शिव ने कहा कि जो पृथिवी की परिक्रमा करके पहले लौटेगा उसका विवाह पहले होगा। कार्तिकेय जी परिक्रमा के लिए चल दिए परन्तु गणेश जी माता पिता की परिक्रमा और पूजन कर वहीं रह गए क्यों कि वेद-शास्त्रों में लिखा है कि माता पिता की परिक्रमा से पृथिवी परिक्रमा का फल मिलता है। उनकी चतुरता देख कर शिवजी ने उनका विवाह सिद्धि और बुद्धि से कर दिया। जब तक कार्तिकेय जी पृथिवी की परिक्रमा करके लौटे तब तक सिद्धि से क्षेम और बुद्धि से लाभ नामक दो पुत्र

गणेश जी के उत्सव हो चुके थे। कार्त्तिकेय जी क्रोधित होकर क्रौंच पर्वत, ( वर्तमान मल्लिकार्जुन ) पर चले गए। शिव और पार्वती उनके विद्रोह से दुखी होकर उनके पास गए परन्तु कार्त्तिकेय जी वहाँ से १२ कोस और दूर चले गए। तब पार्वती के सहित शिव जी अपने एक अंश से ज्योतिलिङ्ग होकर उसी स्थान में स्थित हो गए और मल्लिकार्जुन नाम से जगत् में प्रसिद्ध हुए।

( ३८ वा अध्याय ) शिव जी के १२ ज्योतिर्लिङ्ग हैं जिनमें से मल्लिकार्जुन श्री शैल पर विराजते हैं।

( अग्निपुराण, ११४ वा अध्याय ) श्री पर्वत अर्थात् श्री शैल पवित्र स्थान है। पूर्व काल में पार्वती जी ने लक्ष्मी का रूप धारण करके यहाँ तपस्या की थी। तब विष्णु ने वर दिया था कि तुमको ब्रह्म ज्ञान का लाभ होगा और यह पर्वत तुम्हारे नाम से ही विख्यात होगा।

हिरण्यकश्यप श्री शैल पर तपस्या करके जगत विजयी हुआ। देवताओं ने वहा तप करके परम सिद्धि लाभ की।

(श्रीमद्भागवत, दशम् स्कन्ध,७६ वा अध्याय ) बलदेव स्कन्द का दर्शन करके श्री शैल पर पहुँचे।

[ जगद्गुरु श्री सदा नन्दशिव योगी श्री शैल क्षेत्र के वारशैव गुरु पीठ के स्वामी थे। स्कन्द पुराण के अनुसार द्वापर में इनका स्थिति काल सिद्ध होता है। ]

व० द०—मल्लिकार्जुन का मन्दिर विशाल है और चारों ओर सुन्दर गोपुर हैं। श्री पार्वती जी का मन्दिर अलग बना है। मन्दिर के निकट कृष्णा नदी का करार बहुत ऊँचा है। कृष्णा की धारा बहुत नीचे बहती है, इसी कारण लोग इसको पाताल गङ्गा कहते हैं।

क्रौंच पर्वत अर्थात् मल्लिकार्जुन से १२ कोस जिस स्थान पर कार्त्तिकेय जी चले गए थे उसका वर्तमान नाम कुमार स्वामी है। यहाँ पहाड़ी के ऊपर उनका मन्दिर बना है। यहाँ की प्राचीन कथा निम्नाङ्कित अनुसार है—

( कूर्म पुराण, उपरिभाग, ३६ वा अध्याय ) स्वामी नामक तीर्थ तीनों लोक में विख्यात है। यहाँ स्कन्द जी देवताओं से पूजित होकर निवास करते हैं।

( भविष्य पुराण, ४१ वा अध्याय ) भाद्रपद मास की षष्ठी ( ६ ) कार्तिकेय को बहुत प्रिय है। उस तिथि का दक्षिण दिशा में प्रसिद्ध स्वामी कार्तिक का दर्शन करने से ब्रह्महत्यादि पाप छूट जाते हैं।

४९९ मसार—( डाक्खाण शाणितपुर )

५०० महरालीवाला—( पाकिस्तानी पजाब के गुजरांवाला जिला में। एक स्थान )

स्वामी रामतीर्थ का यहां जन्म हुआ था।

[ स्वामी रामतीर्थ का जन्म २२ अक्टूबर सन् १८७३ ई० को दिवाली के दूसरे दिन महरालीवाला में, गोसाईं हीरानन्द के यहाँ हुआ था। कुछ काल बाद उनकी माता का देहान्त हो गया और इनकी बुआ श्रीमती तीर्थ देवी ने इनका पालन पोषण किया। १० वर्ष की अवस्था में इनका विवाह हो गया। लाहौर के मिशन कालेज से आपने एफ० ए०, बी०, ए०, और गणित मे एम० ए० किया और सर्वप्रथम रहे। सिविल सर्विस की छात्रवृत्ति स्वयम् न लेकर एक अन्य विद्यार्थी को दिला दी।

आपका नाम तीर्थराम था। १९०१ ई० में आपने सन्यास ले लिया और अपना नाम तीर्थराम से स्वामी रामतीर्थ रक्खा। अपने गाँव को भी आप महरालीवाला के बजाय मुरलीवाला कहा करते थे।

१९०२ ई० में स्वामी जी विश्वधर्मिक कान्फरेन्स जापान में उपस्थित हुए और लन्दन, अमरीका, मिश्र आदि की यात्राएँ भी कीं।

१७ अक्टूबर सन् १९०६ ई० को दीपमालिका के दिन ठीक मध्यान्ह के समय टेहरी नरेश के सिमलासू बगीचे के नीचे भृगुगङ्गा में आपने शरीर छोड़ दिया। स्वामी जी फारसी, अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन और संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे। आपने वेदान्त शास्त्र के अद्वैत तत्व ज्ञान का प्रचार किया और वर्तमान काल के परम ब्रह्मज्ञानी थे। ]

५०१ महाथान गाँव व महाथान डीह—( सयुक्त प्रान्त के बस्ती जिले म एक गाव )

राजकुमार सिद्धार्थ ( भगवान बुद्ध ) ने इस स्थान से अपने सेवक छन्दक और घोडे को घर लौटा दिया था और स्वयम् राजपाट छोड़ कर वन चले गए थे। इसी स्थान पर उन्होंने अपने सुन्दर केश काट डाले थे और अपने वस्त्र एक दरिद्र मनुष्य को देकर उसके वस्त्र लेकर धारण कर लिए थे।

प्रा० क०—भगवान बुद्ध के पिता महाराज शुद्धोदन को ऋषि असीता ने बता दिया था कि या तो राजकुमार सिद्धार्थ चक्रवर्ती सम्राट होंगे या संसार को मोक्ष करने वाले परम पूज्य महात्मा होंगे। राजकुमार के जन्म ही से उनके पिता ने ऐसा प्रबन्ध किया कि राजकुमार का मन किसी प्रकार संसार के सुख से न मुड़ने पावे। उनका विवाह होकर एक पुत्र भी हुआ। पर एक रात्रि को राजकुमार सब को छोड़ कर महल से निकल गये। ४२ मील रातों रात घोड़ा दौड़ाते चले गये। साथ में केवल एक सेवक छन्दक था। अनोमा नदी पर घोड़ा कुदाकर और उस पार जाकर राजकुमार ने आभूषण उतार कर छन्दक को दे दिये, और उसे तथा घोड़े को लौटा दिया। खड्ग से अपने केश काट डाले और आगे चलकर एक शिकारी को अपने वस्त्र देकर उस दरिद्र के वस्त्र आप पहिन लिये। जहाँ से राजकुमार ने छन्दक को लौटाया था वहाँ महाराज अशोक ने एक बड़ा स्तूप बनवा दिया था। जहाँ केश काटे थे वहाँ भी एक स्तूप था और तीसरा स्तूप उस स्थान पर था जहाँ उन्होंने वस्त्र बदले थे। ह्वानचाङ्ग ने अपनी यात्रा में इन तीनों स्तूपों का वर्णन किया है।

ब० द०—बस्ती जिले में मगहर ( जहाँ कबीर साहेब ने शरीर छोड़ा है ) प्रसिद्ध स्थान है। मगहर से २½ मील पश्चिम सिरसर ताल है जिसके पास ईंटों के पुराने खेड़े हैं। ताल के किनारे पर सिरसरराउ गाँव बसा है। गाँव से ४०० फीट पूर्व एक स्तूप के चिन्ह हैं। यहाँ राजकुमार ने अपने केश काटे थे। इस स्तूप से ३०० फीट पूर्वोत्तर एक बड़ा और गोल खेड़ा है जो १६० फीट के घेरे में है परन्तु अब ५ फीट ऊँचा रह गया है। इस स्थान से राजकुमार सिद्धार्थ ने अपने घोड़े और छन्दक नौकर को लौटाया था। इस स्तूप से ३७० फीट उत्तर, ऊपर की तरफ गोल आकार का ईंटों का एक खेड़ा है जिसे महाथान डीह कहते हैं। इस स्थान पर राजकुमार सिद्धार्थ ने शिकारी से अपने वस्त्र बदले थे। यहाँ से मिला हुआ महाथान गाँव है। बौद्ध ग्रंथ कहते हैं कि ब्रह्मा शिकारी का रूप धर कर राजकुमार से वस्त्र बदलने आए थे।

महाथान डीह से ४ मील पश्चिम-दक्षिण एक गाँव तामेश्वर है जो पूर्व काल में मैनेय नामक एक बड़ा नगर था। इससे थोड़ी दूर पर कुदवा नाला है, जिसका प्राचीन नाम अनोमा नदी था। इसे राजकुमार सिद्धार्थ ने घोड़ा

कुदारा तामेश्वर के पास पार किया था। मुइलाडीह जो प्राचीन कपिलवस्तु माना जाता है, यहां से कुदवा नाला ३८ मील दक्षिण पूर्व में है।

५०२ महावन—( देखिए मथुरा )

५०३ महानदी—( देखिए कौआकोल )

५०४ महास्थान—( देखिए भासु बिहार )

५०५ महास्थान गढ़—( देखिये जमनियां )

५०६ महियर या मैहर —( बुन्देलखण्ड में एक छोटा राज्य )

इस स्थान का प्राचीन नाम महीधर है।

यहाँ के प्रसिद्ध शारदा देवी के मन्दिर को बनाफर राय आल्हा ने बनवाया था।

मैहर से तीन मील पश्चिम एक अकेली ऊँची पहाड़ी की चोटी पर शारदा देवी का मन्दिर है। यमुना और नर्मदा नदी के बीच इतना प्रसिद्ध और कोई दूसरा मन्दिर नहीं है। बनाफर सरदार आल्हा, जिनके नाम से आल्हा मशहूर है और गाया जाता है, इन देवी के बड़े उपासक थे और बराबर पूजन को आते थे। नया मन्दिर भी उन्हीं ने बनवाया था, यह अब क्षीण हो रहा है पर मन्दिर में यात्रियों की भीड़ लगी रहती है। कहते हैं कि आल्हा का प्रताप शारदा देवी के ही वरदान का फल था।

वीर आल्हा चन्देल राजाओं के यहाँ रहते थे। चन्देलों की राजधानी महोबा थी जिसका असल नाम महोत्सव नगर था। कथा है कि बनारस के राजा इन्द्रजीत के ब्राह्मण पुरोहित हेमराज की कन्या हेमावती बड़ी सुन्दरी थी। एक दिन जब वह ताल में नहा रही थी तो चन्द्रमा ने उससे सहवास किया। गर्भ रहने से हेमावती घबड़ाई पर चन्द्रमा ने बतलाया कि यह पुत्र महाप्रतापी होगा और उससे एक हजार वंश उत्पन्न होंगे। जब वह १६ साल का हो तो अपना कलङ्क मिटाने के लिए भाण्ड यज्ञ करना। यही पुत्र चन्द्र वर्मा था, जिससे चन्देल राजपूत वंश चला। १६ साल की अवस्था में इस बालक ने महोत्सव किया जिससे नगर का नाम महोत्सव नगर पड़ा। उसने उस नगर को अपनी राजधानी बनाया और इधर-उधर के राजाओं को जीता। अन्य रानियों को हेमावती के पैरों पर गिरना पड़ा और उसका कलङ्क धुल गया।

आल्हा के समय में महोबा के राजा परमाल थे जो महाबली पृथ्वीराज के वैरी थे, इससे पृथ्वीराज के सहायक होने के बजाय आल्हा उनके शत्रु थे

और उरई ( जिला जालौन ) में दोनों का युद्ध हुआ। ये दोनों वीर यदि आपस में मिल गए होते और वीर आल्हा पृथ्वीराज के सहायक होते तो भारतवर्ष का इतिहास कुछ और होता।

कवि जगनिक का जन्म स्थान महोबा था। इन्हीं कवि ने पहले पहिल "आल्हा" की रचना की है, जो अब ठौर ठौर ग्रामों में गाया जाता है। पर इस समय के 'आल्हा' में जगनिक का शायद एक शब्द भी नहीं है, केवल ढङ्ग उनका है। यह कवि चन्द बरदाई के समकालीन थे।

५०७ महेन्द्र पर्वत – ( उड़ीसा से लेकर मदुरा तक की पहाड़ियां, जिन में मद्रास प्रान्त का पूर्वी घाट शामिल है )

महाराज रामचन्द्र जी से पराजित होकर परशुरामजी इन्हीं पहाड़ियों पर आकर रहने लगे थे। 'चैतन्य चरणामृत' के अनुसार पूर्वीघाट के दक्षिण सिरे पर मदुरा जिले में उनका निवास स्थान था, और 'रघुवंश' के अनुसार उड़ीसा में वे इन्हीं पहाड़ियों पर रहते थे। [इनका कार्य्यक्षेत्र ट्रावनकुर व मलाबार व मध्य भारत भी था और जन्म जमनिया (गाजीपूर जिला) समीप हुआ था।]

५०८ महेश्वर – ( देखिए मान्धाता )

५०९ महोबा—( देखिए मनियर वा मैहर )

५१० माँझी—( बिहार प्रान्त के सारन जिला में एक गाँव )

यहां महात्मा धरनीदास का जन्म हुआ था और यहीं उनकी समाधि है।

माँझा के पुराने नाम 'मध्येम' और 'मध्य दीप' हैं। कभी कभी इसे हाब चप भी कहते हैं।

[ ईसा की सत्रहवीं शताब्दी में एक वैष्णव श्रीवास्तव कायस्थ के यहाँ माँझा में महात्मा धरनीदास का जन्म हुआ था। कहा जाता है कि जब इनके पिता का शरीरान्त हुआ उन दिनों ये स्थानीय नवाब जिमींदार के यहाँ दीवान थे। पिता के मरने पर यह उदासीन रहने लगे और भगवच्चिन्तन में लीन रहने के अभ्यासी होगए। एक दिन बैठे .. जिमादारी के कागज पर सहसा हुक्के और लोटे का पानी उड़ेल दिया। पूछने पर बताया कि सुदूर जगन्नाथपुरी में आरती के समय भगवान जी के कपड़ों में आग लग गई थी, उसे बुझाया है। दो आदमी पुरी भेजे गए। मालूम हुआ कि बात सही थी और धरनीदास की आकृति के एक आदमी ने आग को बुझाया था।

एक दिन धरनी दास गङ्गा और घाघरा के सङ्गम पर अपने शिष्यों के साथ गए और पानी पर चादर बिछा कर बैठ गए। कुछ दूर तक लोगों ने उन्हें

उसी तरह पूर्व की ओर बहते देखा, फिर एक ज्वाला मात्र देख पड़ी और वह भी लीन होगई। लोगों ने इनकी समाधि माँझी गाव में ही बनवा दी। वहाँ इनकी गद्दी भी प्रतिष्ठित है। इनकी मुख्य मुख्य गद्दियाँ सूरा बिहार और संयुक्त प्रान्त के अनेक स्थानों में हैं। ]

महात्मा धरनादास के समय में माँझी गाँव तथा उसके आस पास का भूमण्डल 'मध्येम' अथवा 'मध्यदीप' करके प्रसिद्ध था। मध्यदीप की पूर्व की ओर हरिहर क्षेत्र और पश्चिम दिशा में दर्दर क्षेत्र नामक पुण्य क्षेत्र थे और निकटवर्ती ब्रह्मपुर के कारण कभी कभी यह ब्रह्म क्षेत्र भी कहलाता था। हरिहर क्षेत्र में अब सोनपुर का मेला, और दर्दरक्षेत्र में बालिया में, ददरी मेला होता है।

४११ मांडलपुर—( देखिए शुग )

४१२ माणिकयाला—( पाकिस्तानी पंजाब के रावलपिण्डी जिले में एक स्थान )

एक पूर्व जन्म में भगवान बुद्ध ने भूखे शेर के बच्चों की भूख बुझाने को अपना शरीर यहाँ उन्हें खिला दिया था।

बाघ के सात बच्चों को भूखा देखकर भगवान बुद्ध ने एक पूर्व जन्म में अपने शरीर में बाँस की सँपाच भोंकली जिससे उनके बहते हुए रुधिर को बाघ के बच्चे पी सकें और ताक़त आ जाने पर उनका मांस खा सकें। जहाँ सँपाच मारी गई थी वहाँ एक स्तूप बनवाया गया था। उसके १२० गज़ उत्तर में एक दूसरे बड़े स्तूप का फाटक था। फाटक उस स्थान पर था जहाँ उन्होंने अपना शरीर बाघों को खिला दिया था। ह्वानचाङ्ग की यात्रा के समय यहाँ और भी बहुत से स्तूप बने हुए थे। उन्होंने लिखा है कि यह स्थान तक्षशिला ( वर्तमान शाहढेरी ) से ३३ ३/४ मील दक्षिण पूर्व में था। शाहढेरी से मणिकयाला की यही दूरी है। कहा जाता है कि पहले इस स्थान को माणिकपुर या माणिक नगर कहते थे।

माणिक याला में बहुत से पुराने टूटे फूटे स्तूप हैं। शरीर खिलाने वाले स्तूप के चिन्ह आबादी से क़रीब डेढ़ मील पूर्वोत्तर में हैं। उसी से मिली हुई एक चबूतरा मीरा की ढेरी कहलाती है। इसमे डेढ़ फर्लांग दक्षिण स्तन बहाने की बाँस की सँपाच भोंकने वाले स्तूप के चिन्ह हैं।

माणिकयाला से २४ मील दक्षिण एक स्थान राम की ढेरी है, यहाँ भी एक स्तूप का चिन्ह है। ह्यानचाङ्ग लिखते हैं कि शरीर खिलाने वाले स्तूप से २४ मील दक्षिण खून बहाने वाला स्तूप था। इससे राम की ढेरी वाला स्तूप ह्यानचाङ्ग के अनुसार खून बहाने वाल स्तूप हो सकता है। पर यह ह्यानचाङ्ग के फासला लिखने की भूल है क्योंकि खून बहाने वाला स्थान माणिकयाला से इतनी दूर नहीं हो सकता।

५१३ मातङ्ग आश्रम ( कुल )—( देखिए गया )

५१४ माधवपुर— ( देखिए कुण्डिनपुर )

५१५ मान सरोवर झील— ( देखिए कैलास व पवित्र सरोवर )

५१६ मान्धाता—मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले में नर्मदा के दाँए किनारे पर एक टापू )

इस टापू का प्राचीन नाम वैदूर्यमणि पर्वत है।

इस पर मान्धाता ने तप किया था।

१२ ज्योतिर्लिङ्गों में से एक, ओङ्कारनाथ, इस टापू पर है।

च्यवन ऋषि पर्यटन करते हुए यहाँ आए थे।

मान्धाता के प्राचीन नाम महेश्वर, महेश और माहिष्मती भी मिलते हैं। यह हैहयों की राजधानी थी जिनमें कार्तवीर्य अर्जुन बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। इनको परशुराम ने यहाँ मारा था।

हरिवंश ( १ ३० ) के अनुसार महिष्मान ने इसे बसाया था।

पद्मपुराण ( उत्तर. अ. ७५ ) के अनुसार महिष न इसे बसाया था।

माहिष्मती जिस राज्य की राजधानी थी वह बौद्ध काल में 'अवन्ति दक्षिण पथ' कहलाता था।

मण्डन मिश्र ( विश्वरूपाचार्य ) को शङ्कराचार्य ने शास्त्रार्थ में यहाँ परास्त किया था।

माहिष्मती कलचुरियों की भी राजधानी थी ( अनर्घराघव, अङ्क ७, ११५ )

महाभारत ( अनु० ८५ ) में मान्धाता का नाम अग्निपुर भी मिलता है। इस टापू के समीप नर्मदा के दक्षिण किनारे पर कावेरी और नर्मदा के सङ्गम पर कुबेर ने तप किया था।

कहा जाता है कि ब्रह्मा ने ब्रह्मेश्वर, और मार्कण्डेय ऋषि ने मार्कण्डेश्वर शिवलिङ्ग की यहाँ स्थापना की थी।

यहाँ से दो मील पर सिद्धवर कूट जैन क्षेत्र है जहाँ से २ चक्रवर्ती (जैन) और दस काम कुमारों (जैन) ने मुक्ति पाई थी।

प्रा० क०—(मत्स्यपुराण, १८५ वाँ अध्याय) नर्मदा के तट पर ओंकार, कपिला संगम और अमरेश महादेव पापों के नाश करने वाले हैं।

(१८८ वां अध्याय) जहाँ कावेरी छोटी सी नदी है और नर्मदा का संगम है, यहाँ कुबेर ने दिव्य १०० वर्ष तप किया और शिव से वर पाकर वह यक्षों का राजा हुआ। जो मनुष्य यहाँ अग्नि में भस्म होता है अथवा अन शन व्रत धारण करता है उसको सर्वत्र जाने की गति प्राप्त हो जाती है।

(कूर्म पुराण-ब्राह्मी संहिता, उत्तरार्द्ध, ३८ वाँ अध्याय) कावेरी और नर्मदा के संगम में स्नान करने से रुद्र लोक में निवास होता है। वहाँ ब्रह्म निर्मित ब्रह्मेश्वर शिवलिंग है। उस तीर्थ में स्नान करने से ब्रह्मलोक प्राप्त होता है।

(पद्म पुराण, भूमिखण्ड, २२ वाँ अध्याय) च्यवन ऋषि पर्यटन करते हुए अमरकण्टक स्थान में नर्मदा नदी के दक्षिण तट पर पहुँचे जहाँ ओंकारेश्वर नामक महालिंग है। ऋषीश्वर ने सिद्धनाथ महादेव का पूजन और ज्वालेश्वर का दर्शन करके अमरेश्वर का दर्शन किया। फिर वह ब्रह्मेश्वर, कपिलेश्वर और मार्कण्डेश्वर का दर्शन करके ओंकार के मुख्य स्थान पर आए।

(शिवपुराण, ज्ञान संहिता, ३८ वाँ अध्याय) शिव के बारह ज्योतिर्लिङ्ग हैं जिनमें से एक अमरेश्वर में ओंकारलिंग है।

(४६ वाँ अध्याय) एक समय विन्ध्यपर्वत ओंकारचन्द्र में पार्थिव बना कर पूजन करने लगा। कुछ समय पश्चात् महेश्वर ने प्रकट होकर विन्ध्य की इच्छानुसार वरदान दिया। इसके अनन्तर जब विन्ध्य और देवताओं ने शिवजी की प्रार्थना की, कि हे महाराज! आप इसी स्थान पर स्थित होवें तब वहाँ दो लिंग उत्पन्न हुए, एक ओंकार यन्त्र में ओंकारेश्वर और दूसरा पार्थिव से अमरेश्वर। सम्पूर्ण देवगणलिंग का पूजन और स्तुति करके निज निज स्थान को चले गए। जो मनुष्य इन लिंगों का पूजन करता है उसका पुन: गर्भ वास नहीं होता।

(स्कन्द पुराण, नर्मदा खण्ड) मान्धाता टापू पर सूर्यवंशी राजा मान्धाता ने शिव का पूजन किया था।

[ लोकप्रजापति ब्रह्माजी ने वरुण के यज्ञ में एक पुत्र उत्पन्न किया जिसका नाम भृगु था। भृगु महर्षि ने पुलोमा नाम की स्त्री से विवाह किया। पुलोमा जब गर्भवती थी तभी उन्हें प्रलोमा नाम वाला राक्षस सूकर का रूप धारण कर उठा ले गया। पुलोमा रोती जाती थी। तेज़ दौड़ने के कारण ऋषि पत्नी का गर्भ च्यवित हो गया और एक महातेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ। उसे देखते ही वह राक्षस उसके तेज से भस्म हो गया। वे ही महर्षि च्यवन हुए। ]

[ सहस्रार्जुन अथवा कार्तवीर्य अर्जुन बड़े बली और पराक्रमी राजा थे जिनको कहा जाता है कि एक हजार भुजाएँ थीं। इनको सहस्र बाहु भी कहते हैं। एक बार यह महाराज आखेट खेलते हुए महर्षि जमदग्नि के आश्रम के समीप आ निकले। महर्षि ने इनका और इनकी सेना का अपनी कामधेनु की सहायता से समुचित सत्कार किया। सहस्रार्जुन जबरदस्ती कामधेनु को महर्षि से छीन ले गए। इस पर रुष्ट होकर महर्षि के पुत्र परशुरामजी ने सहस्रार्जुन की नगरी पर चढ़ाई करके उनकी सब भुजाएँ काट डालीं और बध कर दिया। परशुराम जी सारे क्षत्रिय वंश के परमशत्रु हो गए। ]

व० द०—नर्मदा के उत्तर किनारे पर इन्दौर से ४० मील दक्षिण मान्धाता टापू है। इसका क्षेत्र फल एक वर्गमील से कुछ कम है। ओङ्कारनाथ का मन्दिर टापू के दक्षिण बगल पर नर्मदा के दाहिने ओङ्कारपुरी में है। ओङ्कार जी के मन्दिर के समीप अविमुक्तेश्वर ज्वालेश्वर आदि के मन्दिर हैं। मन्दिरों के नीचे नर्मदा का कोट तीर्थ नामक पक्का घाट है जहाँ स्नान और तीर्थ भेंट होती है। टापू के पूर्व किनारे के पास वहाँ के सब मन्दिरों में बड़ा और पुराना सिद्धेश्वर महादेव का मन्दिर है। इसके आगे नर्मदा के तीर परखर्दी पहाड़ी है, जिससे कूदकर पूर्व समय में अपनी मुक्ति के लिए अनेक मनुष्य आत्महत्या करते थे। सन् १८२४ ई० से बृटिश गवर्नमेण्ट ने यह रीति बन्द कर दी।

टापू के भीतर ही ओंकारपुरी की छोटी और बड़ी दो परिक्रमा हैं। पूर्व में मुसलमानों ने परिक्रमा के पास के प्रायः सम्पूर्ण पुराने मन्दिरों के हिस्से तोड़ दिये और बहुत सी देव मूर्तियों को अंग भङ्ग कर दिया।

ओंकारपुरी के सम्मुख नर्मदा के बाँए अर्थात् दक्षिण किनारे पर एक टीले के ऊपर ब्रह्मपुरी और इसके पश्चिम दूसरे टीले पर विष्णुपुरी तीर्थ हैं। दोनों के मध्य में कपिल धारा नामक एक छोटी धारा गोमुखी द्वारा नर्मदा

में गिरती है। उस स्थान का नाम कपिला सङ्गम है। वर्तमान सदी मे नर्मदा के दक्षिण किनारे पर बहुत मन्दिर बने हैं।

ब्रह्मपुरी मे अमरेश्वर शिव का विशाल मन्दिर है। दूसरे मन्दिर में ब्रह्मे श्वर शिवलिङ्ग है। एक छोटे मन्दिर में कपिल मुनि के चरण चिन्ह और एक स्थान में कपिलेश्वर महादेव है।

विष्णुपुरी से थोड़ा पश्चिम नर्मदा के किनारे जल के भीतर मार्कण्डेय शिला नामक चट्टान है जिस पर यमयातना से छुटकारा पाने के लिए यात्रा लोग लोटते हैं। उसके समीप पहाड़ी के बगल पर मार्कण्डेय ऋषि का छोटा सा मन्दिर है।

एक जगह नर्मदा से कावेरी निकली है। यहाँ एक इमारत में विष्णु के २४ अवतार पत्थर मे बने हुए हैं। कावेरी नदी के उतरते ही सिद्धवर कूट क्षेत्र मिलता है जहाँ जैन मन्दिर और धर्मशाला हैं।

दन्त कथा है कि सहसराम (जिला शाहाबाद, बिहार) सहस्रबाहु की राज धानी थी और उसका नाम सहस्रार्जुनपुर था। इस प्रकार इस कथा के अनुसार परशुराम ने सहस्रबाहु (कार्तवीर्य अर्जुन) को सहसराम में मारा था। कार्त वीर्य अर्जुन में हजार भुजाओं का बल होने के कारण उसे सहस्रबाहु कहते थे। पर पुराणानुसार परशुराम और सहस्रबाहु का युद्ध माहिष्मती में ही हुआ था।

५१७ मायापुरी—(देखिये हरद्वार)

५१८ मार्कण्ड—(मध्य प्रदेश के चाँदा जिले में एक तीर्थ स्थान)

यहाँ मार्कण्डेय ऋषि का आश्रम था। इस स्थान पर शिवजी ने मार्क ण्डेय ऋषि को यम के भय से छुड़ाया था।

[ऋषि मार्कण्डेय महर्षि मृकण्डु के पुत्र थे। यह भृगुकुल मे उत्पन्न हुए थे। श्री हर की आराधना करके मार्कण्डेय जी ने दुर्जेय काल को भी जीत लिया था बृहन्नारदीय पुराण के अनुसार महर्षि मृकण्डु के तप से प्रसन्न होकर भगवान नारायण ही ने पुत्र रूप में उनके यहाँ जन्म लिया था।]

चाँदा से ४० मील पूर्व वेण गङ्गा के किनारे एक मन्दिरों का समूह है, जिसमें मार्कण्डेय ऋषि का मन्दिर प्रधान है। इस मन्दिर के आस पास २० से ऊपर अन्य मन्दिर १६६ फीट लम्बे और ११८ फीट चौड़े घेरे के अन्दर बने हैं। घेरे की दीवार बहुत पुरानी है। मार्कण्डेय ऋषि के बाद सब से बड़ा मन्दिर मृकण्डेय ऋषि का है जो मारकण्डेय ऋषि के भाई कहे

जाते हैं। एक मन्दिर यहाँ धर्मराज ( यमराज ) का है, जिसमें केवल शिव-लिङ्ग स्थापित है और बिलकुल इसके सामने मृत्युञ्जय का मन्दिर है। मन्दिरों के समूह के पास छोटी सी आबादी है।

५१९ मार्कण्डेय तीर्थ – ( देखिए सालग्राम )

५२० मार्तण्ड – ( देखिए कश्मीर )

५२१ मालवा – ( आधुनिक ग्वालियर रियासत में दक्षिण का भाग व भोपाल राज्य व इन्दौर राज्य )

इसका प्राचीन नाम मालव मिलता है, जिसके दो भाग थे। पूर्व का भाग 'आकर' या 'आकरावन्ती' कहाता था जिसकी राजधानी विदिशा ( भिलसा, भोपाल राज्य में ) थी और पश्चिम का भाग 'अवन्ती' कहलाता था जिसकी राजधानी अवन्तिका पुरी या उज्जयिनी ( उज्जैन ) थी।

महाराज रामचन्द्र ने अपना राज्य बाँटने में विदिशा को शत्रुघ्न के पुत्र शत्रुघाती को दिया था। रामायण और देवी पुराण में इसे वैदिश देश कहा गया है।

मध्यकाल में मालवा की राजधानी धारापुर, धारा नगर या धारा नगरी ( वर्तमान धार ) थी, जिसके शासक राजा भोज बहुत प्रसिद्ध हैं।

मालवा का यह नाम 'मालव' नामक गण के यहाँ बस जाने से हुआ था। उन लोगों ने अपना सम्वत् भी चलाया जो पहिले समय में कृत और मालव सम्वत् कहाता था और बाद में विक्रम सम्वत् कहलाता है।

दक्षिण मालवा का नाम अनूप देश था, जिसकी राजधानी माहिष्मती ( मान्धाता ) थी।

५२२ माल्यवान पर्वत – ( देखिए आनागन्दी )

५२३ माहली क्षेत्र – ( देखिए जाम्र गांव )

५२४ माही नदी का मुहाना – ( [illegible] की माही नदी )

माही नदी के मुहाने पर एक गुफा में शिव जी ने अंधक दैत्य को मारा था। ( मार्कण्डेय व शिव पुराण )

५२५ मिथिला पुरी – ( देखिये सीतामढ़ी )

५२६ मिश्रिक – ( देखिये नीमसार )

५२७ मिश्रधर कूट – ( देखिये सम्मेद शिखर )

५२८ मीरा की डेरी – ( देखिये [illegible] )

५२९ मुक्तागिरि—( मध्य प्रदेश के एलिच पुर ज़िले मे एक स्थान )
जैन मत का यह प्रसिद्ध क्षेत्र और निर्वाण भूमि है। अनेक जैन मुनि यहा कर्म बन्धन से मुक्त हुए हैं।

यह स्थान एलिचपुर से १२ मील ईशानकोण की ओर है और मेढगिरि भी कहलाता है। जैनियों के यहाँ अनेक मन्दिर हैं और इसकी बड़ी महिमा है। कहा जाता है कि इस पर्वत पर से साढे तीन कोटि मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया है। इस क्षेत्र पर निरन्तर दैव चमत्कार होते रहे जाते हैं जिनमें से सर्व साधारण की दृष्टि में आने वाला केशर वृष्टि का चमत्कार है। इस पर्वत के ऊपरी भाग पर, मन्दिरों पर और वृक्षों के पत्तो पर केशरी रङ्ग के बिन्दु दिखाई देते हैं। कभी कभी रात्रि म, लोग कहते हैं, पर्वत पर मनोहर बाजों का शब्द सुनाई देता है और कभी कभी एकाएक घटानाद भी होता है। धनधवे ( कुडा ) के निकट पर्वत के कूलों पर भयङ्कर मधुमक्खियों के बडे बडे छत्ते हैं। रजस्वला स्त्री, सूतक और पातक युक्त मनुष्य की, पर्वत पर चढने पर कहा जाता है कि ये बडी दुर्दशा करती हैं। अन्य किसी से नहीं बोलतीं। लोगों का विश्वास है कि यह लीला इस पर्वत के रक्षा करने वाले किसी यक्ष की है।

५३० मुक्तिनाथ—( नैपालराज्य में काठमाण्डू के उत्तर गण्डकी नदी पर स्थित एक स्थान )

यहाँ मुक्तिनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है। इस स्थान के समीप गज और ग्राह का युद्ध हुआ था जिसमें विष्णु ने आकर ग्राह से गज की रक्षा की थी।

प्रा० क०—( दूसरा शिव पुराण ८ वा खण्ड, १५ वा अध्याय ) नैपाल म मुक्तिनाथ शिव लिङ्ग है।

( देवी भागवत, नवाँ स्कन्ध १७ व अध्याय से २४ वें अध्याय तक और ब्रह्मवैवर्तपुराण प्रकृति खड के १५ अध्याय से २५ वे अध्याय तक, तथा शिव पुराण ५ वें खड का ३८ वा और ३६ वा अध्याय ) लक्ष्मी जी जब शाप के कारण धमध्वज की पुत्री हुई तब उनका नाम तुलसी पड़ा। तुलसी का विवाह शङ्खचूड से हुआ। विष्णु ने ब्राह्मण का भेष धारण कर शङ्खचूड का कवच मांग लिया और छल से तुलसी से रमण किया तब शङ्खचूड़ शिव के हाथ से मारा गया। तुलसी ने विष्णु को शाप दिया कि ससार में पाषाण

रूप होंगे। विष्णु ने कहा कि तुलसी की देह भारतखण्ड में गण्डकी नदी होगी। उसका शरीर गण्डकी नदी और उसके केशों का समूह तुलसी वृक्ष हुए। विष्णु शालिग्राम शिला हुए।

( वाराहपुराण, १३८ वां अध्याय ) जो मनुष्य सम्पूर्ण कार्तिक मास में गण्डकी नदी में स्नान करेंगे वे मुक्ति फल पावेंगे।

एक समय गण्डकी नदी के एक ग्राह ने एक हाथी का पैर पकड़ लिया और ग्राह गज को खींच कर पानी में ले जाने लगा। उस समय वरुण देवता के निवेदन से विष्णु ने वहाँ आकर सुदर्शनचक्र से ग्राह का मुख फाड़ कर गज को जल से बाहर निकाला। विष्णु ने कहा कि भक्त की रक्षा के लिए सुदर्शनचक्र ने गण्डकी नदी में जहाँ-जहाँ भ्रमण किया है वहाँ सर्वत्र पाषाणों में सुदर्शनचक्र का चिन्ह हो गया है, इसलिए पाषाणों का नाम गण्डकी चक्र होगा और इस क्षेत्र का नाम शालिग्राम क्षेत्र है।

( पद्मपुराण, पाताल खण्ड, १६ वां अध्याय ) गण्डकी नदी के एक छोर में शालिग्राम का महास्थल है। उसमें जो पाषाण उत्पन्न होते हैं वे शालिग्राम कहलाते हैं।

( उत्तर खण्ड ७५ वां अध्याय ) गण्डकी नदी में शालिग्राम शिला बहुत होती हैं उस क्षेत्र को भी विष्णु भगवान ने रचा था।

( कूर्मपुराण, उपरिभाग, ३४ वां अध्याय ) शालिग्राम तीर्थ विष्णु की प्रीति को बढ़ाने वाला है उस स्थान पर मृत्यु होने से साक्षात् विष्णु का दर्शन होता है।

व० इ०—मुक्तिनाथ के आस पास गण्डकी नदी में विविध भांति के असंख्य शालिग्राम निकलते हैं और यात्री गण उनको ले आते हैं। नदी के पास पास छोटे बड़े १५-२० देव मन्दिर हैं। सात गर्म सोतों का पानी निकल कर नदी में गिरता है, जिसमें शालिग्राम निकलने के कारण इसे लोग नारायणी भी कहते हैं।

४३१ मुंगेर—( बिहार प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान )

यह ऋषि मुद्गल का आश्रम था और मुद्गलपुरी व मुद्गल आश्रम कहलाता था।

महाराज रामचन्द्रजी यहाँ आए थे।

भगवान बुद्ध ने मुद्गलपुत्रनामक एक धनी सौदागर को यहाँ अपना शिष्य बनाया था।

रावण को मारने की हत्या से रामचन्द्र जी को नींद नहीं आती थी। गुरु वशिष्ठ ने उन्हें मुद्गल ऋषि का दर्शन करने को कहा। महाराज रामचन्द्रजी उनके दर्शनों को मुद्गल गिरि पर आये और वहाँ गङ्गा में स्नान करके उस हत्या से मुक्त हुए। ( रामचन्द्रजी ने रावण के मारने के प्रायश्चित्त के लिये गोमती नदी में हत्याहरण और धोपाप स्थानों पर भी स्नान किया बताया जाता है। )

चीनी यात्री ह्वानचांग ने मुङ्गेर का 'हिरण्य पर्वत' लिखा है।

मुङ्गेर की पहाड़ी पर मुद्गल ऋषि का आश्रम था। इसी से वह मुद्गल गिरि कहलाती थी जो बिगड़कर मुङ्गेर हो गई। इसके नीचे गङ्गाजी बहती हैं और उस घाट का नाम 'कष्ट हरण घाट' है क्योंकि वहाँ स्नान करने से रामचन्द्र जी का कष्ट छूट गया था।

५३२ मुचकुन्द—( धौलपुर राज्य में धौलपुर से ३ मील पश्चिम एक झील )

जब कालयवन व गोनर्द प्रथम ने जरासंध का पक्ष लेकर श्रीकृष्ण का पीछा किया था तब इसी स्थान पर मान्धाता के तपस्वी पुत्र मुचकुन्द द्वारा लजाकर वह भस्म कर दिया गया था।

[ सूर्य वंशी इक्ष्वाकु कुल के महाराज मान्धाता के पुत्र मुचकुन्द थे। देवता भी इनकी सहायता के लिये लालायित रहा करते थे। देवासुर संग्राम में देवताओं ने इन्हें अपना सेनापति बनाया और इन्होंने बहुत पराक्रम दिखाया। बाद को स्वामि कार्त्तिकेय ( शिवजी के पुत्र ) सेनापति बनने को मिल गये और मुचकुन्द जिन्हें एक काल से सोने को नहीं मिला था, एक गुफा में जाकर सो गए। इन्होंने देवताओं से वरदान ले लिया था कि जो उन्हें जगाये, भस्म हो जाय। सोते हुए कई युग बीत गये। द्वापर आगया, मथुरा से कालयवन श्रीकृष्ण का पीछा किये चला आ रहा था, उससे बचने को श्रीकृष्णचन्द्र मुचकुन्द की गुफा में घुस गये। कालयवन शोर करता हुआ घुसा और मुचकुन्द के जागने पर दृष्टि पड़ते ही भस्म हो गया। ]

५३३ मुण्डकटा गणेश—( देखिए त्रियुगीनारायण )

५३४ मुरार—(बिहार प्रान्त के शाहाबाद जिले में एक स्थान )

यहाँ राधास्वामियों के चौथे गुरु 'सरकार साहब' बाबू कामताप्रसाद सिन्हा ने १२ दिसम्बर सन् १८७१ ई० को जन्म लिया था।

१२ दिसम्बर सन् १६०७ ई० को आपने गुरुपद प्राप्त किया और ७ दिसम्बर १६१३ ई० को मुरार ही में शरीर छोड़ा था।

५३५ मुल्तान—( पाकिस्तानी पंजाब में एक ज़िले का सदर स्थान )

मुल्तान हिरण्यकश्यप और प्रहलाद की राजधानी थी।

नृसिंहावतार इसी स्थान पर हुआ था।

इसका प्राचीन नाम कश्यपपुर था। पीछे इसे मूलस्थान और मौलिस्तान कहते थे।

रामायण का यह मल्ल देश है जिसे महाराज रामचन्द्र ने लक्ष्मण जी के पुत्र चन्द्रकेतु को दिया था।

[ दैत्यराज हिरण्यकश्यप के चार पुत्र थे। उनमें से प्रहलाद अवस्था में सबसे छोटे थे किन्तु भगवद्भक्ति तथा अन्य गुणों में सबसे बड़े थे। उन्हीं की रक्षा के लिए भगवान ने नृसिंह रूप धारण कर अवतार लिया। ]

ऐसा प्रसिद्ध है कि पूर्व काल में मुल्तान शहर को महर्षि कश्यप ने बसाया था और कश्यपपुर करके वह प्रसिद्ध था।

उसके पश्चात् कश्यप के पुत्र हिरण्यकश्यप और पौत्र प्रहलाद की वह राजधानी हुआ। सम्वत् १८७४ का लिखा 'तुलसी शब्दार्थ प्रकाश' भाषा का पद्य ग्रन्थ है, उसमें लिखा है कि नृसिंह भगवान का अवतार मुल्तान में हुआ था।

मुल्तान में क़िले की प्रहलादपुरी में जिसका भाग सन् १८४८-४६ ई० के मुल्तान के आक्रमण के समय उड़ा दिया गया था, नृसिंह जी के पुराने मंदिर की निशानियाँ हैं। क़िले के पश्चिमी फाटक के निकट सूर्य का पुराना बड़ा मन्दिर है जिसको तोड़ कर औरङ्गजेब ने जामा मस्जिद बनवाई थी। सिक्खों ने इस मसजिद को अपना मैगज़ीन ( Magazine) बनाया।

मुल्तान के एक बड़े मन्दिर में हिरण्यकश्यप का उदर विदारते हुए नृसिंह जी स्थित हैं। यहाँ नृसिंह चौदस अर्थात् बैशाख सुदी १४ को दर्शन का बृहत् मेला होता है।

मुल्तान से ४० मील पर सुलेमान पर्वत श्रेणी में एक पहाड़ प्रहलाद पर्वत है जहाँ से प्रहलाद को उनके पिता की आज्ञा से पहाड़ पर से गिराया गया था। उसी के समीप एक ताल है जिसमें उन्हें डुबोकर मारने का प्रयत्न किया गया था।

जयपुर राज्य में एक स्थान हिंडौन है जिसे हिरण्यपुरी कहा जाता है। उसे भी कुछ लोग नृसिंह अवतार का स्थान समझते हैं।

ग़ज़नी के प्रसिद्ध सूफ़ी अद्वैतवादी शम्सतबरेज मुल्तान में रहते थे।

५३६ मूलद्वारिका—( काठियावाड़ प्रांत में एक गाँव )

प्रसिद्ध है कि श्रीकृष्ण भगवान मथुरा से प्रथम इसी जगह आये थे।

यहाँ बहुत से पुराने मन्दिर हैं और पोरबन्दर अथवा सुदामापुरी से यह स्थान १२ मील पश्चिमोत्तर में है।

५३७ मेखला—( देखिए नगरा )

५३८ मेड़गिरि—( देखिए मुक्तागिरि )

५३९ मेरठ—( संयुक्त प्रांत में एक बड़ा शहर और कमिश्नरी का सदर स्थान )

इसका प्राचीन नाम मयराष्ट्र था और यह मयदानव की राजधानी थी।

रावण की स्त्री मन्दोदरी मयदानव की पुत्री थी। मन्दोदरी ने यहाँ बिल्वेश्वर महादेव की पूजा की थी।

मय ने मय-मत व मय शिल्पशास्त्र की रचना की थी।

मेरठ एक मनोहर नगर है। नौचन्दी का प्रसिद्ध मेला यहीं होता है। भारत का ईसवी १८५७ का स्वतन्त्रता युद्ध यहीं से आरम्भ हुआ था। अंग्रेजों ने इस युद्ध का नाम 'सिपाही म्यूटिनी' (Sepoy Mutiny) रक्खा था।

५४० मैलकोटा—( मैसूर राज्य के अष्टिकुप्पा तालुके में एक गाँव )

श्रीरामानुज स्वामी ने यहाँ १४ वर्ष निवास किया था।

इस गाँव में विशेष कर वैष्णव लोग रहते हैं, और रामानुजीय सम्प्रदाय का एक प्रसिद्ध मठ और कृष्ण का मन्दिर तथा ऊँची चट्टान के ऊपर नृसिंह जी का मन्दिर है। गाँव के निकट एक प्रकार की सफ़ेद मिट्टी होती है, जिस को दूर-दूर के आचारी लोग ललाट पर तिलक करने के लिए ले जाते हैं।

५४१ मैसूर—(दक्षिण में एक बड़ा राज्य तथा उसी राज्य की राजधानी)

यह प्राचीन काल का माहिष्क है।

(महाभारत, अश्वमेध पर्व, ८३ वां अध्याय) अर्जुन देश-देश के राजाओं को जीतते हुए दक्षिण की ओर गए। यहाँ उन्होंने द्रविड़ ( दक्षिण मद्रास प्रान्त ) आन्ध्र (द्रविड़ के उत्तर) माहिष्क (मैसूर) कालगिरीय (नीलगिरि)

वाले वीरों को संग्राम में परास्त करके सुराष्ट्र (काठियावाड़) की ओर गमन किया।

(आदि ब्रह्म पुराण, २६ वां अध्याय) भारतवर्ष के दक्षिण भाग में माहिषक, मौलेय (मलयगिरि) इत्यादि देश हैं।

मैसूर का राज्य भारतवर्ष के सबसे बड़े राज्यों में से एक है। यहाँ का प्रबन्ध भी अन्य रियासतों के प्रबन्ध से अच्छा रहा। नगर में बहुत बड़ी-बड़ी उत्तम इमारतें हैं।

मैसूर के क़िले से २ मील दक्षिण-पश्चिम समुद्र से लगभग ३॥ हजार फीट ऊँची चामुण्डा पहाड़ी पर चामुण्डा देवी का मन्दिर है जिनको महिष-मर्दिनी भी कहते हैं।

मैसूर नगर के स्थान पर सन् १५२४ ई० में केवल एक गाँव था। उस सन् में वहाँ एक क़िला बनवाया गया जिसका नाम महिषासुर पड़ा। बनवाने वाले राजा के वंश की इष्टदेवी चामुण्डा ने महिषासुर को मारा था। इसी से राजा ने क़िले का नाम महिषासुर रक्खा था। इसी से शहर का भी नाम पड़ा परन्तु पीछे महिषासुर से बिगड़ कर मैसूर हो गया।

५४२ मोंग—(पाकिस्तानी पंजाब के गुजराँ वाला जिले में एक स्थान) महाराज पुरू और सिकन्दर के बीच यहाँ संग्राम हुआ था।

विदेशियों के विरुद्ध भारतवर्ष ने पहिली पराजय इस दुःखमयी भूमि पर विधाता के हाथ से पाई थी। परन्तु राजा पुरु के पराक्रम और वीरता ने उसे भी पुण्य भूमि बना दिया।

भारतवर्ष की फूट ही उसे रसातल में पहुँचाने का कारण बनी। तक्षशिला के देशद्रोही राजा की सहायता से सिकन्दर ने राजा पुरु पर विजय पाई थी पर सिकन्दर भारतीय पुरु के चरित्र और वीरता से विस्मित हो गया था।

मोंग का कस्बा जलालपुर से ६ मील पूर्व है।

५४३ मोहन कूट—(देखिए सम्मेद शिखर)

५४४ मोहरपुर—(संयुक्त प्रान्त के मिर्ज़ापुर जिले में एक स्थान) अहल्या का सतीत्व नष्ट करने पर गौतम ऋषि के श्राप से मुक्त होने को इन्द्र ने यहाँ तप किया था।

इन्द्र के तप का स्थान मोहरपुर से ३ मील उत्तर में है और विन्ध्याचल कस्बे से मोहरपुर १४ मील उत्तर है।

५४५ मौरवी—( काठियावाड़ देश में एक राज्य )

आर्य्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म मौरवी राज्य के अन्तर्गत टंकारा नामक स्थान में हुआ।

[ सम्वत् १८८१ वि० में स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म टंकारा में हुआ था। इनका बचपन का नाम मूलशंकर था। इनकी उपरत वृत्ति देख कर माता पिता ने विवाह कर देना चाहा पर ऐसा प्रस्ताव सुनकर यह घर से निकल पड़े और नैष्ठिक ब्रह्मचारी बन गए तथा 'शुद्ध चैतन्य' नाम धारण किया। वहाँ भी पिता पहुँच गए परन्तु अवसर पाकर यह फिर निकल गए और सन्यास की दीक्षा लेकर अपना नाम 'स्वामी दयानन्द' रक्खा।

स्वामी दयानन्द सच्चे गुरु की खोज में घूमते फिरे पता चला कि मथुरा में स्वामी विरजानन्द जी एक प्रज्ञाचक्षु सन्यासी हैं जो वेदों के अद्वितीय ज्ञाता हैं। यह वहाँ पहुँचे। आज्ञा मिली कि जो पुस्तकें तुम्हारे पास हैं उन्हें यमुना में डुबो दो। इन्होंने वैसा ही किया। ढाई वर्ष स्वामी विरजानन्द ने इन्हें वेदों का ज्ञान कराया। तत्पश्चात् वेदों के प्रचार की प्रतिज्ञा करके वहाँ से यह कार्य क्षेत्र में ३६ वर्ष की अवस्था में उतरे। बम्बई में स्वामी जी ने आर्य-समाज की स्थापना की। इनके ऊपर भ्रमण में काशी और अमृतसर में पत्थर फेंके गए किन्तु वे यही कहते रहे कि जो आज पत्थर फेंकते हैं वे कल मुझ पर पुष्पों की वर्षा करेंगे।]

५४६ मौरावाँ—( देखिए रतनपुर )

## य

५४७ यकलिङ्ग—( राजपूताने में उदयपुर से ६ मील उत्तर एक स्थान )

हारित ऋषि जिन्होंने एक संहिता की रचना की है, उनका यह आश्रम था।

उदयपुर राज्य में एक और भी स्थान यकलिङ्ग जी है जहाँ महाराणाओं के इष्ट देव श्री यकलिङ्ग जी का मन्दिर है। यही देवता मेवाड़ के अधिपति हैं, महाराणा केवल उनके दीवान हैं।

( ५४८ यमुनोत्री—( हिमालय में बन्दर पुच्छ पर्वत में एक स्थान )

कहते हैं कि हनुमान जी ने लङ्का में आग लगाकर अपनी पूँछ की आग यहाँ की झील में गोता लगा कर बुझाई थी, जिससे इसका नाम बन्दरपुच्छ पड़ा। यहीं से यमुना नदी निकली है। )

५४९ यलोरा—( देखिए घुसमेश्वर )

५५० यादवस्थल—(देखिए सोमनाथ पट्टन)

## र

५५१ रंगनगर—( देखिए श्री रङ्गम )

५५२ रंगपुर—( देखिए गोहाटी )

५५३ रङ्गून—( ब्रह्मदेश की राजधानी )

रङ्गून का प्राचीन नाम पुष्करावती नगर है। ब्रह्मदेश (बर्मा) को स्वर्ण भूमि कहते थे। रङ्गून में एक पैगोड़ा में भगवान बुद्ध के बाल रखे हैं।

अपने बाल भगवान बुद्ध ने रङ्गून निवासी दो भाइयों को दिए थे जिन्होंने उन्हें रङ्गून लाकर उन पर यह सुविख्यात पैगोड़ा निर्माण किया। बर्मा का राजवंश अपने को महाभारत के महाराज मयूर ध्वज की सन्तान बताता है। मयूर ही उनकी पताका का चिन्ह है।

५५४ रतनपुर—(मध्य प्रान्त में बिलासपुर जिले का एक कस्बा )

राजा मयूरध्वज ने अपना आधा शरीर यहाँ आरे से चिरवाकर ब्राह्मण को दान देना चाहा था। इसका प्राचीन नाम 'रत्ननगर' है।

(जैमिनि पुराण, ४१-४६ वा अध्याय) युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय अर्जुन और कृष्ण की रक्षा में भ्रमण करता हुआ, उनका यज्ञ अश्व मणिपुर ( वर्तमान सिरपुर ) के समीप पहुँचा।

राजा मयूरध्वज का पुत्र ताम्रध्वज, अर्जुन और कृष्ण को मूर्छित कर अश्व को पकड़ अपने पिता के पास रत्न नगर ले आया। श्री कृष्ण ने ब्राह्मण का रूप धरकर रत्न नगर में प्रवेश किया और राजा से उसके आधे शरीर की भिक्षा मांगी। राजा ने अपनी रानी और पुत्र को आज्ञा दी कि उसके शरीर को आरे से चीर दें। जब शरीर चीरा जाने लगा तब श्री कृष्ण ने प्रकट होकर उसकी रक्षा की।

[ द्वापर के अन्त में रतनपुर के अधिपति महाराज मयूरध्वज एक बहुत बड़े धर्मात्मा तथा भगवद्भक्त सन्त हो गए हैं। एक बार इनके अश्वमेध का घोड़ा छूटा हुआ था और उसके साथ इनके वीर पुत्र ताम्रध्वज सेना सहित घूम रहे थे। उधर उन्हीं दिनों धर्मराज युधिष्ठिर का भी अश्वमेध यज्ञ चल रहा था और उनके घोड़े के रक्षक रूप में अर्जुन और श्रीकृष्ण साथ थे। मणिपुर में दोनों की मुठभेड़ हो गई। ताम्रध्वज ने विजय प्राप्त की

और श्रीकृष्ण तथा अर्जुन को मूर्छित करके वह दोनों घोड़ों को अपने पिता के पास रत्नपुर ले गया। ]

१८ वीं सदी के महाराष्ट्रों के आक्रमण के समय तक जब हैहय राजवंश का अन्त हुआ, रत्नपुर का कोई मनुष्य आरा को अपने राज्य में नहीं जानता था। अब यह स्थान एक कस्बा के रूप में वर्तमान है।

अवध के उन्नाव जिला में उन्नाव से ६ मील पूर्व मौरावां कस्बा है। इसको भी महाराज मयूरध्वज की राजधानी कहा जाता है।

बङ्गाल में तमलुक को भी महाराज मयूरध्वज की राजधानी बताया जाता है। (देखिए तमलुक)

५५५ रत्नपुरी—(देखिए नौराही)

५५६ रत्नापुर—(देखिए लङ्का)

५५७ राँगामाटी—(बङ्गाल प्रान्त के मुर्शिदाबाद जिले में एक कस्बा)

यह स्थान 'कर्णसुवर्ण' है जो प्राचीन काल में बङ्गाल की राजधानी था। यहाँ के शासक आदिशूर के कहने से कन्नौज के महाराज वीरसिंह ने उनका यज्ञ कराने को कन्नौज से पाँच ब्राह्मण बङ्गाल भेजे थे जिनकी सन्तान आज बङ्गाल के कुलीन ब्राह्मण हैं।

कर्ण स्वर्ण प्रसिद्ध सम्राट शशाङ्क की राजधानी था जिन्होंने राज्यवर्धन (कन्नौज के राजा और प्रसिद्ध हर्षवर्धन के बड़े भाई) को मारा था और बौद्धों को बहुत सताया था। इन्होंने ही बोधि गया का पवित्र बोधि वृक्ष कटाया था। शशाङ्क, गुप्त वंश के अन्तिम सम्राट थे।

राँगामाटी की भूमि लाल है और दन्त कथा है कि राँगामाटी के एक दरिद्र ब्राह्मण ने विभीषण को निमन्त्रण दिया था और उन्होंने प्रसन्न होकर वहाँ पर स्वर्ण बरसाया था। इससे यह अर्थ प्रकट होता है कि लङ्का के व्यापार से इस देश को बड़ा लाभ था।

पाँच ब्राह्मण जो कन्नौज से बङ्गाल आए थे उनके नाम भट्टनारायण (वेणीसंहार के लेखक), दक्ष, श्री हर्ष (नैषधि चरित्र के रचयिता), छान्दड़ और वेदगर्भ थे।

राँगामाटी भागीरथी के दाहिने किनारे पर बसा है और बरहमपुर से ६ मील दक्षिण है।

५५८ राइ भोइ की तलवण्डी—(देखिए नानकाना साहब)

५५९ राजगढ़ गुलरिया—(देखिए सहेट महेट)

५६० राजगिरि या राजगृह—(बिहार प्रान्त में एक जिले का सदर स्थान)

इसके प्राचीन नाम गिरिव्रजपुर, गिरिव्रज, कुशाग्रपुर तथा कुशागारपुर भी मिलते हैं। यह स्थान महाभारत के मगधपति जरासन्ध की राजधानी था।

भगवान श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीम यहाँ पधारे थे और भीम ने जरासन्ध का वध किया था।

यहाँ गौतम ऋषि का आश्रम था।

श्री मुनि सुव्रतनाथ (बीसवें तीर्थङ्कर) के यहाँ गर्भ, जन्म दीक्षा व कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुए थे।

राजगृह से मील भर पर विपुलाचल पर्वत है जहाँ श्री महावीर स्वामी का समवसरण आया था।

बोध प्राप्त करके भगवान बुद्ध ने दूसरा व तीसरा चौमासा राजगृह में बिताया था। उसके पीछे कई चौमास और बिंबिसार के दिए हुए वेणुवन नामक उपवन में यहाँ बिताए थे।

देवदत्त ने यहीं भगवान बुद्ध से वैमनस्य करके दूसरा मत खड़ा किया था जो उसके मरने पर टूट गया। राजगृह से २½ मील दक्षिणपूर्व गृद्धकूट पर्वत पर से पत्थर ढकेल कर देवदत्त बुद्ध भगवान को मार डालने का यहाँ प्रयत्न किया था। बुद्ध देव पर्वत के नीचे उस समय टहल रहे थे।

भगवान बुद्ध के चिता की विभूति आठ भाग करके राजाओं में बाँट दी गई थी पर पीछे मगधपति अजातशत्रु ने सात भाग एकत्रित करके उनको राजगृह के एक स्तूप में रक्खा था।

राजगृह में ही महात्मा महाकाश्यप की अध्यक्षता में पहली बौद्ध सभा हुई थी। यह सभा बुद्ध की मृत्यु के थोड़े समय बाद अजातशत्रु के द्वारा बनवाये हुये ईसा से ५४४ साल पहले एक भवन में सप्तपर्णी (सत्त पानी) गुफा के सामने हुई थी, जिसमें ५०० परम प्रवीण बौद्ध बैठे थे।

सोन भण्डार नामक गुफा में यहाँ भगवान बुद्ध शयन किया करते थे।

मण्डन मिश्र जो पीछे विश्वरूप आचार्य कहलाये और जिनको शङ्कराचार्य्य ने माहिष्मती (मान्धाता) में शास्त्रार्थ में परास्त किया था, उनका जन्म राजगृह में हुआ था।

प्रा० क०—( महाभारत सभापर्व, २० वां अध्याय )

राजा युधिष्ठिर के सहमत होने पर श्रीकृष्णचन्द्र, भीम और अर्जुन के सहित, स्नातक ब्राह्मणों के वस्त्र पहिन कर इन्द्रप्रस्थ से मगधनाथ के धाम की ओर चले और गङ्गा व सोन के पार उतर कर मगधराज के नगर के समीप पहुँचे। अनन्तर उन्होंने गोरथ नामक पर्वत से उतर कर मगधनाथ की पुरी देखी।

( २१ वां अध्याय ) श्रीकृष्ण बोले कि हे अर्जुन! देखो मगधराज की राजधानी कैसी सुन्दर शोभा पा रही है। ऊँची ऊँची चोटी वाले, ठण्डे वृक्षों से ढँके और एक दूसरे से मिले वैहार, वराह, वृषभ, ऋषिगिरि और चैतक ये पाच पर्वत मानों एक सुन्दर गृह बनकर गिरिव्रज नगरी की रखवाली कर रहे हैं। पूर्वकाल में अङ्ग बङ्ग के राजागण यहाँ के गौतम जी की कुटी में आकर प्रमुदित होते थे। देखो गौतम जी के आश्रम के निकट लोध और पीपल के वन कैसी सुन्दर शोभा पा रहे हैं।

( २३ वां अध्याय ) श्रीकृष्णचन्द्र के पूछने पर तेजस्वी मगधनाथ ने भीम से लड़ने को कहा। तब जरासन्ध और भीम शस्त्र लिये अति प्रमुदित चित्त से परस्पर भिड़ गये। भीम और जरासन्ध की लड़ाई होने लगी जो कार्तिक मास की प्रथमा तिथि से त्रयोदशी तक निशिदिन बिना भोजन जारी रही। चतुर्दशी की रात को जरासन्ध ने थक कर कुश्ती त्याग दी।

( २४ वाँ अध्याय ) भीम ने जरासन्ध को ऊँचे उठाकर १०० बार घुमाने के पश्चात् अपनी जाँघ से उसकी पीठ नवाकर तोड़ डाली। अनन्तर श्री कृष्णचन्द्र ने राजाओं को कारागार से छुड़ाया और जरासन्ध के पुत्र सहदेव को राजतिलक देकर भीम और अर्जुन के साथ वे इन्द्रप्रस्थ लौट आये।

( जरासन्ध और भीम के युद्ध की कथा श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध के ७२ वें अध्याय में भी है )

( महाभारत, वन पर्व ८४ वां अध्याय ) पुलस्त्य बोले कि तीर्थ सेवी पुरुष राजगृह तीर्थ को जाय। वहाँ तीर्थों का स्पर्श करने से पुरुष आनन्दित

होता है। वहाँ यक्षिणी को नैवेद्य लगाने के बाद भोजन करने से यक्षिणी के प्रसाद से पुरुष की ब्रह्महत्या छूट जाती है।

मणिनाग तीर्थ ( राजगृह के समीप होना चाहिये ) में जाने से हजार गोदान का फल होता है। जो पुरुष मणिनाग तीर्थ में उत्पन्न हुई वस्तुओं को खाता है उसे सर्प काटने का विष नहीं चढ़ता। वहाँ एक रात रहने से हज़ार गोदान का फल होता है। वहाँ से महर्षि गौतम के वन में जाना उचित है। वहाँ अहल्या कुण्ड में स्नान करने से सद्गति प्राप्त होती है।

[ *श्री मुनिसुव्रतनाथ मुनि, बीसवें तीर्थङ्कर थे।* आपकी माता का नाम श्यामा और पिता का नाम सुमन्त था। कछुआ आपका चिन्ह है। राजगृह में आपके गर्भ, जन्म और दीक्षा तथा कैवल्यज्ञान कल्याणक हुये थे और पार्श्वनाथ में निर्वाण हुआ था। ]

व० द० राजगृह की पहाड़ियाँ लगभग १००० फ़ीट ऊँची हैं। उनमें वैभार ( महाभारत का वैहार ), विपुलाचल ( महाभारत का चैतक ), रत्नगिरि ( महाभारत का ऋषिगिरि ), उदयगिरि और सोनगिरि प्रसिद्ध हैं। ये वे पांच पहाड़ियाँ हैं जो राजगृह को चारों ओर से घेरे हैं। समीप चार मील दक्षिण बाणगङ्गा पहाड़ी नदी है जिसके पार की चहार दीवारी जरासन्ध का बाँध कहलाती है। बाणगङ्गा से उधर रङ्गभूमि है। लोग कहते हैं कि भीमसेन ने जरासन्ध को इसी जगह पर चीर डाला था।

राजगृह में सरस्वती नामक नदी दक्षिण-पश्चिम से वैभार पर्वत के पूर्वोत्तर ब्रह्मकुण्ड के पूर्व आई है। ब्रह्मकुण्ड के पास सरस्वती को प्राची सरस्वती कुण्ड कहते हैं। सरस्वती कुण्ड से पश्चिम वैभार पर्वत के पूर्वोत्तर कोन के पास मार्कण्डेय क्षेत्र है।

सरस्वती कुंड से एक मील दक्षिण-पश्चिम ११ गज लम्बी और ५॥ गज चौड़ी सोनभण्डार की प्रसिद्ध गुफा है। इस गुफा में भोजन करने के उपरान्त भगवान बुद्ध दिन में शयन करते थे। इसी पहाड़ी के उत्तर भाग में सोन-भण्डार गुफा से एक मील दूर सत्तपानी गुफा थी जिसके सामने प्रथम बौद्ध सभा हुई थी।

राजगृह से १८ मील दूर जेठियन नामक स्थान है जिसका प्राचीन नाम यष्टिवन है। भगवान बुद्ध ने यहीं कई चमत्कार प्रदर्शित किये थे तथा सम्राट बिम्बिसार को २६ वर्ष की आयु में यहीं बौद्ध बनाया था।

राजगृह में बहुत कुण्ड और कई झरने हैं। झरने सप्त ऋषि ( अत्रि, भरद्वाज, कश्यप, गौतम, विश्वामित्र, वशिष्ठ और यमदग्नि) के नाम से प्रसिद्ध हैं। चीन के यात्री फाहियान और ह्वानचांग ने भी इन झरनों का वर्णन किया है। बहुतों का पानी गर्म है और यात्री लोग कुण्डों में स्नान करते हैं। मलमास में एक महीना वहाँ मेला रहता है, उसके कृष्ण पक्ष में भारी भीड़ होती है। स्त्री और पुरुष सभी भींगे हुए वस्त्र पहिने एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्नान करते फिरते हैं।

सरस्वती कुण्ड के १२ मील पश्चिम तपोवन और गिरिव्रज नामक स्थान हैं जिनको लोग जरासन्ध का भजनागार और बैठक कहते हैं। तपोवन में चारों भाई सनकादिक के नाम से गरम झरने के चार कुण्ड हैं।

राजगृह की पहाड़ियों पर बहुत से जैन मन्दिर हैं जिनमें कार्तिक मास में बड़ा मेला लगता है।

५६१ राजापुर—( देखिए सोरों )

५६२ राजिम—( मध्य प्रदेश के रायपुर ज़िले में एक स्थान )

यह कर्दम ऋषि का स्थान था।

भविष्योत्तर पुराण की एक कथा है कि महाराज रामचन्द्र के अश्वमेध क समय में राजू में राजुलोचन नामक राजा राज्य करता था। उसने अश्वमेध के श्यामकर्ण घोडे को पकड लिया और उसे ऋषि कर्दम को जो महानदी के किनारे वास करते थे, दे दिया। जब शत्रुघ्न वहाँ सेना सहित पहुँचे तो ऋषि के श्राप से भस्म होगए। श्री रामचन्द्र ने आकर कर्दम ऋषि के दर्शन किए और शत्रुघ्न तथा सेना का उद्धार किया। उन दिनों वहाँ केवल शिव मन्दिर थे पर रामचन्द्रजी (विष्णु) ने भी निवास करने का वचन दिया।

सारे महाकोशल में राजिम सबसे पवित्र स्थान माना जाता है और महानदी के पूर्वोत्तर तट पर बसा है। राजीवलोचन का मन्दिर यहाँ का सर्वश्रेष्ठ मन्दिर है। कहा जाता है कि राजा जगतपाल ने (११४५ ई०) स्वप्न में देखा कि परमेश्वर उनसे कह रहे हैं कि राजीव तेलिन के पास जो पत्थर है उसको लेकर उस पर मन्दिर बनवा दें। तेलिन ने उस पत्थर का दाम सोने के वजन में लिया। यह वही राजीवलोचन मन्दिर है। राजीव तेलिन का छोटा मन्दिर भी पास में है। इनके अतिरिक्त वहाँ बहुत से शैव और वैष्णव मन्दिर हैं।

५६३ राधानगर—( बङ्गाल प्रान्त के कृष्ण नगर के समीप एक स्थान )

यहाँ राजा राममोहनराय का जन्म हुआ था।

[सन् १७७४ ई० में राधा नगर के सुप्रसिद्ध रायवंश में राजा राममोहन राय का जन्म हुआ था। आपके पिता रमाकान्तराय सुप्रतिष्ठित कुलीन ब्राह्मण और वैष्णव सम्प्रदाय के अनुयायी थे। राममोहनराय आरम्भ में अर्बी फ़ारसी की शिक्षा के लिए तीन साल पटना में रहे। इसके अनन्तर चार साल संस्कृत की शिक्षा प्राप्त करने को आप काशी में रहे। आपका मन वैष्णव सम्प्रदाय की ओर से फिर गया। यह बात आपके माता-पिता को असह्य थी। राममोहनराय जी घर से निकल गए और भारत भ्रमण करते हुए बौद्ध धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के लिए तिब्बत चले गए। इनके पिता वहाँ से इन्हें लौटाल लाए पर आप,अपने स्वतंत्र विचारों का बड़े जोर से प्रचार करते रहे और सन् १८२८ ई० में ब्रह्म समाज की स्थापना की। आप इङ्गलैण्ड गए और वहाँ आपकी असाधारण योग्यता से लोग दङ्ग हो गए थे। वहीं आपने १८३३ ई० में अपने नश्वर शरीर का त्याग किया।]

५६४ रामकी ढ़ेरी—( देखिए माणिक याला )

५६५ रामकुण्ड—( रियासत हैदराबाद के ज़िला उस्मानाबाद में एक गाँव )

रामकुण्ड से थोड़ी दूर पर कुँथल गिरि पर्वत की चोटी पर से श्रीकुल-भूषण देश भूषण मुनि (जैन) मोक्ष प्राप्त किए थे।

[कुल भूषण और देश भूषण दोनों सहोदर भ्राता थे और दक्षिण प्रान्त के एक राजा के पुत्र थे। दोनों बाल्यावस्था में विद्याध्ययन के लिए गुरुकुल में रहे थे। युवा होने पर अपने निवास स्थान को आ रहे थे कि उन्होंने राजमहल के एक झरोखे में एक कन्या को देखा। दोनों [illegible] पर आसक्त होगए और दोनों ने पृथक पृथक उससे अपने विवाह के लिये अपनी माता से कहा। माता सुनकर अवाक हो गई और बतलाया कि वह उन्हीं की कन्या तथा राजकुमारों की लघु भगिनी है। इतना सुनते ही दोनों राजकुमार वैरागी हो गए और कुन्थल गिरि पर्वत में निर्वाण को प्राप्त हुए।]

इस स्थान पर दस जैन मन्दिर हैं और कहा जाता है कि यहाँ भूत प्रेत और पिशाचादिक की बाधा नष्ट हो जाती है।

५६६ रामगढ़—( देखिए चित्रकूट )

५६७ रामगढ—( देखिए बनारस )

५६८ रामटेक—म०प्र प्रान्त के नागपुर जिले में एक स्थान )

महाराज रामचन्द्र के समय मे यहाँ एक शूद्र शम्बूक ने तपस्या की थी; जिसको रामचन्द्र जी ने आकर मारा था।

इस स्थान के प्राचीन नाम सिन्दुरा गिरि, शम्बुक आश्रम, रामगिरि, शैवलगिरि और तपोगिरि हैं।

रामायण उत्तर रामचरित्र और महावीर चरित्र में कथा है कि, श्री राम चन्द्र जी के राज्य में एक ब्राह्मण बालक अपने पिता के जीवनकाल में मर गया। उनके पास फरयाद हुई और उन्होंने जाँच कराई तो मालूम हुआ कि एक शूद्र बालक तप कर रहा है, जिसका यह परिणाम हुआ था। श्री राम ने उस शूद्र बालक को मार डाला। जब वह स्वर्ग को जाने लगा तो उसने रामचन्द्र जी से यह वचन ले लिया कि वे सदा उस स्थान पर वास करें। कहा जाता है कि तब से रामटेक में श्री रामचन्द्र जी का निवास है। यह एक पहाडी है जिसपर अनेकों मन्दिर बने हैं। जहाँ शूद्र शम्बूक ने तपस्या की थी वहाँ एक चौकोर मन्दिर खडा है।

५६९ रामनगर—( संयुक्त प्रान्त के बरेली जिले में एक प्राचीन स्थान )

इसके प्राचीन नाम अहिछत्र जी, अहिछत्र और अहिछेत्र हैं। इस स्थान पर भगवान बुद्ध ने सात दिन तक नागराज को उपदेश दिया था।

इस क्षेत्र पर श्री पार्श्वनाथ भगवान् ( तेईसवें तीर्थङ्कर ) ने दीक्षा ली थी और उनके तप के समय कमठ के जीव ने बहुत बड़ा उपसर्ग किया था। श्री पार्श्वनाथ को यहीं कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ था।

यह स्थान अहिछेत्र, उत्तरीपाञ्चाल की राजधानी था और उसके राजा द्रोणाचार्य थे।

प्रा० फ० महाभारत से थोड़ा पहले द्रोणाचार्य ने द्रौपदी के पिता राजा द्रुपद को परास्त करके उत्तरीय पाञ्चाल का अपने आधीन कर लिया था और अहिछेत्र को अपना राजनिवास बनाया था। दक्षिणी पाञ्चाल, जिसकी राजधानी कम्पिला थी, राजाद्रुपद के पास छूट गया था। पाञ्चाल देश हिमालय पर्वत से लेकर चम्बल नदी तक फैला हुआ था।

चीन के यात्री ह्वानच्वांग ने इस जगह को अपनी यात्रा में देखा था। उस समय यहाँ केवल ६ देव मन्दिर थे और वे सब शिवालय थे। इससे

ज्ञात होता है कि जिस समय ह्वानचांग ने यात्रा की थी उन दिनों यह स्थान बौद्ध मतावलम्बियों से बसा हुआ था। उसके पीछे सनातनधर्मियों का जोर हुआ, क्योंकि इस समय भी कम से कम २० देव मन्दिरों के चिन्ह यहाँ मौजूद हैं। जिन दिनों ह्वानचांग ने यहाँ की यात्रा की थी उन दिनों नगर के बाहर 'नागह्रद' नाम का एक तालाब यहाँ था। महाराज अशोक ने यहाँ एक स्तूप भी बनवाया था। भगवान बुद्ध ने उसी स्थान पर नागों के राजा को सात दिन तक सदुपदेश दिया था।

न० ८०—रामनगर आँवला से ६ मील है। चैतवदी ८ से १२ तक जैनियों का यहाँ बड़ा मेला होता है। एक मकान में चरणपादुका है, यही स्थान 'अहिछत्र' जी कहलाता है।

यहाँ एक बड़े और पुराने क़िले के खण्डहर हैं। लोग उसको पाण्डवों का क़िला कहते हैं। इसका दूसरा नाम आदि कोट भी है। इसमें ३४ बुर्ज हैं।

एक मील की दूरी पर सवा सौ बीघे में एक ताल 'गन्धान-सागर' यहा है और उससे दो फर्लाङ्ग हट कर एक और तालाब 'आदि सागर' डेढ़ सौ बीघे में है।

एक खेड़ा, यहाँ एक हजार फीट लम्बा और एक हजार फीट चौड़ाई की दूरी में है और उसके बीच में एक बड़ा स्तूप है जिसे 'छत्र' कहते हैं। कदाचित यही महाराज अशोक का बनवाया हुआ स्तूप है जहाँ भगवान बुद्ध ने उपदेश दिया था।

४७० रामपुर—(देखिए सोरों)

४७१ रामपुर देवरिया—(संयुक्त प्रान्त के बस्ती जिले में एक गाँव)

इसका प्राचीन नाम रामग्राम था। यहाँ भगवान बुद्ध की चिता का आठवाँ भाग रक्खा गया था।

यहीं से दूसरा चिता के भाग में से नाग लोग भगवान का दाँत लेगए थे जो अब लङ्का के अनिरुद्धपुर में है और जिसकी वहाँ भारी पूजा होती है।

भगवान बुद्ध की चिता की राख को बहुत से राजा ले जाना चाहते थे और उसके लिए युद्ध होने वाला था। इसको रोकने के लिए राख और फूलों के आठ भाग किए गए जो आठ स्थानों के राजा अलग अलग अपने यहाँ ले गए। ह्वानचांग ने लिखा है कि ऐसे एक भाग पर रामग्राम में एक स्तूप था।

रामपुर देवरिया गाँव एक पुराने खेड़े पर बसा है जो मडवाताल के तट पर है। गाँव के पूर्वोत्तर में एक टूटा हुआ स्तूप है जो अब भी २० फुट ऊंचा है। इसी स्तूप में चिता का आठवाँ भाग रक्खा था।

**५७२ रामेश्वर**—( मद्रास प्रान्त के मदुरा जिले में मनार की खाड़ी में एक टापू )

यह भारतवर्ष के प्रसिद्ध चार धामों में से दक्षिण का धाम है।

श्रीरामचन्द्र जी ने इस टापू पर रामेश्वर शिव लिङ्ग की स्थापना की थी। सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान, विभीषण आदि यहाँ आये थे।

रामेश्वर शिवलिङ्ग शिव जी के द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से एक है।

नल ने यहाँ समुद्र में पुल बाँधा था।

श्रीकृष्ण जी ने यहाँ के कोटि तीर्थ में स्नान किया था।

रामेश्वर की ऊँची भूमि का प्राचीन नाम गन्धमादन पर्वत था।

अगस्त्य जी गन्धमादन पर्वत पर पधारे थे और उनके शिष्य सुतीक्ष्ण मुनि ने बहुत समय तक यहाँ तप किया था।

अहिर्बुध ऋषि ने इस पर्वत पर सुदर्शनचक्र की उपासना की थी।

शङ्ख मुनि ने श्री विष्णु की प्रसन्नता के लिए गन्धमादन में तप किया था।

गालव मुनि ने यहाँ तप किया था।

तुम्बुरु मुनि ने यहाँ शिव जी की स्थापना की थी।

मुद्गल मुनि ने पुलग्राम ( जहाँ से सेतु बनना आरम्भ हुआ था ) में यज्ञ किया था।

पौराणिक कथा है कि ब्रह्मा जी ने गन्धमादन पर्वत पर जाकर ८८ हजार वर्ष पर्यन्त कई यज्ञ किए थे। और सूर्य भगवान ने यहाँ चक्र तीर्थ में स्नान किया था।

श्री रामचन्द्र के लङ्का विजय के पश्चात सीता जी की अग्नि परीक्षा इसी स्थान पर गन्धमादन पर्वत के अग्नि तीर्थ में हुई थी।

महिषासुर रामेश्वर की धर्म पुष्करणी में मारा गया था।

राजा पुरुरवा ने यहाँ के साध्यामृत तीर्थ में स्नान किया था।

युधिष्ठिर तथा बलदेव जी ने रामेश्वर की यात्रा की थी।

प्रा० क०—( पाराशर स्मृति, १२ वां अध्याय ) समुद्र के सेतु के दर्शन करने से ब्रह्म हत्या पाप छूट जाता है। श्रीरामचन्द्र की आज्ञा से नल वानर ने १०० योजन लम्बा और १० योजन चौड़ा सेतु बाँधा था।

( वाल्मीकीय रामायण, लङ्काकाण्ड, १२५ वाँ सर्ग ) श्रीरामचन्द्र ने रावण को जीतकर श्री सीता, लक्ष्मण और विभीषणादिक राक्षस तथा सुग्रीवादिक बानरों के सहित पुष्पक विमान पर चढ़ लङ्का से प्रस्थान किया; विमान आकाश मार्ग से चला। श्रीरामचन्द्र जी जानकी जी को स्थानों को दिखाने लगे। वह बोले कि हे सीते! देखो यह सेना टिकने का स्थान है। यहाँ सेतु बाँधने के पहिले शिवजी मेरे ऊपर प्रसन्न हुए थे। यह समुद्र काट सेतुबन्ध नाम से प्रसिद्ध तीनों लोकों में पूजित हुआ है। यह पवित्र स्थान पापों का नाश करने वाला है।'

( ब्रह्माण्ड पुराण, अध्यात्म रामायण लङ्काकाण्ड, चौथा अध्याय ) सेतु आरम्भ के समय श्रीरामचन्द्र जी ने लोकहित के लिये यहाँ रामेश्वर शिव को स्थापित किया।

( शिवपुराण, ज्ञान संहिता, ३८ वाँ अध्याय ) शिव जी के १२ ज्योति लिङ्ग हैं जिनमें सेतुबन्ध में रामेश्वर शिवलिङ्ग है।

( ५७ वाँ अध्याय ) रामचन्द्र जी, लक्ष्मण जी और सुग्रीव आदि १८ पद्म सेनाओं के सहित सीता को छुड़ाने के लिए दक्षिण समुद्र के पास पहुँचे। उन्होंने बानरों से मृत्तिका मांग कर मृत्तिका शिव लिङ्ग बनाया और आवाहन तथा पूजन करके विनय की कि 'हे शङ्कर! आपकी कृपा से रावण दुर्जेय हुआ है; आप मेरी सहायता कीजिए। शिव जी प्रकट होकर बोले कि 'हे रामचन्द्र! तुम्हारा मङ्गल होगा।' श्रीरामचन्द्र जी ने शिव जी से विनय की कि, 'हे शङ्कर! आर्म्य लोगों के हित के लिए आप इस स्थान पर निवास कीजिए।' शिवजी ने रामचन्द्र के वचन से प्रसन्न होकर यहाँ लिङ्गरूप से निवास किया। उसी लिंग को रामेश्वर कहते हैं। रामेश्वर शिव के स्मरण मात्र से सम्पूर्ण पापों का नाश शीघ्र हो जाता है।

( गरुड़ पुराण पूर्वार्द्ध, २१ वाँ अध्याय ) सेतुबन्ध रामेश्वर एक उत्तम तीर्थ है।

( ब्रह्मवैवर्तपुराण कृष्ण जन्म खण्ड, ७६ वाँ अध्याय ) आषाढ़ की पूर्णिमा को सेतुबन्ध रामेश्वर के दर्शन और पूजन करने से प्राणी का फिर जन्म नहीं होता है। रात में महादेव जी के दर्शन के लिए यहाँ विभीषण आते हैं।

( स्कन्द पुराण, सेतुबन्ध खण्ड, पहिला अध्याय ) श्री रामचन्द्र जी के बाँधे हुए सेतु के समान सब क्षेत्रों में उत्तम रामेश्वर क्षेत्र है।

(दूसरा अध्याय) श्री रामचन्द्रजी की आज्ञा से वानर गण सहस्रों पर्वतों के शृङ्ग, वृक्ष, तृण, बेलि आदि लाये। नल ने समुद्र के ऊपर १० योजन चौड़ा और १०० योजन लम्बा सेतु बाँधा। जहाँ रामचन्द्र जी ने कुश शय्या पर शयन किया और सेतु बाँधा वही स्थान प्रसिद्ध तीर्थ होगया। सेतु बन्ध के समीप के तीर्थों में निम्नाङ्कित २४ तीर्थ प्रधान हैं।

१—चक्रतीर्थ
२—वेतालवरद
३—पापविनाशन
४—सीतासर
५—मङ्गलतीर्थ
६—अमृतवापिका
७—ब्रह्म कुण्ड
८—हनुमत्कुण्ड
९—अगस्त्यतीर्थ
१०—रामतीर्थ
११—लक्ष्मण तीर्थ
१२—जटातीर्थ
१३—लक्ष्मी तीर्थ
१४—अग्नि तीर्थ
१५—चक्र तीर्थ
१६—शिव तीर्थ
१७—शङ्ख तीर्थ
१८—यमुना तीर्थ
१९—गङ्ग तीर्थ
२०—गयातीर्थ
२१—कोटि तीर्थ
२२—साध्यामृत तीर्थ
२३—मानस तीर्थ
२४—धनुष्कोटि तीर्थ

(तीसरा अध्याय) सेतुमूल के समीप चक्रतीर्थ है। धर्म ने दक्षिण के समुद्र तट पर बहुत काल तक तप किया और स्नान के लिए वहाँ एक

पुष्करणी बनाई, जिसका नाम धर्मपुष्करिणी पड़ा। धर्म, शिवजी को प्रसन्न करके उनका वाहन वृष बन गया। उसके पश्चात् ध्यान करते हुए गालव मुनि को एक राक्षस ने जा पकड़ा। उस समय मुनि विष्णु को पुकारने लगे। श्री विष्णु की आज्ञा से सुदर्शनचक्र ने वहाँ जाकर उस राक्षस का सिर काट लिया। उसके उपरान्त वह चक्र धर्म पुष्करिणी में प्रवेश कर गया। तभी से धर्म पुष्करिणी का नाम चक्रतीर्थ हो गया।

(सातवाँ अध्याय) महिषासुर के संग्राम में श्री जगदम्बा ने उस असुर को एक मूसा मारा, वह व्याकुल होकर भागा और दक्षिण समुद्र के तट पर जाकर दशयोजन लम्बी चौड़ी धर्म पुष्करिणी के जल में लुप्त हो गया। श्री भगवती के जाने पर वहाँ आकाशवाणी हुई कि दैत्य धर्म पुष्करिणी के जल में छिपा है। जगदम्बा की आज्ञा से उनके वाहन सिंह ने पुष्करिणी के सम्पूर्ण जल को पी लिया, तब भगवती ने महिषासुर का सिर काट लिया और दक्षिण समुद्र के तट पर अपने नाम से नगर बसाया। वही देवीपुर और देवी पट्टन के नाम से प्रसिद्ध हुआ। (देवी भागवत के अनुसार महिषासुर तुलजा भवानी में मारा गया था—देखिए तुलजापुरी)

श्री रामचन्द्र जी ने शिवजी की आज्ञा से देवी पट्टन के समीप अपने हाथ से नवशिला स्थापन किये। देवी पट्टन से लङ्का तक सौ योजन लम्बा और दस योजन चौड़ा सेतु पाँच दिन में पूरा हुआ। देवी पट्टन से सेतु का आरम्भ हुआ इसलिये देवी पट्टन 'सेतुमूल' कहा गया। सेतुमूल के पश्चिम का छोर दर्भ शयन तीर्थ और पूर्व का छोर देवी पट्टन है। प्रथम नव पाषाण के समीप समुद्र में स्नान करके चक्र तीर्थ में श्राद्ध करना चाहिये।

(८ वां अध्याय) चक्र तीर्थ के दक्षिण भाग में वेतालवरद तीर्थ है।

(६ वां अध्याय) एक ऋषि के आदेशानुसार कपाल स्फोट नामक दैत्य दक्षिण समुद्र के तट पर पवित्र तीर्थ में पहुँचा। [illegible] के वेग से उस तीर्थ के जल कण उड़कर उस दैत्य के शरीर पर जा गिरे। उन जल कणों के स्पर्श से उसने अपना वेताल रूप छोड़ कर पूर्व रूप धारण कर लिया। पूर्व जन्म में वह विजयदत्त नामक ब्राह्मण था, किन्तु गालव मुनि के शाप से वेताल हुआ था। उसके पश्चात् वह उस तीर्थ में स्नान करके, मनुष्य देह त्याग दिव्य रूप हो स्वर्ग में चला गया। उसी दिन से उस तीर्थ का नाम वेताल वरद हुआ।

( १० वां अध्याय ) वेताल वरद तीर्थ में स्नान कर गन्धमादन पर्वत को, जो सेतु रूप से समुद्र में स्थित है, जाना चाहिये। उसके ऊपर लोक में प्रसिद्ध पाप विनाशन तीर्थ है। सुमति नामक ब्राह्मण करोड़ों वर्ष नरक भोग कर फिर ब्राह्मण के घर उत्पन्न हुआ, परन्तु उसे ब्रह्मराक्षस का आवेश हो गया। तब अगस्त्य मुनि के उपदेश से उसके पिता ने गन्धमादन,पर्वत के पाप विनाशन तीर्थ में उसको सङ्कल्प पूर्वक तीन दिन स्नान कराया जिससे ब्राह्मण का पुनः आरोग्य हो गया और अन्त में मुक्ति पाई। पापों के नाश करने से ही उस तीर्थ का नाम पाप विनाशन पड़ा।

( ११ वां अध्याय ) गङ्गा आदि तीर्थ सीता सरोवर में निवास करते हैं। इसी तीर्थ में स्नान करने से ब्रह्महत्या ने इन्द्र को छोड़ा। श्री रामचन्द्र जी के सङ्कट निवृत्त करने के लिए सीता ने अग्नि में प्रवेश किया और अग्नि से निकल अपने नाम का यह तीर्थ बनाया। तभी से उसका नाम सीता सरोवर हुआ।

( १२ वां अध्याय ) सीता कुण्ड में स्नान कर मङ्गल तीर्थ को जाना चाहिए जिसमें लक्ष्मी जी निवास करती हैं। इन्द्रादि देवता दरिद्रता के नाश के लिए नित्य उस तीर्थ में स्नान करते हैं। सेतुबन्ध के बीच गन्धमादन पर्वत पर मङ्गल तीर्थ है। उसमें सीता और रामचन्द्र सदा सन्निहित रहते हैं।

( १३ वां अध्याय ) रामनाथ क्षेत्र में अमृतवापिका है, जिसमें स्नान करने वाले मनुष्य अजर अमर हो जाते हैं। मङ्गल तीर्थ के पास के तीर्थ में अगस्त्य मुनि के भ्राता की मुक्ति हुई थी उसी से उस तीर्थ का नाम अमृत वापी हुआ क्योंकि मोक्ष को अमृत कहते हैं।

( १४ वां अध्याय ) अमृतवापी में स्नान कर ब्रह्मकुण्ड को जाना चाहिए। ब्रह्मकुण्ड में स्नान करने वाले मनुष्य को यज्ञ, तप, दान और तीर्थ करने का कुछ प्रयोजन नहीं है। जो मनुष्य ब्रह्मकुण्ड में निकली विभूति को धारण करता है उसके समीप ब्रह्मा, विष्णु और शिव सदा निवास करते हैं। एक समय ब्रह्मा और विष्णु का परस्पर विवाद हुआ। दोनों अपने को बड़ा कहने लगे। उसी समय मध्य में एक लिङ्ग प्रकट हुआ। उसके अनन्तर यह निश्चय हुआ कि दोनों में से जो इस लिंग के आदि अन्त को जान सके वही सबसे बड़ा और लोक का कर्ता गिना जाय। ब्रह्मा हंस का रूप धर कर ऊपर को उड़े और विष्णु वराह रूप धर कर नीचे चले। १०० वर्ष के पीछे विष्णु

जी ने देवताओं से कहा कि हम को लिङ्ग का अन्त नहीं मिला। इतने में ब्रह्मा भी आ पहुँचे। वे असत्य बोले कि हम इस लिङ्ग के अग्र को देख आये हैं। तब शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्मा! तुमने हमारे सन्मुख झूठ कहा इसलिए जगत में तुम्हारी कोई पूजा न करेगा। पीछे ब्रह्मा की प्रार्थना से प्रसन्न होकर शिव जी बोले कि हमारा वचन तो मिथ्या नहीं हो सकता, परन्तु तुम गंधमादन पर्वत पर जाकर यज्ञ करो जिससे हमारे शाप का दोष निवृत्त हो जायगा, प्रतिमा में तुम्हारी पूजा न होगी, किन्तु श्रोत स्मृति कर्मों में तुम्हारा पूजन होगा। श्री ब्रह्मा ने गंधमादन पर्वत पर जाकर दस हजार वर्ष पर्यंत कई यज्ञ किये। तब शिवजी ने प्रकट होकर यह वरदान दिया कि अब श्रौत स्मृति कर्मों में तुम्हारा पूजन हुआ करेगा और तुम्हारा यह यज्ञ का स्थान ब्रह्मकुण्ड के नाम से जगत में प्रसिद्ध होगा। जो एक बार भी इस ब्रह्मकुंड में स्नान करेगा उसके लिए मुक्ति का द्वार खुल जायगा। जो इस कुंड का भस्म को धारण करेगा वह आवागमन से रहित हो जायगा।

( १५ वाँ अध्याय ) ब्रह्मकुण्ड में स्नान कर हनुमत्कुंड में जाना चाहिए। जब रामचन्द्र रावण को मार कर लौटे और गन्धमादन पर्वत पर पहुँचे तब हनुमान ने अपने नाम से उत्तम तीर्थ बनाया। साक्षात रुद्र उस तीर्थ का सेवन करते हैं। धर्म सख राजा ने उस तीर्थ में स्नान कर दीर्घायु १०० पुत्र पाए। जो स्त्री उस तीर्थ में स्नान करती है, उसको अवश्य पुत्र उत्पन्न होता है।

( १६ वाँ अध्याय ) श्री हनुमत्कुंड के पश्चात् अगस्त्य तीर्थ को जाना चाहिये। उस तीर्थ को साक्षात अगस्त्यजी ने बनाया है। पूर्व काल में सुमेरु और विन्ध्य पर्वत में परस्पर विवाद हुआ। तब विन्ध्याचल इतना बढ़ा कि सब जीवों का श्वास रुक गया। उस समय शङ्कर की आज्ञा से अगस्त्य जी ने उस पर्वत को अपने पैर से ऐसा दबाया कि वह भूमि के समान होगया। फिर अगस्त्य जी वहाँ से चले और दक्षिण दिशा में विचरते हुए गन्धमादन पर्वत पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने नाम से तीर्थ बनाया जिसमें वह अपनी भार्या लोपामुद्रा के साथ आज तक निवास करते हैं। दीर्घतमा मुनि के पुत्र कक्षीवान ने उस तीर्थ के प्रभाव से स्वनय की कन्या से विवाह किया।

( १८ वाँ अध्याय ) अगस्त्य तीर्थ के बाद रामकुंड को जाना चाहिये। उस सरोवर के तीर पर अल्प दक्षिणा के भी यज्ञ करने से सम्पूर्ण फल मिलता

है। अगस्त्य मुनि के शिष्य सुतीक्ष्ण मुनि ने उस सरोवर के तीर पर बहुत काल तक तप किया।

[ सुतीक्ष्ण जी, महामुनि अगस्त्य के शिष्य थे। वे एक ब्रह्मज्ञानी ऋषि थे। गुरु दक्षिणा में भगवान रामचन्द्र को गुरु के आश्रम पर लाने का वे सद्वचन दे आये थे और तपस्या करके उसे पूरा किया। ]

युधिष्ठिर, उस तीर्थ में स्नान और शिव लिंग का दर्शन करके असत्य भाषण के महादोष से छूट गये।

( १६ वाँ अध्याय ) इसके बाद लक्ष्मण तीर्थ को जाकर उसमें स्नान करना चाहिये। उस तीर्थ के तट पर लक्ष्मण जी ने शिवलिंग स्थापित किया है। बलदेव जी लक्ष्मण तीर्थ में स्नान और लक्ष्मणेश्वर का सेवन कर ब्रह्म हत्या से छूट गए।

( २० वाँ अध्याय ) पूर्वकाल में शिवजी ने गन्धमादन पर्वत में सबके उपकार के अर्थ एक तीर्थ बनाया। श्री रामचन्द्र जी ने रावण के मारने के पश्चात् उस तीर्थ में जटा धोई थी, इससे उस तीर्थ का नाम जटा तीर्थ पड़ा।

( २१ वां अध्याय ) राजा युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णचन्द्र की प्रेरणा से इन्द्रप्रस्थ से जाकर लक्ष्मी तीर्थ में स्नान किया, जिससे उन्होंने बड़ा ऐश्वर्य पाया।

• ( २२ वा अध्याय ) पूर्व काल में श्री रामचन्द्र जी रावण को मार सीता और लक्ष्मण के सहित श्री जानकी की शुद्धि के लिए सेतुमार्ग से गन्धमादन पर्वत पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने लक्ष्मीतीर्थ के तट पर स्थित हो अग्नि का आवाहन किया। अग्नि समुद्र से निकल कर कहने लगी कि, हे रामचन्द्रजी! जानकी के पातिव्रत धर्म्म के प्रभाव से आपने रावण को जीता है; आप इनको ग्रहण कीजिए। तब रामचन्द्र ने श्री सीता को ग्रहण किया। श्रीरामचन्द्र के आवाहन करने से जहाँ अग्नि प्रगट हुई वहीं अग्नितीर्थ हुआ। पूर्वकाल में पाटलिपुत्र नामक नगर के रहने वाले पशुनामक वैश्य पुत्र दुष्पण्य उस तीर्थ के जल के स्पर्श से पिशाच योनि से मुक्त हो स्वर्ग को गया।

(२३ वां अध्याय) पूर्व समय में अहिर्बुध नामक ऋषि गन्धमादन पर्वत में सुदर्शनचक्र की उपासना करते थे। उस समय राक्षस जाकर उनको पीड़ा देने लगे, तब सुदर्शनचक्र ने आकर सब राक्षसों को मार डाला और मुनि की

प्रार्थना से उस तीर्थ में निवास किया। उस दिन से उस तीर्थ का नाम चक्र तीर्थ पड़ा। पूर्वकाल में जब सूर्य भगवान ने उस तीर्थ में स्नान किया तब उनके कटे हुए हाथ पहले की भाँति पूर्ण हो गए।

( २४ वां अध्याय ) काल भैरव, शिवतीर्थ में स्नान करके ब्रह्महत्या से छूटे। ब्रह्मा ने कहा कि हे महादेव! तू मेरे ललाट से उत्पन्न हुआ, इसलिए मेरा पुत्र है। ब्रह्मा का अहंकार युक्त वचन सुन शिव जी ने काल भैरव को भेजा। भैरव जी ने ब्रह्मा का पाँचवां सिर काट लिया। पीछे शिव जी ब्रह्मा पर प्रसन्न होकर कालभैरव से बोले कि लोक की मर्यादा के लिए तुम प्रायश्चित करो। कालभैरव ब्रह्मा का सिर हाथ में लिए हुए पुण्यतीर्थ में स्नान करते हुए काशी में पहुँचे ब्रह्महत्या भयङ्कर स्त्री के रूप में उनके साथ साथ फिरती थी। काशी में पहुँचने पर कालभैरव की तीन भाग ब्रह्महत्या नष्ट होगई किन्तु एक भाग रह गई। तब कालभैरव ने गन्धमादन पर्वत पर पहुँच शिव तीर्थ में स्नान किया जिससे सम्पूर्ण ब्रह्महत्या दूर हो गई।

( २५ वाँ अध्याय ) पूर्व समय में शङ्खमुनि ने श्री विष्णु की प्रसन्नता के लिए गन्धमादन पर्वत पर तप किया और अपने नाम से शङ्खतीर्थ भी बनाया। उस तीर्थ में स्नान करने से कृतघ्न पुरुष भी शुद्ध हो जाता है।

( २६ वां अध्याय ) शङ्खतीर्थ में स्नान कर गंगा तीर्थ, यमुनातीर्थ और गया तीर्थ को जाना चाहिए। उन तीर्थों में स्नान कर जानश्रुति नामक राजा ने रैकमुनि से दिव्यज्ञान पाया। पूर्वकाल में रैक्मुनि गन्धमादन पर्वत पर तप करते थे। वह जन्म के पंगु थे, इसलिए दूर के तीर्थों में नहीं जा सकते थे किन्तु गन्धमादन के तीर्थ में गाड़ी पर बैठ कर जाया करते थे। एक समय गंगा, यमुना और गया तीर्थों के स्नान करने की मुनि को इच्छा हुई। तब मुनि ने पूर्वाभिमुख बैठ मन्त्र बल से तीनों तीर्थों का आवाहन किया। उस समय भूमि को भेद कर गया, गंगा और यमुना की धारा पाताल से निकली। मुनि ने तीनों तीर्थों से प्रार्थना की कि तुम तीनों इस [illegible]पर्वत में निवास करो। उस दिन से तीनों गन्धमादन में रुक गए। उनमें स्नान करने से प्रारब्ध कर्म का नाश होता है।

( २७ वां अध्याय ) कोटि तीर्थ को श्रीरामचन्द्र जी ने अपने धनुष की कोटि, अर्थात् अग्र भाग, से बनाया है। रामचन्द्र जी ने रावण के मारने से उत्पन्न ब्रह्महत्या की निवृत्ति के लिए गन्धमादन पर्वत पर रामेश्वर शिव

लिङ्ग स्थापित किया। जब शिवलिङ्ग के स्नान के लिए जल नहीं मिला, तब उन्होंने गंगा का स्मरण कर धनुष की कोटि से भूमि को भेदन किया जिस से गंगा की धारा निकली। तब रामचन्द्र जी ने उस दिव्य जल से शिवलिङ्ग को स्नान कराया। धनुष की कोटि से यह तीर्थ बना इसलिए इसका नाम कोटि तीर्थ पड़ा। गन्धमादन के सब तीर्थों में स्नान कर शेष पाप की निवृत्ति के लिए कोटि तीर्थ में स्नान करना चाहिए। उसमें स्नान करने के पश्चात् गन्धमादन पर्वत में क्षणमात्र भी न रहना चाहिए। इसमें साक्षात् गङ्गा निवास करती हैं। श्रीकृष्ण जी कोटि तीर्थ में स्नान करके अपने मातुल कंस की हत्या के पाप से छूटे थे।

( २८ वां अध्याय ) जब तक साध्यामृत तीर्थ में अस्थि पड़ी रहती है तब तक यह जीव शिवलोक में निवास करता है। राजा पुरुरवा उस तीर्थ में स्नान कर तुम्बुरु के शाप से छूटे और फिर उर्वशी से उनका समागम हुआ। उस तीर्थ में स्नान करने वालों का अमृत अर्थात् मोक्ष साध्य है, इसलिए उसका नाम साध्यामृत हुआ।

( २९ वां अध्याय ) पूर्वकाल में भृगुवंश में सुचरित मुनि हुए। वह जन्म से ही अन्धे थे। उन्होंने जन्म भर तप किया। वृद्धावस्था में उनकी इच्छा हुई कि सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करना चाहिए; परन्तु तीर्थों में जाने की उनकी सामर्थ्य न थी, अतएव वे गन्धमादन पर्वत पर शिव जी का तप करने लगे। शिव जी प्रकट हुये। मुनि बोले कि हे नाथ! मुझको इसी स्थान पर सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त हो। तब शिव जी ने एक स्थान में सब तीर्थों का आवाहन किया, उनके उपरान्त उन्होंने कहा कि इस स्थान पर हमने सब तीर्थों का आवाहन किया इसलिये यह तीर्थ सर्व तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध होगा और हमने मन से यहाँ तीर्थों का आकर्षण किया है, इसलिये इसका नाम मानस तीर्थ भी होगा।

( ३० वां अध्याय ) सब तीर्थ के पश्चात् धनुषकोटि तीर्थ में जाना चाहिये। जो पुरुष धनुषकोटि का दर्शन करते हैं वे अट्ठाईस प्रकार के महा नर्कों को नहीं देखते। श्री रामचन्द्र रावण को मारने के पश्चात् विभीषण और सुग्रीव आदि वानरों के साथ गन्धमादन पर्वत पर पहुँचे। उस समय विभीषण ने प्रार्थना की कि महाराज! आपके बाँधे हुये सेतु के मार्ग से प्रतापी राजा लोग आकर मेरी पुरी लङ्का को पीड़ा देंगे। तब रामचन्द्र ने

अपनें धनुष की कोटि, अर्थात् अग्र भाग से सेतु को तोड़ दिया, वही धनुष कोटि तीर्थ हुआ। जो पुरुष धनुष करके की हुई रेखा देखता है वह गर्भ वास का दुःख नहीं भोगता। श्रीरामचन्द्र ने धनुष कोटि में समुद्र में रक्षा की है। जो पुरुष माघ मास मकर के सूर्य में धनुष कोटि में स्नान करता है उसका पुण्य वर्णन नहीं हो सकता। अर्द्धोदय योग में वहाँ स्नान करने से सर्व पाप नष्ट हो जाते हैं। चन्द्र और सूर्य के ग्रहणों मे वहाँ स्नान करने वाला के पुण्यफल को शेष जी भी नहीं गिन सकते। वहाँ पिण्डदान करने से पितर कल्प भर तृप्त रहते हैं। रामचन्द्र जी ने पितरों की तृप्ति के लिये तीन स्थान बनाए हैं। सेतुमूल, धनुष्कोटि और गन्धमादन पर्वत।

(३७ वा अध्याय) देवी पट्टन से पश्चिम दिशा मे थोड़ी दूर पर पुलग्राम नामक पुण्य क्षेत्र है जहाँ रामचन्द्र जी ने सेतु का आरम्भ किया, उसी स्थान में क्षीर कुण्ड है। पूर्व समय में जब मुद्गल मुनि ने पुलग्राम में यज्ञ किया तब विष्णु भगवान ने प्रकट होकर वहाँ क्षीर कुण्ड बना दिया।

(४४ वां अध्याय) रामचन्द्र जी रावण को मार, सब के साथ विमान पर चढ़ गन्ध मादन पर्वत पर पहुँचे। उन्होंने वहाँ अग्नि में सीता का शोधन किया। उस समय वहाँ अगस्त्य मुनि के साथ दण्डकारण्य के सब मुनि आए। रामचन्द्र जी ने मुनियों से पूछा कि पुलस्त्य मुनि के पौत्र रावण के वध के पाप का प्रायश्चित क्या है? मुनि बोले कि हे रामचन्द्र! आप इस गन्धमादन पर्वत पर शिव लिङ्ग स्थापित कीजिए। तब सीता के सहित रामचन्द्र जी ने ज्येष्ठ मास, शुक्ल पक्ष, दशमी तिथि, बुधवार, हस्त नक्षत्र, व्यतीपात योग, गरकरण और वृष के सूर्य में रामेश्वर लिङ्ग को तथा रामेश्वर के आगे नन्दिकेश्वर को स्थापित किया।

(४६ वां अध्याय) हनुमान जी कैलास से शिवलिङ्ग को लाए और रामेश्वर के उत्तर पार्श्व में स्थापित किया।

पृ० ८८—रामेश्वर टापू उत्तर से दक्षिण ११ माल लम्बा और पूर्व से पश्चिम को ७ मील चौड़ा है। टापू के पूर्व किनार पर भारतवर्ष के प्रसिद्ध चार धामों मे से रामेश्वर नामक बस्ता है। बस्ती के पूर्व समुद्र के किनारे पर लगभग ६०० फीट लम्बा रामेश्वर का पत्थर का मन्दिर है। मन्दिर के चारों ओर २२ फीट ऊंची दीवार है। उसमें तीन ओर एक-एक और पूर्व की ओर दो गोपुर हैं। केवल पश्चिम वाला ७ मंज़िला गोपुर जो लगभग १००

फीट ऊंचा है, तैयार है। बाकी गोपुर पूरे नहीं हुए हैं। मन्दिर की परिक्रमा की सड़कें अद्भुत हैं। ऐसा विशाल दृश्य किसी और मन्दिर का नहीं है। ये सड़कें पटी हुई हैं और चार हजार फीट लम्बी हैं। इनकी चौड़ाई २० फीट से ३० फीट तक है और ३० फीट की ऊँचाई पर छतों से पटी हुई हैं। रात्रि में सड़कों की छतों में सैकड़ों लालटेनें जलती हैं। मन्दिर के सामने सोने का मुलम्मा किया हुआ बड़ा स्तम्भ है जिसके पास १३ फीट ऊँचा ८ फीट लम्बा और ६ फीट चौड़ा बड़ा नन्दी बैठा है। रामेश्वर जी का मन्दिर १२० फीट ऊँचा है। तीन ड्योढ़ी के भीतर शिव जी का प्रख्यात लिङ्ग है। वहाँ की रीति के अनुसार किसी यात्री को मन्दिर में जाकर निज हाथ से रामेश्वर जी को जल चढ़ाने का अधिकार नहीं है। कोई कोई धनी लोग पण्डों को प्रसन्न करके चढ़ा लेते हैं।

श्री रामेश्वर जी के मन्दिर के जगमोहन से उत्तर काशी विश्वेश्वर का मन्दिर है जिसको हनुमान जी ने स्थापित किया था। लोग पहले काशी विश्वेश्वर का दर्शन करके तब रामेश्वर का दर्शन करते हैं। स्कन्द पुराण में लिखा है कि रामचन्द्र जी की ऐसी ही आज्ञा है।

इन मन्दिरों के पास श्री पार्वती जी का मन्दिर है। तीन ड्योढ़ी के भीतर बहुमूल्य वस्त्र और भूषणों से सुशोभित पार्वती जी की सुन्दर मूर्त्ति है। रात्रि में पचासों, और दिन में भी कई, दीप, मन्दिर में जलते हैं। मन्दिर का जगमोहन बड़ा है और जगमोहन के उत्तर भाग में सुनहले झूलन पर पार्वती जी की स्वर्णमयी सुन्दर छोटी मूर्त्ति है। झूलन के चोर चाँदी के हैं और चन्दन का चवर रखा है। जगमोहन के पूर्व सोने का मुलम्मा किया स्तम्भ है।

स्कन्द पुराण के अनुसार सेतुबन्ध के और उसके समीप के तीर्थों में २४ तीर्थ प्रधान हैं जिनका वर्णन 'प्राचीन कथा' ( प्रा० क० ) में ऊपर कर दिया गया है। उनमें से १ चक्र तीर्थ, २ वेतालवरद, ३ सीतासर, ४ ब्रह्मकुण्ड, ५ अगस्त्य तीर्थ, ६ लक्ष्मीकुण्ड, ७ अग्नि तीर्थ, ८ शिव तीर्थ ६ यमुना तीर्थ, १० गङ्गा तीर्थ, ११ कोटि तीर्थ, और १२ धनुष्कोटि तीर्थ अब तक विद्यमान हैं और उनकी प्रधानता मानी जाती है। इनके अतिरिक्त बहुत से नए तीर्थों की यात्रा अब कराई जाने लगी है।

रामेश्वर टापू के लगभग २० मील पश्चिम समुद्र के तीर सेतुमूल के पास देवीपट्टन का जो तीर्थ है उससे सेतुबन्ध रामेश्वर का क्षेत्र माना जाता

है। वहाँ सुन्दरी देवी का मन्दिर है। देवीपट्टन के पूर्वोत्तर समुद्र की खाड़ी में नव पाषाण अर्थात् नग्रह हैं जिनको कहा जाता है कि श्री रामचन्द्र जी ने सेतु बांधते समय स्थापित किया था। उनमें ग्रहों के कुछ आकार नहीं हैं इसीलिए 'नव पाषाण' कहलाते हैं। उनके पास समुद्र के जल में श्री-रामचन्द्र जी की चरण पादुका है और किनारे पर चक्रतीर्थ है जिसमें यात्रीगण स्नान करते हैं।

चक्रतीर्थ के दक्षिण भाग में वेतालवरद नामक तीर्थ है।

रामेश्वरपुरी से चार पाँच मील दूर समुद्र के किनारे पर सीताकोटि नामक तीर्थ है, वहाँ के कूप का जल बहुत मीठा है।

रामेश्वरपुरी की परिक्रमा ५ मील की है और उसकी परिक्रमा में समुद्र की रेती में ब्रह्मकुण्ड मिलता है।

रामेश्वर जी के मन्दिर के पूर्वोत्तर में चार-पाँच सौ गज की दूरी पर अगस्त्य तीर्थ नामक बावली है।

रामेश्वर जी के मन्दिर के पूर्व के समुद्र के एक घाट को अग्नि तीर्थ कहते हैं।

रामेश्वर जी के मन्दिर से कुछ हट कर शिवतीर्थ नाम का एक तालाब है।

कोटितीर्थ, यमुना तीर्थ और गङ्गातीर्थ रामेश्वर जी के मन्दिर के समीप कूप हैं और लक्ष्मीतीर्थ बावली है।

रामेश्वर जी से १२ मील दक्षिण धनुष्कोटि तीर्थ है जो धनुष तीर्थ करके प्रसिद्ध है। वहाँ भूमि की नोक पानी के भीतर चली गई है। उसके एक बगल के समुद्र को महोदधि और दूसरी तरफ के समुद्र को रत्नाकर कहते हैं। बीच में बालू का मैदान है।

देवीपट्टन से लगभग २५ मील पश्चिम समुद्र के किनारे पर दर्भ शयन तीर्थ है। श्री रामचन्द्र जी ने लङ्का पर आक्रमण करने के समय समुद्र से मार्ग माँगनेके लिए उसी स्थान पर तीन दिन तक दर्भ अर्थात् कुश के आसन पर शयन किया था।

श्री रामेश्वर मन्दिर के भीतरी कुओं का जल मीठा और बाहर का खारा है। रामेश्वर जी से दो मील की दूरी पर एक रामझरोखा नामक ऊँचा पर्वत का टीला है। कहावत मशहूर है कि—

राम झरोखा बैठ कर,
सब का मुजरा लेंय।
जैसी जाकी चाकरी,
वैसी वाको देंय ॥

कहते हैं कि वानर भालुओं का यहाँ पर बैठकर रामचन्द्र जी ने निरीक्षण किया था, और उन्हें राम झरोखा पर से ही कार्य्य करने को उत्साहित किया था।

५७३ रावण कोटा—( देखिए लङ्का )

५७४ रावण हृद—( पश्चिमी तिब्बत में एक झील )

कहा जाता है कि रावण प्रति दिन इस झील में स्नान करके कैलास में महादेव जी का पूजन करता था। झील ५० मील लम्बी और २५ मील चौड़ी है जिसके बीच में एक पहाड़ी है। झील के किनारे पर एक बौद्ध सङ्घाराम और रावण की बहुत बड़ी मूर्त्ति है।

५७५ रावल—( संयुक्त प्रान्त के मथुरा ज़िले में एक स्थान )

रावल का प्राचीन नाम अष्टिग्राम है। यह श्री राधा जी की जन्मभूमि है। उनकी आयु का प्रथम वर्ष यहीं व्यतीत हुआ था। इसके बाद वे बरसाना गई थीं। ( देखिए मथुरा )

५७६ रीवाँ—( मध्य भारत की एक रियासत )

इसके प्राचीन नाम अधिराज और करूष मिलते हैं।

सहदेव ने अपने दिग्विजय में इसे जीता था।

रीवाँ दन्तवक्र का राज्य था जिसका बध श्रीकृष्ण ने मथुरा में किया था।

पद्मपुराण, पातालखण्ड, अध्याय ३५ में श्रीकृष्ण द्वारा दन्तवक्र के बध की कथा है।

महाभारत सभापर्व अध्याय ३० के अनुसार सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा में इस राज्य को जीता था।

रीवाँ एक अति प्राचीन राज्य है जिसके नरेश बान्धवेश कहलाते हैं। अमरकण्टक जहाँ से पवित्र नर्मदा नदी निकलती है, इसी राज्य में है। वहाँ राज्य की ओर से मन्दिरों में राग भोग का प्रबन्ध है।

५७७ रुआलसर—( पञ्जाब प्रांत के मण्डी राज्य में एक तीर्थ )

तिब्बत में बौद्ध धर्म स्थापित करने वाले महात्मा पद्म सम्भव का यह निवास स्थान था।

रुआलसरभील के किनारे पद्म सम्भव का मन्दिर है जहाँ चीन, जापान और तिब्बत के यात्री दर्शनों को आते हैं। हिंदू जनता लोमश ऋषि करके उनका पूजन करती है।

५७८ रुद्रनाथ—( देखिए केदारनाथ )

५७९ रुद्रप्रयाग—( हिमालय पर्वत पर संयुक्त प्रांत में टेहरी गढ़वाल राज्य का एक स्थान )

रुद्रप्रयाग ही में श्री महादेवजी ने महर्षि नारद को सङ्गीत की शिक्षा दी थी।

( स्कंद पुराण केदारखण्ड प्रथम भाग, ६३ से ७० वाँ अध्याय ) पूर्व काल में महामुनि नारद जी ने रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी के तट पर जहाँ शेषादिक नाग तप करके सदाशिव के भूषण बन गए थे, एक चरण से खड़े होकर सौ वर्ष तक महादेव जी का कठिन तप किया। भगवान शिवजी पार्वती के साथ नन्दी पर चढ़े प्रकट हुए और उसी समय उन्होंने छः रागों को उत्पन्न किया। एक-एक राग की पाँच-पाँच रागनियाँ और आठ-आठ पुत्र तथा आठ-आठ पुत्रवधू हुईं। नारद ने सदाशिव के सहस्र नाम से स्तुति की और कहा कि आप नाद रूप हो और नाद आपको परम प्रिय है। इसलिए मैं उसको जानना चाहता हूँ। शिवजी ने प्रसन्न होकर नाद के शास्त्र का संपूर्ण भेद उनको बता दिया। उस प्रदेश में ३ लाख १० सहस्र तीर्थ विद्यमान हैं और नाग पर्वत स्वर्ग के समान है।

( उत्तर भाग, १८ वाँ अध्याय ) अलकनन्दा और मन्दाकिनी के सङ्गम के समीप रुद्रक्षेत्र है।

श्रीनगर से ४८ मील अलकनन्दा के बाँए किनारे पर अलकनन्दा और एक छोटी नदी के सङ्गम के पास रुद्रप्रयाग बना है।

५८० रेंड़ीग्राम—( देखिए शालग्राम )

५८१ रैला—( देखिए हरद्वार )

५८२ रोमिन देई—( देखिए भुइला डीह )

५८३ रोहतास—( बिहार प्रांत में शाहाबाद जिले में एक नगर )

यहाँ का क़िला राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व का बनवाया हुआ है। इस स्थान के पुराने नाम रोहित व रोहिताश्व हैं। रोहिताश्व ने इस नगर को बसाया था।

[ महाराज रामचन्द्र जी के पूर्वज, अयोध्या नरेश सत्यवादी हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व थे। जब राजा हरिश्चन्द्र ने अपने को डोम के हाथ काशी में बेच दिया था तो बालक रोहिताश्व के शव पर का कफ़न अपनी वस्त्रहीन रानी से माँगने पर हरिश्चन्द्र के सामने भगवान प्रकट हुए थे। ]

गुप्तकाल और मध्यकाल तक,रोहतास का दुर्ग भारतवर्ष के सुदृढ़ दुर्गों में से एक रहा है। महाराज मानसिंह ने १५९७ ई० में जब वे बङ्गाल और बिहार के सूबेदार थे इस किले की मरम्मत कराई थी।

## ल

५८४ लखनऊ—( सयुक्त प्रदेश में एक प्रसिद्ध नगर )

इसका प्राचीन नाम लक्ष्मणपुरी था। महाराज रामचन्द्र जी के भ्राता लक्ष्मणजी ने यह नगर बसाया था।

लखनऊ भारतवर्ष का एक विशाल नगर और अवध की राजधानी है। यहाँ की रमणीयता भारतवर्ष भर में विलक्षण है। लखनऊ इन दिनों संयुक्त प्रांत की राजधानी बना हुआ है।

'मच्छी भवन' की दीवार के भीतर लक्ष्मण टीला नामक ऊँची भूमि है, इसके चारों ओर लक्ष्मण जी का नगर था। औरंगजेब ने उस पवित्र स्थान को नष्ट-भ्रष्ट करके लक्ष्मण टीला पर मस्जिद बनवा दी है।

अवध के नवाब आसफ़ुद्दौला ने फैजाबाद से हटाकर लखनऊ में राजधानी स्थापित की और एक बड़ा इमामबाड़ा बनवाया। रेज़ीडेंसी, दिलकुशा और लाल बारादरी यहाँ सआदत अलीख़ाँ ने बनवाये, और नासिरुद्दीन हैदर ने छतर मंजिल, तथा वाजिदअली शाह ने कैसरबाग बनवाया। यहाँ पर नवाबी की इमारतें देखने योग्य हैं।

हिंदी भाषा के निम्नांकित अच्छे कवि लखनऊ में हो गए हैं। बेनी-प्रवीन वाजपेयी ( सवा सौ वर्ष पूर्व )।

रसरंग ( सौ वर्ष पूर्व )

ललितकिशोरी साह कुन्दनलाल ( पचहत्तर वर्ष पूर्व )। ललित किशोरी जी जाति के वैश्य, प्रसिद्ध साह बिहारीलाल के पौत्र थे। १९११ वि० में यह

श्री वृन्दावन चले गए और वहाँ गोस्वामी राधागोविन्द के शिष्य हो गए। १६१७ वि० इन्होंने वृन्दावन में साह जी का प्रसिद्ध मन्दिर बनवाना आरंभ किया। जिसमें मूर्ति स्थापना सं० १६२५ वि० में हुई।

५८५ लखनौती—( बंगाल प्रांत के मालदा ज़िले में एक स्थान )

इसका प्राचीन नाम लक्ष्मणवती था। गौड़ भी इसे कहते थे। सेन राजाओं के समय में यह बंगाल की राजधानी थी। राजा लक्ष्मणसेन के नाम पर इसका यह नाम पड़ा था।

लखनौती में जयदेव जिन्होंने 'गीत गोविन्द' लिखा है, उमापतिधर जिन्होंने व्याकरण पर भाष्य लिखा है, गोवर्धनाचार्य जिन्होंने 'आर्य सप्तशती' लिखी है, हलायुध जिन्होंने 'शब्दकोष' लिखा है, धोयी जिन्होंने 'पवनदूत' लिखा है, श्रीधरदास जिन्होंने 'कर्णामृत' लिखा है, तथा अनेक अन्य विद्वान् रहे हैं।

लक्ष्मणसेन ने ११०८ ई० से लक्ष्मणवती में लक्ष्मण सम्वत् का आरंभ किया था।

लखनौती गंगा के बाँए किनारे पर स्थित है। यह गौड़ देश की राजधानी होने के कारण ही गौड़ भी कहा जाता था।

५८६ लङ्का—( भारतवर्ष के दक्षिण में प्रसिद्ध टापू )

महाराज रामचन्द्र जी ने लङ्का पर चढ़ाई करके वहाँ के राजा रावण और उसके भाई कुम्भकर्ण को मारा था, और लक्ष्मण ने मेघनाद को (जिसे इन्द्रजीत भी कहते हैं) मारा था। रावण, महारानी सीता जी को पञ्चवटी (नासिक) से हर ले गया था)

हनुमान जी जब सीताजी को खबर लेने गए थे तो लङ्का की अशोक वाटिका में उन्होंने सीता जी को पाया था।

हनुमान जी ने लङ्का की राजधानी में आग लगा दी थी, और सीता जी का समाचार रामचन्द्र जी को पहुँचाया था।

लक्ष्मण जी को मेघनाद से युद्ध में भारी चोट आई थी और वे मृत्युप्राय हो गए थे। हनुमान जी धौलागिरि पर्वत को उठा कर ले गए थे जिस पर सञ्जीवनी बूटी थी और उससे लक्ष्मणजी की प्राण रक्षा हुई थी।

रावण और उसकी सेना का संहार करके रामचन्द्र जी ने सीता जी को पाया था और भक्त विभीषण को लङ्का का राज्य प्रदान किया था।

गया के बोधि वृक्ष की एक शाखा को लेकर महाराज अशोक के पुत्र, महेन्द्र और पुत्री सङ्घमित्रा लङ्का आए थे और यहाँ बौद्ध मत फैलाया था।

लङ्का के मनिहठपुर में भगवान् बुद्ध का एक दाँत रखखा है।

लङ्का का प्राचीन नाम सिंहल द्वीप है। बौद्ध लोग इसे ताम्र पर्णी कहते थे।

प्रा० क०— वाल्मीकीय और तुलसीकृत रामायण, रावण और लङ्का की कथा से परिपूर्ण है और सब कोई उसे जानते हैं इससे यहाँ उसका उल्लेख करना निरर्थक है।

ईस्वी सन् से ३०० वर्ष पहिले महाराज अशोक के पुत्र महेन्द्र और पुत्री सङ्घमित्रा, सिंहलद्वीप (लङ्का) में गया के बोधि वृक्ष की एक शाखा को लेकर आए थे। सिंहल नरेश ने इनका बड़ा आदर किया और इन्होंने अपने प्रचार के प्रभाव से सारे द्वीप को बौद्ध मतावलम्बी बना लिया। आज भी यहाँ भगवान् बुद्ध का ही मत प्रचलित है। वैसे थोड़े बहुत सभी धर्मों के लोग बस गए हैं। रामग्राम (रामपुर देवरिया) से भगवान् बुद्ध का दाँत लङ्का लाया गया था और वहाँ अब भी है।

व० द०—इस समय लङ्का की राजधानी कोलम्बो है। यहाँ से ६५ मील पर नूरानिया शहर है। यह शहर लङ्का का कश्मीर कहलाता है। यहाँ से दो मील की दूरी पर, चार पाँच मील के घेरे में पहाड़ों से घिरा हुआ एक मैदान है। यही रावण की अशोकवाटिका है। अब यहाँ पर एक अति सुन्दर बगीचा है। कहते हैं कि सारे एशिया में इसके मुकाबले का दूसरा बाग़ नहीं है। पहाड़ की तलैटी में यहाँ पत्थर का बना हुआ एक मन्दिर है जिसमें सीता जी की मूर्ति विद्यमान है। पास ही की एक चट्टान से एक नदी 'गगा' निकलती है, यहाँ पर एक तालाब है जिसे सीता कुण्ड कहते हैं।

अशोकवाटिका से हटकर पाँच मील का एक मैदान है। इसकी भूमि जल कर राख हो चुकी है। सीता माता जी के मन्दिर के पास मिट्टी साधारण प्रकार की है पर इस मैदान की मिट्टी बिल्कुल काली और भस्मा जैसी है। यहाँ पर जो घास पैदा होती है उसका निचला भाग हरा रहता है पर ऊपर का भाग जला सा रहता है। पशु इस घास को नहीं खाते। भगवान् बुद्ध को माननेवाले हिन्दू बताते हैं कि यहाँ रावण राजा की राजधानी थी जिसे हनुमान जी ने जला दिया था। आजकल इस मैदान का नाम "वीर पार" है। इससे कुछ फासले

पर्वत हुगलाथीक नामक पहाड़ है जिसका घेरा ४ मील है। इस पर जड़ी बूटियाँ बहुत मिलती हैं। यूरोपियन लोग यहाँ के महन्त को साथ लिए बिना इस पहाड़ पर नहीं चढ़ते। लङ्का के रहने वालों का कहना है कि हनुमान जी इसी पहाड़ को उठा कर लाए थे, और लक्ष्मण जी के मूर्छित होने पर यहीं से सञ्जीवनी बूटी मिली थी।

अशोकवाटिका से ४०-मील के फ़ासले पर एक पुराना शहर रत्नापुर है जिसे अंग्रेज छोटा इङ्गलैण्ड भी कहते हैं। यह शहर अशोकवाटिका से निकलने वाली गंगा के दोनों किनारों पर बसा है। लोग बताते हैं कि अपनी पराजय निकट आने पर रावण ने अपने कुल रत्नादि यहाँ दबा दिए थे। अब भी यहाँ नीलम, पुखराज, तराशे हुए जवाहरात, हीरे, सोना, चाँदी काफी निकलते हैं। कारीगर लोग सौ-पचास फुट की मिट्टी खोद कर खाकी रंग की मिट्टी निकालते हैं और इसे छान कर उसमें से कीमती पत्थर निकाल ले जाते हैं।

लङ्का का जो तट बङ्गाल की खाड़ी से मिलता है उस पर काफी दूर तक एक पहाड़ चला गया है। यहाँ सब्जी बहुत है तथा बाज जगहों पर इतने सुन्दर प्राकृतिक दृश्य देखने में आते हैं कि इन्हें देखकर चित्त मोहित हो जाता है। बहुत से योगी और साधु तथा महात्मा इस पहाड़ पर तपस्या करते हुए मिलते हैं। डेढ़ मील की दूरी पर समुद्र बहुत गहरा है। किनारे पर हनुमान जी का एक मन्दिर है, इसके पुजारी बताते हैं कि रावण के सोने की लङ्का इसी स्थान पर समुद्र में डूब गई थी। इसके एक तरफ लम्बा पहाड़ और दूसरी ओर समुद्र में जगह-जगह चट्टानों को देखकर यही प्रतीत होता है कि रावण का महल या क़िला इस जगह रहा होगा और रावण ने सुरक्षित रहने के विचार से इसे पहाड़ों के बीच में बनाया होगा। लंका के रहने वाले अब तक इसे 'रावण कोटा' या रावण का क़िला कहते हैं।

लङ्का में अनिरुद्धपुर के प्रसिद्ध विशाल बौद्ध मन्दिर में भगवान् बुद्ध का दांत रखा है। पहिले यह दांत रामपुर देवरिया (संयुक्त प्रदेश) में था। लोग असल दाँत को नहीं देख सकते। कदाचित् एक छोटे हाथी के दांत के भीतर यह रखखा है। बौद्ध-संसार से लोग यहाँ दर्शनों को आते हैं और मन्दिर की भारी प्रतिष्ठा करते हैं।

लङ्का में सुमन कूट, समन्तकूट, या श्री पद नामकी पहाड़ी है जहाँ पर चरण चिन्हों की पूजा हिन्दू, बौद्ध और मुसलमान सभी करते हैं, हर मजहब के लोग

उन चरण चिन्ह को अपने अवतार या पैगाम्बर का चरण चिन्ह समझते हैं। यह पहाड़ी विदेशी भाषा में एडम्सपीक ( Adam's Peak ) कहलाती है।

कोलम्बो से ४० मील पर एक स्थान निकुम्भिला है, यहाँ इन्द्रजीत ने यज्ञ रचा था।

५८७ ललित कूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

५८८ लवन अथवा लाउन—( देखिए नासिक )

५८९ लालपुर—( देखिए मँदावर )

५९० लाहरपुर—( सयुक्त प्रान्त के सीतापुर ज़िले में एक कस्बा )

यह अकबर के सुप्रसिद्ध मन्त्री राजा टोडरमल की जन्मभूमि है।

राजा टोडरमल की चलाई हुई मालगुजारी की प्रणाली आज तक भारतवर्ष में प्रचलित है।

राजा टोडरमल से पहिले, प्रजा से मालगुज़ारी पाने का कोई पक्का उसूल नहीं था और न भूमि की नाप परताल थी। राजा टोडरमल ने पहिले पहिल नाप कराई, परगना आदि मुक़र्रर किए और राज-कर का नियमित रूप में सिलसिला डाला। उसी की नक़ल अंग्रेजों ने की और उसी प्रणाली पर आज तक चला जा रहा है।

५९१ लाहुर—( उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त के पेशावर जिले में एक स्थान )

इसका प्राचीन नाम शालातुर है। सुविख्यात पाणिनि का यहां जन्म हुआ था।

ह्यानचाँग ने लिखा है कि पाणिनि का जन्मस्थान ओहिन्द से ३½ मील पर है और शालातुर करके प्रसिद्ध है। पाणिनि संस्कृत के, बल्कि संसार के सबसे बड़े व्याकरणाचार्य ( Grammarian ) हुये हैं जिनका रचा *हुआ ग्रंथ संस्कृत व्याकरण में प्रमाण है और जगत्प्रसिद्ध है।*

पाणिनि ने अपने सूत्रों में व्यासकृत महाभारत के वासुदेव और अर्जुनादिक व्यक्तियों की चर्चा की है अतः वे व्यास जी के पीछे हुये हैं, और महर्षि पातञ्जलि ने पाणिनीय व्याकरण पर महा भाष्य लिखा है अतः वे पाणिनि से पीछे हुए हैं।

लाहुर श्रोहिन्द से चार मील पर और अटक से १६ मील पूर्वोत्तर है। 'शालातुर' का 'लाहुर' हो जाना कोई अचम्भे की बात नहीं। 'शा' बोलचाल में गिरा दिया गया जैसे 'सिन्धु' नदी से 'इन्दु' नदी ( इन्डस )। इसी प्रकार 'शालातुर' से 'लातुर' और फिर 'लाहुर' हो गया।

५९२ लाहौर—( पाकिस्तानी पंजाब की राजधानी )

कहा जाता है कि महाराज रामचन्द्र के पुत्र लव ने लाहौर बसाया था।

यहाँ सिक्खों के चौथे गुरु रामदासजी का जन्म हुआ था।

सिक्ख धर्म के आदि ग्रन्थकर्त्ता और पाँचवें गुरु अर्जुनदेव जी ने यहाँ शरीर छोड़ा था और उनकी समाध यहाँ है।

पञ्जाब केशरी महाराज रणजीतसिंह की समाध यहीं है।

महाकवि चन्द बरदाई का जन्म लाहौर में हुआ था।

श्री महाराज रणजीतसिंह का गुम्बजदार समाध मन्दिर संगमर्मर का बना है। इसकी सुनहली छत में उत्तम रीति से शीशे जड़े हैं और बारहदरी के बाहर चारों ओर दर्पण जड़ कर चाँदी और सोने का कुन्दन हुआ है। बारहदरी के संगमर्मर के फर्श के बीच में संगमर्मर का चबूतरा है जिस पर संगमर्मर काट कर एक बड़ा कमल का फूल और उसके चारों तरफ ग्यारह छोटे कमल के फूल बनाए गए हैं। मध्य के फूल के नीचे महाराज के मृत शरीर की भस्म रक्खी गई थी। दूसरे ११ कमल उनकी चार स्त्रियों और सात दासियों के स्मरणार्थ बने हैं जो उनके साथ सन् १८३९ ई० में सती हुई थीं। प्रतिदिन महाराज की समाध के समीप आदि सिक्ख ग्रंथ का पाठ होता था।

महाराज रणजीतसिंह का जन्म गुजराँवाला में हुआ था। जिस मकान में जन्म हुआ था वह बाजार के समीप है। भारतवर्ष के पुनः स्वतंत्र होने तक यह मातृभूमि के अन्तिम सिक्ख शासक थे। महाराज के प्रसिद्ध सेनापति हरीसिंह का समाध गुजराँवाला में है।

लाहौर में महाराज रणजीतसिंह की छतरी के पास ही गुरुअर्जुन की सादी छतरी है।

गुरु रामदास जी के जन्म स्थान पर गुरुद्वारा 'चूनी मण्डी' बना है।

जैसे कहावत है कि लाहौर को महाराजा रामचन्द्र के पुत्र लव ने बसाया था, वैसे ही यह कहा जाता है कि कसूर (लाहौर जिले में ) को लव के भाई कुश ने बसाया था।

सम्राट जहाँगीर और नूरजहाँ के मक़बरे शहर से बाहर लाहौर में हैं। उनकी हीन दशा पर दुख होता है। जहाँगीर का शालामार बाग और अनेक उत्तम इमारतें इस नगर में हैं।

महमूद गज़नवी ने इस नगरका नाम महमूदपुर रक्खा था पर चला नहीं।

लाहौर पिछले दिनों बहुत बढ़ता जा रहा था। देहात को सुरक्षित न पाकर, भाग भाग कर लोग (हिन्दू जनता) लाहौर में बस रहे थे। इस कारण प्रान्त की राजधानी होने के अतिरिक्त उसके उन्नति के और भी साधन बन गए थे, परन्तु पंजाब के टुकड़े होते ही सारे गैर मुसलिम निकाल दिये गये या मारडाले गये।

[ सिक्ख मत के चतुर्थ गुरु श्री रामदास जी का पहिला नाम भाई जेठा जी था। आपका जन्म कार्त्तिक बदी २, वि० सं०१५६१ ( १५३४ ई० ) को लाहौर शहर का चूनी मण्डी में सोढ़ी हरिदास जी खत्री के घर माता दया कुँवर के उदर से हुआ था। श्री गुरु अमरदास जी, तृतीय सिक्ख गुरु, की सुपुत्री बीबी भानी जी के साथ आपका विवाह हुआ, जिससे तीन पुत्रों पृथ्वी चन्द, महादेव और अर्जुनदेवजी ( पञ्चमगुरु ) ने जन्म लिया। गुरु रामदास ही के समय से योग्य पुत्र को गुरुआई की गद्दी पाने की प्रथा सिक्ख धर्म में प्रचलित हुई।

विवाह के पश्चात् भाई जेठा जी गोइँदवाल में गुरु अमरदासजी के पास रहने लगे। स० १६२७ वि० में गुरु अमरदासजी की आज्ञा से जेठा जी ने अमृतसर के सरोवर को बनवाना आरम्भ किया और १६३१ वि० में प्रसन्न होकर गुरु अमरदासजी ने भाई जेठा जी का नाम श्री रामदास रक्खा और गुरुआई की गद्दी बख्श दी। कुछ समय गोइँदवाल में रहकर गुरु रामदास जी सरोवर का काम पूरा करने अमृतसर चले गए और एक बाजार बसाया तथा सिक्खों को भी वहाँ मकान बनाकर रहने की आज्ञा दी। यह बाजार अब 'गुरुबाज़ार' के नाम से अमृतसर में प्रसिद्ध है।

अपने पिता के स्वर्गवास का समाचार पाकर गुरु जी लाहौर गए और अपने घर को गुरुद्वारा बना दिया जो अब गुरुद्वारा 'जन्मस्थान' कहलाता है। वहाँ से अमृतसर आकर फिर सरोवर का काम सम्भाला। भादों सुदी परिवा, वि० स० १६३८ को गुरु रामदासजी ने अपने छोटे सुपुत्र अर्जुनदेव जी को गुरुआई दी और गोइँदवाल जाकर भादों सुदी तीज, वि० स० १६३८ (१५८१ ई०) को परलोक गमन किया।]

[ चन्दवरदाई का जन्म अनुमान से ११८१ वि० के लगभग लाहौर में हुआ था। यह बाल्यावस्था से ही अजमेर चले गये और भारत के अन्तिम हिन्दू सम्राट महाराज पृथ्वीराज के साथ रहने लगे और उनके मंत्री हो गए। जब पृथ्वीराज के नाना अनगपाल से पृथ्वीराज को दिल्ली का राज्य मिला तब यह उनके साथ दिल्ली चले आए और महाराज पृथ्वीराज के तीन अमात्यों मे से एक थे। पृथ्वीराज के यहाँ स्वजनों की भाँति इनकी प्रतिष्ठा थी। जब पृथ्वीराज की बहिन पृथा का विवाह चित्तौड़ नरेश समरसिंह से हुआ तो चन्दवरदाई के पुत्र जल्हन को समरसिंह हठ करके दहेज में लेगए। 'पृथ्वीराज रासो' जो चन्द ने लिखा है उसका अन्तिम भाग जल्हन ही का लिखा हुआ है। चन्द अपनी रचना जल्हन को देकर अपने स्वामी पृथ्वीराज के उद्धारार्थ गौर प्रदेश को चले गए थे और वहीं अपने स्वामी समेत सम्भवतः स० १२४६ वि० में देहान्त हुआ। यह जाति के ब्रह्मभट्ट थे। कहते हैं कि मेवाड़ राज्य का 'राजौराराय' वंश जल्हन से ही आरम्भ होता है।

हिन्दी के वास्तविक प्रथम कवि चन्दवरदाई ही हैं। जैसे अंग्रेज़ लोग चासर को अंग्रेज़ी कविता का पिता समझते हैं, वैसे ही चन्द हिन्दी कविता के जन्मदाता प्रख्यात हैं।

शहाबुद्दीन गौरी को महाराज पृथ्वीराज ने कई बार हरा हरा कर छोड़ दिया था पर शहाबुद्दीन ने एक बार पृथ्वीराज को हराया और वह भी कपट से, और वहीं उन को अंधा कर दिया। अंधा करके वह उन्हें गौर ले गया। चन्द वहीं अपने स्वामी के पास चले गए थे। एक किंवदन्ति प्रसिद्ध है कि शहाबुद्दीन को जब यह मालूम हुआ कि महाराज शब्दभेदी बान चलाना जानते हैं तब उसने उनका कौशल देखना चाहा। वह दुमंज़िला पर जा बैठा और एक तोता पिंजड़े में टांगा गया। नेत्रहीन पृथ्वीराज नीचे लाए गए। चन्द भी साथ थे। उसी समय चन्द ने दोहा द्वारा पूरा वर्णन शहाबुद्दीन की दूरी आदि का करके पृथ्वीराज से कहा कि सात बार तुम चूक चुके हो अब चूकने का वक्त नहीं है। यथाः—' · अंगुल चार प्रमान। सात बार तव चुकियो अब न चुकु चौहान ॥'

जैसे ही गौरी ने तीर चलाने को अपने मुख से कहा, शब्दभेदी पृथ्वीराज ने शब्द पे तीर मारा और शहाबुद्दीन की लाश नीचे आ गिरी। इस घटना का उल्लेख इतिहास में नहीं किया गया है पर जल्हन के रासो में पता दिया है।

५९३ लुम्बनी—( देखिए भुइलाडीह )

५९४ लोव सूना वन—( देखिए गगाखों )

५९५ लोमश गिरि—( देखिए नागार्जुनी पर्वत )

५९६ लौरिया नवन्दगढ़—(बिहार प्रान्त के चम्पारन ज़िले में एक स्थान)

यह स्थान स्वायम्भुव मनु के पुत्र उत्तानपाद की राजधानी होना कुछ लोग बताते हैं [परन्तु उनका सही स्थान बिठूर प्रतीत होता है। (देखिए बिठूर)]

स्वायम्भुव मनु जी ब्रह्मा की सृष्टि में पहिले हुए उनके और शतरूपा के पुत्र, उत्तानपाद, ब्रह्मावर्त्त के राजा थे। उत्तानपाद के पुत्र ध्रुव जी थे और उत्तानपाद की भगनी देवहुती से भगवान कपिलदेव का जन्म हुआ था।

राजरपियर्स का ईसा से हज़ार वर्ष पहिले के सिक्के लौरिया नवन्दगढ में मिले थे।

नवन्दगढ़ में पुराने गढ़ के लम्बे चौड़े निशान हैं। इसी को राजा उत्तानपाद का निवास स्थान कहा जाता है। यहाँ मिट्टी के बहुत से स्तूप हैं। जान पड़ता है कि ये बौद्ध काल से पहिले के हैं और पुराने राजाओं के कुछ चिह्न हैं। लौरिया गांव से आध मील पूर्वोत्तर में अशोक का बौद्ध धर्म्म का स्तम्भ है। यह गाव बेतिया से १५ मील उत्तर में है और बेतिया व नैपाल के मार्ग में पड़ता है।

५९७ वकेश्वर तीर्थ—(देखिए नागोर)

५९८ वड़नगर वा बडनगर—(उत्तरी गुजरात में एक शहर)

इसका पुराना नाम आनन्दपुर है। कल्पसूत्र के निर्माता भद्रबाहु ने ४११ ई० म अपना यह ग्रन्थ आनन्दपुर मे रचाया था जो उस समय गुजरात के राजा ध्रुव सेन द्वितीय की राजधानी था।

आनन्दपुर मे ही महादेव जी के अचलेश्वर नामक लिङ्ग की सर्व प्रथम स्थापना हुई थी।

इस स्थान का आधुनिक नाम नगर था, यही चमत्कार नगर है जहां नागर ब्राह्मणों की प्राचीन बस्ती थी। नागर ब्राह्मणों से ही नागरी की उत्पत्ति मानी जाता है।

५९९ वमिलपुर—( काठियावाड़ में एक बन्दरगाह )

इसका प्राचीन नाम वलभी है।

भट्टी काव्य के रचयिता भर्तृहरि तथा कल्पसूत्र के निर्माता भद्रबाहु वलभी में बहुत काल तक रहे थे।

पाँचवीं शताब्दी से वलभी सुराष्ट्र (गुजरात) के मैत्रक राजाओं की राजधानी हुई और तीन शताब्दियों तक (४८० ७८०) तक बनी रही।

वलभी के मैत्रक राजा शैव थे पर बौद्ध धर्म पर भी श्रद्धा रखते थे। धर्म, कलाकौशल और विद्या में इन शासकों की बड़ी आस्था थी और इन की उन्नति के लिए उन्होंने अपने समृद्ध नगर वलभी में सभी प्रकार के प्रयत्न किए। ह्वानचांग के वर्णन से विदित होता है कि सातवीं शताब्दी में वलभी में कई सौ करोड़पति व्यक्ति थे और यह नगरी विदेशों से बहुमूल्य वस्तुओं के आयात निर्यात की केन्द्र थी। उस समय यहाँ लगभग १०० सङ्घाराम थे जिनमें ६००० साधु रहते थे। कई सौ देव मन्दिर भी थे।

वलभी का विश्वविद्यालय तक्षशिला और नालन्दा के विश्वविद्यालयों की तरह बहुत प्रसिद्ध तथा उन्नत था। यहाँ व्याकरण, न्याय और तर्क तथा अर्थ शास्त्र की उच्च शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध था। वणिक लोग भारत के सभी भागों से आकर अपने व्यवसाया की शिक्षा वलभी में प्राप्त करते थे। कथा सरित्सागर (३२, ४२) से ज्ञात होता है कि अन्तर्वेदी से वसुदत्त का पुत्र विष्णुदत्त उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए वलभी आया था। यह स्थान भाउ नगर से १८ मील पश्चिमोत्तर में है।

६०० वशिष्ठ आश्रम (कुलें)—(देखिए अयोध्या)
६०१ वसुन्धरा—(देखिए बद्रीनाथ)
६०२ विजय नगर—(देखिए नरवार)
६०३ विजय मन्दरगढ़—(देखिए शोणितपुर)
६०४ विद्यानगर—(देखिए नदिया)
६०५ विनायक द्वार—(देखिए त्रियुगी नारायण)
६०६ विन्ध्यागिरि—(देखिए श्रवण बेलगुल)
६०७ विन्ध्याचल—(संयुक्त प्रान्त के मिरजापुर जिले में एक बस्ती)

भगवती, जिनका नाम पुराणों में कौशिकी और कात्यायनी लिखा है, उनका यह परमधाम है। इसको पम्पापुर कहते थे।

प्रा० क०—(मत्स्य पुराण, १५४ १५६ अध्याय) शिवा जी ने पार्वती जी को काली स्वरूप वाली कहा, इससे वह क्रोधयुक्त हो हिमालय पर्वत पर

अपने पिता के उद्यान में जाकर कठोर तप करने लगीं। ब्रह्मा ने प्रकट होकर पार्वती से वर मांगने को कहा। गिरिजा बोलीं कि मेरा शरीर काञ्चन वर्ण हो जाय। तब ब्रह्मा ने कहा कि ऐसा ही होगा। इसके अनन्तर पार्वती तत्काल ही काञ्चन वर्ण हो गईं और नीली त्वचा रात्रि का स्वरूप होकर अलग हो गई। तब ब्रह्माजी उस रात्रि से बोले कि पार्वती के क्रोध से जो सिंह निकला है वही तेरा वाहन होगा और तेरी ध्वजा में भी यही रहेगा, तू विन्ध्याचल में चली जा वहाँ जाकर तू देवताओं के कार्य को करेगी। तब कौशिकी देवी विन्ध्याचल पर्वत में चली गईं और पार्वती अपना मनोरथ सिद्ध करके शिव जी के पास आईं।

(यही कथा वामन पुराण ५४ से ५६ अध्याय और पद्मपुराण स्वर्ग खण्ड १४ वें अध्याय में है)

(मार्कण्डेय पुराण, ८५ से ६१ वे अध्याय तक) हिमालय पर चण्ड और मुण्ड के आक्रमण करने पर उनको मार कर भगवती ने चामुण्डा नाम पाया। इसके उपरान्त उन्होंने शुम्भ और निशुम्भ को मारा। देवताओं से कहा कि २८ चतुर्युगी में वैवस्वत मन्वन्तर प्रकट होने पर जब दूसरे शुम्भ और निशुम्भ होंगे, उस समय मैं नन्दगोप के घर यशोदा के गर्भ से उत्पन्न होकर उनका नाश करूँगी और विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करूँगी।

(शिवपुराण, २४ वा अध्याय) गिरिजा ने विन्ध्यवासिनी होकर दुर्ग दैत्य को मार डाला तब से उनका नाम 'दुर्गा' प्रकट हुआ।

(महाभारत, विराट पर्व, छठा अध्याय) राजा युधिष्ठिर ने दुर्गा देवी की स्तुति करते समय कहा कि हे देवि! विन्ध्यनामक पर्वत पर तुम्हारा सनातन स्थान है।

घ० द०—विन्ध्याचल की बस्ती गङ्गा के दाहिने किनारे स्थित है। बस्ती के भीतर भगवती का मन्दिर है जिसमें सिंह पर खड़ी २॥ हाथ ऊँची भगवती की श्यामल मूर्ति है। मन्दिर से लगे हुए चारों ओर के दालानों में पण्डित लोग पाठ करते रहते हैं। आस पास अनेक देव मन्दिर हैं और पण्डे बहुत रहते हैं।

६०८ विराट—(राजपूताने के अलवर राज्य में एक स्थान)

महाभारत में मत्स्य देश के राजा विराट की यह राजधानी थी।

अज्ञातवास में पाण्डव यहीं छिप कर रहे थे।

वरदान दिया है और मेरी प्रार्थना से हिमवान के दारुण वृक्ष खण्ड में यह वैद्यनाथ नाम से प्रसिद्ध हुए हैं। मैं उनको नमस्कार कर भुवन के जय करने के लिए जाता हूँ।

व० वृ०—वैद्यनाथ कस्बे में एक बड़ा आँगन है जो एक बड़े पक्के घेरे के भीतर पत्थर से पटा हुआ है। लोग कहते हैं कि इसको पाटने में मिर्जापुर के एक धनी महाजन का एक लाख रुपया खर्च पड़ा था। आँगन के बीच में वैद्यनाथ शिव का शिखरदार पूर्व मुख का बड़ा मन्दिर और बगल में छोटे बड़े २१ मन्दिर हैं। मन्दिरों में सन्ध्या, गौरी, गायत्री, सूर्य्य, लक्ष्मीनारायण और भैरवादिक के मन्दिर हैं। बाकी बहुत से मन्दिरों में शिव लिंग स्थापित हैं। मन्दिर से उत्तर, कस्बे से बाहर शिवगंगा नामक एक बड़ा सरोवर है जिसे कहते हैं कि रावण ने बनाया था। वैद्यनाथ में कोढ़ियों का बड़ा जमाव रहता है, वे लोग रोग से मुक्ति पाने की आशा से यहाँ पड़े रहते हैं।

वैद्यनाथ कस्बे को लोग देवगढ़ या देवघर भी कहते हैं। महाराज रामचन्द्र जी को भी कहा जाता है कि यहाँ के दर्शन किए थे।

हैदराबाद राज्य में, अहमदनगर से १०० मील की दूरी पर परली ग्राम के पास एक छोटी पहाड़ी पर भी वैद्यनाथ शिव का एक शिखरदार विशाल मन्दिर और एक धर्मशाला है। शिवलिंग आधा हाथ ऊँचा है। मन्दिर में रात दिन दीप जलता है। पहाड़ी के दोनों ओर पत्थर की सीढ़ियाँ नीचे से ऊपर तक गई हैं। एक ओर परलीग्राम और दूसरी ओर एक छोटी नदी तथा एक पक्का कुण्ड है। दक्षिणी लोग परली वैद्यनाथ ही को शिव के १२ ज्योतिर्लिङ्गों का, वैद्यनाथ लिंग कहते हैं किन्तु शिव पुराण से यह बात सिद्ध नहीं होती।

वैद्यनाथ स्थान को बैजनाथ भी कहते हैं और इसे दक्षिण गोकर्ण तीर्थ भी कहा जाता है। उत्तर गोकर्ण तीर्थ गोलागोकर्णनाथ है।

बैजनाथ नाम के विषय में कहावत है कि एक समय यह स्थान जंगल से ढक गया था और किसी को लिंग का पता न था, उस समय बैजू नामक ग्वाला को स्वप्न में उसका ज्ञान हुआ था और उसने फिर से लिंग को निकाला और शिवजी से वर माँगा कि उसका नाम उनके नाम से पहले चले। सन्थाल परगने का पुराना नाम 'दक्षिण वृक्ष खण्ड' ही बताता है कि यह देश घने जंगल से भरा था।

६१५ वैशाली—( देखिए बसाढ़ )
६१६ व्यास आश्रम – ( देखिए भविष्य बद्री )
६१७ व्यास खण्ड – ( देखिए भविष्य बद्री )
६१८ शङ्कर तीर्थ – ( नैपाल में एक तीर्थ स्थान )
शिव जी ने यहाँ दुर्गा के पाने के लिए तपस्या की थी।

शङ्कर तीर्थ पाटन नगर के बिलकुल नीचे बागमती व मणिमती के संगम पर स्थित है।

६१९ शङ्खोद्धार तीर्थ – ( देखिए बेट द्वारिका )
६२० शरदी – ( कश्मीर राज्य में एक नगर )

शाँडिल्य ऋषि ने, जिन्होंने शाँडिल्य सूत्र की रचना की है, यहीं तप किया था।

यह पीठों में से एक है, जहाँ सती का सिर गिरा था।

शंकराचार्य ने यहाँ शास्त्रार्थ में विजय पाकर पीठ के मन्दिर में प्रवेश किया था।

शाँडिल्य आश्रम – शरदी के अतिरिक्त संयुक्त प्रान्त के फैजाबाद जिले में चितैमँदारपुर स्थान पर भी शाँडिल्य ऋषि का आश्रम था।

६२१ शखन ( देखिए दोहथी )

६२२ शत्रुंजय – ( काठियावाड़ में पाली ताणा राज्य में एक पहाड़ी )
जैनियों का यह सबसे पवित्र स्थान है।

पालीताना ग्राम से शत्रुंजय पर्वत डेढ़ मील पर है। सूरत से उसकी दूरी ७० और भाउनगर से २४ मील है। इसके ऊपर दो चपटे शिखर हैं। एक विशाल दीवार दोनों शिखर और घाटी को घेरे हुए है। इसमें १६ फाटक हैं। घेरे के भीतर हजारों मन्दिर, करोड़ों रुपयों की लागत के हैं। ऐसा जैन मन्दिरों का समूह और कहीं नहीं है। माघ सुदी पञ्चमी को यहाँ मेला लगता है। श्री शत्रुंजय में सन्नाटा रहता है। कहा जाता है कि कभी-कभी प्रातःकाल में बहुत थोड़े समय के लिए घण्टा व घड़ियाल की आवाजें सुनाई पड़ती हैं। पर्वत पर कबूतर, मयूर इत्यादि जीव-जन्तु निर्भय होकर विचरते हैं। पत्तन के राजा कुमारपाल के समय में वागभट्टदेव ने यहाँ के मन्दिरों की मरम्मत एक करोड़ साठ लाख रुपये की लागत से कराई थी।

इस पवित्र पहाड़ी पर रसोई बनाना और सोना जैन लोगों के मत में निषिद्ध है। एक स्थान में इकट्ठा इतने मन्दिरों का जमाव हिन्दू और बौद्ध किन्हीं लोगों के तीर्थों में नहीं है।

६२३ शाँकुल कूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

६२४ शांडिल्य आश्रम ( कुरा )—( देखिए शरदी )

६२५ शांत तीर्थ—( देखिए गगेश्वरी घाट )

६२६ शाकम्भरी दुर्गा—( देखिए त्रियुगी नारायण )

६२७ शाकल—( देखिए स्यालकोट )

६२८ शान्तिप्रद कूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

६२९ शालग्राम—( देखिए शालग्राम )

६३० शाहढ़ेरी—( पाकिस्तानी पंजाब के रावलपिंडी जिले में बड़े खण्डहर )

यह स्थान प्राचीन तक्षशिला है। एक पूर्वजन्म में भगवान बुद्ध ने अपना शिर यहाँ दान में दिया था।

अपने पिता के राज काल में अशोक उनके प्रतिनिधि होकर यहाँ रहे थे। पहिला शताब्दी ईस्वी तक यहाँ का विश्व विद्यालय भारतवर्ष में प्रसिद्ध था। पाणिनि, जीवक और चाणक्य ने यहाँ विद्याध्ययन किया था।

सिकन्दर आक्रम यहाँ ठहरे थे। यहाँ का देशद्रोही राजा सिकन्दर से मिलकर महाराज पुरु, अर्थात् अपने ही देश के विरुद्ध लड़ा था।

भरत के पुत्र तक्ष ने तक्षशिला को बसाया था, और यह गान्धार देश की राजधानी थी।

ह्वानचांग, फाहियान और अन्य चीनी यात्री तक्षशिला आए थे और अपने समय का यह बहुत ही विशाल नगर था। सब बौद्ध यात्री लिखते हैं कि एक पूर्वजन्म में भगवान बुद्ध ने अपना सिर यहाँ दान में दे दिया था। महाराज अशोक ने उस स्थान पर एक भारी स्तूप बनवाया था।

तक्षशिला के राजा ने सिकन्दर का स्वागत किया था और महाराज पुरु के खिलाफ उसकी सहायता की थी। पुरु ने हारकर भी अपने व्यवहार से सिकन्दर पर विजय पाई, और उन्होंने जाते समय पुरु ही को भारतवर्ष में अपना प्रतिनिधि छोड़ा। तक्षशिला का देशद्रोही राजा मुँह ताकता रह गया।

तक्षशिला की तराइयाँ ३ मील लम्बी और दो मील चौड़ी हैं। इस हद के बहुत दूर बाहर तक भी संघाराम आदि के चिन्ह भरे पड़े हैं। इन तराइयों के 'बरग्गाना' स्थान में जो सबसे बड़े स्तूप के चिन्ह हैं, वह महाराज अशोक के बनवाये हुये विशाल स्तूप के हैं, जहाँ भगवान बुद्ध ने किसी पूर्व काल में अपना सिर दान दिया था।

शाहढेरी से कुछ दूर पर सोरव्या है जहाँ रेवत निवास करते थे जिन्होंने वैशाली की बौद्ध महासभा की सभापतित्व की थी।

६३१ शिगणवाडी—( देखिए जाम्ब गांव )

६३२ शिराकोल—( मद्रास प्रान्त के उत्तरी सरकार जिला में एक स्थान )

इस स्थान पर सती का मध्य भाग गिरा था। ५२पीठो में से यह एक है। इसका प्राचीन नाम 'श्री कङ्काली' है।

६३३ शिवपुर – ( देखिए मुइलाडीह )

६३४ शिवप्रयाग—( संयुक्तप्रान्त में हिमालयपर्वत पर टेहरी राज्य का स्थान )

अर्जुन ने यहां योग साधन किया था।

महर्षि मार्कण्डेय ने यहाँ महाशिव का तप किया था।

पौराणिक कथा है कि यहाँ पूर्वकाल में कुटी ने ५५०० वर्ष तक पत्ते में भोजन करके तपस्या की थी। एक समय में इन्द्र यहाँ दैत्यों के भय से छिप कर रहते थे।

इसी स्थान पर भील रूपधारी सदाशिव और अर्जुन का युद्ध हुआ था जिसमें अर्जुन ने पाशुपत अस्त्र प्राप्त किया था।

इस स्थान के अन्य नाम रुद्रप्रयाग, रुद्रप्रयाग और इन्द्रकील पर्वत हैं।

प्रा० क०—( महाभारत, वन पर्व, ३७ वां अध्याय ) अर्जुन तपस्वियों से सेवित अनेक पर्वतों को देखते हुए हिमाचल पर्वत के इन्द्रकील नामक स्थान पर पहुंचे। उस स्थान पर तपस्वी के रूप में इन्द्र ने अर्जुन को दर्शन दिया और कहा कि हे तात ! जब तुम शूलधारी भूतों के स्वामी शिव का दर्शन करोगे तब हम तुमको सब शस्त्र देवेंगे। अर्जुन वहां बैठकर योग करने लगे और शिवजी से पाशुपत अस्त्र प्राप्त किए।

( स्कन्दपुराण, केदार खण्ड, उत्तर भाग पाँचवां अध्याय) मार्कण्डेय और गङ्गा अर्थात् अलकनन्दा के सङ्गम के समीप शिवप्रयाग है। उसी स्थान पर

महर्षि मार्कण्डेय ने सदा शिव का तप किया था और यहीं पर महादेव जी ने इन्द्र पुत्र अर्जुन को दर्शन दिया था।

पाण्डव गण दुर्योधन से जुआ में हार कर १२ वर्ष के लिए वन में गए। अर्जुन अकेले चल कर हिमालय के एक देश में जाकर शिव का तप करने लगे। शिव जी ने अर्जुन को पाशुपत अस्त्र प्रदान किया तब वह वहाँ से चले आये।

( छठा अध्याय ) पूर्वकाल में ढुंढी ने ५५,००० वर्ष तक पत्ते खाकर तप किया था, तभी से यह स्थान ढुंढ प्रयाग करके प्रसिद्ध हो गया।

( चौदहवां अध्याय ) पूर्वकाल में यहां दुष्ट दैत्यों के द्वारा इन्द्र कीले गए थे ) अर्थात् दैत्यों के भय से यहां छिपकर रहे )। इसलिए उस पर्वत का नाम इन्द्रकील हो गया।

ब० द०—शिवप्रयाग मे खाण्डव नदी और अलकनन्दा का सङ्गम है। अलकनन्दा के बाएं किनारे पर गुम्बजदार छोटे मन्दिर में अनगढ़ भीलेश्वर शिवलिङ्ग है। उनका तांबे का अर्घा और चांदी का छत्र बना है। इसी स्थान पर भीलरूपी सदा शिव और अर्जुन का परस्पर युद्ध हुआ था। दुरदम नामक एक छोटी नदी अलकनन्दा के दाहिनी से आकर उसमें मिली है। पुराणों में उस सङ्गम का नाम दुदप्रयाग और उसके पास के पर्वत का नाम इन्द्रकील पर्वत लिखा है। शिवप्रयाग को रुद्रप्रयाग भी कहते हैं।

६३४ शुकतार—( देखिए डेहरा )

६३५ शुक्ल तीर्थ—( बम्बई प्रान्त के भड़ौच ज़िले में एक स्थान )

राजा बलि ने गुरु शुक्राचार्य के साथ, अपना खोया हुआ राज प्राप्त करने के लिए यहाँ यज्ञ किया था।

कातन्त्र व्याकरण के रचयिता आचार्य सर्ववर्मा यहीं के निवासी थे।

भृगु जी, का भड़ौच में आश्रम था, और भृगुकच्छ का दूसरा नाम भृगुपुर है।

प्रा० क०—( कूर्म पुराण, उत्तरार्द्ध, ३६ वां अध्याय ) नर्मदा नदी के शुक्ल तीर्थ के तुल्य दूसरा तीर्थ नहीं है। उसके दर्शन, स्पर्श और स्नान करने से महान पुण्य फल का लाभ होता है। उस तीर्थ का परिमाण एक योजन है। उस तीर्थ के वृक्षों के शिखरों के दर्शन मात्र से ब्रह्महत्या पाप छूट जाता

है। प्रतिपद वैशाख वदी १४ का पार्वती के सहित महादेवजी शिवलोक से आकर यहां निवास करते थे।

मत्स्य पुराण, १४ वें अध्याय में राजा बलि के शुक्ल तीर्थ में अपना खोया हुआ राज्य पाने को यज्ञ करने का उल्लेख है।

चाणक्य ने शुक्ल तीर्थ में निवास किया था।

८०८०—इस स्थान पर ओंकारेश्वर और शुक्ल नामक पवित्र कुण्ड तथा अनेक देव मन्दिर हैं। ओंकारेश्वर के निकट एक मन्दिर में शुक्ल नारायण की मूर्ति है, जहाँ कार्तिक में एक मेला होता है। चन्द्रगुप्त ने आठ भाइयों के मारने के पातक से छूटने के लिए शुक्ल तीर्थ में जाकर स्नान किया था। ग्यारहवीं सदी में अनहिलवाड़ा के राजा ने पश्चाताप करके शुक्ल तीर्थ में निवास कर अपना जीवन व्यतीत किया था।

शुक्ल तीर्थ से एक मील पूर्व मंगलेश्वर के सामने नर्मदा नदी के टापू में कबीर वट नाम से प्रसिद्ध एक बहुत बड़ा वट है। लोग कहते हैं कि कबीर जी की दातुवन से यह वृक्ष हुआ था। वृक्ष का प्रधान जड़ के पास एक मन्दिर है।

कहा जाता है कि भड़ौंचनगर भृगुऋषि का बसाया हुआ है और पूर्व काल में भृगुपुर के नाम से प्रसिद्ध था। नर्मदा के किनारे पर भृगुऋषि का एक प्राचीन मन्दिर है।

६३७ शुघ—( पंजाब प्रान्त के अम्बाला जिले में एक कस्बा )

इसका प्राचीन नाम सुघ्न है और यह कुरुक्षेत्र की प्रसिद्ध राजधानी था।

भगवान बुद्ध ने यहां आकर सदुपदेश दिया था।

यहाँ एक स्तूप में भगवान बुद्ध के नख और केश रखे थे। सारिपुत्र व मुद्गलायन के नख व केश भी दूसरे दो स्तूपों में थे।

ह्वानच्वांग के समय में भी सुघ्न नगर का घेरा ३½ मील था पर शहर का बहुत सा भाग उजड़ा पड़ा था। नगर के बाहर यमुना नदी के समीप महाराज अशोक का बनवाया हुआ स्तूप था, जहां भगवान बुद्ध ने सदुपदेश दिया था। दूसरे स्तूप में भगवान बुद्ध के नख और केश थे। और भी कई दर्जन स्तूप वहाँ थे जिनमें से एक में सारिपुत्र और एक में मौद्गलायन के नख और केश थे।

शुत्र बुढ यमुनानदी (यमुना की पुरानी धारा) पर बसा है और अब एक छोटा सा गाम है। इसके समीप दूसरा ग्राम मांदलपुर है। कहते हैं कि इसे मान्धाता ने बसाया था और १२ कोस में फैला हुआ था। शुघ थानेसर से ३८ मील पर है, और शुघ तथा मांदलपुर दोनों ही पवित्र कुरुक्षेत्र की परिक्रमा के भीतर हैं।

६३८ शृङ्गगिरि—(देखिए शृङ्गेरी)

६३९ शृङ्गीऋषि—(देखिए सिंगरौर)

६४० शृङ्गेरी—(मैसूर राज्य के कदूर जिला में एक गाँव)

यहाँ श्री शङ्कराचार्य जी ने कुछ दिन निवास किया था और शृङ्गेरी मठ की स्थापना की थी।

शारदा देवी का मन्दिर भी श्री शकराचार्य ने यहाँ स्थापित किया था।

शृङ्गेरी से ६ मील पश्चिम शृङ्गगिरि जिसको ऋषि शृंग भी कहते हैं, एक पहाड़ी है। प्रसिद्ध है कि यहाँ शृङ्गी ऋषि का जन्म हुआ था।

(दूसरा शिव पुराण, सातवा खण्ड पहिला अध्याय) अधर्मियों का मत प्रबल होने के समय शिवजी एक ब्राह्मण के घर जन्म लेकर शङ्कर नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने अधर्म का विनाश करके सन्यास धर्म और अद्वैत मत को प्रकट किया।

[महाराज दशरथ के पुत्र न होने के कारण शृंगी ऋषि ने ही पुत्रेष्टि यज्ञ कराया था जिसके फल स्वरूप राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न का जन्म हुआ था। महाराज दशरथ ने अपनी पुत्री शान्ता का विवाह शृंगी ऋषि से कर दिया था।]

शृंगेरी मठ मे श्री शकराचार्य की नियत की हुई गद्दी पर इस समय तक लगातार गद्दी के उत्तराधिकारी लोग होते आए हैं और वे शकराचार्य ही कहलाते हैं। वर्ष में नवरात्रि आदि पर्वों पर कई बार मठ मे बड़ा उत्सव होता है। शृंगेरी गाँव के पास टीले पर शारदा देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है और गाँव के आस पास चन्दन के बहुत वृक्ष हैं। छोटी इलायची, काली मिर्च और सुपारी यहा बहुत उत्पन्न होती है।

६४१ शोणितपुर—(संयुक्त प्रान्त में हिमालय पर्वत पर टेहरी राज्य मे एक स्थान)

यहाँ बाणासुर ने शिव जी का कठिन तप किया था।

शाणितपुर को उमा रन भी कन्ते थ।

• प्रा० क० ( नामन पुराण, ६२ वां प्रध्याय ) गाना बलि क रसातल जाने के उपरान्त उनका पुत्र बाणासुर पृथ्वी म शोणितपुर रचकर दानवो के साथ रहने लगा।

( स्कन्द पुराण, केदारखण्ड, उत्तरार्द्ध, चौतीसवा अध्याय ) गुप्त काशी के पश्चिम दिशा में बाणासुर दैत्य ने अजय वरदान पाने के लिए शिव जी का कठिन तप किया। यहाँ बाणेश्वर महादेव स्थित हो गए। बाणासुर ने उनके प्रसाद से सम्पूर्ण जगत को जीत लिया।

( श्री मद्भागवत, दशम स्कन्ध, ६२ वा अध्याय ) बाणासुर की उपा नामक एक कन्या थी। स्वप्न म अनिरुद्ध के साथ उसका समागम हुआ। जागने पर वह "हे कान्त! तुम कहा गए" इस प्रकार पुकारती पुकारती सखियो के बीच म गिर पड़ी। तब बाणासुर के मत्री कुभाण्डक की पुत्री चित्ररेखा देवता और मनुष्य सब के चित्र लिख लिख कर उसको दिखाने लगी। अन्त मे अनिरुद्ध का चित्र देखकर उपा ने कहा कि मेरा चित चोर यही है। तब योगबल स चित्ररेखा आकाश मार्ग से जाकर द्वारिकापुरी म जा पहुँची। उस समय अनिरुद्ध पलग पर सो रहे थे। उन्हे वह योगबल से उठाकर शोणितपुर म ले आई। उपा और अनिरुद्ध गुप्त रीति से घर म रहने लगे। कुछ दिनो के पश्चात् बाणासुर न पहरेदारो के मुख से यह वृत्तान्त सुन कन्या के घर म जाकर अनिरुद्ध को देखा और कुछ युद्ध होने के बाद अनिरुद्ध को नाग पाश म बांध लिया।

( ६३ वा अध्याय ) वर्षा ऋतु के चार महीने बीत जाने पर नारद जी ने द्वारिका में जाकर श्रीकृष्णचन्द्र से अनिरुद्ध के कारागार का समाचार जा सुनाया। तब श्रीकृष्णचन्द्र न बड़ी भारी सेना के साथ जाकर बाणासुर के नगर को घेर लिया और उसकी सब सेना का विनाश करके बाणासुर की चार भुजाओ को छोड़ शेष भुजाओ को काट डाला। उसके पश्चात् बाणासुर न श्रीकृष्णचन्द्र को प्रणाम करके उपा के सहित अनिरुद्ध को रथ म बैठाकर विदा कर दिया। श्री कृष्णचन्द्र अपनी सेना के साथ द्वारिका म लौट आए।

[रुक्मिणी के भाई रुक्म की पुत्री, सुन्दरी, के स्वयम्बर म रुक्मिणी और श्री कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न भी पधारे थ। इनको कामदेव का औतार कहा जाता है। सुन्दरी से इनका विवाह हो गया और उनसे अनिरुद्ध का जन्म हुआ।

प्रद्युम्न, शम्बासुर के यहाँ से उसकी स्त्री मायावती को भी पहिले ले आए थे पर उसके सन्तान नहीं हुई थी।

अनिरुद्ध का भी रुक्म के पुत्र की कन्या से विवाह हुआ था। बाणासुर की कन्या उषा इन पर मोहित हो गई थी और यह उसके यहाँ रहते रहे। पर जब यह समाचार बाणासुर को मिला तो उसने इनको बन्दी बना लिया। श्रीकृष्ण ने सेना लेकर बाणासुर पर चढ़ाई की और अनिरुद्ध को छुड़ाकर ले आए। उषा भी उनके साथ आई और अनिरुद्ध को व्याह दी गई। बाणासुर राजा बलि के जेष्ठ पुत्र थे।

वैष्णव शास्त्रों मे वासुदेव, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और संकर्षण, भगवान के चतुर्व्यूह माने गए हैं और वैष्णव गायत्री में इन्हीं की उपासना है।]

ब० द०—शोणितपुर में बाणासुर की गढ़ की निशानी, और बाणासुर, अनिरुद्ध तथा पंचमुखी महादेव की मूर्तियाँ हैं। केदारनाथ के पण्डा लोग शोणित पुर ही में रहते हैं।

राजपूताना के भरतपुर राज्य में एक कस्बा बियाना है। उसको कहा जाता है कि बाणासुर ने बसाया था। वहाँ से ६ मील पश्चिम विजय मन्दरगढ़ का पुराना किला है जिसका प्राचीन नाम शान्तीपुर था। इसको बाणासुर की राजधानी कुछ लोग कहते हैं। बियाना और विजय मन्दरगढ़ दोनों पहाड़ी पर बसे हैं, और लोधी बादशाहों के समय में बियाना, सूबे का सदर स्थान था। आगरा, जो बियाना से पश्चिम-दक्खिन ६५ मील पर है, उन दिनों केवल एक परगना था। विजय मन्दरगढ़ के किले में मुसलमान और जाटों ने भी कुछ इमारतें बनाई हैं। 'उषा चरित्र' में अनिरुद्ध और उषा की लीला 'शान्तीपुर' में हुई बताई गई है।

बियाना में एक बहुत पुराना मन्दिर उषा मन्दिर के नाम से पुकारा जाता है। कहते हैं कि इसे उषा ने बनवाया था। मुसलमानों ने उसे तोड़ कर मस्जिद कर दिया है। एक और पुराने मन्दिर को तोड़ कर भी मस्जिद बना दिया गया है। बियाना का पुराना नाम बाणासुर था और यह बाण गङ्गा के किनारे पर बसा है। आरकियालोजिकल सुरवे के मिस्टर एम० सी० एल० कार्लायल का मत है कि विजय मन्दरगढ़ और बियाना का देश ही बाणासुर का राज्य रहा होगा। परन्तु उन्होंने शोणितपुर को नहीं देखा था। सम्भव है कि शोणितपुर व शान्तीपुर दोनों से बाणासुर का सम्बन्ध रहा हो, एक स्थान पर, यानी शोणितपुर में, उसने तप किया और दूसरे पर राज।

वियाना (शान्तीपुर) म राज मिया हा । अनिरुद्ध का वियाना पहुँचना और उषा का उन्हें देखना शोणितपुर पहुँचने के मुकाबिले अवश्य अधिक सरल था, और अनिरुद्ध व उषा की घटना का यहां होना सम्भव प्रतीत होता है । तपस्या के स्थान से लौटने पर बाणासुर का इसका पता चलना प्रतीत होता है ।

बिहार प्रान्त म आरा से ६ मील पश्चिम एक स्थान मसार है जिसका प्राचीन नाम महासार था । बताया जाता है कि इसका भी पुराना नाम शान्तीपुर था । एक खेत के ऊपर यहाँ बाणासुर की मूर्ति पहले गड़ी थी । यहा के लोग इसी को बाणासुर का स्थान कहते हैं ।

दीनाजपुर (बङ्गाल) म १८ मील दक्षिण पश्चिम एक स्थान देवीकोट, है, इस भी शोणितपुर कहा जाता है और वहाँ के लोग इसी को बाणासुर की राजधानी बताते हैं ।

आसाम म एक स्थान तेजपुर है इसको भी बाणासुर की राजधानी होने का दावा है । कहा जाता है कि हरि और हर का सग्राम यहाँ हुआ था ।

बाणासुर का स्थान निश्चय करने में उसकी वशावली से कुछ सहायता मिल सकती है । वह इस प्रकार है —

मरीच
|
कश्यप
|
हिरण्य कश्यप
|
प्रह्लाद
|
वैरोचन असुर
|
राजा बलि
|
बाणासुर

| | |
|---|---|
| असगन्ध | उषा (जिसका विवाह भगवान कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ ) |
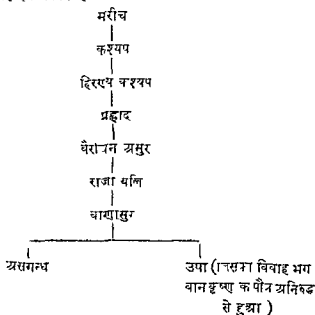
प्रह्लाद की राजधानी मुलतान थी जिससे मसार के मुकाबिले बियाना ही समीप पड़ेगा। राजा बलि ने भड़ौंच में तप किया था। वह भी बियाना ही के समीप पड़ता है। अन्य दो स्थान, देवीकोट व तेजपुर, तो मुलतान व भड़ौंच से बहुत ही दूर पर हैं। मुलतान, बियाना व भड़ौंच भारतवर्ष के पश्चिम में हैं, तो तेजपुर व देवीकोट देश के पूर्वी भाग में हैं।

बियाना (प्राचीन शान्तीपुर) व शोणितपुर का ही सम्बन्ध बाणासुर से माना जा सकता है। इनमें से शोणितपुर बाणासुर के तप का स्थान है, और बियाना में राज्य और राजभवन था जहाँ उषा का निवास था। बाणासुर के शोणितपुर से शान्तीपुर आने पर अनिरुद्ध का हाल मिला होगा जब उसने उन्हें बन्दी किया, नहीं तो बिना उसकी जानकारी के वह कई मास उषा के साथ राजभवन में कैसे व्यतीत कर सकते थे?

संयुक्त प्रान्त के बलिया का सम्बन्ध अवश्य राजा बलि से बताया जाता है पर इसका कोई प्रमाण नहीं है। यह जरूर है कि वामनावतार, जिन्होंने राजा बलि को छला था, बक्सर में हुआ था जो बलिया के पास ही है। मसार बलिया से समीप पड़ेगा। देवकोट व तेजपुर वहाँ से भी बहुत दूर हैं। परन्तु अनिरुद्ध के द्वारिका से बियाना ही पहुँचने की सम्भावना हो सकती है।

६४२ श्यामपुर—(देखिये मारा)

६४३ श्रवणबेलगुल—(मैसूर राज्य के हासन जिले में एक ग्राम)

श्रवण बेलगुल ग्राम, विन्ध्यागिरि और चन्द्रगिरि के मध्य में बसा है। ये दोनों पर्वत जैन ऋषियों के परम धाम हैं और विन्ध्यागिरि पर श्री भद्र बाहु स्वामी ने अध्यात्म विचार में मग्न होकर मोक्ष प्राप्त की थी।

दोनों पर्वतों के शिखर तक सीढ़ियाँ बनी हैं और विन्ध्यागिरि पर ७ तथा चन्द्रगिरि पर १८ जैन मन्दिर हैं। विन्ध्यागिरि के एक मन्दिर में श्री बाहुबली स्वामी की अति मनोहर मूर्त्ति है।

६४४ श्रीकूर्म—(देखिए कुमायूँ गढ़वाल)

६४५ श्रीनगर—(मथुरा से देहरी गढ़वाल राज्य की पुरानी राजधानी)

श्री नगर के समीप पौरी में अष्टावक्र मुनि ने तपस्या की थी।

शिवदत्त मुनि यहाँ पधारे थे।

बाणासुर यहाँ मारा गया था।

राज राजेश्वरी देवी का प्रसिद्ध मन्दिर यहाँ है। इसके समीप नागों ने तप किया था।

पौराणिक कथा है कि श्रीनगर के पास अग्नि ने शिव की आराधना कर के उनको प्रसन्न किया था।

प्रा० क०—(स्कन्द पुराण, दूसरा अध्याय) सतयुग में सत्य सध नामक राजा ने भगवती से वर प्राप्त कर कोलासुर नामक राक्षस का विनाश किया। जिस स्थान पर कोलासुर मारा गया उसका नाम श्रीक्षेत्र पड़ा। भगवती बोली कि हे राजन ! श्रीक्षेत्र से आधे कोस की दूरी पर गङ्गा के उत्तर तीर में, मैं राज राजेश्वरी के नाम से प्रसिद्ध हूँ। पूर्व समय में राज-राज (कुबेर) ने मेरी आराधना की थी। तब से मैं यहाँ निवास करती हूँ। जब कुबेर मेरी आराधना करके सम्पूर्ण सम्पत्ति का स्वामी हो गया तब उसने तीन करोड़ स्वर्ण का वेदी बनाकर उस पर मुझे स्थापित किया। तभी से मेरा नाम राजेश्वरी करके प्रख्यात हुआ। ऐसा कह, देवी अन्तर्धान हो गई।

( १२ वां अध्याय ) ऐसी तीर्थ में काशी के रहने वाले बलदेव ब्राह्मण ने ५५०० वर्ष पर्यन्त शिव जी का तप किया। शिव प्रसन्न हुए और मरकत मणि का शिव लिङ्ग वहाँ पड़ा। उस समय शिल्ह नामक मुनि वहाँ आ गए और उन्होंने लिङ्ग का अभिषेक करवाया। शिवजी मुनि के नाम पर शिल्हे श्वर नाम से प्रसिद्ध हुए। शिल्ह मुनि शिवलोक में गए। उसके पीछे किसी समय श्री रामचन्द्रजी नित्य एक सौ कमलों से शिव की पूजा करते थे। तभी से यह लिङ्ग कमलेश्वर नाम से प्रख्यात हो गया। वह्नि पर्वत के नीचे के भाग में ४ बाण पर कमलेश्वर महादेव हैं।

कमलेश्वर महादेव से ऊपर एक बाण पर विष्णु तीर्थ है और विष्णु तीर्थ से १ कोस की दूरी पर गंगा के दक्षिण तट में नागेश्वर महादेव हैं, जहाँ पूर्वकाल में नागों ने शिव का तप किया था।

( १३ वां अध्याय ) कमलेश्वर पीठ से ऊपर दक्षिण दिशा में वह्नि पर्वत है, जहाँ अग्नि ने शिव जी का तप करके सम्पूर्ण इच्छित फल पाया था। तभी से अग्निदेव सम्पूर्ण देवताओं के मुख हो गए। वह्नि पर्वत के मध्य में अष्टावक्र मुनि का पवित्र तप स्थल है।

[ महर्षि अष्टावक्र के सम्बन्ध में पुराणों में ऐसी कथा आती है कि जब ये गर्भ में ही थे तभी इन्हें समस्त वेदों का बोध था। इनके पिता कुछ

अशुद्ध पाठ कर रहे थे, इन्होंने गर्भ में से ही कहा 'अशुद्ध पाठ क्यों करते हो ?' पिता को यह बात बुरी लगी और शाप दिया कि अभी से इतना टेढ़ा है तो आठ जगह से टेढा हो जा। यह आठ स्थान से टेढे पैदा हुए और इसी से उनका नाम अष्टावक्र पड़ा। वह वेदों के अद्वितीय ज्ञाता थे। ]

च० द०—श्रीनगर में बारह खम्भा की गुम्बजदार बारहदरी के भीतर ६ पहलवाला गुम्बजदार कमलेश्वर का मन्दिर है। प्रत्येक पहल में एक जालीदार किवाड लगा है जिसके भीतर कमलेश्वर महादेव का खण्डित लिङ्ग है। मन्दिर के आगे पीतल से जड़ा हुआ बड़ा नन्दी, चारों ओर मकान और एक कोने पर ऊँचा घण्टाघर है। कार्तिक शुक्ल चौदस को यहां मेला लगता है। कमलेश्वर के अलावा श्रीनगर में नागेश्वर, अष्टावक्र महादेव और राज राजेश्वरी के मन्दिर हैं।

अलकनन्दा के किनारे ऊँची भूमि पर अब नया श्रीनगर बसा है।

अष्टवक्र आश्रम—हरद्वार से ४ मील पर राहुग्राम है जिसे अब रला कहते हैं और जिसके समीप एक छोटी नदी, अष्टावक्र नदी नाम की बहती है, यह अष्टावक्र ऋषि का स्थान था। उनका दूसरा आश्रम श्रीनगर के समीप पौड़ी में अष्टावक्र पर्वत पर था।

६४६ श्रीपद—( देखिये लङ्का )

६४७ श्रीरङ्गम—( मद्रास प्रान्त के त्रिचनापल्ली जिले में कावेरी नदी के श्री रङ्गमटापू पर एक नगर )

श्री रामचन्द्र जी यहाँ पधारे थे।

बलदेव जी इस स्थान पर आए थे।

श्री रामानुज स्वामी ने यहां निवास करके अपने मत का प्रचार किया था और यहां शरीर छोड़ा था।

निर्भीगण यहां वन्दना करके रहने गए थे।

भा० क० ( श्री मद्भागवत, दशम स्कन्ध, ७६ वां अध्याय ) श्री बलदेव जी कावेरी नदी में स्नान कर श्रीरङ्ग नाम के विख्यात स्थान में गए, जहां श्रीहरि नित्य निवास करते हैं

(मत्स्य पुराण, २२ वा अध्याय ) श्रीरङ्ग नामक तीर्थ में श्राद्ध करने में मनुष्यों को अनन्त फल लाभ होता है।

(पद्म पुराण पाताल खण्ड उत्तरार्द्ध, प्रथम अध्याय) द्रविड़ देश के मनुष्यों ने विभीषण को जंजीर से बाँध लिया। श्री रामचन्द्र अयोध्या में दूतों के मुख से यह समाचार सुनकर मुनिगण और वानरों को संग ले विभीषण को ढूँढ़ने हुए श्रीरंग नामक नगर में पहुँचे। वहाँ के उपस्थित राजाओं ने उनकी पूजा की। रामचन्द्र ने बहुत खोजने के पश्चात् बहुत जंजीरों में बँधा हुआ भूगर्भ में विभीषण को पाया। उनके पूछने पर वहाँ के ब्राह्मणों ने कहा कि एक वृद्ध धार्मिक ब्राह्मण ध्यान में मग्न बैठा था। विभीषण ने उसको अपने चरण से ऐसा मारा कि वह मर गया। तब हम लोगों ने इस अपराधी को बहुत मारा, परन्तु यह नहीं मरा। इसको मार डालना उचित है। रामचन्द्र बोले मैंने इसको कल्प पर्यन्त राज्य करने को कहा है, आप लोग इसके बदले में मुझे दण्ड दीजिए। तब वहाँ के ब्राह्मणों ने विभीषण से प्रायश्चित करवाकर उसे शुद्ध कर दिया। श्री रामचन्द्र जी अयोध्या लौट आए।

[श्री रामानुजाचार्य्य का जन्म सं० १०१७ ई० में भूतपुरी में हुआ था। आपके पिता का नाम केशव भट्ट था और दक्षिण के तेरुँक्कूर नामक क्षेत्र में उनका निवास था। रामानुजाचार्य ने काञ्ची के यादवप्रकाश नामक गुरु से वेदाध्ययन किया। इसके बाद महीपूर्णाचार्य से वैष्णव दीक्षा ली। तब गृहस्थी में रहकर अपने उद्देश्य की पूर्ति होते न देखा तो श्रीरङ्गम जाकर यतिराज सन्यासी से सन्यास की दीक्षा ले ली।

दया में यह भगवान बुद्ध के समान और प्रेम में ईसा के समान थे। महात्मा नाम्बि से इन्हें अष्टाक्षर मन्त्र (ओं नमो नारायणाय) की दीक्षा जब मिली थी तब गुरु ने मन्त्र को गुप्त रखने को कहा था। इन्होंने मन्दिर के शिखर पर चढ़ कर सबको यह मन्त्र सुना दिया। जब गुरु अप्रसन्न हुये और कहा कि तुम्हें नरक भोगना होगा तब इन्होंने कहा कि, यदि हम मेरा मन्त्र का उच्चारण करके हजारों आदमी नरक की यन्त्रणा से बच जाँयगे तो मुझे नरक भोगने में आनन्द ही मिलेगा। इस पर गुरु ने बड़े वेग से इन्हें गले लगा लिया।

श्री रामानुज ने विशिष्टाद्वैत (भक्तिमार्ग) का प्रचार करने को भारत की यात्रा की और गीता और ब्रह्मसूत्र पर भाष्य लिखे। सन ११३७ ई० में १२० वर्ष की अवस्था में श्री रङ्गम से यह परम धाम को पधारे।

रामानुजस्वामी के पीछे उनकी गद्दी पर देवाचार्य, देवाचार्य के पश्चात् श्री हरियानन्द, उनके पश्चात् राघवानन्द, और उनके पीछे स्वामी रामानन्द जी बैठे रामानन्द जी के शिष्य कबीरदास थे जिन्होंने कबीर पंथी मत का प्रचार किया।]

व० उ०—श्री रङ्गम टापू लगभग १७ मील लम्बा और सवा मील चौड़ा है। श्री रङ्गम नगर में म्युनिसिपैल्टी है और रङ्ग जी के मन्दिर के घेरे के भीतर तो प्रायः सम्पूर्ण नगर बसा है। घेरे के एक भाग में श्री रामानुज स्वामी का मन्दिर है।

श्री रङ्गजी का मन्दिर उत्तर से दक्षिण तक लगभग २६०० फीट लम्बा और पूर्व से पश्चिम तक २५०० फीट चौड़ा है अर्थात् २६६ बीघे भूमि पर फैला हुआ है। उसका विस्तार दिल्ली के किले से करीब ड्योढ़ा है। इतना बड़ा देव मन्दिर किसी स्थान में नहीं है। सात दीवारों के भीतर श्री रङ्ग जी का निज मन्दिर है। श्री रङ्गजी की कृष्ण पाषाणमय ६ फीट से अधिक लम्बी चतुर्भुज मूर्ति शेष पर शयन करती है। उनका किरीट,मुकुट,चरण, हाथ सब सुनहले हैं। वे बहुमूल्य भूषण पहिने हुए हैं और उनके निकट श्री लक्ष्मी जी तथा विभीषण बैठे हैं। मन्दिर के खजाने में सोना, चाँदी, पन्ना, हीरा, और लाल इत्यादि रत्नों से बने हुए लाखों रुपयों के देव भूषण और पात्र हैं।

ग्यारहवीं सदी में श्री रङ्गम के यमुनाचार्य के पुत्र वरदङ्ग स्वामी ने श्री रंग पुरी में, श्री रामानुज स्वामी को लाकर श्री रंगनाथ का कार्य समर्पण कर दिया। तब से श्री रामानुज स्वामी यहीं रहकर भारतवर्ष में अपने मत का प्रचार और उपदेश करने लगे थे। श्री रंग जी का वर्तमान मन्दिर १७ वीं और १८ वीं सदी का बना हुआ है। सम्पूर्ण मन्दिर एक ही समय में नहीं बना था यह क्रम क्रम से समय-समय पर बनाया गया है।

श्री रंगम के मन्दिर से एक मील पूर्व श्री रंगम के टापू के भीतर जम्बुकेश्वर का प्रसिद्ध मन्दिर है। मन्दिर शिल्पकारी और मनोज्ञता में श्री रंग जी के बड़े मन्दिर का मुकाबिला कर रहा है। मन्दिर का विस्तार एक सौ बीघे से अधिक होगा। जम्बुकेश्वर के मन्दिर के खर्च के लिए सन १७५० ई० में ६४ गाँव थे किन्तु सन् १८२० ई० में केवल ४५ गाँव रह गए थे। सन १८५१ ई० से इन गाँवों के बदले में मन्दिर खर्च के लिए लगभग दस हजार रुपए वार्षिक मिलता है।

द्रविड़ देश में पाँच तत्त्वों के आधार पर पाँच परम प्रसिद्ध लिंग हैं —

( १ ) जम्बुकेश्वर—जललिंग (श्री रंगम)
( २ ) एकाम्रेश्वर—पृथ्वी लिंग (मद्रास प्रान्त के चंगल पट जिले में काँची में)

| | |
|---|---|
| ( ३) अग्नि लिंग | ( मद्रास प्रान्त के दक्षिणी अर्काट जिले में तिरु वन्नामलई कस्बे के पास पहाड़ी पर ) |
| ( ४ ) काल हस्तीश्वर—वायु लिंग | ( मद्रास प्रांत के उत्तरी अर्काट जिले में कालहस्ती में ) |
| ( ५ ) नटेश—आकाश लिंग | ( मद्रास प्रांत के दक्षिणी अर्काट जिले में चिदम्बर में ) |

## स

६४८ सस्री नदी—( देखिये कौआ कोल )

६४९ सक्कर ताल—(संयुक्त प्रांत के मुज़फ्फर नगर जिला में एक स्थान) शुकदेव जी ने यहां सात दिन में राजा परीक्षित को श्री मद्भागवत की पूरी कथा सुनाई थी।

पाण्डव लोग अर्जुन के पौत्र परीक्षित ( अभिमन्यु के औरस पुत्र ) को गद्दी पर बिठाकर आप वनवास और महायात्रा को चले गए। राजा परीक्षित को तक्षक नाग ने डस लिया। उनके अन्तकाल में सात दिन में श्री शुकदेव जी ने उन्हें श्री मद्भागवत की सारी कथा सुनाई थी। उसके उपरान्त राजा परीक्षित का शरीर छूट गया। पीछे, उनके पुत्र जनमेजय ने नागों का निर्मूल कर डालने के लिए 'सर्प यज्ञ' रचा था।

[ शुकदेव जी, महर्षि व्यास के पुत्र थे और घृताची अप्सरा द्वारा उत्पन्न हुए थे। वे जन्मकाल से ही तपस्या करने लगे और मोक्ष सम्बन्धी प्रश्नों पर शङ्का मिटाने, मिथिला नरेश के यहाँ तक गए थे। शुकदेव जी अधिकारी पुरुषों को दर्शन देकर अब भी उपदेश करते हैं। ]

सक्करताल, मुज़फ्फर नगर और बिजनौर की सीमा पर गङ्गा जी के तट पर एक स्थल है। यहां एक विशाल वृक्ष के नीचे एक चबूतरा और छोटा मन्दिर है। इसी स्थल पर शुकदेव जी का आसन था जहाँ बैठकर उन्होंने सप्ताह सुनाया था। अब सक्करताल की एक बहुत अच्छी सड़क बन गई है और लोगों ने बहुत सी अच्छी इमारतें बनवा ली हैं।

६५० सङ्कल्प पुष्ट—( देखिये अमर शिखर )

६५१ सङ्किसा—(संयुक्त प्रान्त के फर्रुखाबाद जिले में एक स्थान) राजा जनक के भाई राजा कुशध्वज की यह राजधानी था।

अपनी माता को तीन मास तक त्रयस्त्रिंश स्वर्ग में धर्मोपदेश देकर बुद्ध भगवान, यहाँ स्वर्ग से उतरे थे।

बौद्ध धर्म के अति पवित्र स्थानों में से यह एक है।

इस स्थान का प्राचीन नाम सँगकास्य है।

पूर्व चार बुद्धों ने भी यहाँ निवास किया था।

भगवान बुद्ध की माता मायादेवी, बुद्धदेव के जन्म के एक सप्ताह पश्चात् परलोकवास कर गई थीं। बौद्ध ग्रंथ कहते हैं कि भगवान बुद्ध उनको धर्मोपदेश सुनाने तुसीता स्वर्ग को गए थे जहाँ इन्द्र समेत ३३ देवता और भी रहते थे। तीन मास उपदेश सुनाकर भगवान बुद्ध, इन्द्र और ब्रह्मा सहित सङ्किसा में उतरे थ। पृथिवी तक तीन जीने लगे थे। बीचवाला जीना जवाहिरात का था जिससे भगवान बुद्ध उतरे थे। उनके बाएं सोने के जीने से इन्द्र, और दाहिने चाँदी के जीने से ब्रह्मा उतरे थे। फाहियान लिखते हैं कि उतरने के बाद यह तीनों जीने पृथिवी में लोप हो गए, केवल सात सीढ़ियाँ दिखाई देती रही थीं। इन जीनों के स्थान पर महाराज अशोक ने एक मन्दिर बनवा दिया था और बीच के जीने के स्थान पर भगवान बुद्ध की ७० हाथ ऊँची मूर्ति रख दी थी।

ह्वानचाङ की यात्रा के समय यहाँ बहुत से स्तूप थे, उनमें से एक उस स्थान पर था जहाँ पूर्व चार बुद्ध भी रहे थ।

इस समय सङ्किसा एक ४१ फीट ऊँचे टीले पर बसा है जिसे किला कहते हैं। इससे १६०० फीट दक्षिण ईंटों के टीले पर 'बिसारी देवी' का मन्दिर है। यही वह स्थान है जहां तीन जीनों के स्थान पर मन्दिर बना था।

६४२ सत्रायम पट्टन—( मैसूर राज्य के कदूर जिले में एक बस्ती )

दक्षिण में प्रसिद्ध है कि सुप्रसिद्ध राजा रुक्मांगद की यह राजधानी थी।

यहाँ चार खम्भों के ऊपर रङ्गनाथ का मन्दिर है, जहाँ प्रतिवर्ष रथ-यात्रा के समय बहुत से लोग जाते हैं। राजा रुक्मांगद अयोध्या के राजा थ और सूर्यवंशी थ। ( देखिए अयोध्या )

६४३ सङ्गमेश्वर—( बम्बई प्रांत के रत्नागिरि जिले में एक स्थान )

सङ्गमेश्वर में परशुराम जी के बनवाए मन्दिर थे और वे यहाँ रहते थे। इसका प्राचीन नाम परशुराम क्षेत्र था।

श्री नमिनाथ स्वामी ,, ( मित्रधर कूट ) इक्कीसवें तीर्थङ्कर चिह्न नीला कमल
श्री पार्श्वनाथ स्वामी ( स्वर्णभद्र कूट ) तेईसवें तीर्थङ्कर चिह्न सर्प

व० द०—श्री सम्मेद शिखर पर्वत की श्रेणी हैं जिनकी ६ मील चढाई ६ मील टोकों की वन्दना और ६ मील उतराई, इस प्रकार १८ मील टोंका की वन्दना है, और २८ मील पर्वत की परिक्रमा है। कुल मिलाकर चौबीस तीर्थंकर हुए हैं, जिनमें से ४ तीर्थंकर अर्थात् ( प्रथम) श्री आदिनाथ भगवान कैलास गिरि से, ( बाईसवें ) श्री वासु पूज्य स्वामी मदारगिरि से, ( तेईसवें ) श्री नेमनाथ स्वामी गिरनार पर्वत से, और ( चौबीसवें ) श्री महावीर स्वामी पावापुरी से, मोक्ष को पधारे हैं परन्तु इनकी टोंक भी यहाँ बनी है। इन चार तीर्थंकरों क चिह्न क्रम से बैल, भैंसा, शङ्ख और सिंह हैं। श्री पार्श्वनाथ का मदिर और टोंक यहाँ सबसे बडी है और इतनी ऊँची है कि इससे दूर-दूर के स्थान दिखाई देते हैं, इस कारण से यह समस्त तीर्थ बहुधा पार्श्व नाथ ही कहलाता है।

जैनियों की यहाँ कई विशाल धर्म्मशालाएँ हैं। लाखों नर नारी प्रति वर्ष इस तीर्थराज की वंदना करते हैं और प्रत्येक जैनी इसकी वंदना करना अपना धर्म समझता है। कहा जाता है कि अब भी यहाँ देवकृत कई अतिशय हुआ करते हैं।

६६२ सरदहा—( देखिए कोल्हा )

६६३ सरदि—( कश्मीर राज्य में, उत्तर में एक कस्बा )

इसका प्राचीन नाम शारदातीर्थ है।

यहाँ ५२ पीठों में से एक है। सती का सिर यहाँ गिरा था।

६६४ सरहिन्द—( पञ्जाब प्रांत के लुधियाना ज़िले में एक कस्बा )

यहाँ मुसलमानों ने गुरु गोविंदसिंह के दो बच्चों को जिंदा, दीवार में चुनवा दिया था।

सरहिंद मुसलमानी ज़माने में हिंदुस्तान के सबसे बडे शहरों में से था। यहाँ से ८ मील दक्षिण पूर्व एक प्राचीन स्थान बोराख, और १४ मील दक्षिण पूर्व दूसरा प्राचीन स्थान नोलास है जिनको कहा जाता है कि राजा बलि और राजा नल ने बसाया था। इन्हीं स्थानों की आबादी से सरहिंद बसाया गया था। जिन दिनों काबुल में ब्राह्मण राजा राज्य करते थे उन दिनों सरहिंद उनकी बादशाहत का सबसे पूर्वीय भाग था। औरंगजेब के १७०७ ई०

( यथार्थ म सम्भल जहाँ कल्कि अवतार होगा वह चीन के गोबी रेगिस्तान मे अृगिया का एक गुप्त नगर है। )

६६१ सम्मेद शिखर—( बिहार प्रान्त के हजारी बाग जिले में एक तीर्थ स्थान )

यह स्थान जन धम मे तीर्थो का राजा माना जाता है। यहा मे निम्नाकित बीस तीर्थङ्करो ने मोक्ष प्राप्त की था।

प्रत्येक के मोक्ष का स्थान जो सम्मद शिखर के अन्तर्गत है कौष्क के भीतर लिखा है।

सम्मद शिखर में, व अन्य जैन तीथो मे भी, प्रत्येक तीर्थकर के चरण चिन्ह का ही पूजन होता है, इमम हर एक तीर्थंकर के अलग अलग चिन्ह हैं जिसमे उनकी पहिचान हो सके। वह चिन्ह भी प्रत्येक तीर्थंकर के नाम के आगे यहा लिख दिया गया है।

| | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| श्री अजितनाथ | स्वामी | ( सिद्धवर कूट ) | दूसरे | तीर्थङ्कर | चिन्ह | हाथी |
| ,, सम्भवनाथ | स्वामी | ( धवलकूट ) | तीसरे | ,, | ,, | घोड़ा |
| ,, अभिनन्दन | ,, | ( आनन्दकूट ) | चौथे | ,, | ,, | बन्दर |
| ,, सुमतिनाथ | ,, | ( अविचलकूट ) | पाँचवे | ,, | ,, | चक्र |
| ,, पद्मनाथ | ,, | ( मोहन कूट ) | छठवे | ,, | ,, | सफेद कमल |
| ,, सुपार्श्वनाथ | ,, | ( प्रभास कूट ) | सातवें | ,, | ,, | स्वास्तिका |
| ,, चन्द्रप्रभु | , | ( ललित कूट ) | आठवें | ,, | ,, | चन्द्र |
| ,, पुष्पदन्त | ,, | ( सुप्रभ कूट ) | नवे | ,, | ,, | मगर |
| ,, शीतलनाथ | ,, | ( विद्युतवर कूट ) | दसवें | ,, | ,, | कल्पवृक्ष |
| ,, श्रेयासनाथ | ,, | ( संकुल कूट ) | ग्यारहवें | ,, | ,, | गेंडा |
| ,, विमलनाथ | ,, | ( साल कूट ) | तेरहवें | , | ,, | शूकर |
| ,, अनतनाथ | , | ( स्वयभू कूट ) | चौदहवें | ,, | ,, | सेही |
| ,, धर्मनाथ | ,, | ( सुदत्तवर कूट ) | पन्द्रहवें | ,, | ,, | वज्र |
| ,, शान्तिनाथ | ,, | ( शान्तिप्रभ कूट ) | सोलहवें | ,, | ,, | मृग |
| ,, कुन्थनाथ | ,, | ( ज्ञानधर कूट ) | सत्रहवे | ,, | ,, | बकरा |
| ,, अरहनाथ | , | ( नाटक कूट ) | अठारहवें | ,, | ,, | मछली |
| ,, मल्लिनाथ | ,, | ( संबल कूट ) | उन्नीसवें | ,, | ,, | कुंभ(घड़ा) |
| ,, सुव्रतनाथ | ,, | ( निर्जरा कूट ) | बीसवें | ,, | ,, | कछुआ |

श्री नभिनाथ स्वामी ,, ( मित्रधर कूट ) इक्कीसवें तीर्थङ्कर चिह्न नीला कमल
श्री पार्श्वनाथ स्वामी ( स्वर्णभद्र कूट ) तेईसवें तीर्थङ्कर चिह्न सर्प

व० द०—श्री सम्मेद शिखर पर्वत की श्रेणी है जिनकी ६ मील चढ़ाई ६ मील टोकों की वन्दना और ६ मील उतराई, इस प्रकार १८ मील टोकों की वन्दना है, और २८ मील पर्वत की परिक्रमा है। कुल मिलाकर चौबीस तीर्थंकर हुए हैं, जिनमें से ४ तीर्थंकर अर्थात् ( प्रथम ) श्री आदिनाथ भगवान कैलाश गिरि से, ( बाईसवें ) श्री वासु पूज्य स्वामी मदारगिरि से, ( तेईसवें ) श्री नेमनाथ स्वामी गिरनार पर्वत से, और ( चौबीसवें ) श्री महावीर स्वामी पावापुरी से, मोक्ष को पधारे हैं परन्तु इनकी टोकें भी यहाँ बनी है। इन चार तीर्थंकरों के चिह्न क्रम से बैल, भैंसा, शङ्ख और सिंह हैं। श्री पार्श्वनाथ का मंदिर और टोक यहाँ सबसे बड़ी है और इतनी ऊँची है कि इससे दूर-दूर के स्थान दिखाई देते हैं, इस कारण से यह समस्त तीर्थ बहुधा पार्श्व नाथ ही कहलाता है।

जैनियों की यहाँ कई विशाल धर्म्मशालाएँ हैं। लाखों नर नारी प्रति वर्ष इस तीर्थराज की वंदना करते हैं और प्रत्येक जैनी इसकी वंदना करना अपना धर्म समझता है। कहा जाता है कि अब भी यहाँ देवकृत कई अतिशय हुआ करते हैं।

६६२ सरदहा—( देखिए कोन्ना )

६६३ सरदि—( कश्मीर राज्य में, उत्तर में एक कस्बा )

इसका प्राचीन नाम शारदातीर्थ है।

यहाँ ५२ पीठों में से एक है। सती का सिर यहाँ गिरा था।

६६४ सरहिन्द—( पंजाब प्रांत के लुधियाना ज़िले में एक कस्बा )

यहाँ मुसलमानों ने गुरु गोविंदसिंह के दो बच्चों को जिंदा, दीवार में चुनवा दिया था।

सरहिंद मुसलमानी ज़माने में हिंदुस्तान के सबसे बड़े शहरों में से था। यहाँ से ८ मील दक्षिण पूर्व एक प्राचीन स्थान चोरास, और १४ मील दक्षिण पूर्व दूसरा प्राचीन स्थान मोलाब है जिनको कहा जाता है कि राजा बलि और राजा नल ने बसाया था। इन्हीं स्थानों की आबादी से सरहिंद बसाया गया था। जिन दिनों काबुल में ब्राह्मण राजा राज्य करते थे उन दिनों सर हिंद उनकी बादशाहत का सबसे पूर्वीय भाग था। औरंगजेब के १७०७ ई०

में मरने के बाद इस स्थान का पतन आरम्भ हुआ। उसके दो ही साल बाद सिक्ख सरदार बंदा ने सरहिंद को लूटा और वहाँ के गवर्नर वजीर खाँ, जिसने गुरु गोविंदसिंह के दो बच्चों को दीवार में ज़िन्दा चुनवा दिया था और परिवार को नष्ट कर डाला था, तलवार के घाट उतार दिया। सन् १७१३ ई० में सिक्खों ने फिर सरहिंद को लूटा और वजीर खाँ के जानशीन दूसरे गवर्नर का भी सिर काट लिया। सन् १७५८ ई० में तीसरी बार सिक्खों ने सरहिंद को लूटा, और सन् १७७३ ई० में चौथी बार लूटकर उसकी ईंट से ईंट बजा दी। शहर वीरान हो गया। जो थोड़े बहुत मुसलमान बचे थे वे भाग कर दूसरी जगह जा बसे। सिक्खों ने अपने गुरु के परिवार पर अत्याचार होने का बदला उस नगर से ऐसा लिया कि सबके लिए सबक हो गया। उजड़े नगर से होकर निकलने वाले सिक्ख अब भी वहाँ की दो ईंटें दूर नदी में फेंक देने के लिए उठा लाते थे। जिससे इस नगर का नामोनिशान न रहे।

इस तरफ पटियाला के लोगों ने इस जगह को फिर से बसा लिया है।

६६५ सराय अगहट—( देखिये नासिक )

६६६ सरिदन्तर—( देखिये उड्डपीपुर )

६६७ सहसराम—( देखिए मांधाता )

६६८ सहेट महेट—( संयुक्त प्रांत के बहराइच जिले में एक वीरान जगह )

यह प्राचीन सुविख्यात श्रावस्ती नगरी है। बाद को चन्द्रिकापुरी भी इसे कहते थे।

सूर्यवंशी राजा श्रावस्त ने, जो पीढ़ी में सूर्य से दसवें थे, इस नगरी को बसाया था।

श्रीरामचन्द्र जी ने इसे, अपने पुत्र लव के राज्य में दिया था।

बोधत्व प्राप्त करके भगवान बुद्ध ने ४५ में से २५ साल यहाँ निवास किया था।

बौद्ध ग्रन्थों का सुप्रसिद्ध जीत वन विहार, जो आठ सबसे श्रेष्ठ बौद्ध स्थानों में से एक था, यहीं था।

राजा विरुढक ने ५०० शाक्य कुमारियों का यहाँ वध किया था।

विभाषा शास्त्र के रचयिता बौद्ध आचार्य मनोरथ को ब्राह्मणों ने शास्त्रार्थ में यहाँ पराजित किया था। इस पर मनोरथ ने प्राण दे दिए थे।

मनोरथ के शिष्य महात्मा वसुबन्धु ने बाद को ब्राह्मणों पर यहाँ विजय पाई थी।

भगवान बुद्ध ने अङ्गुलिमाल पन्थी डाकुओं को यहाँ सुमार्ग पर लगाया और बौद्ध बनाया था।

भगवान बुद्ध के चचेरे भाई देवदत्त यहाँ पृथिवी में समा गए थे।

देवदत्त के शिष्य कुकाली को भी, भगवान बुद्ध को दोषारोपण करने पर यहाँ पृथिवी निगल गई थी।

५०० डाकुओं को, जिन्हें महाराज प्रसेनजित ने अंधा करवा दिया था, भगवान बुद्ध ने यहाँ फिर से नयन दिये थे।

देवी विशाखा वाला भगवान बुद्ध का सुप्रसिद्ध पूर्वाराम यहीं था।

*सारिपुत्र के नालन्दा में शरीर छोड़ने पर उनकी चिता की भस्म श्रावस्ती में लाकर रखी गई थी।*

आठ पुश्त तक यह स्थान बौद्ध मत का केन्द्र था।

*दूसरी शताब्दी बी० सी० में बौद्ध मत के १६ वें गुरु महात्मा राहुलता ने श्रावस्ती में शरीर छोड़ा था।*

श्री सम्भवनाथ स्वामी ( तृतीय तीर्थङ्कर ) के यहाँ गर्भ और जन्म कल्याणक हुए थे और यहीं उन्होंने दीक्षा ली थी तथा कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया था।

*प्रा० क०—वाल्मीकीय रामायण उत्तरकाण्ड में वर्णन है कि श्रीराम* चन्द्र जी ने अपने पुत्र कुश को दक्षिण कोशल देशों का राज्य दिया और लव को उत्तरीय देश प्रदान किए। कुश के लिए कुशावती और लव के लिए श्रावस्ती नगरी बसाई गई।

फाहियान जब ४०० ई० में यहाँ आए थे उस समय भी उन्होंने लिखा है कि यहाँ की जन संख्या केवल २०० घर थी।

लङ्का के ग्रंथों में लिखा है कि २१५ ई० से ३१५ ई० तक सावत्थीपुर ( श्रावस्ती ) में राजा सिराधार और उनके भतीजों ने राज्य किया था। इसके पश्चात ही यहाँ का पतन आरम्भ हुआ प्रतीत होता है और ६२६ ई० में जब ह्वांगचांग यहाँ आये थे यह स्थान बिलकुल उजड़ चुका था।

ज्ञात होता है कि ह्वांगचांग के बाद फिर यहाँ कुछ जान आई, क्योंकि मध्यकाल की भी मूर्तियाँ और मुहरें यहाँ मिली हैं। उन दिनों इसका नाम

चन्द्रिकापुरी था। पर बौद्ध मत के पतन के साथ साथ यह स्थान बिल्कुल नष्ट हो गया।

श्रावस्ती के महाराज प्रसेनजित भगवान बुद्ध के उपासक थे, पर उनके पुत्र विरूढक को शाक्यों से वैर था। विरुढक ने अपने भाई जेत का वधकर डाला और राज्य पाकर शाक्यों पर चढ़ाई करना चाहा और सेना लेकर चला। भगवान बुद्ध से श्रास्वती के पूर्वाराम के पास, जाते समय मिला तब अपना विचार त्याग दिया और लौट पड़ा। पर पीछे फिर कुछ दिनों में चढ़ाई की और ५०० शाक्य कुमारियाँ पकड़ कर उसके रनिवास के लिए लाई गईं। कुमारियों ने रनवास में जाने से इन्कार कर दिया। इस पर विरुढक ने उन सब का वध करवा दिया। उस समय भगवान बुद्ध ने भविष्यवाणी की थी कि सात दिन में विरुढक अग्नि से भस्म हो जाने वाला है। जब सातवाँ दिन आया तब विरुढक अपनी रानियों सहित एक बड़े तालाब के बीच में नाव पर चला गया; परन्तु पानी से अग्नि निकली और उसकी नाव भस्म होगई। इतने में जमीन फटी और उसी में वह समा गया।

श्रावस्ती के धनी मानी व्यापारी सुदत्त ( अनाथ पिण्डका ) ने जब भगवान बुद्ध को श्रावस्ती बुलाने को निमन्त्रण देनी की सोची थी तब एक विहार बनाने के लिये भूमि लेनी चाही थी। जिस भूमि को सुदत्त ने पसन्द किया वह राजकुमार जेत की थी। राजकुमार उसे देना नहीं चाहते थे। इसलिए उन्होंने कह दिया कि जिमीन का मूल्य यह है कि उसे अशर्फियों से पाट दिया जावे; सुदत्त ने मंजूर कर लिया। बाग़ में चन्दन और आम के पेड़ों को छोड़ कर सारे पेड़ काट दिए गए, जमीन पर अशर्फियाँ बिछा दी गई और सुदत्त ने आज्ञा दी कि जितने जमीन पर चन्दन और आम लगे हैं उसका भी हिसाब लगाया जावे ताकि वह रुपया भी दे दिया जाय। कुमारजेत अचम्भे में आगये, उन्होंने और रुपया लेने से इन्कार कर दिया और जितना पाया था उसे भी विहार के चारों फाटकों पर सतमँजिले द्वार बनवाने में लगा दिया। इस विहार का निर्माण सारिपुत्र की निगरानी में हुआ था।

यह राजकुमार जेत का बाग़ था इससे इसका नाम जेत वन विहार पड़ा और बौद्धधर्म के आठ सर्वश्रेष्ठ स्थानो में से एक था। इसकी गन्धकुटी में भगवान बुद्ध की चन्दन की एक मूर्ति थी और कोसम्ब कुटी में भगवान रहते थे।

फाहियान लिखते हैं कि जेतवन श्रावस्ती से आध मील दक्षिण में था। इसका घेरा दो हज़ार गज़ था और सघाराम की इमारत ४४ गज़ लम्बी और ४४ गज़ चौड़ी थी। गन्धकुटी और कोसम्ब कुटी का मुँह पूर्व की ओर था। पहिले भगवान का निवास स्थान गन्ध कुटी में था। जब वे देवलोक अपनी माता को उपदेश देने गए थे तब वहाँ चन्दन की मूर्ति रखदी गई थी उसके पीछे भगवान बुद्ध कोसम्ब कुटी में रहने लगे।

ह्वानचाँग के समय में सुदत्त के रहने के स्थान पर एक स्मार्क स्तूप बना था और इसके पास दूसरा स्तूप अङ्गुलिमाल का था जिनको भगवान बुद्ध ने सत्मार्ग दिखाया था। यह लोग मनुष्यों को मार कर उनकी अँगुली की माला बनाकर पहिनते थे। भगवान बुद्ध पर उनके सरदार का आक्रमण हुआ पर उनके पास आकर वह ठिठक गया, उसकी क्रूरता प्रेम में बदल गई और वह भगवान के पैरों पर गिर पड़ा। भगवान बुद्ध ने उसे उपदेश दिया और अन्त में उसे अर्हत पद भी प्राप्त हुआ।

जेतबन के पूर्वोत्तर मे एक स्तूप था जहाँ भगवान बुद्ध ने एक बीमार भिक्षु के हाथ पाँव धोए थे और वहीं उसके शरीर छूटने पर अर्हत पद उसे मिला था।

जेतवन से एक सौ पग पूर्व एक गहरा गढा था। इस स्थान पर ज़मीन फटी थी और देवदत्त उसमें समा गए थे। यह भगवान बुद्ध के चचेरे भाई थे पर उनसे सदा द्वेष रखते थे और बौद्ध सङ्घ में भरती होकर भी अपना एक नया सङ्घ बनाना चाहते थे। कुमारावस्था में भी इनका यही हाल था। शस्त्र विद्या में भी कुमार सिद्धार्थ से हारकर यह उनके बैरी हो गए थे।

इनके तीर से मार कर गिरे हुए हंस को कुमार सिद्धार्थ (बुद्ध) ने उठा और बचा लिया था। देवदत्त ने हंस वापिस माँगा। मामला राजदरबार तक पहुँचा। निश्चय हुआ कि मारने वाले से बचाने वाले का हक ज़्यादा है। देवदत्त और चिढ गए।

जहाँ देवदत्त जमीन में समाए थे, उससे मिला हुआ दक्षिण में एक बडा गढा था वहाँ देवदत्त के शिष्य कुकाली को जमीन निगल गई थी। उसने बुद्ध देव के प्रति दुर्वचन कहे थे।

कुकाली वाले गढे से १०० गज दक्षिण एक और बडा गढा था जहाँ ब्राह्मण पुत्री चचा, भगवान बुद्ध के चरित्र पर दोष लगाने के कारण ज़मीन में समा गई थी।

जेतवन के उत्तर पश्चिम एक कुआं और एक स्तूप था जहाँ मुद्गल पुत्र, महात्मा सारि पुत्र की कमर खोलने में असमर्थ रहे थे। इसी से मिला हुआ महाराज अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप था जहाँ बुद्ध भगवान और उनके परम शिष्य सारिपुत्र व्यायाम किया करते थे।

जेतवन से ३/४ मील उत्तर-पश्चिम में एक बड़ा बाग था जो पाँच सौ अन्धों के अपनी लकड़ी गाड़ देने से बन गया था। श्रावस्ती के महाराज प्रसेनजित ने ५०० डाकुओं को अन्धा करवा दिया था। भगवान बुद्ध को उनकी दशा पर दया आई और उनकी आँखें अच्छी कर दीं। उन सबों ने अपनी अपनी लकड़ी, जिसे टेक कर चलते थे, गाड़ दीं। उनमें से कलियाँ फूट आईं और एक सुन्दर बाग़ लग गया। जेतवन के भिक्षु इस बाग़ में जाकर ध्यान लगाया करते थे।

बौद्ध धर्म के इतिहास में भगवान बुद्ध की माता और पत्नी को छोड़ कर, सबसे प्रतिष्ठित देवी, विशाखा हुई हैं। यह भगवान बुद्ध की परम भक्त और स्त्रियों के सङ्घ की नेत्री थीं। इन्होंने भगवान बुद्ध के लिए श्रावस्ती में पूर्वाराम विहार बनवाया था। देवी विशाखा साकेत (अयोध्या) के एक धनी व्यापारी की पुत्री थीं और श्रावस्ती के परमधनी व्यापरी पूर्णवर्द्धन को व्याही गई थीं। देवी विशाखा का सारा जीवन धर्म कर्म में बीता और जब उन्होंने सत्कर्म में लगाने को अपने व्याह का जोड़ा बेचना चाहा तो, कहा गया है कि, सारी श्रावस्ती में उसका मूल्य देनेवाला कोई नहीं मिला।

एक समय भगवान बुद्ध अपने शिष्य आनन्द के साथ घूम कर जेतवन को लौट रहे थे। एक माली ने उन्हें देखकर, मार्ग में श्रद्धा पूर्वक एक आम अर्पण किया, उन दिनों आम की फसल नहीं थी। आनन्द ने भगवान के लिए वहीं आसन लगा दिया और आम काट कर प्रार्थना की कि उसे खा लें। भगवान ने वैसा ही किया और आनन्द को गुठली गाड़ देने की आज्ञा दी। गुठली को गाड़ते ही वहाँ एक अति सुन्दर और बहुत भारी आम का वृक्ष निकल आया। भगवान बुद्ध ने एक बार एक चमत्कार दिखाने का वचन दिया था और इससे उन्होंने यह चमत्कार दिखा दिया।

भगवान बुद्ध के लगभग ५०० साल पश्चात् सुविख्यात बौद्धाचार्य मनोरथ और सनातन धर्म के आचार्यों में श्रावस्ती में शास्त्रार्थ हुआ जिसमें मनोरथ असफल रहे। महाराज विक्रमादित्य (उज्जैन के महाराज जिनके नाम से सम्वत चलता है वह नहीं, श्रावस्ती में भी एक महाराज विक्रमादित्य

हुए हैं ) ने १०० बौद्ध आचार्यों और १०० सनातन धर्म के आचार्यों को शास्त्रार्थ के लिए एकत्रित किया था और कह दिया था कि जिस धर्म के आचार्य जीतेंगे उसी धर्म को वह ग्रहण कर लेंगे। बौद्धों के हारने पर महाराज विक्रमादित्य ने सनातन धर्म को अपनाया। आचार्य मनोरथ ने अपनी जिह्वा को दांतों से काट डाला और प्राण दे दिए।

आचार्य मनोरथ विभाषा शास्त्र के रचयिता थे। उनके शिष्य महात्मा वसुबन्धु ने दूसरे राजा, विक्रमादित्य के पुत्र परादित्य, के काल में सनातन धर्म के आचार्यों को शास्त्रार्थ में हरा दिया।

[ जैन धर्म के तृतीय तीर्थङ्कर श्री सम्भवनाथ स्वामी का श्रावस्ती में जन्म हुआ था और यहीं उन्होंने दीक्षा ली थी तथा केवल्य ज्ञान प्राप्त किया था। इनकी माता सुनैना देवी और पिता जितार थे। श्री सम्भवनाथ जी का चिन्ह घोड़ा है और पार्श्वनाथ में इन्होंने निर्वाण की प्राप्ति की थी। ]

जेतवन में रात दिन दीपक जलते थे और ध्वजा पताकाएँ चारों ओर फहराती रहती थीं। एक दिन एक चूहे ने जलती हुई बत्ती खींच ली उससे पताकाओं में आग लग गई और फिर सारे विहार में फैल गई। सब जल कर स्वाहा हो गया। राजकुमार जेत के बनवाए हुए सात-सात खण्ड के द्वार भी गिर कर ढेर हो गए और जेतवन उजाड़ हो गया।

एक समय में भारतवर्ष के प्रधान नगरों में होने के कारण बिगड़ कर भी श्रावस्ती कुछ काल तक अपनी प्रतिष्ठा बना रहा। जब सैयद सालार मसूद कुछ मुसलमानी सेना लेकर बहराइच तक पहुँच गए थे तो श्रावस्ती ही के राजा सुहिलदेव ने उनको वहाँ मारा था। अब उन्हीं सैयद सालार मसूद गाज़ी की दरगाह पर हज़ारों हिन्दू जाकर हरसाल चढ़ावा चढ़ाने लगे हैं !!

च० द०—सहेट महेट बलरामपुर राज्य में बलरामपुर से १० मील पश्चिम खण्डहरों का ढेर है। यह खण्डहर दो भाग में है। एक भाग में जिसे 'महेट' कहते हैं राजाओं के प्राचीन राज भवनों के खण्डहर हैं और दूसरे भाग में जिसे 'सहेट' कहते हैं भगवान बुद्ध की स्मृति के चिन्ह हैं।

जेतवन विहार सहेट का उत्तरी भाग है, इसमें बहुत सी इमारतों के चिन्ह निकले हैं जिनमें संघाराम, गन्धकुटी और कोशाम्बकुटी के भी खण्डहर हैं।

बलरामपुर से सहेट महेट आने को पक्का रास्ता बना है। यह स्थानबहराइच बलरामपुरसड़क पर है। ब्रह्मा देश की दो देवियां, मामा दी और मामा जी ने लेखक (रामगोपाल मिश्र) के पास सहेट महेट में बौद्ध धर्मशाला बनवाने के लिए रुपए भेजे थे। उससे यहाँ धर्मशाला बन गई है और यात्री लोग आराम पाते हैं। लेखक ने बौद्धों को बलरामपुर में भी धर्मशाला के लिए बलरामपुर के धर्मात्मा और प्रजा पालक महाराज सर भगवती प्रसाद सिंह जी से जमीन दिलावाई थी जिस पर सुन्दर बौद्ध धर्मशाला वहाँ भी बन गई है। लेखक के पिता, महाराजा बहादुर सर भगवतीप्रसाद सिंह जी के प्रधान मन्त्री थे और लेखक स्वयम् भी महाराजा के बचपन के साथी थे, इससे इनके कहने पर महाराजा ने बिला मुआविजे केभूमि प्रदान कर दी थी।

अब सहेट महेट मे एक बौद्ध भिक्षु भी बस गए हैं और एक बड़ा मकान बना लिया है। इसी के पास एक चीनी भिक्षु ने भी स्थान बनाया है और अब एक जैन महाशय जैनी धर्मशाला बनाने का प्रबन्ध कर रहे हैं। एक विद्यालय स्थापित करने का भी प्रयत्न हो रहा है

६६६ साँची — (भोपाल राज्य में एक कस्बा)

भोपाल राज्य का प्राचीन नाम दक्षिण गिरि था, जिसकी साँची राजधानी थी।

साँची के समीप सधारा के एक स्तूप से भगवान बुद्ध के सुप्रसिद्ध शिष्य सारिपुत्र और महा मोगाल्लान की हड्डियाँ निकली हैं।

सारिपुत्र का देहान्त भगवान बुद्ध की वर्तमानता में हो गया था और मोगल्लान का, बुद्ध के महापरे निर्वाण के पीछे हुआ था। इन दोनों महापुरुषों की हड्डियों को अंग्रेज साँची से निकालकर लन्दन ले गये थे पर यह विभूति फिर यहाँ लौट कर आगई है।

साँची से ५ मील दूर भिलसा है और भिलसा कस्बे से ६-७ मील पर बेतवा नदी के किनारे भद्दिलपुर है जहाँ श्री शीतल नाथ (दसवें तीर्थङ्कर) के गर्भ, जन्म और दीक्षा तथा कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुए थे। वहाँ के लोग उस स्थान को भी भिलसा कहते हैं, पर जैनी लोग उसको उसके पुराने नाम भद्दिलपुर से पुकारते हैं। उसका और भी प्राचीन नाम भद्रिकापुरी था।

कुछ लोगों का विचार है कि भदिया जो बिहार प्रान्त के हजारी बाग जिले में है, वह प्राचीन भद्दिलपुर व भद्रिकापुरी है, और यह कि वहाँ शीतल नाथ स्वामी के चार कल्याणक (गर्भ जन्म, दीक्षा व कैवल्यज्ञान) हुए थे,

पर यह बात प्रमाणित नहीं है और न वहाँ की यात्रा होती है। कुछ जैन मूर्त्तियाँ वहाँ पाई जाती हैं और ज्ञात होता है कि इसी कारण व नाम मिलने जुलने के कारण तथा हजारीबाग में बहुत से जैन तीर्थ स्थान होने के कारण उस स्थान को भद्दिलपुर व भद्रिकापुरी समझा गया।

कुछ अन्य जैनियों का विचार है कि भद्दिलपुर उज्जैन से आठ मील पर है।

[श्री सीतलनाथ स्वामी के पिता का नाम दृढरथ और माता का नाम नन्दा था। आपका चिन्ह कल्पवृक्ष है और पार्श्वनाथ में आपने निर्वाण प्राप्त किया था। आप के गर्भ, जन्म, दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक भद्दिलपुर में हुए थे।]

हिन्दुस्तान में सबसे उत्तम बौद्ध स्तूपों के कुण्ड भिलसा के आस पास और साँची में हैं। भिलसा के बौद्ध स्तूपों की संख्या का अनुमान ६५ है, और ये १७ मील लम्बाई और १० मील चौड़ाई में फैले हुए हैं।

६७० साई खेड़ा—(देखिए नासिक)

६७१ सारनाथ—(संयुक्त प्रान्त में बनारस जिले में एक स्थान)

सारनाथ से एक मील पर सिंहपुरी में श्री श्रेयांसनाथ जी (ग्यारहवें तीर्थङ्कर) के गर्भ, जन्म और दीक्षा तथा कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुए थे।

सारनाथ में प्रथम भगवान बुद्ध ने धर्म चक्र चलाया था अर्थात् बुद्ध होकर पहिला उपदेश दिया था।

कहते हैं कि एक पूर्व जन्म में भगवान बुद्ध ने मृग रूप में यहाँ रमण किया था।

भगवान बुद्ध के पीछे सारनाथ, बुद्ध काशी के नाम से प्रसिद्ध था। इसका पुराना नाम सारङ्गनाथ भी था।

[श्री श्रेयांसनाथ के पिता विमल और माता विमला थीं। आप का चिन्ह गेंडा है। पार्श्वनाथ पर्वत पर आपने निर्वाण प्राप्त किया था।]

*ह्वानचांग के समय में एक २०० फीट ऊँचे मन्दिर में यहाँ भगवान* बुद्ध की एक ताँबे की मूर्त्ति धर्म चक्र चलाती हुई उपस्थित थी और ३० बौद्ध धर्मशाले थे, जिनमें प्रत्येक में सौ-सौ भिक्षु रहते थे। जिस स्थान पर भगवान बुद्ध ने उपदेश दिया था वहाँ सम्राट अशोक का बनवाया हुआ बड़ा स्तूप रहा था।

सारनाथ बनारस से ७ मील उत्तर में है। सम्राट अशोक वाला स्तूप 'धामक' नाम से अभी विद्यमान है। यहीं बुद्ध भगवान ने पश्चिम की ओर मुँह करके धर्म का उपदेश आरम्भ किया था। सम्भव है कि धर्म चक्र से बिगड़ कर नाम 'धामक' हो गया हो। अब इस स्तूप की मरम्मत हो गई है और महाबोधी सोसाइटी ने एक अति उत्तम विहार 'मूलगन्ध कुटी विहार' के नाम से सारनाथ में बनवाया है जिसके भीतर दीवारों पर भगवान बुद्ध के जीवन के चरित चित्रों में बने हैं। चित्रकार को जापान के मिकैडो (सम्राट) ने अपनी ओर से भेजा था।

श्री घनश्यामदास बिड़ला ने हाल में एक अति सुन्दर धर्मशाला यहाँ बनवा दी है। जैनियों का एक मन्दिर भी यहाँ बना हुआ है। सारनाथ अब रमणीय स्थान बन गया है।

पूर्व जन्म में सारङ्ग (मृग) के रूप में भगवान बुद्ध के यहाँ रहने के कारण सारङ्गनाथ उसका नाम पड़ा था जो अब सारनाथ हो गया है।

सिंहपुरी जो श्री श्रेयांसनाथ स्वामी का स्थान है, वह 'धामक' स्तूप से एक मील पर है।

६७२ सालकूट—(देखिए सम्मेद शिखर)

६७३ सालग्राम—(नैपाल में हिमालय की सप्तगण्डकी पर्वत श्रेणी में एक स्थान)

यहाँ भरत और ऋषि पुलह ने तपस्या की थी।

मार्कण्डेय ऋषि का यहाँ जन्म हुआ था।

सालग्राम या शालग्राम के समीप से गण्डक नदी निकलती है और इसी कारण उसे शालग्रामी भी कहते हैं। शालग्राम तिब्बत की दक्षिण सीमा पर है। जड़ भरत का आश्रम यहाँ काकवेणी नदी पर और ऋषि पुलह का रेही ग्राम में था।

मार्कण्डेय तीर्थ—पद्मपुराण के अनुसार मार्कण्डेय ऋषि ने सरयू और गङ्गा के सङ्गम पर तपस्या की थी, और महाभारत के अनुसार गोमती और गङ्गा के सङ्गम पर उन्होंने तपस्या की थी, तथा आदि ब्रह्म पुराण के अनुसार जगन्नाथपुरी में तप किया था।

सर्व साधारण में यह माना जाता है कि उन्होंने मद्रास के तञ्जौर जिले में तिरुकदावुर में तपस्या करके शिवजी से अमर (यम के पाश से मुक्त)

होने का वरदान पाया था, परन्तु जहाँ तक सही प्रतीत होता है यह स्थान जहां उन्होंने यम की पाश से मुक्ति पाई थी मध्यप्रान्त का मार्कण्ड है।

६७४ सालस्यटी—( बम्बई प्रान्त में बम्बई के समीप एक टापू )

सालस्यटी का प्राचीन नाम शष्टी है।

चौथी शताब्दी ईस्वी के आरम्भ में यहां भगवान बुद्ध का एक दाँत रखा था।

६७५ सालार—( देखिए असरूर )

६७६ सिंगरौर—( संयुक्त प्रान्त के इलाहाबाद जिले में एक स्थान )

इस स्थान का पुराना नाम शृङ्गीवीरपुर या शृङ्गवेर था। यह शृङ्गी ऋषि का स्थान है।

भीलराज गुह,जिन्होंने बन जाते समय श्रीराम, लक्ष्मण और सीता जी का गङ्गा जी के तट पर स्वागत किया था, उनकी सिंगरौर ही राजधानी थी।

यहाँ श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण और जानकी ने भूमि पर रात्रि बिताई थी और पीछे गंगा जी को पार किया था।

भरत भी श्रीरामचन्द्र जी को लौटालने के लिए चित्रकूट जाते समय यहाँ ठहरे थे और गुह ने उनको राम का विरोधी समझ उनसे लड़ने का विचार किया था।

सिंगरौर गंगा जी के उत्तरीय किनारे पर इलाहाबाद से २३ मील पश्चिमोत्तर में है। शृङ्गी ऋषि का मन्दिर एक ऊँचे टीले पर गंगा के तट पर बना है। इस स्थान को रामचौरा भी कहते हैं।

बिहार प्रान्त के मुङ्गेर जिले में, मुंगेर से २० मील दक्षिण पश्चिम एक स्थान शृंगी ऋषि है, जहाँ पहाड़ पर शृंगी ऋषि का मन्दिर है और उसके आस पास और भी टूटे-फूटे मन्दिर हैं। इस स्थान तक कठिनाई से पहुँचना होता है। शृंगी ऋषि का यहाँ भी निवास था।

सिंगरौर में दो सौ वर्ष पूर्व तपोनिधि एक अच्छे कवि थे जिन्होंने 'सुधानिधि' ग्रन्थ लिखा है।

६७७ सिंहथल—( बीकानेर राज्य में एक स्थान )

यहाँ श्रीराम स्नेही सम्प्रदाय के आद्याचार्य श्री हरि रामदास का जन्म हुआ था।

[ बीकानेर से ६ कोस पूर्व सिंहथल नामक ग्राम है। यहाँ श्री रामानन्दीय श्री वैष्णव सम्प्रदाय के अन्तर्गत रामसनेही ,नाम की शाखा अथवा टट्टी

सम्प्रदाय के आचार्याचार्य श्री हरिदास जी का प्रादुर्भाव एक ब्राह्मण कुल में हुआ था। छोटी अवस्था में ही ज्योतिष, योग, वेदान्तादि शास्त्रों में आप कुशल हो गये थे। श्री हरिदास जी को ललिता सखी का अवतार व पूर्ण ऋषि माना जाता है। यह परम गायनाचार्य थे और तानसेन इनके शिष्य थे। इनका गाना सुनने को सम्राट अकबर साधु का भेष धारण कर श्री वृन्दावन आये थे।]

६७८ सिंहपुरी—( देखिए सारनाथ )

६७९ सिद्धपुर—( बड़ौदा राज्य में एक पुराना क़स्बा )

कर्दम ऋषि का यहाँ आश्रम था और वे अपनी पत्नी देवहूती सहित यहाँ निवास करते थे।

इस स्थान पर भगवान कपिल देव का जन्म हुआ था और उनकी युवावस्था यहाँ बीती थी।

महाभारत का काम्यक वन इस स्थान के चारों ओर था।

पाण्डव लोगों ने यहाँ आकर निवास किया था।

इस स्थान के प्राचीन नाम सिद्धपद, बिन्दुसर, मातृ तीर्थ और रुद्र महालय तीर्थ हैं।

( महाभारत-वन पर्व, २५८ वा अध्याय ) राजा युधिष्ठिर ने कहा कि अब हम लोग मरूदेश के उत्तम काम्यक वन में जाकर विन्दुसर नामक तालाब के तट पर विहार करेंगे। उसके पश्चात् पाण्डव लोग काम्यक वन में चले गए।

( वामन पुराण, ३५ वा अध्याय ) मातृ तीर्थ में जाकर स्नान करने से प्रजा की वृद्धि होती है।

(पद्म पुराण, उत्तर खण्ड, १४६ वा अध्याय) रुद्र महालय तीर्थ साक्षात् महादेव जी का रचा हुआ केदार तीर्थ के तुल्य है। कार्तिक अथवा वैशाखी पूर्णिमा को उस तीर्थ में जाने से फिर इस ससार में जन्म नहीं होता है।

व० द०—सिद्धपुर का पुराना क़स्बा सरस्वती नदी के किनारे पर बसा है। सिद्धपुर के समीप नदी का घाट पक्का है। सरस्वती के किनारे से थोड़ी ही दूर पर क़स्बे में रुद्रमहालय का खण्डहर है। वहाँ पश्चिमी भारत के प्रसिद्ध मन्दिरों में से रूद्रेश्वर महादेव का मन्दिर था जिसको लगभग सन् १३०० ई० में अलाउद्दीन ने तोड़ दिया। पण्डे लोग कहते हैं कि उस समय सिरोही के महाराज, शिव लिङ्ग को अपनी राजधानी में लेगए और वहाँ उनका नाम शरणेश्वर पड़ गया और वह वहाँ अब तक विद्यमान हैं। रुद्रमहालय में अब केवल उस मन्दिर का टूटा हुआ फाटक है।

सिद्धपुर क़स्बे से एक मील दूर बिन्दुसर नाम का ४० फीट लम्बा और इतना ही चौड़ा तालाब है। उसके चारो बगलों पर नीचे पत्थर की सीढ़ियाँ और ऊपर फर्श हैं, और दक्षिण के किनारे के पास तीन छोटे मन्दिर हैं जिन में से एक में महर्षि कर्दम और देवहूती, दूसरे में कपिलदेव और तीसरे में गया गदाधर जी हैं। बिन्दुसर को लोग मातृगया भी कहते हैं। जिनकी माता मर गई हैं वे बिन्दुसर के किनारे पिण्डदान करते हैं। बिन्दुसर के पास ही अला सरोवर नामक बहुत बड़ा तालाब है जिसके चारो ओर पक्के घाट बने हैं।

६८० सिद्धवर कूट—(देखिए मान्धाता व सम्मेद शिखर)

६८१ सिन्धु—(एक छोटा पाकिस्तानी प्रान्त)

महाभारत के प्रसिद्ध राजा जयद्रथ, सिन्धु देश के राजा थे। सिन्धु का प्राचीन नाम सौवीर है। उन दिनों पजाब का सिन्धु सागर दुआब सिन्धु कहलाता था।

प्रा० क०—(महाभारत, उद्योग पर्व, १९वां अध्याय) सिन्धु और सौवीर के राजा जयद्रथ (कुरुक्षेत्र की लड़ाई के समय) एक अक्षौहिणी सेना लेकर राजा दुर्योधन की ओर आए।

(द्रोण पर्व, ११४ वां अध्याय) अर्जुन ने जयद्रथ को रण-भूमि में मार डाला।

(वन पर्व, ८२ वां अध्याय) सिन्धु और समुद्र के सङ्गम में जाकर, समुद्र में स्नान, और पितर देवताओं तथा ऋषियों का तर्पण करना चाहिए। वहाँ स्नान करने से वरुण लोक, और वहाँ के शंकुकर्णेश्वर महादेव की पूजा करने से १० अश्वमेध का फल मिलता है।

(अनुशासन पर्व, २५ वां अध्याय) महानद सिन्धु में स्नान करने से स्वर्ग प्राप्त होता है।

व० द०—बम्बई प्रान्त का सब से उत्तरीय भाग सिन्धु था। इस में हैदराबाद, करांची, थर व परकर, शिकारपुर और अपर-सिन्धु फ्रांटियर ज़िले तथा खैरपुर का राज्य है। पर यह एक अलग प्रान्त बना दिया गया था और अब पाकिस्तान में है। पाकिस्तान की राजधानी भी कराची ही है। सिन्धु नदी सिन्धु के बीचों बीच बहती हुई सिन्धु के नीचे समुद्र में मिल जाती है।

६८२ सिरपुर—( देखिए चन्देरी )

६८३ सिरसर राउ—( देखिए महायान डीह )

६८४ सीताकोटि—( देखिए रामेश्वर )

६८५ सीतामढ़ी—( बिहार प्रांत के मुजफ्फरपुर ज़िले में एक छोटा कस्बा )

सीताजी का जन्म इसी स्थान पर हुआ था।

प्रा० क०—जनकपुर के राजा ह्रस्वरोमा के सीर ध्वज और कुशध्वज दो पुत्र थे। उनमें सीरध्वज जिन्हें राजा जनक और विदेह भी कहते हैं मिथिला के राजा हुए। ये एक समय पुत्र कामना के निमित्त सोने के हल से यज्ञ भूमि को जोतते थे; उसी समय हल के अग्रभाग से सीता मढ़ी के निकट सीता कन्या उत्पन्न हुई।

निमिवंश में जितने राजा हुए सभी 'जनक' कहलाते हैं और महात्यागी होने से विदेह संज्ञा भी इन सबों की थी। पर जनक के नाम से अधिक

प्रसिद्ध सीताजी के पिता ही हुए हैं। यह शिवजी के बडे भक्त थे। शिवजी ने अपना माहेश्वर धनुष इन्हें धरोहर के रूप में दिया था। वह इनके यहाँ धरा था और उसकी पूजा होती थी। एक बार सीता जी ने एक हाथ से उस प्रलयकारी विशाल धनुष को उठा लिया। उसी समय महाराज ने प्रतिज्ञा कर ली कि जो उस विशाल धनुष को उठा सकेगा उसी से सीताजी का विवाह होगा।

जनकपुर मिथिला देश की राजधानी थी। प्राचीन मिथिला राज्य आज कल के चम्पारन और दरभङ्गा जिलों की जगह पर था। जनकपुर में जिसे मिथिलापुरी भी कहते हैं श्री मल्लिनाथ (१६ वें तीर्थंकर) और श्री नमिनाथ (२१ वें तीर्थंकर) ने जन्म धारण किया था और दीक्षा ली थी। यहीं इनके गर्भ व कैवल्य ज्ञान कल्याणक भी हुए थे।

[श्री मल्लिनाथ की माता का नाम अदिभूति और पिता का नाम प्रजापति था। इनका चिन्ह कुंभ (घडा) है। श्री नमिनाथ की माता का नाम विपुला और पिता का नाम विश्वरथ था। इनका चिन्ह नीला कमल है। इन दोनों तीर्थंकरों के गर्भ - जन्म - दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक मिथिलापुरी में हुए थे। और निर्वाण पार्श्वनाथ में हुआ था।]

मैथिल-कोकिल विद्यापति कवि शिवसिंह राजा के दर्बार में मिथिला में थे।
मिथिला विद्यालय की ख्याति १४ वा शताब्दी के बाद से हुई थी।
महर्षि याज्ञवल्क मिथिलापुरी में निवास करते थे।
शुकदेव जी मिथिलापुरी में पधारे थे।

[ महर्षि याज्ञवल्क अपने समय के परम प्रसिद्ध ब्रह्मज्ञानी थे। एक समय महाराज जनक ने श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी की परीक्षा के निमित्त एक सभा की और एक सहस्र सवत्सा सुवर्ण की गाएँ बना कर खड़ी कर दीं। सबसे कह दिया कि जो ब्रह्मज्ञानी हों वे इन्हें सजीव बनाकर ले जाँय। सबकी इच्छा हुई, किंतु आत्मश्लाघा के भय से कोई उठा नहीं। तब याज्ञवल्क्य जी ने अपने एक शिष्य से कहा—"बेटा! इन गौओं को अपने यहाँ हाँक ले चलो"। इतना सुनते ही सब ॠषि याज्ञवल्क्य जी से शास्त्रार्थ करने लगे। महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने सब के प्रश्नों का यथाविधि उत्तर दिया। ब्रह्मवादिनी गार्गी से भी उनका शास्त्रार्थ हुआ और अन्त में सबने संतुष्ट होकर उन्हें ही सबसे श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी माना।]

पृ० द०—सीतामढी कस्बे से एक मील पश्चिम म पुनउडा बस्ती के निकट पक्का सरोवर है। लोग कहते हैं कि इसी स्थान पर अयोनिजा सीता जी उत्पन्न हुई थीं।

सीतामढी के दक्षिण पूर्व जाने पर १६ मील दूर जनकपुर रोड रेलवे स्टेशन है। इस स्टेशन से २४ मील पूर्वोत्तर नेपाल राज्य में जनकपुर नाम की एक बहुत बडी बस्ती है। यह स्थान मिथिला नरेश महाराज जनक की राजधानी था। एक विशाल मन्दिर म महाराज रामचन्द्र जी और उनके भाइयों की मूर्तियाँ हैं।

जनकपुर से १४ मील दूर जङ्गल म धनुषा बस्ती के निकट एक सरोवर के पास पत्थर का एक बडा धनुष पडा है। यह सीता स्वयवर के धनुर्यज्ञ का स्थान समझा जाता है। जनकपुर से लगभग ६ मील दक्षिण-पूर्व विश्वामित्र का मन्दिर है।

६८६ सीही—( दिल्ली के समीप एक गाँव )

यहाँ महात्मा सूरदास जी ने जन्म लिया था। ‌

[ श्री **सूरदास** जी का जन्म एक सारस्वत ब्राह्मण के यहाँ लगभग स० १५४० वि० में हुआ था। आठ साल की अवस्था म यह अपने माता पिता को छोड़ मथुरा जा में रहने लगे और अन्त तक ब्रज मण्डल ही मे रहे। आप श्री बल्लभाचार्य जी के शिष्य थे। हिन्दी साहित्य म आप सब श्रेष्ठ कवि हुए हैं और कवियों म सूर्य कहलाते हैं। जीवन पर्यंत सूरदास जी कृष्णानन्द म मग्न रहे। आपका निवास स्थान विशेषतया गऊ घाट पर था। सम्वत् १६२० वि० के लगभग पारासोली ग्राम म इन भक्त शिरोमणि ने शरीर छोडा। ]

६८७ सुदामापुरी—( देखिए पोरबन्दर )

६८८ सुप्रभकूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

६८९ सुमनकूट—( देखिए लङ्का )

६९० सुरीवनम—( देखिए आनागन्दी )

६९१ सुल्तानपुर—( कपूरथला राज्य म एक स्थान )

यहाँ बौद्धों का तामसवन नामक विहार था। इस स्थान का दूसरा प्राचीन नाम रघुनाथपुर है।

चतुर्थ बुद्ध सभा ७८ ई० में सम्राट कनिष्ट के द्वारा यहीं आयोजित की गई थी, जिसका सभापतित्व वसुमित्र ने किया था।

यहाँ कालीवेई नदी के तलेटों में दो दिन तक गुरु नानक साहब बैठे रहे थे।

गुरु नानक स्नान करने को कालीवेई नदी में गये और उसी में दो दिन तक रह गये। चारों ओर खोज होती रही, तीसरे दिन आप नदी में से निकले। उस स्थान पर 'सन्त घाट' गुरुद्वारा है जिसमें कपूरथला राज्य की ओर से राग भोग का प्रबन्ध और जागीर है।

ह्वाँग चाँग लिखते हैं कि चतुर्थ बुद्ध सभा कश्मीर में राजधानी के समीप कराडलवन सघाराम में हुई थी, पर फाहियान जो ह्वाँग चाँग से पहले आये थे उसका यहाँ तामस वन में होना बताते हैं।

६९२ सुल्तानपुर—( सयुक्त प्रांत में एक जिला का सदर स्थान )

इसके प्राचीन नाम कुशस्थली व कुशावती हैं। इसकी नींव श्रीरामचन्द्र जी के पुत्र कुश ने डाली थी और अयोध्या से हटाकर इसे कुछ काल तक अपनी राजधानी बनाया था।

सुलतानपुर गोमती नदी पर बसा है और अयोध्या से ४० मील है।

६९३ सुरतवरकूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

६९४ सुहागपुर—( देखिए विराट )

६९५ सूरत—( बम्बई प्रांत में एक जिला का सदर स्थान )

सूरत का प्राचीन नाम सूर्य्यपुर है। कुछ लोगों का मत है कि सूरत ही सौराष्ट्र था।

श्री शङ्कराचार्य ने वेदान्त पर अपना सुप्रसिद्ध भाष्य यहीं लिखा था।

छत्रपति महाराज शिवाजी ने अंग्रेजों की फैक्ट्री को यहाँ लूटा था।

६९६ सेंदप्पा—( मध्य भारत की रियासत बिजावर में एक गाँव )

द्रोणगिरि पर्वत इसी स्थान पर है।

यहाँ से श्री गुरुदत्तादि जैन मुनिवर मोक्ष को पधारे थे।

सेंदप्पा और द्रोणगिरि में अनेक जैन मन्दिर हैं। अकेले द्रोणगिरि पर २४ मन्दिर हैं।

६९७ सेमर खेड़ी—( मध्य भारत के ग्वालियर राज्य में एक नगर )

तारनपंथी सम्प्रदाय के स्थापन कर्ता तारन स्वामी थे, इन्होंने कई नीच जातियों को भी अपने पथ में मिलाया। उन्होंने मूर्ति पूजन निषेध का उपदेश दिया था। तारन पंथी शास्त्र का पूजन करते हैं।

६९८ सेवरी नारायण—( देखिए नासिक )

६९९ सोनपत—( देखिए कुरुक्षेत्र )

७०० सोनपुर—( बिहार प्रान्त के सारन जिले में एक छोटी बस्ती )

श्रीरामचन्द्र और लक्ष्मण विश्वामित्र के सिद्धाश्रम से जनकपुर जाते समय, विश्वामित्र और अन्य ऋषियों के साथ सोन नदी पार कर इस स्थान से जनकपुर गए थे।

( वाराह पुराण, १३६ वाँ अध्याय ) गण्डकी नदी जहाँ गङ्गा से मिली है वहाँ का पुण्य कौन वर्णन कर सकता है।

सोनपुर गण्डकी नदी के दाहिने किनारे पर, गङ्गा और गण्डकी के सगम पर आबाद है। यहाँ मही नामक एक छोटी नदी के तीर पर हरिहरनाथ महादेव का मन्दिर है। कार्त्तिक की पूर्णिमा को यहाँ हरिहर क्षेत्र का प्रख्यात मेला होता है और दो सप्ताह तक रहता है। यह मेला भारतवर्ष के पुराने और सबसे बडे मेलों में से एक है। हाथियों की बिक्री ऐसी हिन्दुस्थान में और कहीं नहीं होती।

कुछ लोगों का विचार है कि यहाँ विष्णु ने गज को ग्राह से बचाया था, पर वाराह पुराण देखने से प्रतीत होता है कि वह स्थान जहाँ विष्णु भगवान ने गण्डकी नदी में ग्राह से गज को बचाया था, नैपाल मे है। ( देखिए मुक्तिनाथ )

७०१ सोनागिरि—( मध्य भारत के दतिया राज्य में एक स्थान )

जैनियों के अनुसार यह पूज्य निर्वाण क्षेत्र है, जहाँ से नगानग कुमार आदि साढे सात करोड़ मुनि मुक्त हुए हैं।

इस स्थान पर १६ जैन मन्दिर हैं।

७०२ सोमनाथ पट्टन—( काठियावाड़ प्रायद्वीप के दक्षिण किनारे पर जूनागढ राज्य के अन्तर्गत एक कस्बा )

यह प्राचीन प्रभास है। सिद्धाश्रम व कुल्यपाक क्षेत्र भी इसको पुराणों में कहा गया है। जैन ग्रन्थों मे इसको चन्द्र प्रभास कहा गया है।

श्रीकृष्णचन्द्र व बलराम जी इसी स्थान से परमधाम को गए थे। वसुदेवजी ने भी यहीं शरीर छोड़ा था।

यादववंश का विनाश यहीं हुआ था।

प्रह्लाद ने प्रभास तीर्थ में तप किया था।

यहाँ का सोमनाथ लिंग, शिवजी के १२ ज्योतिलिङ्गों में से है।

कथा है कि चन्द्रमा यहाँ तप करके क्षयी रोग से मुक्त हुए थे और इससे यहाँ का नाम सोम तीर्थ हुआ था।

जगद्गुरु रेणुकाचार्य्य ने यहाँ शरीर छोड़ा था।

म० भा० ( महाभारत, वन पर्व, ८२ वा अध्याय ) प्रभास तीर्थ में भगवान अग्नि आप ही निवास करते हैं। जो मनुष्य वहाँ स्नान करके तीन दिन वास करता है वह अग्निष्टोम यज्ञ का फल पाता है।

( शान्ति पर्व ३४२ वां अध्याय तथा शाल्य पर्व ३५ वां अध्याय ) चन्द्रमा प्रभास क्षेत्र में जाकर राजयक्ष्मा रोग से छूट कर फिर तेज को प्राप्त हुए। क्योंकि इस क्षेत्र में चन्द्रमा की प्रभा बढ़ी इसलिए लोग इसको प्रभास कहते हैं।

( मुशल पर्व, १४ वाँ अध्याय ) युधिष्ठिर के राज्य मिलने पर ३६ वें वर्ष में कृष्ण वंशियों में बहुत ही दुर्नीति उपस्थित हुई। वे लोग एरका में लगे हुए मूशलरूप के द्वारा परस्पर की मार से विनष्ट होगए।

एक समय ऋषियों को द्वारिका में आया हुआ देखकर कुछ यदुवंशियों ने श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब को गर्भवती स्त्री के रूप में बनाया और ऋषियों से पूछा कि यह स्त्री क्या प्रसव करेगी? महर्षि वृन्द ने रुष्ट होकर कहा कि जो यह प्रसव करेगी उसी से यदुवंशियों का नाश होगा। दूसरे दिन साम्ब ने एक मूसल प्रसव किया। ऋषि के श्राप से बचने के लिए उस मूसल का महीन चूर्ण करके समुद्र में फेंक दिया गया। कुछ काल पर्यन्त यादवों को द्वारिकापुरी में कुछ अपशकुन दीख पड़ने लगे और वे उस नगर को छोड़ प्रभास में जाबसे। कुछ दिन के पीछे उन लोगों में आपस में कलह उत्पन्न होगई। इसी बीच में मूशल के चूर्ण ने जो द्वारिकापुरी में समुद्र में बहा दिया गया था, प्रभास में पहुँचकर मूशल तृण का एक जंगल उत्पन्न कर दिया। जहाँ यह कलह उत्पन्न हुई वहाँ यह जंगल उपस्थित था। उसी से लड़ लड़ कर यदुवंशियों ने एक दूसरों को नाश कर डाला। माधव ने अर्जुन को बुलाने के लिए एक दूत हस्तिनापुर भेजा। श्रीकृष्ण वनवासी होकर अपना शेष समय बिताने को चल दिए। उन्होंने वन में जाकर देखा कि बलराम योग युक्त बैठे हैं और उनके मुख से एक श्वेतवर्ण महानाग बाहर होता है देखते देखते यह समुद्र में प्रवेश कर गया। श्रीकृष्ण घूमते घूमते महायोग अवलम्बन करके सोगए। उस

समय जरा नामक व्याध ने उन्हें मृग जानकर बाण से विद्ध किया। जब उसने निकट जाकर पीताम्बरधारी चतुर्भुज रूप को देखा तब अपने को अपराधी समझकर उनके चरणों को जा पकड़ा। माधव उसे आश्वासित कर अपने धाम को चले गए। अर्जुन को बुलाने जो दूत गया वह उन्हें लेकर द्वारिकापुरी पहुंचा। अर्जुन के द्वारिकापुरी पहुँचने के दूसरे दिन श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव परमगति को प्राप्त हुए। देवकी, भद्रा, मदिरा और रोहिणी उन के साथ सती हो गईं। यदुवंश में पुरुषों के न रहने से स्त्रियों ने तर्पण का काम किया। अर्जुन द्वारिका से प्रभास में गए और वहाँ प्रधानता के अनुसार सब मृतकों का अन्त्येष्टि कार्य किया और बलराम तथा कृष्ण के शरीर को विधि पूर्वक दाह किया। सातवें दिन प्रेत कार्य समाप्त करके अर्जुन ने हस्तिनापुर को प्रस्थान किया। द्वारिका से सब स्त्रियों और बालकों को लेकर कूच कर दिया। एक दिन सब लोगों ने पचनद के समीप निवास किया। वहाँ अमीरों ने आकर बहुत सी स्त्रियों का हरण कर लिया। अर्जुन के बाण निष्फल हुए। अर्जुन ने यादवों की बची हुई स्त्रियों को स्थान-स्थान पर कुरुक्षेत्र में वास करवाया, कुछ को सरस्वती नदी के तीर पर बसा दिया और कुछ को इन्द्र प्रस्थ ले आए। पाँच लाख यदुवंशी वीर परस्पर लड़ कर प्रभास में मारे गए थे।

विष्णु पुराण के पाँचवें अंश ३७ वें अध्याय में लिखा है कि अष्टावक्र मुनि ने इन स्त्रियों को श्राप दिया था कि तुम चोरों के हाथ में पड़ोगी।

भविष्य पुराण और मत्स्य पुराण के ६६ वें अध्याय में लिखा है कि साम्ब का मनोहर रूप देख कृष्ण की १६ हजार स्त्रियाँ कामातुर हो गईं। तब कृष्ण ने शाप दिया था कि तुमको पतिलोक और स्वर्ग नहीं मिलेगा, तुम लोग चोरों के वश पड़ोगी। और साम्ब को शाप दिया था कि तू कुष्ठी होगा। ( १६ हजार स्त्रियों की कथा के लिए गोहाटी, और साम्ब के कुष्ट रोग से मुक्त होने की कथा के लिए मथुरा व कनारक देखिए )

प्रभास के लड़ाई की कथा विष्णु पुराण, श्री भागवत और लिङ्ग पुराण में भी लिखा है।

(शिव पुराण,—६४५ वां अध्याय) दक्ष प्रजापति ने अपनी २७ पुत्रियों का विवाह चन्द्रमा से कर दिया परन्तु चन्द्रमा रोहिणी नामक पत्नी से अधिक स्नेह करने लगे। दक्ष की अन्य कन्याओं ने इसकी शिकायत की और दक्ष ने चन्द्रमा से कहा। जब उन्होंने फिर भी नमाना तब दक्ष ने शाप दिया कि

तू क्षयी रोग से पीड़ित हो जा। उसी समय चन्द्रमा क्षय रोग से युक्त हो गए। जब इससे जगत में हाहाकार मचा और देवता लोग ब्रह्मा जी के पास गए तब उन्होंने कहा कि चन्द्रमा प्रभास क्षेत्र में शिव जी की आराधना करें। चन्द्रमा ने ६ मास तक मृत्युञ्जय के मन्त्र से शिव जी का पूजन किया। शिव जी ने प्रसन्न होकर उनसे वर माँगने को कहा। चन्द्रमा ने अपना रोग दूर करने की प्रार्थना की और अच्छे हो गये। देवताओं और ऋषियों ने शिव जी से उसी स्थान पर स्थिर होने की प्रार्थना की और शिव जी वहाँ स्थित होकर सोमेश्वर अर्थात् सोमनाथ नाम से जगत में प्रसिद्ध हुए।

देवताओं और ऋषियों का खोदा हुआ गड्ढा 'चन्द्रकुण्ड' नाम से विख्यात हुआ।

(वामन पुराण, ३४ वां अध्याय) सोमतीर्थ में, जहाँ चन्द्रमा व्याधि से मुक्त हुए थे, स्नान करके सोमेश्वर अर्थात् सोमनाथ के दर्शन करने से राजसूय यज्ञ का फल मिलता है। वहाँ से भूतेश्वर और मालेश्वर की पूजा करने से मनुष्य फिर जन्म नहीं लेता।

(८४ वां अध्याय) प्रह्लाद ने प्रभास तीर्थ में जाकर सरस्वती और समुद्र के संगम में स्नान करके शिव का दर्शन किया।

(गरुड़ पुराण—पूर्वार्द्ध, ८१ वां अध्याय) प्रभास क्षेत्र एक उत्तम स्थान है, जिसमें सोमनाथ महादेव निवास करते हैं।

(कूर्म पुराण—उपरिभाग, ३४ वां अध्याय) तीर्थों में उत्तम प्रभास तीर्थ है। जिसको सिद्धाश्रम भी कहते हैं।

(शिव पुराण—ज्ञान संहिता, ३८ वां अध्याय) शिव जी के १२ ज्योतिर्लिङ्ग हैं, उनमें सौराष्ट्र देश में सोमनाथ है।

व० द०—सोमनाथ पट्टन को देवपट्टन, प्रभास पट्टन और पट्टन सोमनाथ भी कहते हैं। इसके दक्षिण के समुद्र का नाम अग्निकुण्ड है। कसबे के पूर्व के ३ नदियों के संगम को प्राची त्रिवेणी कहते हैं। वहाँ पूर्वोत्तर से हिरण्या नदी, पूर्व से सरस्वती नदी और दक्षिण पूर्व में कपिला नदी आई हैं। कहा जाता है कि इसी संगम के पास श्री कृष्ण की दाह क्रिया की गई थी। हिरण्य नदी के दाहिने किनारे पर एक पतला वट वृक्ष है। उस जगह पर एक बड़ा वट वृक्ष था, जिसको मुसलमानों ने कई बार काट दिया था। उसी से यह वट फिर निकला है। वहाँ के लोग कहते हैं कि बलराम जी इसी स्थान से परमधाम को गए हैं। उस स्थान से आगे जाने पर हिरण्य नदी

के तीर पर यादव स्थल नामक स्थान मिलता है । वहाँ नदी के तीर पर लम्बे पत्ते वाली एक प्रकार की घास, जिसके पत्ते पत्तलों से अधिक चौड़े होते हैं, जमी हुई है । लोग कहते हैं कि इसी का नाम महाभारत तथा पुराणों में एरका लिखा है, जिसके पत्ते यदुवंशियों के नाश के समय अमोघ शस्त्र हो गए थे ।

सोमनाथ पट्टन कस्बे के मध्य भाग में सोमनाथ का नया मन्दिर है जिस को इन्दौर की महारानी अहल्या बाई ने बनवाया था । कस्बे के पश्चिम समुद्र के तीर पर सोमनाथ का पुराना मन्दिर है जिसको सन् १०२४ ई० में महमूद गजनवी ने लूटा था । यह मन्दिर अब भी मुसलमानों के अधिकार में हीन दशा में विद्यमान था पर अब उसका उद्धार होने जा रहा है । इस उजड़ी हालत में भी मन्दिर की बनावट देखने योग्य है । यह हाते से घिरा हुआ था, पर अब केवल मन्दिर, जो काले पत्थर का है, खड़ा है । इसमें बड़े आकार का सोमनाथ शिव लिङ्ग था ।

सोमनाथ पट्टन से लगभग एक मील पश्चिमोत्तर समुद्र के तीर पर बाण तीर्थ है । यहाँ के लोग कहते हैं कि जरा नामक व्याध ने इसी स्थान से श्रीकृष्ण को बाण मारा था । बाण तीर्थ से १॥ मील उत्तर भाल तीर्थ है । यहाँ भाल कुण्ड नामक एक पक्का तालाब है । उसके पास पद्मकुण्ड नामक छोटा सरोवर और एक पीपल के वृक्ष के पास भालेश्वर शिवलिंग है । यहाँ के पण्डे बताते हैं कि इसी स्थान पर कृष्ण जी को जरा का बाण लगा था । उन्होंने पद्मकुण्ड के जल में अपने रूधिर को धोया था और इसी स्थान से वे परमधाम को गए । क्योंकि इस स्थान पर कृष्ण भगवान को भाल अर्थात बाण का अग्रभाग लगा था इससे यह स्थान भाल तीर्थ कहलाया ।

१७ वीं सदी के अन्त तक सोमनाथ के मन्दिर में पूजा होती थी परन्तु पीछे औरंगजेब ने मन्दिर को बिल्कुल बर्बाद कर दिया । जब मुगलों का राज्य निर्बल हुआ, तब पोर बन्दर के राणा ने इस मन्दिर पर अपना अधिकार कर लिया परन्तु बाद को जूनागढ़ के नवाब ने उसको जीत लिया और तब से यह उनके राज्य में रहा । अब यह राज्य स्वतन्त्र भारत में सम्मिलित हो गया है और श्री सोमनाथ का मन्दिर फिर से बनने जा रहा है ।

७०३ सोरव्या—(देखिए शादखेरी)

७०४ सोगाव—(मैसूर राज्य में एक स्थान)

*इस स्थान का प्राचीन नाम सुरभि या सुरभिपट्टन था ।*

सोरान मे यमदग्नि ऋषि ने निवास किया था ।

७५ सोरों—( सयुक्त प्रान्त के एटा जिले में एक स्थान)

सोरों का प्राचीन नाम ऊखल क्षेत्र है । यह नो ऊखलों मे से एक है जहाँ से प्रलय मे जल निकलकर कुल पृथिवी को डुबा देगा ।

सोरो मे गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म हुआ था और बाल्यकाल व युवावस्था बीती थी । यहीं उनकी धर्मपत्नी रत्नावली ने शरीर छोडा था ।

प्रा० क०—सोरों एक प्राचीन और पवित्र क्षेत्र है, कुछ लोगों का विचार है कि यहाँ वराह अवतार हुआ था, पर यह बात पुराणों से प्रमाणित नहीं होती । (देखिए वाराह क्षेत्र )

[ गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म सम्वत् १५८३ वि० अथवा सम्वत् १५८९ वि० में सोरों के 'योग मार्ग' मुहल्ले में हुआ था । 'शिवसिंह सरोज' मे सम्वत् १५८३ मानी गई है और रानी कवल कुवर देव जी ने भी यही सम्वत् लिखी है । किन्तु ग्रियर्सन साहब आदि तुलसी चरितान्वेषी विद्वान सम्वत् १५८९ मानते हैं । ठीक पता नहीं चलता । गोस्वमी जी के पूर्वज सोरों से डेढ दो मील पूर्व रामपुर के निवासी सनाढ्य ब्राह्मण थे, पर इनके पिता *आत्माराम शुक्ल व माता हुलसी रामपुर छोडकर सोरों में आवसे थे* और वहीं गोस्वामी जी का जन्म हुआ था । जब ये बहुत छोटे थे उसी समय माता और पिता दोनों ही इन्हें छोड़कर स्वर्ग सिधारे, और बडे कष्ट झेल कर किसी प्रकार दादी ने इनका पालन पोषण किया था ।

बचपन में तुलसीदास का नाम 'राम बोला' था और वे लिखते हैं :—

राम को गुलाम, नाम रामबोला राख्यो राम ।
राम बोला नाम, हों गुलाम राम साहि को ॥

आचार्य नृसिंह जी से सोरों में इन्होंने विद्या प्राप्त की और गुरू जी से राम की कथा बड़ी लग्न से सुना करते थे ।

सोरों से पश्चिम, गगा जी के तट पर उस पार बदरिया ग्राम के दीनबन्धु पाठक व दयावती की पुत्री रत्नावली से इनका विवाह हुआ । चार साल पश्चात् द्विरागमन और कुछ समय के अनन्तर एक पुत्र रत्न प्रसव हुआ जिसका नाम तारापति रक्खा गया किन्तु थोड़े ही समय में उसका देहान्त हो गया ।

सम्वत् १६२४ वि० के श्रावण मास में रत्नावली पति की आज्ञा से अपने पिता के घर भाई के रक्षा बाँधने गई थीं। तुलसीदास जी पौराणिक वृत्ति में निपुण हो चुके थे और किसी गाँव में कथा सुनाने चले गए। ग्यारह दिन पश्चात् लौटने पर सुनसान घर का उचाटपन वे न देख सके और रात्रि में चढ़ी गंगा को पार करके बदरिया पहुँच गए।

अवसर पाकर रत्नावली ने पति की सेवा करते हुए उनके प्रेम को सराहा और कहा कि जगदीश्वर के प्रेम में मनुष्य संसार सागर को भी पार कर लेता है। यह बात तुलसीदास जी के जी पर ऐसी लगी कि बुद्धि का विकास हो गया। नारी प्रेम भगवत प्रेम में बदल गया। रत्नावली उन्हें निद्रित जान अपने शयनागार को चली गई पर उसी रात तुलसीदास जी किसी समय वैरागी होकर चल दिए। प्रातःकाल सर्वत्र खोज की गई पर कहीं पता न चला। उस दिन से फिर वे सोरों कभी लौट कर नहीं आए। रत्नावली कवियित्री थीं उन्होंने लिखा है :—

> बरस बारहीं कर गह्यो, सोलह गवन कराय।
> सत्ताइस लागत करी, नाथ 'रतन' असहाय॥
> 'दीनबन्धु' कर घर पली, दीनबन्धु की छांह।
> तौउ भई हौं दीन अति, पति त्यागी मो बांह॥

तुलसीदास जी राजापुर, हाजीपुर आदि स्थानों में निवास करते हुए काशी पहुँचे और वहाँ विशेष कर रहे। जिस घाट पर वे काशी में रहते थे, वह उनके नाम से 'तुलसी घाट' कहलाता है। यहीं सम्वत् १६८० वि० की श्रावण शुक्ला सप्तमी को ६१ या ६७ साल की अवस्था में गोस्वामी जी का स्वर्गवास हुआ।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने सोरों से बाहर रहते हुए ख्याति कमानी आरम्भ की थी इससे जहाँ जहाँ वे रहे थे—जैसे राजापुर, हाजीपुर, हस्तिनापुर, काशी—लोग वहाँ वहाँ का ही उन्हें निवासी समझते हैं। किसी ने कान्यकुब्ज और किसी ने सरयूपारी उन्हें बना दिया है। किसी-किसी ने रत्नावली के आचरण पर भी दोषारोपण किया है। इन सारे अनिष्ट का कारण उनकी पूर्व जीवनी से लोगों का अपरिचित होना है।

गोस्वामी जी के समकालीन गोकुलनाथ जी रचित प्रसिद्ध पुस्तक 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता' बताती है कि तुलसीदास जी नन्ददास जी के

बड़े भाई थे। नन्ददास जी गोकुलनाथ जी के शिष्य थे। इस वार्त्ता में यह भी लिखा है कि तुलसीदास जी नन्ददास जी से मिलने मथुरा आए थे। उस समय कहा जाता है कि गोवर्धननाथ की शोभा देखकर तुलसीदास ने कहा था :—

> कहा कहौं छवि आजु की भले बने हो नाथ।
> तुलसी मस्तक जब नवै, धनुष बाण लो हाथ॥

इस पर गोवर्धननाथ जी ने राम बन कर उन्हें दर्शन दिया था।

नन्ददास जी के पुत्र कृष्णदास जी थे। उन्होंने अपनी जीवनी में पद्य में लिखा है कि 'सोरों' के निकट रामपुर ग्राम में सुकुल उपाधिधारी सनाढ्य वंश में प० सनातनदेव जी के पुत्र पं० परमानन्द जी हुए और उनके पुत्र सच्चिदानन्द हुए, एवं सच्चिदानन्द जी के पण्डित आत्माराम जी और पण्डित जीवाराम जी हुए। पण्डित आत्माराम जी के पुत्र गोस्वामी तुलसीदास जी हुए जिन्होंने रामचरित मानस रचा। पण्डित जीवाराम जी के प्रथम पुत्र महाकवि नन्ददास जी हुए जिन्होंने वल्लभ सम्प्रदाय ग्रहण करके 'रास पञ्चाध्यायी' की रचना की। कृष्ण भक्त महाकवि नन्ददास जी ने अपने ग्राम रामपुर का नाम श्याम पुर कर दिया।

एक साधारण बात कहने पर पति को खोदेने वाली रत्नावली को बड़ा दुःख था। उन्होंने प्रेम बढ़ाने को जो बात कही थी उसने उनके लिए सारा प्रेम ही नष्ट कर दिया इस पर उन्होंने कहा है :—

> हाय सहज ही हौं कही, लह्यो बोध हृदयेस।
> हौं रत्नावलि, जँचि गई पिय हिय काँच बिसेस॥
> भल चाहति रत्नावली, विधिवस अनभल होय।
> हौं पिय प्रेम बढ़यो चह्यो, दियो मूल तें खोय॥

नन्ददास जी से मिलने पर जब गोस्वामी तुलसीदासजी ने रत्नावली के विरह का हाल सुना तब उन्होंने रत्नावली को उनके द्वारा सदेश भेजा कि यदि *तुम रघुनाथ का स्मरण करती हो तो मैं तुम्हारे निकट ही हूँ।* रत्नावली ने इस घटना को इस प्रकार कहा है:—

> मोद दीनों संदेश पिय, अनुज 'नन्द' के हाथ।
> 'रतन' समुझ जनि प्रथक मोद,जो सुमिरत रघुनाथ॥

चैत कृष्ण अमावस्या सम्वत् १६५१ वि० को देवी रत्नावली ने सोरों में नश्वर देह का त्याग किया।

व० द०—सोरों गंगा जी के तट पर बसा है और तीर्थ धाम होने के कारण यात्रियों की भीड़ रहती है। यहाँ अनेकों उत्तम घाट और विशाल मन्दिर हैं और वराह भगवान का मन्दिर प्रसिद्ध है।

जिस मकान में गोस्वामी तुलसीदास जी का जन्म हुआ था वह मकान मुहल्ला 'योग मार्ग' में है। गदर सन् १८५७ ई० के पहले यह स्थान नन्ददास जी के वंशधरों के पास था पर अब मुसल्मानों के पास है। पूर्व काल में नाज की मण्डी और अन्य आबादी इसी ओर थी, पर अब यह जगह वीरान सी हो रही है।

देवी रत्नावली परम पतिव्रता थीं और इस प्रताप से जिस रोगी को वे धूल दे देती थीं वह उसी से अच्छा हो जाता था। उनके स्वर्गवास हो जाने पर भी विश्वास रखने वाले रोगी इस घर की धूलि को शरीर में लगाते थे। अब भी लोग इस मकान की धूलि को कर्णमूल आदि रोगों में लेप करते हैं और प्रायः आरोग भी हो जाते हैं। गोस्वामी जी के सगे चचेरे भाई नन्ददास जी के पुत्र कृष्णदास जी के वंशधरों के दो घर अब भी इस मकान के पास हैं। भगीरथ जी के मन्दिर के चढ़ावे से इनकी जीविका चलती है और यह लोग गोस्वामी जी के वंशज कहलाते हैं।

सोरों में तुलसीदास जी के गुरू नृसिंह जी का मन्दिर और कूप आज भी प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि इन्हीं के समीप गुरू नृसिंह की पाठशाला थी जहाँ गोस्वामी जी ने विद्या पढ़ी थी। गुरू नृसिंह जी की वन्दना में तुलसीदास जी ने कहा है:—

वन्दौं गुरु पद कंज, कृपासिंधु 'नर रूप हरि'।
महा मोह तम पुंज, जासु वचन रवि कर निकर॥

नन्ददास जी ने अपने व अपने पूर्वजों के निवास स्थान रामपुर का नाम ही श्यामपुर नहीं किया वरन वहाँ तालाब बनवाया था जिसका नाम भी उन्होंने 'कृष्णसर रक्खा था। यह अब भी हीन दशा में विद्यमान है। उसके किनारे नन्ददास जी, बलदेव जी का मेला छठ को कराया करते थे, और यह अब भी भाद्रपद में बलदेव छठ को लगता है। यह ग्राम सोरों से डेढ़ मील पूर्व में है। बदरिया गाँव गंगा जी के दूसरे तट पर सोरों से पश्चिम में मौजूद है। पिछली कितनी ही शताब्दी में भारतवर्ष में गोस्वामी तुलसीदास जी के समान महा पुरुष नहीं पैदा हुआ है। जितनी प्रतियाँ 'राम चरित मानस' की बिकी हैं उतनी संसार में किसी भी पुस्तक, बाइबिल

तक की नहीं मिली है। इसी से इस ग्रंथ के महत्त्व का पता चलता है।

७०६ स्वम्भूकूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

७०७ स्यालकोट—( पाकिस्तानी पंजाब में एक ज़िले का सदर स्थान )

स्यालकोट का प्राचीन नाम शाकल था जिसका महाभारत में वर्णन है। यह मद्रदेश की राजधानी थी।

मद्रदेश व्यास नदी से लेकर झेलम नदी तक फैला हुआ था। पाण्डु की द्वितीय पत्नी माद्री जिनसे नकुल और सहदेव उत्पन्न हुए यहीं की थीं। प्रसिद्ध है कि माद्री के भ्राता शल्य ने स्यालकोट बसाया था। बौद्ध ग्रन्थों में इस स्थान का नाम शागल है।

सम्राट मिलिन्द ( १४० ११० बी० सी० ) की यह राजधानी थी। उन दिनों इस देश का नाम यवन था। बौद्ध महात्मा नागसेन और सम्राट मिलिन्द से यहीं वह प्रसिद्ध वार्त्तालाप हुआ था जिसका बौद्ध ग्रन्थों में उल्लेख्य है।

प्रसिद्ध देवी सावित्री की, जिन्होंने सत्यवान से विवाह किया था, यही जन्मभूमि है।

गुरु नानक का यहाँ निवास स्थान था।

प्रा० क०—ह्वाँनचाँग ने यहाँ की यात्रा ६३३ ई० में की थी। उन दिनों यह स्थान उजाड़ हो चुका था पर उसका घेरा ३½ मील का था और उस समय भी एक मील के घेरे में इसकी आबादी थी।

जब सिकन्दर अपनी सेना गंगा जी की ओर ला रहा था उसको सूचना मिली कि साँगलवासी उससे युद्ध करेंगे। सिकन्दर पीछे लौट पड़ा और इस स्थान को जीत कर तब आगे बढ़ा।

सन् ६५ या ७० ई० में रसालू ने स्यालकोट को सुधारा। रसालू की राजधानी इसी स्थान पर थी। उनको शालिवाहन भी कहते थे। उनकी वीरता की सैकड़ों कहानियाँ पंजाब के हर विभाग में लोग कहते हैं। कहा जाता है कि स्यालकोट को शालिवाहन पुर कहते थे। यहाँ का कोट राजा शालिवाहन ने ही बनवाया था।

५१० ई० में मिहिरकुल ने इस स्थान को अपनी राजधानी बनाया था।

[ सती सावित्री, प्रसिद्ध तत्वज्ञानी राजर्षि अश्वपति की एकमात्र कन्या थीं। अपने वर के खोज में जाते समय उन्होंने निर्वासित और वनवासी राजा द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान को पति रूप से स्वीकार कर लिया और दोनों का ब्याह हो गया।

सत्यवान अग्निहोत्र के लिये जंगल में लकड़ियाँ काटने जाया करते थे। एक दिन वहाँ उन्हें यमराज ने दबा लिया। अपने पतिव्रत धर्म के प्रताप से सावित्री भी यम के साथ हो ली और न केवल सत्यवान को मृत्यु के फन्दे से छुड़ा लाईं वरन अपने अन्धे सास ससुर की आँखें, खोया हुआ राज पाट और अपने लिए सौ पुत्रों का वरदान भी ले आईं। यह था भारतीय सतीत्व शक्ति का अमोघ सामर्थ्य। ]

व० द०—गुरु नानक के निवास स्थान पर यहाँ प्रतिवर्ष एक प्रसिद्ध मेला होता है। 'दरबार बावली साहब' नामक एक ढका हुआ कूप यहाँ है जिसको गुरु नानक ने अपने एक क्षत्रिय शिष्य द्वारा बनवाया था।

७०८ स्वर्गारोहिणी—( देखिये गंगोत्री )

७०९ स्वर्ण भद्रकूट—( देखिये सम्मेद शिखर )

## ह

७१० हत्या हरण—( देखिये नीमसार )

७११ हरद्वार—( संयुक्त प्रान्त के सहारनपुर जिले में प्रसिद्ध तीर्थ स्थान ) हरद्वार के प्राचीन नाम गंगाद्वार, मायापुरी, मयूर और हरिद्वार हैं। यहाँ श्री गंगाजी पहाड़ से बाहर निकली हैं।

इस स्थान पर महर्षि भरद्वाज पधारे थे।

यहाँ घृताची अप्सरा को देखकर महर्षि भरद्वाज का वीर्यपात हुआ था जिससे द्रोण का जन्म हुआ।

अर्जुन ने उलूपी ( नाग राजकन्या ) के साथ यहाँ विहार किया था।

हरद्वार से एक मील दक्षिण-पश्चिम गंगाजी के दाहिने किनारे पर हरद्वार की पुरानी बस्ती मायापुरी है। मायापुरी, प्रसिद्ध सात पुरियों में से एक है।

हरद्वार से ३ मील दक्षिण गंगाजी के दाहिने किनारे पर कनखल कस्बा है। कनखल भगवान सनत्कुमार का स्थान था।

दक्ष प्रजापति ने कनखल में यज्ञ किया था। उनके मुख से अपने पति महादेव की निन्दा सुन कर योगाग्नि से सती यहीं भस्म होगई थीं।

ऋषि दधीचि इस यज्ञ में यहाँ पधारे थे और शिव निन्दा सुनकर रुष्ट हो चले गए थे।

भगवान रुद्र ने यहाँ आकर इस यज्ञ को विध्वंस किया था। दक्ष का सिर काट कर अग्नि में डाल दिया गया था।

देवताओं को वीरभद्र से यहाँ पराजय हुई थी।

प्रह्लाद ने कनखल में भद्रकाली और वीर भद्र का पूजन किया था।

हरद्वार से ४ मील पर राहुग्राह ( रैला ) में अष्टावक्र जी का आश्रम था।

प्रा० क०—( व्यास स्मृति, चौथा अध्याय ) गङ्गाद्वार तीर्थ करने से सब पाप छूट जाते हैं।

( महा भारत, आदि पर्व, १३१ वा अध्याय ) गङ्गाद्वार में गङ्गा किनारे घृताची अप्सरा को देखने पर महर्षि भरद्वाज का वीर्य गिर पडा, जिस से द्रोण का जन्म हुआ।

( २१५ वा अध्याय ) अर्जुन एक दिन गङ्गाद्वार में स्नान कर रहे थे, उस समय पाताल की रहने वाली नाग राज पुत्री उलूपी उनको जल में खींच ले गई। अर्जुन ने नागपुत्री के घर मे एक रात्रि रह कर उससे विहार किया जिससे पीछे एक पुत्र जन्मा।

( वन पर्व, ८४ वा अध्याय ) गङ्गा द्वार के कोटि तीर्थ में स्नान करने से पुण्डरीक यज्ञ का फल होता है। आगे सप्त गङ्गा, त्रिगङ्गा और शक्रावर्त तीर्थों में जाकर विधिवत पितर और देवताओं का पूजन करने से उत्तम लोक मिलते हैं। वहाँ से चलकर कनखल में स्नान करे जहाँ तीन दिन रहने से पुरुष को अश्वमेध यज्ञ का फल और स्वर्ग लोक मिलता है।

( ८५ वा अध्याय ) गङ्गा म जहाँ स्नान करे वहा ही कुरुक्षेत्र के समान फल मिलता है परन्तु कनखल में स्नान करने से विशेष फल होता है।

( ९० वां अध्याय ) उत्तर दिशा में वेग से पहाड को तोड कर गङ्गा निकली हैं। उस स्थान का नाम गगाद्वार है। उस देश में ब्रह्मर्षियों से सेवित सनत्कुमार का स्थान पवित्र कनखल तीर्थ है।

( १३५ वां अध्याय ) सब ऋषियों के प्यारे कनखल तीर्थ में महा नदी गङ्गा बह रही है। पूर्व समय में भगवान सनत्कुमार यहां सिद्ध हुए थे।

( शल्यपर्व, ३८ वां अध्याय ) दक्ष प्रजापति ने जब गगाद्वार में यज्ञ किया था तब सुरेणु नामक सरस्वती वहाँ आई थी जो शीघ्रता से बह रही है।

( लिङ्ग पुराण, ९९ वां १०० वा अध्याय ) दक्ष प्रजापति अपने यज्ञ में शिव की निन्दा करने लगे, सती ने अपने पिता के मुख से शिव जी की निन्दा सुन कर योग मार्ग से अपना शरीर दग्ध कर दिया। हिमालय पर्वत में हरद्वार के समीप कनखल तीर्थ में दक्ष का यज्ञ हो रहा था। वीर भद्र ने यहाँ जाकर समस्त देवताओं को परास्त कर दक्ष का शिर काट अग्नि में दग्ध कर दिया।

( यही कथा महा भारत शान्ति पर्व २८२-२८४ अध्याय और शिव पुराण दूसरा खण्ड २२-३६ अध्याय में बहुत विस्तार से दी गई है। )

( वामन पुराण, ८४ वां अध्याय ) प्रह्लाद ने कनखल में जाकर भद्र काली और वीरभद्र का पूजन किया।

( शिव पुराण, ८ वां खड १५ वां अध्याय ) कनखल क्षेत्र में जहाँ शिव जी ने दक्ष का यज्ञ विध्वंस कराया, वे लिङ्ग रूप से स्थित हुए और दक्षेश्वरनाम से प्रसिद्ध हैं। उनके निकट सती कुंड है।

( वामन पुराण के चौथे अध्याय में, वाराह पुराण के २१ वें अध्याय में और पद्म पुराण के ५ वें अध्याय मे सती के शरीर त्यागने की कथा भिन्न भिन्न कल्प की अनेक प्रकार से है। )

( महा भारत, अनुशासन पर्व, २५ वा अध्याय ) गगाद्वार, कुशावर्त, विल्वक, नील पर्वत और कनखल इन पाँच तीर्थों में स्नान करने से मनुष्य पाप रहित होकर सुरलोक मे गमन करता है।

( शिव पुराण, ८ वा खड, १५वां अध्याय ) विल्वेश्वर लिङ्ग की पूजा से धर्म की वृद्धि होती है। विल्व पर्वत के ऊपर भी बेल का वृक्ष है, उसके नीचे विल्वेश्वर शिव लिङ्ग स्थापित है जिनके दर्शन से मनुष्य शिव समान हो जाता है।

दक्षेश्वर के निकट नील शैल के ऊपर नीलेश्वर शिव लिङ्ग है जिसके देखने से पाप दूर हो जाता है। उसी के निकट भीम चंडिका का स्थान है। उसके समीप उत्तम कुड है जिस में स्नान करने से बड़ा आनन्द होता है।

( पद्म पुराण, सृष्टि खड, ११ वां अध्याय ) मायापुरी के निकट हरद्वार है।

( पद्म पुराण स्वर्ग खण्ड २३ वां अध्याय, व मत्स्य पुराण १७५ वां अध्याय, व गरुड़ पुराण पूर्वार्द्ध २१ वां अध्याय ) गङ्गा सब जगह तो सुलभ हैं परन्तु गगाद्वार, प्रयाग और गगा सागर इन तीन जगहों में दुर्लभ हैं।

पद्म पुराण, गरुड़ पुराण, मत्स्य पुराण, अग्नि पुराण, स्कन्द पुराण तथा कूर्म पुराण में हरद्वार, गगाजी, माया पुरी व कनखल की महिमा का वर्णन है।

व० द०—हरद्वार में इस समय पाँच मुख्य तीर्थ हैं—
हरि की पैड़ी, कुशावर्त, विल्वक, नील पर्वत और कनखल।

हरि की पैड़ी यहाँ का मुख्य स्नान घाट है और उत्तम पक्की सीढ़ियों का बना है। जूता पहिन कर घाट पर जाने की आज्ञा नहीं है और प्रति दिन घाट के धोए जाने का प्रबंध है।

हरि की पैड़ी से दक्षिण, गङ्गा का घाट पत्थर से बँधा हुआ है। इस स्थान को कुशावर्त कहते हैं। मेष की संक्रान्ती के दिन यहाँ पिण्ड दान के लिए बड़ी भीड़ रहती है।

हरि की पैड़ी से एक मील पश्चिमोत्तर पहाड़ी के नीचे बिल्वक तीर्थ है। यहाँ एक चबूतरे पर नीम के वृक्ष के नीचे ( जहा पहिले बेल का वृक्ष था ) बिल्वेश्वर शिव लिङ्ग है। दूसरी ओर पहाडी के नीचे गौरी कुण्ड नामक कूप है जिसका जल आचमन किया जाता है।

हरद्वार की हरि की पैडी से तीन मील दक्षिण गंगा जी के दाहिने अर्थात् पश्चिमी किनारे पर कनखल है। कनखल में बहुत से मन्दिर हैं जिन मे दक्षेश्वर शिव का मन्दिर सब म प्रधान है। यह मन्दिर कस्बे के दक्षिण में है। यहाँ सती ने अपने शरीर का दाह दिया था और महादेव जी ने दक्ष के यज्ञ का नाश किया था। मन्दिर के पीछे सती कुण्ड है जहाँ सती का दाह होना बतलाया जाता है। कनखल में गंगा जी के तीर सती घाट के निकट, पूर्व समय की सतियों के अनेक स्थान हैं।

कनखल के सामने दक्षिण गंगा के बाँए किनारे नील पर्वत नामी एक पहाड़ा है जिसके नीचे गंगा जी की एक धारा को नील धारा कहते हैं। पहाडी के नीचे गौरी कुण्ड के पास एक छोटे मन्दिर म नीलेश्वर शिव लिङ्ग है।

नीलेश्वर से दो मील दूर चडी पहाडी पर चडी देवी का मन्दिर है।

हरद्वार से एक मील दक्षिण-पश्चिम गंगा के दाहिने, पवित्र सप्त पुरियों मे से एक, और हरद्वार की पुरानी बस्ती, माया पुर है। अब यह बस्ती हीन दशा म है। यहाँ समय समय पर पुराने सिक्के अब तक मिला करते हैं।

हरद्वार में अनेकानेक उत्तम धर्म्म शालाएँ होने के कारण यात्रियों को ठहरने का कष्ट नहीं होता। पंजाब के यात्री जितने इस तीर्थ को आते हैं उतने और किसी तीर्थ को नहीं आते। प्रति दिन हरद्वार में मेला ही सा लगा रहता है और नगर उन्नति कर रहा है।

मेष की संक्रान्ती को प्रथम गंगा जी प्रकट हुई थीं इसलिए उस तिथि में प्रति वर्ष गंगा स्नान का बड़ा मेला होता है। प्रति अमावस्या का, विशेष

करके सोमवती अमावस्या और महा वारुणी आदि पर्वों मे हरद्वार में गगा स्नान की बडी भीड होती है। १२ वर्ष पर जब कुम्भ राशि के बृहस्पति होते है, तब हरद्वार में कुम्भयोग का बडा मेला होता है। यहाँ के मेले में लाखो आदमी सारे देश से आते हैं। ठीक समय पर स्नान करने के लिए बडे बडे झगडे और लडाइयाँ होती हैं, और युद्ध हुए हैं। सन् १७६० ई० के स्नान के अन्तिम दिन सन्यासियों और वैरागियों मे लडाई हुई थी जिसमें लगभग १८०० आदमी मारे गए थे। सन् १७६५ में सिक्ख यात्रियों ने ५०० सन्यासियों को मार डाला था। अब ऐसे अवसरों पर स्नान करने के लिए पृथक्-पृथक् समाजो के लिए पृथक् पृथक् समय नियत कर दिया जाता है और सुप्रबन्ध हो जाने के कारण विकट समस्या उपस्थित नहीं होने पाती।

७१२ हरिपर्वत—( देखिए कश्मीर )

७१३ हरिहरक्षेत्र—( देखिए सोनपुर )

७१४ हस्तिना पुर—सयुक्त प्रान्त के मेरठ जिले मे एक स्थान )

दुष्यन्त के पुत्र भरत ( जिनके नाम से भारतवर्ष है ) के प्रपौत्र महाराज हस्ती ने हस्तिना पुर बसाया था।

यहाँ श्री शान्तिनाथ (१६ वें तीर्थङ्कर) श्री कुंथनाथ ( १७ वें तीर्थङ्कर ) और श्री अरहनाथ ( १८ वें तीर्थङ्कर ) के गर्भ, जन्म, दीक्षा और कैवल्य ज्ञान कल्याणक हुए थे। श्री मल्लिनाथ ( १६ वें तीर्थङ्कर ) का समोसरण यहाँ आया था।

इस नगर में श्री श्रेयांश राजा हुए थे जिन्होंने चतुर्थकाल में श्री ऋषभ देव आदि तीर्थङ्कर को आहार दान देकर सब से प्रथम आहार दान देने की प्रवृत्ति इसी नगर में चलाई।

हस्तिनापुर कौरवों और फिर पाण्डवों की सुविख्यात राजधानी थी।

श्रीकृष्ण आदि के कार्यक्षेत्र और महाभारत की बहुत सी कथाओं का विशेष स्थान यही है।

यहीं श्रीकृष्ण दूत बनकर दुर्योधन के पिता, धृतराष्ट्र, की सभा में आये थे, और यही पाण्डवों ने जुए में अपना सारा राजपाट [illegible] था, और द्रौपदी की बाज़ी लगा कर उन्हें भी हार गये थे।

श्री भीष्म पितामह का निवास स्थान यहीं था और अपने पिता शान्तनु की सत्यवती से विवाह करने की इच्छा पूरी कराने को, आजन्म स्वयम् विवाह न करने की और राज पाट न लेने की उन्होंने प्रतिज्ञा की थी।

द्रोणाचार्य, विदुर, आदि धृतराष्ट्र की सभा मे यहाँ रहा करते थे।

प्रा० क०—( महाभारत, आदिपर्व, ९५ वाँ अध्याय ) पुरुवश– पुरु से १८ वीं पीढ़ी में दुष्यन्त हुए।

भरत
|
भुमन्यु
|
सुहोत्र
|
हस्ती
|
विकुठन
|
अजमीढ
|
संवरण
|
कुरु

शान्तनु ( कुरु से ७ वीं पीढ़ी म हुए )

- भीष्म
- विचित्रवीर्य
- चित्राङ्गद

( व्यास से विचित्रवीर्य व चित्रांगद की विधवाओं तथा एक दासी से उत्पन्न हुए )

- धृतराष्ट्र
  - दुर्योधन आदि १०१ पुत्र
- पाण्डु
  - युधिष्ठिर
  - भीम
  - अर्जुन
    - अभिमन्यु
      - परीक्षित
        - जनमेजय
  - नकुल
  - सहदेव
- विदुर

महाभारत और पुराणों में हस्तिनापुर का बहुत वर्णन आता है और सारा महाभारत का आधार यहीं से है। उस सारी कथा का यहाँ दुहराना निरर्थक है, सभी उससे परिचित हैं।

द्रौपदी ब्याह लाने पर धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को हस्तिनापुर का आधा राज्य देकर उनसे दूसरे स्थान पर राजधानी बना कर रहने को कहा था, और युधिष्ठिर ने इन्द्रप्रस्थ ( दिल्ली ) बसा कर वहाँ राज्य करना आरम्भ किया पर कुरुक्षेत्र के महाभारत युद्ध में कौरवों को मारकर पाण्डवों ने इन्द्रप्रस्थ छोड़ प्राचीन हस्तिनापुर को ही राजधानी कायम रक्खा। और श्रीकृष्ण के प्रपौत्र वज्र को इन्द्रप्रस्थ प्रदान कर दिया।

जन्मेजय के पोते निचक्षु ने जलमग्न होने पर राजधानी को हस्तिनापुर से हटाकर कौशाम्बी में स्थापित किया था।

[ श्री शान्तिनाथ ( सोलहवें तीर्थङ्कर ) की माता ऐरा और पिता विश्वसेन थे। इनका चिन्ह हिरण है।

श्रीकुंथनाथ ( सत्रहवें तीर्थङ्कर ) की माता श्रीमती और पिता सूरसेन थे इनका चिन्ह बकरा है।

श्री अरहनाथ ( अठारहवें तीर्थङ्कर ) की माता मित्रा और पिता सुदर्शन थे। इनका चिन्ह मच्छ है। इन तीनों तीर्थङ्करों के गर्भ, जन्म, दीक्षा कैवल्यज्ञान का स्थान हस्तिनापुर, और निर्वाण का स्थान पार्श्वनाथ है। ]

व० द०—हस्तिनापुर मेरठ से २२ मील पूर्वोत्तर बूढ़ी गङ्गा के किनारे पर है। यहाँ जैनियों की दो विशाल धर्मशालाएँ हैं और श्री शान्तिनाथ, श्री कुंथनाथ, श्री अरहनाथ व श्री मल्लिनाथ तीर्थङ्करों के चार मन्दिर १, २ और ३ कोस की दूरी पर बने हैं। कार्त्तिक सुदी ८ से १५ तक दिगम्बर जैनियों का यहाँ बहुत बड़ा मेला और १५ को रथोत्सव होता है।

बाकी सब प्रकार से यह स्थान उजाड़ पड़ा है। बूढ़ी गंगा पर एक स्थान द्रौपदीघाट कहलाता है। कहा जाता है कि गढ़मुक्तेश्वर, जो मेरठ से २१ मील दक्षिण पूर्व में है, एक समय हस्तिनापुर का एक मुहल्ला था। हस्तिनापुर से गढ़मुक्तेश्वर तक दोनों के निशान चले गए हैं।

अब हस्तिनापुर के भले दिन आ रहे हैं। स्कूल, अस्पताल और अन्य इमारतें बन रही हैं। नगर बसाया जा रहा है क्योंकि गंगा नहर आ रही है।

७६५ हाजीपुर— (बिहारप्रान्त के मुजफ्फरपुर जिले में एक बड़ा कस्बा) इस स्थान के पुराने नाम विशाला या विशालाक्षेत्र थे।

श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण, सीता स्वयम्वर में मिथिला जाते समय यहाँ ठहरे थे।

हाजीपुर नगर के पश्चिम भाग मे श्रीरामचन्द्र जी का सुन्दर मन्दिर है। कहा जाता है कि इसी स्थान पर वे और लक्ष्मण जी ठहरे थे।

**७१६ हारितआश्रम**—( देखिए यमलिङ्ग )

**७१७ हिंडौन**—( देखिए मुल्तान )

**७१८ हिङ्गलाज**—( बिलोचिस्तान के दक्षिण, कराँची से पारस की खाडी तक जाते हुए मेकरान तट में एक स्थान )

यहाँ पुराण वर्णित दुर्गादेवी का एक महास्थान है।

( देवी भागवत, ७ वाँ स्कन्ध, ३८ वा अध्याय ) हिंगुलाज म महा स्थान है।

( ब्रह्मवैवर्तपुराण, कृष्ण जन्म खण्ड, ७६ वां अध्याय ) आश्विन शुक्ल पक्ष - को हिंगुलाज तीर्थ में श्री दुर्गाजी का दर्शन करने से फिर जन्म नहीं होता अर्थात् मोक्ष हो जाता है।

यात्रीगण कराँची से १३ मकाम में हिंगुलाज पहुँचते हैं। भोजन का सामान कराची से ऊँटों पर ले जाना होता है। हिंगुलाज गुफा म देवी का स्थान है जहाँ दिन में भी दीप जलाया जाता है और एक या दो पुजारी रहते हैं।

**७१९ हुगलापीक**—( देखिए लङ्का )

**७२० हुसेन जोत**—( देखिए सहेट महेट )

**७२१ हृषीकेश**—( सयुक्तप्रान्त के देहरादून ज़िले मे एक स्थान )

यहाँ रैभ्यमुनि ने तपस्या की थी।

इसके प्राचीन नाम कुब्जाम्रक और कुब्जागार भी हैं।

यहाँ भक्त प्रह्लाद पधारे थे।

भरत जी ने यहाँ तप किया था।

यहाँ से २ मील दूरी पर लक्ष्मण जी ने तपस्या की थी।

वराह पुराण वर्णित देवदत्त का यह आश्रम था।

प्रा० क०—( स्कन्द पुराण, केदार खण्ड दूसरा भाग, १६ वां अध्याय) विष्णु भगवान् ने १७ वें मन्वन्तर में मधु और कैटभ दोनों दानवों को मार कर उनके मद से पृथिवी को बनाया। उसके उपरान्त वे पृथिवीतल के मैकुन्त

क्षेत्रों में भ्रमण करते हुए गङ्गा द्वार में गए। यहाँ बड़े तेजस्वी रैभ्यमुनि बहुत काल से तप कर रहे थे। विष्णु भगवान् ने आम्र वृक्षों में प्राप्त होकर रैभ्य मुनि को दर्शन दिया। मुनि बोले कि हे भगवान्! यदि आप प्रसन्न हैं तो इस स्थल पर आप नित्य निवास करें। भगवान् ने कहा कि ऐसा ही होगा। कुब्ज रूप तुम ने आम्र वृक्ष में प्राप्त मुझको देखा, इस कारण से इस स्थान का कुब्जाम्रक नाम होगा। हृषीक अर्थात् इन्द्रियों को जीत कर तुमने मेरे दर्शन के लिए तप किया अथवा मैं जो हृषीकेश हूँ यहाँ प्राप्त हुआ इस कारण से इस तीर्थ का नाम हृषीकेश भी होगा। त्रेता में राजा दशरथ के पुत्र भरत, जो हमारे चतुर्थांश हैं हमको यहाँ स्थापित करेंगे। वही मूर्ति कलियुग में भरत के नाम से प्रसिद्ध होगी। जो प्राणी सतयुग में वराह रूप से, त्रेता में कार्तिक रूप से, द्वापर में वामन रूप से और कलयुग में भरत रूप से स्थित मुझको यहाँ नमस्कार करेगा उसको निसन्देह मुक्ति मिलेगी।

(१७ वा अध्याय) सुन्दरी से लेकर हेमावती नदी तक कुब्जाम्रक क्षेत्र है।

(वराह पुराण, १२२ वाँ अध्याय) विष्णु भगवान् ने रैभ्यमुनि के निकट के आम्र वृक्ष पर बैठ कर उनको दर्शन दिया। भगवान् के भार से वह वृक्ष नम्र होकर कुबड़ा हो गया इस कारण उस तीर्थ का नाम कुब्जाम्रक करके प्रसिद्ध हो गया।

(वामन पुराण, ७६ वा अध्याय) प्रह्लादजी कुब्जाम्रक तीर्थ में गए। वह उस पवित्र तीर्थ में स्नान और हृषीकेश भगवान् का पूजन करके वहाँ से बद्रिकाश्रम चले गए।

(कूर्म पुराण, उपरिभाग, ३४ वा अध्याय) जिस समय भगवान् शङ्कर ने दक्ष प्रजापति का यज्ञ विध्वंश किया उसी समय चारों ओर से एक योजन विस्तार का वह क्षेत्र होगया और उसी समय से पुरुषोत्तम भगवान यहाँ निवास करते हैं।

(नरसिंह पुराण, ६५ वा अध्याय) कुब्जागार में ही भगवान् का नाम हृषीकेश है।)

(स्कन्द पुराण, केदार खण्ड दूसरा भाग, ३१ वा अध्याय) कुब्जाम्रक तीर्थ के उत्तर ऋषि पर्वत के निकट गंगा के पश्चिम तट पर मुनियों का तपोवन है। उस स्थान के नीचे के भाग की एक गुफा में शेष जी स्वयम् निवास करते हैं।

( २३ वां अध्याय ) कुब्जाम्रक से डेढ़ कोस उत्तर गंगा के तट पर शेष जी विद्यमान हैं। श्री लक्ष्मण जी ने यहाँ जाकर १२ वर्ष निराहार शिव का तप किया और वे यहाँ अपने पूर्ण अंश से स्थित हो गए। उनके वाम भाग में लक्ष्मणेश्वर शिव ( प्रतिमा रूप ) विराजमान हैं।

(शिव पुराण, ८ वां खण्ड, १५ वां अध्याय ) कुब्जाम्रक तीर्थ और पूर्ण तीर्थ के पास गंगा के बीच सोमेश्वर महादेव हैं। गंगा के पश्चिमीय तट पर तपोवन है। यहाँ लक्ष्मण जी ने बड़ा तप किया था और शिवजी की कृपा से पवित्र हो गए।

व० द०—भरत जी का शिखरदार मन्दिर हृषीकेश के मन्दिरों में प्रधान है। मन्दिर प्राचीन है। लोग कहते हैं कि भरत जी की मूर्ति को ईसा की नवीं शताब्दी में श्री शङ्कराचार्य ने स्थापित किया था।

हृषीकेश से १ मील उत्तर शत्रुघ्न जी का एक छोटा मन्दिर है और यहां से १ मील पर शिखरदार मन्दिर में दो हाथ ऊँची गौराङ्ग लक्ष्मण जी की मूर्ति है। एक गुम्बज़दार मन्दिर में लक्ष्मणेश्वर महादेव और उनके चारों ओर दस दूसरे शिव लिङ्ग हैं।

हृषीकेश में कई धर्मशाले हैं। यह स्थान बड़ा रमणीय और शान्तिमय है। यहाँ से १२ मील पर हरद्वार है।

## त्र

७२२ त्रयम्बक—( बम्बई प्रान्त के नासिक ज़िले में एक क़स्बा )
महर्षि गौतम ने यहाँ बहुत काल तक तपस्या की थी।
इसका प्राचीन नाम गौतम क्षेत्र तथा ब्रह्मगिरि है।
चैतन्य महा प्रभु ने यहाँ की यात्रा की थी।

इस स्थान पर शिवजी के १२ ज्योतिर्लिङ्गों में से त्रयम्बकेश्वर शिव लिङ्ग है।

प्रा० क०—( पद्म पुराण, सृष्टि खण्ड, ११ वां अध्याय ) त्रयम्बक तीर्थ में त्रिलोचन महादेव सदा निवास करते हैं।

( कूर्म पुराण ब्राह्मी संहिता, उत्तरार्द्ध, ३४ वां अध्याय ) त्रयम्बक तीर्थ में रुद्र की पूजा करने से ज्योतिष्टोम यज्ञ का फल मिलता है।

( सौर पुराण, ६६ वां अध्याय ) गोदावरी नदी के निकास स्थान पर त्र्यम्बक नामक शिव लिंग है। उसके निकट ब्रह्मगिरि पर स्नान, जप, दान तथा श्राद्ध यज्ञ करने से सब का फल अक्षय होता है।

( वायु पुराण, १० वां अध्याय ) गौतम ऋषि ने दंडक वन में घोर तप करके ब्रह्मा जी से ऐसा वर मांग लिया कि हमारे यहाँ अन्न इत्यादि सब पदार्थ सर्वदा परिपूर्ण रहें।

( शिव पुराण, ५२ वां अध्याय ) पूर्वकाल में महर्षि गौतम ने अपनी पत्नी अहल्या के साथ दक्षिण दिशा में ब्रह्मगिरि के पास दश सहस्र वर्ष तक तप किया था। पृथिवी मंडल में गौतम का वन सब से श्रेष्ठ हुआ। बहुत से महर्षि अपने शिष्यों और स्त्री पुत्रों के सहित वहाँ आकर निवास करने लगे। उन्होंने वहाँ धान की खेती भी की।

व० द०—त्र्यम्बक कस्बे के आस पास द्वितीया के चन्द्रमा के आकार में १२०० फ़ीट से १५०० फ़ीट तक ऊँची पहाड़ियों की श्रेणियाँ हैं। त्र्यम्बक की पास की पहाड़ी से सुप्रसिद्ध गोदावरी नदी निकली है। यहाँ शिव के १२ ज्योतिर्लिङ्गों में से त्र्यम्बक शिव का सुन्दर मन्दिर बना हुआ है। त्र्यम्बक तथा नासिक में कुम्भ योग का बड़ा मेला होता है। इस मेले में समय भारतवर्ष के सब प्रान्तों से सब सम्प्रदाय वाले लाखों यात्री त्र्यम्बक में आकर स्नान करते हैं।

त्र्यम्बक बस्ती के पास कुशावर्त कुण्ड नामक एक चौकोना तालाब है। गोदावरी नदी का जल पर्वत के शिखर पर से उसके भीतर आता है और भूगर्भ में बहता हुआ उस स्थान से ६ मील दूर चक्रतीर्थ में जाकर प्रकट होता है। कुशावर्त से पूर्व २२५ फ़ीट लम्बे घेरे के भीतर लगभग ८० फ़ीट ऊँचा त्र्यम्बकेश्वर शिव का शिखरदार मन्दिर है।

गौतम आश्रम—न्याय दर्शन के निर्माता गौतम ऋषि का मुख्याश्रम अहल्या कुण्ड तीर्थ में बिहार में था, पर इनके आश्रम गोदना (ज़िला छपरा बिहार प्रान्त) में रेवलगंज के पास, अहरौला में ( बिहार प्रान्त ) बक्सर के पास, और त्र्यम्बक में भी थे।

५२३ त्रिचिनापल्ली - ( मद्रास प्रान्त में एक ज़िला का सदर स्थान ) रावण के सेनापति त्रिशिरा का यह निवास स्थान था। इसके प्राचीन नाम त्रिशिरापल्ली और तृणपल्ली है।

पाँड्य और चोला राज्यों की यह राजधानी थी। त्रिचिनापल्ली के मध्य में एक पहाड़ी है जिस पर मन्दिर बना है और चारों ओर-पहाड़ी के नगर बसा है। यह पहाड़ी का मन्दिर (rock temple) प्रसिद्ध है।

७२५ त्रियुगी नारायण—(संयुक्त प्रान्त में हिमालय पर्वत पर टेहरी राज्य में एक स्थान)

इस स्थान पर शिवजी का विवाह पार्वती से हुआ था।
यहाँ ब्रह्मादिक देवताओं ने हरि का यज्ञ किया था।
इस स्थान का प्राचीन नाम नारायण क्षेत्र है।

त्रियुगी नारायण से लगभग २ मील की दूरी पर शाकम्भरी दुर्गा का स्थान है जहाँ भगवती ने एक हजार वर्ष तक तप किया था।

त्रियुगी नारायण से थोड़ी दूरी पर गौरी कुण्ड है जहाँ श्री गौरी जी ने ऋतु स्नान किया था।

इसी स्थान पर उनसे स्कन्द का जन्म हुआ था।

गौरी कुण्ड से लगभग ३ मील पर मुण्डकटा गणेश है जहा श्री महादेव ने गणेश जी का सिर काटा था।

प्रा० क० (महाभारत, अनुशासन पर्व, ८४ वा अध्याय) हिमालय पर्वत पर भगवान रुद्र के साथ रुद्राणी देवी का विवाह हुआ था।

(स्कन्द पुराण, केदार खण्ड, प्रथम भाग, ८३ वा अध्याय) केदार मण्डल में त्रिविक्रमा नदी के तट के ऊपर डेढ़ कोस पर यज्ञ पर्वत पर नारायण क्षेत्र है। वहाँ ब्रह्मादिक देवताओं ने हरि का यज्ञ किया था। वहाँ सर्वदा अग्नि विद्यमान रहती है। उसी स्थान पर गौरी का महादेव से विवाह हुआ था। वहाँ पापी मनुष्य भी १० रात्रि उपवास करके प्राण त्यागने पर वैकुण्ठ पाता है।

(महाभारत वनपर्व, ८४ वॉ अध्याय) शाकम्भरी देवी का स्थान तीनों लोकों में विख्यात है। हजार वर्ष तक भगवती ने शाक खाकर तप किया था। देवी की भक्ति से पूर्ण मुनीश्वर वहाँ आए। भगवती ने उसी शाक से उनका भी सत्कार किया। उसी दिन से देवी का नाम शाकम्भरी हुआ। शाकम्भरी देवी के स्थान में जाकर पवित्र और ब्रह्मचारी रहकर तीन दिन तक शाक खाकर रहना चाहिए।

(स्कन्द पुराण-केदार खण्ड, प्रथम भाग, ४६ वां अध्याय) परम पीठ शाकम्भरी क्षेत्र सब पापों का नाश करने वाला है जहां मुनियों की रक्षा के लिए शाकम्भरी देवी प्रकट हुई।

(स्कन्द पुराण, केदार खण्ड, प्रथम भाग, ४२ वां अध्याय) केदार खण्ड से ६ कोस दक्षिण मन्दाकिनी नदी के तट पर सब सिद्धियों का देने वाला गौरी तीर्थ है। जिस स्थान पर पूर्व काल में श्री गौरी जी ने ऋतु स्नान किया था वह स्थान गौरी तीर्थ करके प्रसिद्ध होगया। स्कन्द की उत्पत्ति के स्थान पर थोड़ा सा गर्म जल है और सिन्दूर के समान मृतिका है। उसी स्थान पर गौरीश्वर महादेव विराजित हैं। जो मनुष्य वहाँ स्नान करके उस स्थान की मृतिका अपने शिर पर लगाता है वह महादेव जी का बड़ा प्रिय होता है। उसके दक्षिण गोरखाश्रम तीर्थ में सिद्ध गोरखनाथ नित्य निवास करते हैं। वहां का जल सर्वदा तप्त रहता है।

गौरी तीर्थ से एक कोस दूर विनायक द्वार पर गणेश जी स्थित हैं, जिन को पार्वती जी ने स्नान के समय अपने अंगराग से बनाकर अपने द्वार पर बैठा दिया था और शिवजी ने उनका सिर काट डाला। पीछे शिवजी ने हाथी का सिर जोड़ कर गणेश जी को जिला दिया। तब से वह गजानन हो गए। जो मनुष्य नाना प्रकार के नैवेद्य से गणेश जी की पूजा करता है, उसको मरने के पश्चात् शिव लोक मिलता है।

ब० द०—शाकम्भरी, जहां पर भगवती ने शाक खाकर तप किया था, त्रियुगीनारायण से सवा मील पर है। त्रियुगी नारायण में ब्रह्म कुंड नामक एक चतुष्कोण कुंड है। उसके पास छोटा रुद्र कुंड, और रुद्र कुंड के निकट गोलाकार विष्णु कुंड है। उसके पास एक स्थान में झरना का थोड़ा जल है जिस को लोग सरस्वती कुंड कहते हैं। झरने का जल भीतर से चारों कुंडों में आता है और ब्रह्म कुंड से बाहर निकलता है। इन कुंडों के पास नारायण का एक साधारण शिखरदार मन्दिर है। मन्दिर के आगे जगमोहन के स्थान पर एक चतुष्कोण गृह है जिसमें एक चबूतरे पर कुंड बना है। कुंड में अग्नि रहती है। वहां के लोगों की दन्त कथा है कि शिवजी और पार्वती जी के विवाह के समय का यह कुंड है। इसी स्थान पर शिवजी का विवाह पार्वती से हुआ था।

एक छोटे मन्दिर में तांबे के पात्र में शाकम्भरी देवी की मूर्ति है। इसके पास इसी तरह पत्तरों पर बनी हुई देवियों की बहुत सी मूर्तियाँ हैं।

गोरी कुंड म गर्म जल का एक झरना है, जिसका कुछ पानी मन्दाकिनी मे और कुछ जल पीतल के गोमुखी से हो कर तप्तकुंड म गिरता है और कुंड से निकल कर मन्दाकिनी म चला जाता है। तप्त कुंड लगभग १७ फीट लम्बा और इतना ही चौडा चौखुन्टा कुंड है। कुंड का जल इतना गर्म है कि बहुतेरे यात्री केवल जल स्पर्श कर लेते हैं। जो साहस करके जल मे कूदता है, वह बहुत समय तक उस कुंड में नहीं ठहरता किन्तु उस जल से जलन का कुछ भय नहा है। तप्त कुंड से दक्षिण गौरी कुंड नामक खारे जल का एक कुंड है जिसमें यात्री गण प्रथम स्नान करते हैं।

कुंड से दक्षिण एक छोटे ओसारे में पाँच-छ हाथ लम्बी उमा महेश्वर नामक शिला है। उसके निकट गौरी के छोटे मन्दिर में गौरी महादेव, राधा कृष्ण और ज्वाला भवानी की मूर्तियाँ स्थित हैं। एक कोठरी मे बिना सिर की गणेश जी की मूर्ति है।

## ज्ञ

७२५ ज्ञानधर कूट—( देखिए सम्मेद शिखर )

# परिशिष्ठ नम्बर १

## महापुरुषों की सूची

### अ

अगस्त्य—पुष्कर, अयोध्या, गया, गोकर्ण, नासिक, भविष्य बद्री, घुसमेश्वर, कोल्हापुर, रामेश्वर।
अग्नि—कश्मीर, गोकर्ण, बीदर, भविष्यबद्री, सोमनाथपट्टन, श्री नगर।
अङ्कुश—पावागढ़।
अङ्ग—जाजपुर।
अङ्गद—यागान।
अङ्गद—करतारपुर, खुदूरसाहेब, मत्ते की सराय।
अङ्गिरा—गोलगढ।
अजातशत्रु—राजगृह, नाथ नगर।
अजितनाथ—अयोध्या, सम्मेद शिखर।
अदिगोर्नद—कशमीर।
अदिति—अमिन।
अनङ्गभीमदेव—जगन्नाथ पुरी।
अनन्तनाथ—अयोध्या, सम्मेद-शिखर।
अनन्ता—मथुरा।
अनसूया—चित्रकूट।
अनाथपिंडका—सहेट महेट।
अनिरुद्ध—कसिया।
अनिरुद्ध—शोणितपुर।
अनुविन्द—उज्जैन।
अभिनन्दननाथ—सम्मेद शिखर।
अभिमन्यु—अमिन।
अभ्रदारिका—रसाड़।
अमरदास—बासिर, गोयन्दवाल।
अमरसिंह—उज्जैन।
अम्बरीष—अम्बर, अयोध्या, बालाजी, मथुरा।
अरन्डेल—मद्रास।
अरहनाथ—हस्तिनापुर, सम्मेद शिखर।
अरूणऋषि—बीदर।
अर्जुन—इन्द्रपाथ, कंपिला, कुनिन्दे, कुरुक्षेत्र, द्वारिका, दिव्यप्रयाग, मैयुर, रतनपुर, राजगृह, विराट, सोमनाथ पट्टन, कटाछराज।
अर्जुन (गुरु)—गोइँदवाल, अमृतसर।
अलकाट—मद्रास।
अलवासुर—मथुरा।
अशीनर—नगरिया।
अशोक—असरूर, आरा, उज्जैन, कन्नौज, कसिया, काशीपुर, कोसम, खुपुआडीह, गया, टङ्वामहन्त, पटना, पारवती, तुसारन, नगरा, महाथान

डीह, वेसनगर, भापुविहार, मुहला-डीह, रामनगर, लौरिया नवलगढ़, मथुरा, शाग, शाहढेरी, सनकसा, सहेट महेट, सारनाथ।

अश्वत्थामा—असीगढ़, कन्नौज।

अष्टावक्र—श्रीनगर, हरद्वार।

असङ्ग—पेशावर।

असित—गोलाक।

असीता—मुल्लाडीह।

अहल्या—अहिल्याकुण्डतीर्थ, त्र्यम्बक।

अहल्याबाई—उज्जैन, बनारस, विठूर, सोमनाथपट्टन।

अहिर्बुध—रामेश्वर।

अत्रि—चित्रकूट, गोलगढ़

## आ

आदिनाथ—अयोध्या, इलाहाबाद, कैलाशगिरि।

आदिशूर—रांगामाटी।

आनन्द—गिरियक, निमाड़, सहेट महेट।

आनन्दस्वरूप (सर, साहिबजी महाराज)—अम्बाला, आगरा, मद्रास।

आर्य्य असङ्ग—अजन्ता।

आर्य्यभट्ट—पटना।

आलाउ सलाम—आगरा।

आल्हा—कन्नौज, महियर।

## इ

इन्द्र—मोहरपुर, मयमंग, अहल्या कुण्डतीर्थ, इन्द्र प्रयाग, कुरुक्षेत्र, केदारनाथ, गिरियक, देवगार्ना, वना रस, बीदर, रामेश्वर, शिवप्रयाग, सनकिला, मथुरा।

इन्द्रजीत (जैन)—चूलगिरि।

इन्द्रद्युम्न—उज्जैन, जगन्नाथपुरी, देवप्रयाग।

इलवल—घुसमेश्वर।

इला—इलाहाबाद।

इक्ष्वाकु—अयोध्या।

## उ

उँगलीमाल—सहेट महेट।

उग्रश्रवा—नीमसार।

उग्रसेन—मथुरा।

उत्तरा—विराट।

उत्तानपाद—लौरिया नवलगढ़, गोकर्ण, विठूर।

उदयन—कासम।

उदयाश्व—पटना।

उद्धव—बद्रीनाथ।

उपगुप्त—पटना, मथुरा।

उपलि—मथुरा।

उमापतिधर—लखनौती।

उर्वशी—कलापग्राम, कुरुक्षेत्र।

उलूपी—हरद्वार।

उशीनर—नगरिया।

## ऊ

ऊर्जमुनि—ऊर्जनगाँव।

ऊर्जा—वराहक्षेत्र।

ऊषा—ऊखीमठ।

## ऋ

ऋचीकमुनि—कन्नौज।

**ए**

एकनाथ—पैठन।
एलाचार्य—पोन्नूर।

**ऐ**

ऐनीबेसेन्ट—बनारस, मद्रास।

**क**

कण्व—गोलगढ, मन्दावर।
कनक मुनि—खुपुआडीह।
कनिष्क—पेशावर, सुल्तानपुर।
कपालस्फेट—रामेश्वर।
कपिल—सिद्धपुर, भुइलाडीह, गङ्गासागर, कपिलधारा।
कबन्ध—आनागन्दी।
कबीर—बनारस, शुक्लतीर्थ, मगहर।
कमलावती—बसाढ।
करुणावती—चित्तौड।
कर्ण—नाथनगर, कुतवार, कर्ण प्रयाग, करनाल, तुलसीपुर।
कर्दमऋषि—सिद्धपुर, राजिम।
कर्मदेवी—चित्तौड।
कर्माबाई—जगन्नाथ पुरी।
कल्कि (अवतार)—सम्भल।
कलिङ्ग—जाजपुर।
कश्यप—कश्मीर, गोलगढ, मुल्तान, राजगृह, शोणितपुर।
कश्यपबुद्ध—चाँसिटीला, टँड्वा महन्त।
कस्सपगोत्त—काटमांडू।
कवीनान—रामेश्वर।
काक भुशुण्ड—निंगबूर,।
कात्यायन—पटना, कोसम, डल्ला सुल्तानपुर।
कात्यायनी—विन्ध्याचल।
कामता प्रसादसिंह (सरकार साहेब)—मुरार
कामदेव—कारा, गोकर्ण, गोपेश्वर।
कार्तवीर्य अर्जुन—मान्धाता।
कार्तिकेय—केदारनाथ।
कालनेमि—भविष्य बद्री।
काल भैरव—रामेश्वर, बनारस।
कालयवन—मुचकुन्द।
कालिदास—उज्जैन।
कालियानाग—मथुरा।
किनाराम अघोरी—बनारस।
किरातार्जुन—कालर।
कुकाली—सहेट महेट।
कुण्ड—बनारस।
कुन्ति भोज—कुतवार।
कुन्ती—कुतवार, आरा, पाण्डुकेश्वर।
कुन्थनाथ—हस्तिनापुर, सम्मेद शिखर।
कुबेर—कैलाशगिरि, मान्धाता, श्रीनगर।
कुमार मणि भट्ट (कवि)—मथुरा।
कुमारिल भट्ट—इलाहाबाद।
कुम्भकर्ण—गोकर्ण, चूलगिरि, लङ्का।
कुम्भा—चित्तौड।
कुरु—कुरुक्षेत्र, हस्तिनापुर।
कुलभूषण—रामटेक।

कुश—सुल्तानपुर, उज्जैन, नीम मार, बिठूर।
कुश (दैत्य)—द्वारिका ।
कुशध्वज—मरिगा।
कुशाम्ब—कोसम ।
कूर्मदास—पैठन।
कूर्मावतार—कुमायूं गढ़वाल।
कृष्ण (अवतार)—उज्जैन, कम्पिला, कामन, कुण्डनपुर, कुरुक्षेत्र, गोहाटी, जगन्नाथपुरी, द्वारिका, नन्दर घा‍, बेटद्वारिका, मूलद्वारिका, गोमन्तगिरि, मथुरा, रतन पुर, राज-गृह, रामेश्वर, शोणित पुर, हस्तिना पुर, सोमनाथ पट्टन, मुचकुन्द, गिरनार, गढ़मर, पुष्कर पुर।
कृष्णादास—नातवा।
कृष्ण मूर्ति—मदन पल्ला, मद्रास, बनारस।
कृष्णा कुमारी—चित्तौड़।
केदार—केदारनाथ।
केरल—मदुरा।
केशवचन्द्र सेन—कलकत्ता ।
केशवदास (कवि)—ओड़छा।
केशी—मथुरा।
कैकेयी—अयोध्या।
कैटभ—कनौसी, ।
कोला—वराह क्षेत्र ।
कोल—मदुरा।
कालदैत्य—अलीगढ।
कोलासुर—श्री नगर।
कौशल्या—अयोध्या।
कौशिकी—विन्ध्याचल ।
कंस—मथुरा।
मकुन्दबुद्ध—मुहम्मदाबाद, नगर ।

## ख

खर—नासिक।
खाण्डव—शिव प्रयाग ।

## ग

गजन (रवि)—बनारस।
गजासुर—बनारस।
गणेश—त्रियुगी नारायण, बनारस।
गय—गया।
गर्गऋषि—गगास।
गरूड़—गोकर्ण, बालाजी ।
गाधि—कन्नौज।
गान्धारी—कन्धार ।
गान्धी (महात्मा)—पोर बन्दर, इन्द्रपाथ।
गालव मुनि—इलाहाबाद, गलता, रामेश्वर, चित्रकूट।
गुजरी देवी—पटना।
गुण प्रभा—मन्दावर।
गोरखनाथ—गोरखपुर, बनारस।
गुरुदत्त मुनि—सँदण्पा ।
गुह—सिंगरौर।
गोवर्धनाचार्य—लखनौती।
गोविन्द प्रभु—काठपुरे ।
गोविन्द साहब—कोन्वा ।
गोविन्दसिंह—पटना, अविचलनगर, अमृतसर, आनन्दपुर।
गौतमऋषि—अहल्या कुण्डतीर्थ,

देवदास—बनारस।
देवयानी—देवयानी।
देवशर्मा—देवप्रयाग।
देवहुती—सिद्धपुर।
देवापि—कलापग्राम।
देवेन्द्रनाथठाकुर—कलकत्ता।
देवभूषण—रामकुण्ड।
दण्डी—कांची।
दन्तबक्र—रींवा।
द्रुपद—कम्पिला।
द्रोणाचार्य—कम्पिला, काशीपुर, गुड़गाँव, रामनगर, हरद्वार।
द्रौपदी—कम्पिला, इन्द्रपाथ, हस्तिनापुर, विराट, कामोद।

### ध

धनञ्जय—अयोध्या।
धन्वन्तरी—उज्जैन।
धरनीदास—माँझी।
धर्म—रामेश्वर।
धर्मनाथ—नौराही, सम्मेदशिखर।
धर्मेश्वर—रामेश्वर।
धृतराष्ट्र—हस्तिनापुर।
धृष्टकेतु—चन्देरी।
धेनुकासुर—मथुरा।
धोयी—लखनौती।
ध्रुव—बिठूर, बद्रीनाथ, मथुरा।

### न

नन्नानग—सोनागिरि।
नन्द—नन्दप्रयाग, मथुरा।
नमिनाथ—सीतामढ़ी, सम्मेद शिखर।
नर—बद्रीनाथ।
नरकासुर—गोहाटी।
नर नारायण—केदारनाथ, बनारस।
नरसिंह (अवतार)—जोशीमठ, मुल्तान, मगलगिरि।
नरसी मेहता—जूनागढ़।
नरहरि सुनार—पढरपुर।
नल (वानर)—रामेश्वर।
नल (राजा)—नरवार, ऊखीमठ अयोध्या, बीदर, सरहिन्द।
नय निहाल सिंह—अमृतसर।
नहुष—नन्दप्रयाग, इलाहाबाद।
नागसेन—स्यालकोट।
नागार्जुन—नागार्जुनी पर्वत, बड़गावा।
नानक(गुरु)—ननकाना साहेब, इमनाबाद, करतारपुर, गोयन्दवाल, सुल्तानपुर, स्यालकोट।
नामदेव—पढरपुर।
नारद—गोलागढ़, जगन्नाथ पुरी, जोशीमठ, नारायणसर, बद्रीनाथ, मथुरा, रुद्रप्रयाग।
नारायण—कुरुक्षेत्र, केदारनाथ, नारायणसर, बद्रीनाथ।
निकुम्भ—बनारस।
निचक्षु—हस्तिनापुर, कोसम।
निजानन्दाचार्य—अमरकण्टक।
निम्बार्क—मथुरा।
नीलादेवी—बालाजी।
नृग—द्वारिका।
नेमिनाथ—द्वारिका, गिरनार।

नैमिष—नीमसार।

**प**

पतंजलि—चिदम्बरम।

पद्मपाद आचार्य—जगन्नाथपुरी

पद्मप्रभु—कोसम, फफोसा, सम्मेद शिखर।

पद्मसम्भव—रुवालसर।

पद्मावती—चित्तौड़।

पन्नाधाय—चित्तौड़।

परमेष्ठी दर्जी—इन्द्रपाथ।

परशुराम(अवतार)—ज़मानिया, उत्तर काशी, कुरुक्षेत्र, गङ्गेश्वर, कोलर, मान्धाता।

पराशरमुनि—कालपी, बद्रीनाथ, महेन्द्रपर्वत।

परीक्षित—नकरताल, हस्तिनापुर, ताहरपुर।

पलटूदास—अयोध्या।

पशुपतिनाथ—काठमाण्डू।

पस्तकाप्य मुनि—नाथ नगर।

पाणिनि—लाउर, शाहढेरी।

पाण्डव—आरा, गङ्गासागर, बद्रीनाथ, देववन्द, नीमसार, विराट, सिद्धपुर, कामोद, गङ्गोत्री, हस्तिनापुर, कटासराज,बरनावा, कम्पिला,कुरुक्षेत्र, केदारनाथ,गया,जाजपुर,पाण्डुकेश्वर।

पाण्डु—हस्तिनापुर, पाण्डुकेश्वर।

पाण्ड्य—मदुरा।

पार्वती—पटना, बनारस, नीमसार, त्रियुगीनारायण, मल्लिकार्जुन, रुद्र प्रयाग, नागेश, गौरीकुण्ड, गङ्गेश्वरी घाट।

पार्श्वनाथ—नैनागिर, बनारस, राम नगर, सम्मेदशिखर।

पार्श्विक—पेशावर।

पाल काप्यमुनि—चम्पानगर।

पुञ्ज—जाजपुर।

पुण्डरीक—पंढरपुर।

पुरु—सोग।

पुरु—इलाहाबाद।

पुरुरवा—कलापग्राम, कुरुक्षेत्र, रामेश्वर, इलाहाबाद।

पुलहऋषि—शालग्राम।

पुष्कर—चारसदा।

पुष्पदन्त—खोरवन्दी, सम्मेद शिखर।

पूतना—मथुरा।

पूर्णवर्धन—सहेट महेट।

पूर्व मैत्रायणी पुत्र—मथुरा।

पृथा—चित्तौड़।

पृथु—कुरुक्षेत्र, बिठूर।

पृथ्वीराज (महाराज)—इन्द्रपाथ, अजमेर, कन्नौज, चुनार, नालवड़ी।

पृथ्वीराज—चित्तौड़।

प्रजापति—इलाहाबाद।

प्रतापसिंह—चित्तौड़।

प्रद्युम्न कुमार—गिरनार, पाटुआ।

प्रमिला—कुमायूं गढ़वाल।

प्रलम्ब—मथुरा।

प्रसेनजित—सहेट महेट।

प्रह्लाद — मुलतान, इलाहाबाद, उज्जैन, कामाख्या, जोशीमठ, बालाजी, सोमनाथ पटन, हरिद्वार, हृषीकेश

### ब



### भ

### य



### र

पटना, बक्सर, बिठूर मुङ्गेर, वैद्यनाथ, राजिम, रामटेक, रामेश्वर, श्रीनगर, श्रीरंगम, बालाजी।
रामतीर्थ—मरगलीवाला।
रामदास— कोल्हापुर, जाम्बगांव, नासिक, लाहौर, अमृतसर, गोयन्दवाल।
राममोहनराय—राधानगर, बनारस, पटना।
रामानन्द—इलाहाबाद, गंगासागर, बनारस।
रामानुजाचार्य — भूतपुरी, काँची, मलकोटा श्रीरंगम, बालाजी।
रावण—गोकर्ण, नासिक, वैद्यनाथ, लंका, रावणह्रद।
राहुल—मथुरा, मुहम्मदाबाद।
राहुलता—सहेट महेट।
रुक्माङ्गद—वेसनगर, सम्रावमपट्टन, अयोध्या।
रुक्मिणी—कुंडिनपुर, द्वारिका।
रुक्मिणी देवी—मद्रास।
रेणुकाचार्य—कोल्हापुर, काँची, सोमनाथ पट्टन।
रैवत—शाहढेरी।
रैवत—द्वारिका।
रेवती—द्वारिका।
रैक्वमुनि—रामेश्वर।
रैदास—बनारस।
रैभ्यमुनि—हृषीकेश।
रोमपाद—नाथनगर।
रोमहर्षण—नीमसार।
रोह...—रोहतास।

## ल

ललित किशोरीशाह कुन्दनलाल (कवि) —लखनऊ।
ललितादेवी—नीमसार।
लव—नीमसार, पावागढ़, बिठूर, लाहौर, सहेट महेट।
लवण—मथुरा।
लक्ष्मण—अयोध्या, अद्दलपाकुण्ड तीर्थ, आनागन्दी, इलाहाबाद, देवप्रयाग, नीमसार, पटना, पुष्कर, बक्सर, बिठूर, लखनऊ, लङ्का, शिंगरौर, रामेश्वर, हृषीकेश, बालाजी, सोनपुर, चित्रकूट।
लक्ष्मणसेन—लखनौती।
लक्ष्मी—कोल्हापुर, बद्रीनाथ, बालाजी, रामेश्वर।
लाखा (लाखा)—चित्तौड़।
लॉर्ड विटर—मद्रास।
लोपमुद्रा—रामेश्वर।
लोचनदास—कोग्राम।
लोमश—नागार्जुनी पर्वत, जाजपुर, बद्रीनाथ, रुद्रानगर।

## व

वचनचूरामणि—कुदरमाल।
वज्र—इन्द्रनाथ।
वत्स—कोसम।
वन्दरनाथमयन्द—आनागन्दी।
वभ्रुवाहन—चन्देरी।
वरदत्तमुनि—गिरनार, नैनागिरि।
वराहमिहिर—कम्पिला, उज्जैन।

वरुण—इलाहाबाद, कन्नौज, बीदर।
वररुचि—उज्जैन।
वररुचि कात्यायन—कोसम।
वल्लभाचार्य—नाथद्वारा, उज्जैन, चौरा, बनारस।
वशिष्ठ—आबूपर्वत, अयोध्या, कुरुक्षेत्र गोलागढ, देवप्रयाग, गजगढ़।
वसन—सङ्गमेश्वर।
वसु—कौआकोल पहाड़।
वसुदेव—कुरुक्षेत्र, मथुरा, सोमनाथ पट्टन।
वसुप्रद—कौआकोल पहाड़।
वसुबन्धु—मदावर, पेशावर, सहेट महेट।
वसुमित्र—सुल्तानपुर।
वाकुल—कोसम।
वामुनि—नागोर।
वाणासुर—शोणितपुर।
वामदेव—गोलगढ, पढरपुर।
वामन (अवतार)—कुरुक्षेत्र, गया, बक्सर।
वाल्मीकि—अयोध्या, अवानी, चित्रकूट, नीमसार, बनारस, बिठूर।
विकुठन—हस्तिनापुर।
विक्रमादित्य—उज्जैन, नीमसार, तुलसीपुर, सोरुर।
विचित्रवीर्य—हस्तिनापुर।
विजयदत्त—रामेश्वर।
विट्ठल—पण्ढरपुर।
विठोवा—पण्ढरपुर।
विदुर—हस्तिनापुर।
विदेह—सीतामढ़ी।
विद्यापति—बिसपी, सीतामढ़ी।
विद्यासागर—वीरसिंह।
विन्दु—उज्जैन।
विभीषण—गोकरण, रामेश्वर, लङ्का, श्रीरङ्गम।
विमलनाथ—कम्पिला, सम्मेद शिखर।
विमलमित्र—मन्दावर।
विभाण्डक ऋषि—मँकनपुर।
विरजजिन—नाथ नगर।
विराट—विराट, अलवर।
विरुढ़क—सहेट महेट।
विवेकानन्द—कलकत्ता।
विशाखा—अयोध्या, महेट महेट, भदरिया।
विशाल—बद्रीनाथ।
विश्वमोहिनी—बेसनगर
विश्वामित्र — कन्नौज, अयोध्या, अहल्या कुण्डतीर्थ, गोलगढ, कुरुक्षेत्र, पटना, बक्सर, सीतामढ़ी, सोनपुर।
विष्णु—उज्जैन, कुरुक्षेत्र, गया जगन्नाथ पुरी, पाण्डुकेश्वर, पुष्कर, बनौसी, बनारस, बेसन गर, मल्लिकार्जुन, जाजपुर, मथुरा, मुक्तिनाथ, रामेश्वर, हरद्वार, हृषीकेश, इलाहाबाद।
विज्ञानेश्वर—कल्याणपुर।

वीर (कवि)—इन्द्रपाथ।
वीरभद्र—बनारस, हरद्वार।
वीरसिंह—रांगामाटी।
वीर सिंह देव (महाराजा)—ओरछा।
वीर सिंह बघल—मगहर।
वीरा—चित्तौड।
वृतरासुर—कुरुक्षेत्र।
वृन्द—सोमनाथ पट्टन।
वृहदनल—अयोध्या।
वृहद्रथ—कौआकाल पहाड़।
वैखानस—पाडुकेश्वर।
वैतालभट्ट—उज्जैन।
वैवस्वतमनु—अयोध्या, बद्रीनाथ।
व्याघ्रपद—चिदम्बरम।
व्यास—कालपी, बद्रीनाथ, हस्तिनापुर, कैलासगिरि।
व्यासदास—ओरछा।

## श

शकुन्तला—मन्दावर।
शङ्करदेव—बटद्रवा।
शन्तनु—हस्तिनापुर।
शबरी—आनागन्दी, नासिक।
शम्बरासुर—पाहुआ।
शम्बूक—रामटेक।
शम्भाजी—कोल्हापुर।
शम्भु कुमार—गिरनार।
शर्मिष्ठ—देवयानी।
शल्य—स्यालकोट।
शशाँक—रँगामाटी।
शत्रुघ्न—अयोध्या, कामाख्या, चित्रकूट, जगन्नाथपुरी, राजिम, बिठूर, हृषीकेश, मथुरा।
शान्ता—अयोध्या।
शान्तिनाथ — हस्तिनापुर सम्मेद शिखर।
शाडिल्य ऋषि—शरदी।
शालिवाहन—पैठन।
शाल्व—अलवर।
शिल्ट—श्री नगर।

शिव—उत्तर काशी, अमर कण्टक, उज्जैन, कटासराज, कश्मीर, काठमाडू, गोलागोकर्णनाथ, गोकर्ण, कोटली, कालिंजर, कांची, कुरुक्षेत्र, शङ्कर तीर्थ, शोणित पुर, हरद्वार, केदारनाथ, कैलास गिरि, गोपेश्वर, मणिचूड़ा, चिदम्बरम, जगन्नाथपुरी, घुसमेश्वर, तेवर, नागेश, नीमसार, बनारस, भुवनेश्वर, भेतगांव, मल्लिकार्जुन, मार्कण्डे, मान्धाता, वैद्यनाथ, रुद्रप्रयाग, रामेश्वर, शिव प्रयाग, शुक्लतीर्थ, सोमनाथ पट्टन, सयम्भर, त्रिजुगीनारायण, कावेरी नदी का मुहाना।
शिवगुरु—कालटी।
शिवदयालसिंह(स्वामीजी महाराज)—आगरा।
शिवाजी—कोल्हापुर, सतारा, सूरत।
शिशुपाल—चन्देरी।
शीतलनाथ—साँची, सम्मेद शिखर।
शुकदेव—शकरताल [illegible] मढी।

स्वायम्भुवमनु—विठूर ।

### ह

हठी ( कवि )—मथुरा ।
हनुमान—आनागन्दी, बनारस भविष्यबद्री, रामेश्वर, लङ्का, अयोध्या ।
हमीर—चित्तौड़ ।
हरदौल—ओरछा ।
हरिकेश—बनारस ।
हरिकृष्ण—अमृतसर, इन्द्रप्रस्थ, देहरापतालपुरी ।
हरिगोविंदसिंह—अमृतसर, देहरापतालपुरी ।
हरिदास —मथुरा ।
हरिनाथ ( कवि )—बनारस ।
हरिरामदास—सिंहथल ।
हरिराय—अमृतसर, आनन्दपुर, देहरापतालपुरी ।
हरिश्चन्द्र—अयोध्या, बनारस यारा हलेन ।
हरिश्चन्द्र ( भारतेन्दु )—बनारस ।
हरीसिंह—लाहौर ।
हर्षवर्धन—कन्नौज ।
हलायुध—लखनौती ।
हस्ती—हस्तिनापुर ।
हारितऋषि—यकलिङ्ग ।
हस्वरोमा—सीतामढी ।
हितहरिवंश—बाद, मथुरा,देवबन्द ।
हिरण्यकशिप—मुल्तान, मल्लिकार्जुन ।
हिरण्यवर्ण—चिदम्बरम ।
हेमचन्द्राचार्य—अनहिलपट्टन ।
हेमावती—महियर ।

### क्ष

चाणक्य—उज्जैन ।
क्षुप—कुरुक्षेत्र ।
क्षेम—नगरा ।

### त्र

त्रिपुरासुर—तेवर ।
त्रिशिरा—त्रिचनापल्ली ।
त्रिशंकु—अयोध्या ।
त्रिसिरा - नासिक ।

### ज्ञ

ज्ञानेश्वर—आलन्दी, पैठन ।

# परिशिष्ट नम्बर २

## प्राचीन स्थानों के आधुनिक नाम और भौगोलिक स्थिति

### अ

१ अगस्त्यआश्रम — अगस्तिपुरी नासिक से २४ मील दक्षिण पूर्व।

२ अगस्त्यतीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

३ अग्रवन—आगरा।

४ अग्नितीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

५ अग्निपुर—मान्धाता, इन्दौर से ४० मील दक्षिण।

६ अङ्ग प्रदेश—बिहार प्रान्त में भागलपुर तथा मुंगेर के जिले।

७ अचरवती—अवध की राप्ती नदी।

८ अचिन्त या

९ अचिन्त्य — अजन्ता, हैदराबाद राज्य में।

१० अच्छोद सरोवर—अच्छावत, कश्मीर में।

११ अजमती—अजया नदी, बंगाल में।

१२ अजितवती—गंडक, कसिया (जिला देवरिया) के पास से बहने वाली छोटी नदी।

१३ अजिरवती—अवध की राप्ती नदी।

१४ अञ्जन गिरि—सुलेमान पर्वत की एक शृंखला पंजाब के उत्तर पूर्व में।

१५ अधिराज प्रदेश—रीवाँ राज्य।

१६ अनन्तशयन—पद्मनाभपुर, त्रावणकोर में।

१७ अनूप देश—दक्षिण मालवा जिसकी राजधानी माहिष्मती थी।

१८ अनोमा नदी—औमी नदी, बस्ती जिला में।

१९ अन्धनद—ब्रह्मपुत्रा नदी।

२० अन्त्रेयी (अत्रेयी)—अत्रै नदी, दीनाजपुर जिला में।

२१ अपराजिता—अयोध्या।

२२ अपरान्त—

२३ अपरान्तक-

२४ अभिरार वा

२५ अभिसारि देश—कौंकण और मलाबार प्रदेश, दक्षिण भारत में। पेशावर के पश्चिम उत्तर का प्रदेश।

२६ अमरावती—१—बेजवाड़े से १८ मील पश्चिम तथा धरणिकोट (धनकट) से दक्षिण की ओर स्थित गाँव व स्तूप:

२ नगर हार—जलालाबाद से

दो मील पश्चिम।

२७ अमृतवापिका—रामेश्वर में एक तीर्थ।

२८ अरण्य—उज्जैन और धारार के दक्षिण का देश,

२९ अराष्ट्र—पजाब।

३० अरुणा गिरि—तिरुवन्न मलाई या त्रिनामली मद्रास प्रान्त में।

३१ अरुणा नदी—कुरुक्षेत्र के समीप पंजाब में स्थित सरस्वती नदी की शाखा।

३२ अरुणाचल—तिरुवन्नमलाई, या त्रिनामली, मद्रास प्रान्त में।

३३ अरुण थम—कैलाश की पश्चिमी शृंखला।

३४ अरुणोद—गढवाल, अलकनंदा नदी जिस देश में बहती है।

३५ अर्कक्षेत्र—कोनारक, उड़ीसा में।

३६ अर्धगंगा नदी—कावेरी।

३७ अर्बुदगिरि—आबू पर्वत।

३८ अवधपुरी—अयोध्या।

३९ अवन्ति दक्षिणापथ—मांधाता के चारों ओर का प्रदेश। मान्धाता इन्दौर के दक्षिण में है।

४० अवन्ति—उज्जैन, तथा उसके आस पास का प्रदेश। सातवीं व आठवीं शताब्दी ईस्वी में यह प्रदेश मालवा कहलाता है जब से मल्लों ने इसे जीता।

४१ अवान्तिकक्षेत्र—अवनिग्राम, मैसूर के कोलार जिले में।

४२ अविचल कूट—सम्मेद शिखर।

४३ अविमुक्त क्षेत्र—काशी (बनारस)।

४४ अश्मक—महाराष्ट्र।

४५ अश्मण्वती नदी—काबुल नदी।

४६ अश्वक—महाराष्ट्र।

४७ अश्वकच्छ—कच्छ।

४८ अश्वतीर्थ—गंगा और काली नदी का संगम।

४९ अश्वत्थामागिरि — आसेरगढ़ बुरहानपुर से ११ मील उत्तर, मध्यप्रान्त में।

५० अष्टापद पर्वत—कैलास पर्वत, तिब्बत के दक्षिण पश्चिम में।

५१ अष्टावक्र आश्रम—रैल, हरद्वार से ४ मील।

५२ अष्टिग्राम—रावल, मथुरा जिले में यमुना तट पर।

५३ अस्मक—महाराष्ट्र।

५४ असिक्नि—चिनाव नदी, पंजाब में।

५५ अस्सक—[illegible]।

५६ अहिच्छत्र,

५७ अहिछत्र वा

५८ अहिक्षेत्र— राम नगर, बरेली से २० मील

## आ

५९ आकर—पूर्वी मालवा जिसकी राजधानी विदिशा थी।

६० आनरावती—पूर्वी तथा पश्चिमी मालवा।

६१ आदि बद्री (अदबद्री)—श्रीनगर का एक गाँव, गढ़वाल में।

६२ आनन्दकूट — सम्मेदशिखर।

६३ आनन्दपुर — बड़नगर, उत्तर गुजरात में।

६४ आनर्तदेश—१—उत्तर गुजरात जिसकी राजधानी आनन्तपुर थी २—गुजरात व मालवा का भाग जिसकी राजधानी कौशस्थली (द्वारिका) थी।

६५ आन्ध्र—१—गोदावरी तथा कृष्णा के बीच का भूभाग २—तैलङ्गाना, हैदराबाद के दक्षिण।

६६ आपगा—कुरुक्षेत्र की एक नदी सभवत. ओघवती।

६७ आपापुरी१—बिहार से ७ मील दक्षिण पूर्व एक गाँव,बिहारप्रान्त में .२ ·इरौना,जिला देवरिया में।

६८ आप्तनेगवन— इरौना, बहराइच जिले में।

६९ आभानगर—ताहरपुर, बुलन्द-शहर जिले में।

७० अमीर—१—सिंधनदी के पूर्व का देश . २—सोमनाथ के पास गुजरात का भूभाग ३—ताप्ती से देवगढ़ तक का प्रदेश ४—गुजरात का दक्षिणी भाग।

७१ आमलितला—ताम्रपर्णी नदी के किनार, जिला तिनवेली मद्रास में, एक गाँव।

७२ आमेर—अम्बर, जयपुर में।

७३ आयुध—झेलम और सिन्धु नदियों के बीच का प्रदेश।

७४ आरट्ट—पजाब।

७५ आरण्यक—उज्जैन और विदर्भ (बरार) के दक्षिण का देश।

७६ आर्यावर्त—हिमालय और विन्ध्य के बीच का भूभाग।

७७ आरामनगर—आरा, बिहार में

७८ आलवि—ऐर्व इटावा से २७ मील।

७९ आवगाण—अफगानिस्तान।

८० आशापल्लि—अहमदाबाद।

८१ आत्रेयी—अत्रै नदी, दीनाजपुर जिला में।

## इ

८२ इन्द्रकील पर्वत—शिवप्रयाग के पास एक पर्वत, गढ़वाल में।

८३ इन्द्रपुर—इदोर, जिला बुलद शहर में।

८४ इन्द्रप्रस्थ—पुरानी दिल्ली, इन्द्र पाथ।

८५ इन्द्रशिला गुहा — गिरियक पहाड़ी, राजगिरि से ६ मील।

८६ इलवलपुर — एलोरा, हैदरा बाद में।

८७ इक्षु—काबुल नदी।

८८ इक्षुमती—काली नदी, कुमाऊँ और रुहेलखण्डमें बहनेवाली।

उ

८६ उचनगर—बुलन्दशहर, संयुक्त प्रान्त में।

६० उज्जयन्त — गिरिनार पहाड़, काठियावाड़ में।

६१ उज्जयिनी—उज्जैन।

६२ उड्डूपी क्षेत्र—उड्डूपीपूर, मद्रास में।

६३ उत्कल देश—उड़ीसा।

६४ उत्तरकुरु—गढ़वाल का उत्तरी भाग तथा हूण देश।

६५ उत्तर कोशल—बहराइच का ज़िला और उसके पास का देश जिसकी राजधानी श्रावस्ती (सहेट महेट) थी।

६६ उत्तर गोकर्ण तीर्थ—गोला गोकर्ण नाथ, जिला खेरी में।

६७ उत्तर गोकर्ण क्षेत्र—गोला गोकर्ण नाथ, खेरी ज़िला में।

६८ उत्तरापथ—कश्मीर तथा काबुल का देश।

६६ उत्तानिका नदी—रामगंगानदी।

१०० उत्पलारण्य वा

१०१ उत्पलावत कानन—बिठूर, कानपुर जिले में।

१०२ उत्पलावती नदी—व्यपर नदी, तिनावाली जिला मद्रास में।

१०३ उदयपुर — विहार नगर, विहार में।

१०४ उदयगिरि—भुवनेश्वर से ५ मील पूर्व एक पहाड़, उड़ीसा में।

१०५ उद्यान—पेशावर के उत्तर में स्वात नदी के किनारे का प्रदेश।

१०६ उपमल्लक- मल्लका(malacca)।

१०७ उपवंग—गंगा के डेल्टे के पूर्व का मध्य भाग।

१०८ उमावन—ऊखीमठ, रुद्रप्रयाग के उत्तर।

१०६ उरगपुर — उरयिपुर, जिला त्रिचनापल्ली में।

११० उरशा—हजारा जिला।

१११ उशीनर गिरि — सिवालिक पहाड़ी, हरद्वार के पास।

ऊ

११२ ऊखल क्षेत्र—सोरों, एटा जिला में।

११३ ऊदग नगर वा

११४ ऊदा नगेरी—असरूर, गुजराँ वाला जिला में।

११५ ऊरुविल्व—बोध गया।

ऋ

११६ ऋषभ पर्वत—मदुरा की पलनी पहाड़ियाँ।

११७ ऋषिकुल्या—रिषि कुल्लिया नदी गंजाम में।

११८ ऋषिगिरि—राजगिरि के समीप एक पहाड़।

११६ ऋषि पट्टन—सारनाथ, बनारस के पास।

१२० ऋषिपर्वत—हृषीकेश, जिला सहारनपुर में।

१२१—ऋष्यमूक—अनागदी से ८ माल दूर एक पहाट, जिला विलारी मे ।

१२२—ऋष्यशृंग आश्रम—ऋषीकुंड, भागलपुर से २८ मील पश्चिम ।

१२३ ऋक्ष पर्वत—विंध्य का पूर्वी भाग ।

## ए

१२४ एकचक्र—चक्रनगर, इटावा से १६ मील दक्षिणपूर्व ।

१२५ एकाम्रकानन वा

१२६ एकाम्र क्षेत्र—भुवनेश्वर, उड़ीसा में ।

१२७ एरन्डी—उरि, नर्मदा की सहायक नदी ।

१२८ एलपुर—एलोरा, हैदराबाद में ।

## ऐ

१२९ ऐरावती—रावी नदी ।

## ओ

१३० ओंकार चक्र वा

१३१ ओंकार पुरी—नर्मदा पर । मान्धाता, इन्दौर से ४० मील दक्षिण ।

१३२ ओद्र—उडीसा ।

१३३ ओपियाँ—अलसन्द, काबुल से २७ मील उत्तर ।

## औ

१३४ औदुम्बर—कच्छ, जिसकी राजधानी कोटेश्वर थी ।

## क

१३५ कङ्काली टीला—मथुरा के पास एक स्थान ।

१३६ कण्व आश्रम—१-मालिनी नदी (चुका) के तट पर जिला बिजनौर में : २-चम्बल नदी के किनारे, कोटा से ४ मील दक्षिण पूर्व : ३-नर्मदा के तट पर ।

१३७ कनक—त्रावणकोर ।

१३८ कन्दगिरि—कन्देरी, बम्बई प्रान्त में ।

१३९ कपिलवस्तु—१-भुइलाडीह, बस्ती शहर से १५ मील पश्चिमोत्तर :
२ निगलीवा, नैपाल की सीमा से ३८ मील पश्चिमोत्तर नैपाल में :
३ तिलौरा, निगलीवा से ३½ मील दक्षिण पश्चिम

१४० कपिशा—काबुल नदी के उत्तर का प्रदेश · उत्तरी अफगानिस्तान ।

१४१ कपिस्थल तीर्थ—कैथल, जिला कर्नाल में ।

१४२ कमन्तलपुरी—कुतवार, ग्वालियर में ।

१४३ कमन्तीपुरी—डोंगरगढ, रायपुर जिले में ।

१४४ कम्पिल्यपुर—कम्पिल्य या कपिला, जिला फर्रुखाबाद में ।

१४५ करकल—करौंनी ।

१४६ करकोटक—वड़ा, जिला इला हाबाद में।

१४७ करवीर—कोल्हापुर।

१४८ करुष—रीवाँ राज्य बघेल खंड।

१४६ कर्णसुवर्ण—राँगामाटी, जिला मुर्शिदाबाद में।

१५० कर्णावती नगरी—अहमदाबाद।

१५१ कर्णावती नदी—केननदी, बुन्देलखन्ड में।

१५२ कर्तृपुर—इस देश में गढ़वाल, अल्मोड़ा तथा काँगड़ा के जिले सम्मिलित थे।

१५३ कर्दम आश्रम—सितपुर या सिद्धपुर, गुजरात में।

१५४ कलदि—केरल (मलाबार) में एक स्थान।

१५५ कलापग्राम—बद्रिकाश्रम के निकट हिमालय में एक ग्राम।

१५६ कलिंग—उत्तरी सरकार। उड़ीसा के दक्षिण और द्राविड़ के उत्तर समुद्र तट तक का देश।

१५७ कलिंग नगर—भुवनेश्वर, उड़ीसा में। (महाभारत के समय उड़ीसा का बहुत भाग कलिंग में सम्मिलित था)।

१५८ कलिन्द—हिमालय में बन्दरपूछ शृंखला पर पहाड़ी देश।

१५६ कलस्थल—केदारनाथ में एक तीर्थ।

१६० कल्पेश्वर—केदारनाथ में एक तीर्थ।

१६१ कश्यपपुर—मुलतान, पाकिस्तानी पंजाब में।

१६२ कश्यपमीर—कश्मीर।

१६३ काकजोल—पूर्निया, माल्दा और भागलपुर के जिले।

१६४ काकनाद—साँची, भोपाल में।

१६५ काकन्दी नगरी वा—

१६६ काकन्दीपुरी—खुखुन्दो, गोरखपुर जिले में।

१६७ काञ्चीवरम्—कांची, मद्रास प्रांत के चिङ्गिलपट जिला में।

१६८ कादम्बवन—कामाँ, भरतपुर में।

१६६ कान्तीपुर वा—

१७० कान्तीपुरी—कुतवार, ग्वालियर में।

१७१ कान्यकुब्ज—कन्नौज, जिला फर्रुखाबाद में।

१७२ कान्यपुष्कर—पुष्कर में एक तीर्थ, अजमेर के समीप।

१७३ कामकोष्ठी वा

१७४ कामकोष्ठी — कुम्भकोणम मद्रास में।

१७५ कामगिरि—कामाख्या, आसाम में।

१७६ कामरू —आसाम।

१७७ कामशैल—कामाख्या, आसाम में।

१७८ कामाश्रम — कारो, जिला बलिया में।

१७६ काम्बोज—अफगानिस्तान।

१८० काम्यवन वा

१८१ काम्यवन—कामवन, भरतपुर में।

१८२ कारुष—वेत्रवती तथा नोथना नदी के मध्य का देश।

१८३ कारूष—१ - रीवा राज्य २ शाहाबाद जिला, बिहार प्रान्त में।

१८४ कार्तिकेयपुर—वैजनाथ, कुमायूँ में।

१८५ कालकवल—कड़ा, इलाहाबाद जिला में।

१८६ कालस्यन—राजमहल पहाड़, बिहार में।

१८७—कालगिरि—नीलगिरि पर्वत, मद्रास में।

१८८ कालचंपा—चंपानगर, भागलपुर से ४ मील पश्चिम।

१८९ कालिकावर्त—मथुरा में एक स्थान।

१९० कालिञ्जर—कालिंजर बुन्देलखड में।

१९१ कालिन्दी—यमुना नदी।

१९२ कालीदह—मथुरा का एक तीर्थस्थल।

१९३ काशी—बनारस।

१९४—काश्यपी गंगा—साबरमती नदी, गुजरात में।

१९५ काष्ठ मंडप—काठमांडू, नैपाल में।

१९६—किन्दुबिल्व ग्राम—केन्दुली, जिला वीर भूमि, बंगाल में।

१९७—किंपुरुष देश—नैपाल।

१९८ किरीट कोणा—डाहपाड़ा नगर के पास, मुर्शिदाबाद जिला में एक स्थान।

१९९ किष्किधा वा

२०० किष्किधापुर—अनागन्दी के निकट बिलारी जिला में किष्किधा नामक गाँव।

२०१ कीकट — मगध-दक्षिण बिहार। कुल बिहार भी मगध कहलाता था।

२०२ कीरग्राम—वैजनाथ, पंजाब में।

२०३ कुक्कुटपादगिरि— कुरकिहार, गया जिला में।

२०४ कुण्डग्राम—वैशाली (बिसाढ़), मुजफ्फरपुर जिला में।

२०५ कुण्डनपुर वा

२०६ कुण्डलपुर—कांडाबीर, बरार १ कुण्डपुर अमरावती से ४० मील पूर्व • २ कंटाबीर, बरार में ३. देवलवाड़ा, मध्यप्रांत के चाँदा जिला में।

२०७ कुन्तलपुर वा

२०८ कुन्तलपुरी—कुत्तूर, मैसूर में।

२०९ कुन्थलगिरि—रामकुंड, हैदराबाद के उस्मानाबाद जिले में।

२१० कुब्जा—नर्मदा की सहायक नदी।

२११ कुब्जागार—हृषीकेश, जिला सहारनपुर में।

२१२ कुब्जाम्रक या
२१३ कुब्जाम्रक देश—हृषीकेश से उत्तर की ओर एक स्थान।
२१४ कुभा—काबुल नदी।
२१५—कुमारवन—कुमायूँ गढवाल।
२१६ कुमारी—कन्याकुमारी अंतरीप, नावणकूर में।
२१७ कुमुद वन—मथुरा में एक स्थान।
२१८ कुरु—गंगा यमुना के बीच मेरठ के पास का देश।
२१६ कुरुजाङ्गल या
२२० कुरुवन— कुरुक्षेत्र का एक भाग, हस्तिनापुर के उत्तर पच्छिम सरहिन्द के पास का जंगल या देश जिसकी राजधानी बिलासपुर थी और पीछे थानेश्वर हुई।
२२१ कुरुक्षेत्र—थानेश्वर जिला में प्रसिद्ध तीर्थ। सरस्वती और दृषद्वती नदियों के बीच का देश जिसमें कर्नाल, सोनपत और पानीपत सम्मिलित थे।
२२२ कुलिका—बड़गावा, राजगिरि से ७ मील उत्तर।
२२३ कुलिन्ददेश—गढवाल तथा सहारनपुर के पास का देश।
२२४ कुल्यणक क्षेत्र — सोमनाथ पटन, काठियावाड़ में।
२२५ कुशपुर या
२२६ कुशभवनपुर — सुलतानपुर, अवध में।
२२७ कुशस्थल—कन्नौज, जिला फर्रुखाबाद में।
२२८ कुशस्थलि—द्वारिका
२२६ कुशागारपुर,
२३० कुशाग्र नगर या
२३१ कुशाग्रपुर—राजगिरि, बिहार में।
२३२ कुशावती— १ द्वारिका. २ सुलतानपुर (अवध) ३- डभोई। भड़ोंच से ३८ मील उत्तर पूर्व ४- कसूर, लाहोर से ३२ मील-दक्षिण पूर्व।
२३३ कुशीग्रामिका,
२३४ कुशीनगर,
२३५ कुशी नगरी या
२३६ कुशी नारा—कसिया, गोरख पुर से ३७ मील पूर्व।
२३७ कुसुमपुर—पटना।
२३८ कुहु—काबुल नदी।
२३६ कूर्मवन—कुमायू गढवाल।
२४० कूर्मक्षेत्र—एक तीर्थ स्थान चिकाकोलसे ८ मील पूर्व, जिला गजाम मद्रास में।
२४१ कूर्माचल —कुमायू गढ़वाल।
२४२ कृतमालानदी—वैगानदी, मदुरा के पास मद्रास में।
२४३ कृतवती—साबरमती नदी, गुजरात में।
२४४ कृष्णगिरि—काराकोरम पर्वत, हिन्दूकुश पर्वत के पास।

२४५ कृष्ण गंगा—यमुना नदी।
२४६ केकय—व्यास तथा सतलज के मध्य का प्रदेश।
२४७ केतुमाल वर्ष—तुर्किस्तान।
२४८ केदाराचल केदारनाथ।
२४९ केरल—मलाबार, त्रावणकोर और कनारा का भूभाग।
२५० केशीतीर्थ—मथुरा में एक तीर्थ।
२५१ कैलाश—कैलाश पर्वत, तिब्बत के दक्षिण पश्चिम में।
२५२ काकामुख क्षेत्र—वाराह क्षेत्र, नैपाल राज्य में धवलगिरि शिखर पर।
२५३ कोटि तीर्थ—इस नाम के तीर्थ रामेश्वर, हरद्वार, उज्जैनी, मथुरा व कुरुक्षेत्र में हैं।
२५४ कोणादित्य वा
२५५ कोणार्क—कोनारक, उड़ीसा में।
२५६ कोयल—अलीगढ़।
२५७ कोल गिरि—कोन्गु, मद्रास प्रान्त में।
२५८ कोलाहलपर्वत—ब्रह्मयोनि पहाड़, गया जिला में।
२५९ कोलाहलपुर—कोलार, मैसूर में।
२६० कोल्ली — वागहक्षेत्र, जिला बस्ती में।
२६१ कोशल (उत्तर)—अवध।
कोशल (दक्षिण)—गोंडवाना, मध्य प्रान्त में।
२६२ कोशलपुरी—अयोध्या।
२६३ कौंडिन्यपुर—१—देवल वाड़ा, मध्य प्रान्त में २ कुंडपुर,—अमरावती से ४ मील पूर्व ३—कौण्डवीर, वरार में।
२६४ कौनिंद देश—गढ़वाल तथा सहारन पुर केआस पास का देश।
२६५ कौशाम्बी वा
२६६ कौशाम्बी नगर—कोसम, इलाहाबाद जिला में।
२६७ कौशिकी कच्छ—पुर्निया का जिला।
२६८ क्रोड़देश—कुर्ग।
२६९ क्रौंचपर्वत—केलाश पर्वत का वह स्थान जिस पर मान सरोवर स्थित है, दक्षिण पश्चिम तिब्बत में।

## ख

२७० खज्जुरपुर—खजुराहा, बुंदेलखण्ड में।
२७१ खड्गतीर्थ—अहमदाबाद में एक तीर्थ स्थान।
२७२ खदिरवन—मथुरा में एक वन।
२७३ खरकी—औरंगाबाद, हैदराबाद में।
२७४ खलातिकपर्वत—बराबरपहाड़ी, गया जिला में।
२७५ खाण्डव प्रस्थ— इन्द्रपाथ, पुरानी दिल्ली।
२७६ खाण्डव वन—दिल्ली के आस पास का देश।

२७७ गीर ग्राम—खीर गाँव, बर्दवान से २० मील उत्तर।

२७८ खेटक—कैर, अहमदाबाद से २० मील दक्षिण।

## ग

२७९ गंगाद्वार—हरद्वार।

२८० गजेन्द्रमोक्ष—१—सोनपुर, गंगा और गन्डक के संगम पर, बिहार में :
२—मद्रास में तिनावली से २० मील पश्चिम, ताम्रपर्णी के किनारे एक तीर्थ।

२८१ गन्धमादन पर्वत—कैलास पर्वत की एक शाखा, बद्रिकाश्रम इसी पर है।

२८२ गन्धर्वदेश—कन्धार।

२८३ गन्धवती—शिप्रा नदी की एक शाखा।

२८४ गम्भीरा—शिप्रा नदी की एक शाखा।

२८५ गया तीर्थ—१—रामेश्वर में एक तीर्थ २—गया :

२८६ गयानाभि—जाजपुर, उड़ीसा में।

२८८ गर्गाश्रम—१—गगांसों, जिला रायबरेली में :
२—लोधमूसा पहाड़ी, कुमायूँ में।

२८९ गान्धार—१—कलिंग और मगध के मध्य का देश:
२—बंगाल का एक भाग।

२९० गालव आश्रम—१—गलता, जयपुर से ३ मील: २—गालव आश्रम, चित्रकूट पर।

२९१ गिरिकर्णिका — साबरमती नदी, गुजरात में।

२९२ गिरि नगर — गिरनार, काठियावाड़ में।

२९३ गिरियक—राजगिरि से ४½ मील पूर्व एक पहाड़ी।

२९४ गिरिव्रज वा

२९५ गिरि व्रजपुर—राज गिरि।

२९६ गिरिराज — गोवर्धन, मथुरा में।

२९७ गुण्डिच क्षेत्र — जनकपुर, जगन्नाथ पुरी में।

२९८ गुप्तकाशी — १-ऊखीमठ वा शोणितपुर, कुमायूँ में :
२-भुवनेश्वर, उड़ीसा में।

२९९ गुरुग्राम—गुड़गाँव, पंजाब में।

३०० गुरुपादगिरि—गुरुपा पहाड़ी, गया में।

३०१ गुह्य क्षेत्र—गंगासागर, बंगाल में।

३०२ गृद्धकूट पर्वत वा

३०३ गृद्ध [illegible] — गिरियक पहाड़ी, राजगिरि से ढाई मील दक्षिण पूर्व।

३०४ गोकर्ण—गोंदिया, बम्बई में।

३०५ गोकर्ण तीर्थ—माला गोकर्णनाथ।

३०६ गोकुल—गोकुल, मथुरा में।

२०७ गोपगिरि—ग्वालियर।

२०८ गोपाद्रि—१ ग्वालियर २ शङ्कराचार्य पर्वत, श्रीनगर के पास (कश्मीर)।

२०९ गोरक्षाश्रमतीर्थ - त्रियुगी नारायण।

२१० गोवर्धन — गोवर्धन पहाड़ी, मथुरा के पास।

२११ गोश्रृङ्ग पर्वत था

२१२ गोस्थल—

१—नरवर के पास मध्यप्रान्त में एक पहाड़ी

२—पूर्वी तुर्किस्तान में कोहमरी। यह तीर्थस्थान था :

३—काठमाडू के पास नैपाल म गोपुच्छ पहाड़।

२१३ *गौड़ (उत्तर)*—कोशल, जिसकी राजधानी श्रावस्ती (सहेटमहेट) थी।

गौड़ (दक्षिण)--कावेरी नदी का तट।

गौड़ (पूर्व)—बंगाल, जिसकी राजधानी लखनौता था।

गोड़ (पश्चिम) — गोन्डवाना (मध्य प्रान्त)।

२१४ गौडा—गोंडा जिला, अवध म।

२१५ गौतम आश्रम था

२१६ गौतम क्षेत्र—१—अहिल्यार ।, जनकपुर से २४ मील दक्षिण पश्चिम।

२—गोदना, रेवलगंज के पास, छपरा जिले में।

३—अहरौली, बक्सर के पास

४—त्रयम्बक, नासिक से १८ मील।

२१७ गौतमा—गोदावरी नदी।

२१८ गौतमीतीर्थ—१—अहिल्यारी, जनकपुर से २४ मील दक्षिण पश्चिम २—गोदना, रेवलगंज के पास छपरा जिले में ३—अहरौला, बक्सर के पास ४—त्रयम्बक, नासिक से १८ मील।

२१९ गौरी—पंजकोरा नदी, काबुल नदी का सहायक।

२२० *गौरीतीर्थ*—त्रियुगी नारायण, गढ़वाल में एक तीर्थ स्थान।

२२१ गौरीशङ्कर—माउन्ट एवरेस्ट, नैपाल में।

## घ

२२२ *घर्घरा*—घाघरा नदी।

२२३ घारापुरी — एलीफेन्टा द्वीप, बम्बई से ६ मील।

२२४ घृष्णेश्वर — घुसमेश्वर, हैदराबाद म।

## च

२२५ चक्रतीर्थ—निम्नलिखित तीर्थों के अन्तरगत एक तीर्थ—१—कुरुक्षेत्र,२ प्रभास,३—त्रयम्बक, ४—द्वारा, ५—रामेश्वर।

२२६ चक्रनगर—किलकूर, वर्धा से १७ मील उत्तर पूर्व, मध्य प्रान्त में।

३२७ चक्रपुर—आरा, बिहार में।
३२८ चक्राकनगर—किलमर, वर्धा से १७ मील उत्तर-पूर्व।
३२९ चट्टल—चटगांव।
३३० चण्डपुर — चयेनपुर, जिला शाहाबाद में।
३३१ चतुष्पीठ पर्वत—असिया पर्वत श्रेणी, कटक के पास।
३३२ चन्दना—१ साबरमती नदी, गुजरात में : २ चन्दना, बंगाल में।
३३३ चन्देलगढ़—चुनार।
३३४ चन्द्रपुर—चांदा, मध्य प्रान्त में।
३३५ चन्द्रपुरी—सहेटमहेट, जिला बहराइच में।
३३६ चन्द्रभागा नदी—१—चिनाब: २—भीमा, कावेरी की सहायक नदी।
३३७ चन्द्रादित्यपुर —चमडोर, नासिक जिला में।
३३८ चन्द्रावती—चन्देरी, ललितपुर के पास।
३३९ चन्द्रिकापुरी या
३४० चन्द्रीपुर—सहेट महेट, बहराइच जिला में।
३४१ चन्द्वार—फीरोजाबाद, मथुरा प्रान्त में।
३४२ चम्पकारण्य—चपारन, बिहार में।
३४३ चम्पा—१-चम्पा नगर, भागलपुर से ४ मील : २—भियाम : ३—कम्बोडिया : ४—अंग और मगध के बीच बहने वाली एक नदी।
३४४ चम्पानगर — १—चांदनिया, बोगरा से १२ मील उत्तर : २—चम्पानगर, भागलपुर से ४ मील पश्चिम।
३४५ चम्पापुर या
३४६ चम्पापुरी—चम्पानगर, भागलपुर से ४ मील पश्चिम।
३४७ चम्पामती—ब्रह्मपुत्रा की एक सहायक नदी।
३४८ चम्पामालिनी — चम्पानगर, भागलपुर से ४ मील पश्चिम।
३४९ चम्पावती— चंपौता, कुमायूँ में।
३५० चरणगढ़,
३५१ चरणाद्रि या
३५२ चरणाद्रि गढ़—चुनार, जिला मिर्ज़ापुर में।
३५३ चर्मण्वती—चम्बल नदी।
३५४ चाया — पोरबन्दर, गुजरात में।
३५५ चिताभूमि—वैद्यनाथ, उड़ीसा में।
३५६ चिदम्बर क्षेत्र — चिदम्बरम्, मद्रास में।
३५७ चित्रकूट—कामतानाथ गिरि, चित्रकूट में।

३५८ चित्रागदपुर—सिरपुर, महानदी पर मध्य प्रान्त में।
३५६ चेतीय गिरि—चित्रकूट।
३६० चेदि (राज्य)—बुन्देलखण्ड व मध्यप्रान्त का भाग।
३६१ चेदि नगरी—तेवर, जबलपुर के पास।
३६२ चेरा — मलाबार, ट्रावणकोर और कोचिन का देश।
३६३ चोल—कारोमण्डल तट।
३६४ च्यवन आश्रम—१—चौसा, जिला शाहाबाद में।
२—पूर्णा नदी के तटपर, सतपुडा पहाड़ी पर एक स्थान।
३—धोसी, जयपुर राज्य में।
४—चिराँद, छपरा से ६ मील पूर्व।

## ज

३६५ जजाहुति—बुन्देलखण्ड।
३६६ जटातीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।
३६७ जनस्थान—औरंगाबाद तथा उसके समीप का प्रदेश।
३६८ जमदग्नि आश्रम — १—जमनिया, गाज़ीपुर जिला में।
२—खैराडीह, गाज़ीपुर जिले में।
३—महास्थान गढ, बगाल में
४—महेश्वर के पास नर्मदा तट पर एक स्थान।
३६६ जमदग्निया—जमनिया, जिला गाज़ीपुर में।
३७० जलनील—शारावकी।
३७१ जह्नु आश्रम या
३७२ जह्नु गृह—सुलतानगंज, भागलपुर से पश्चिम की ओर।
३७३ जाबालिपुर—जबलपुर।
३७४ जाह्नवी—गंगा नदी।
३७५ जीज भुक्ति—बुन्देलखण्ड।
३७६ जीर्ण नगर—जुनेर, पूना जिला में।
३७७ जेतवन विहार — जोगिनी भरिया टीला, सहेट महेट में, बलरामपुर से ६ मील।
३७८ जेतुत्तर—नागरी, चित्तौड से ११ मील उत्तर।
३७६ ज्योतिधाम—जोशीमठ।
३८० ज्योतिरथा—जोहिला, सोन की एक शाखा।

## झ

३८१ झारखण्ड—छोटा नागपुर।

## ट

३८२ टक देश—पंजाब का वह भाग जो व्यास और सिंधु नदी के बीच में है।

## ड

३८३ डाकिनी — भीमाशंकर नगर, पूना से उत्तर पश्चिम भीमा नदी के किनारे।

ढ

३८४ ढुण्ढ प्रयाग — शिवप्रयाग, गढ़वाल में।

त

३८५ तगर—तेर, हैदराबाद के जिला द्रुग में।

३८६ तण्डीर देश—भूतपुरी, मद्रास प्रान्त के चिङ्गिलपट ज़िला में।

३८७ तपनि—ताप्ती नदी।

३८८ तपोगिरि—रामटेक, नागपुर के पास।

३८९ तपोवन—नासिक के पास एक तीर्थ।

३९० तमसा नदी—टोंस नदी।

३९१ तलकाड़ — तलकाड़, कावेरी के तट पर मैसूर में।

३९२ तक्षशिला — शाहढेरी, जिला रावलपिण्डी में।

३९३ ताड़का वन—बक्सर के पास एक स्थान।

३९४ तापसाश्रम—पंढरपुर, जिला शोलापुर, बम्बई में।

३९५ तापी—ताप्ती नदी।

३९६ तामसवन—व्यास और सतलज नदी के संगम पर का सुलतानपुर, पंजाब में।

३९७ ताम्रपर्णी—१—लंका: २—मद्रास के तिनावली जिला में ताँबरवली नदी।

३९८ ताम्रलिप्ति—तमलुक, जिला मिदनापुर बंगाल में।

३९९ तालवननपुर—तलकाड़, कावेरी के तट पर, मैसूर में।

४०० तिलप्रस्थ—तिलपत, दिल्ली की कुतुबमीनार से १० मील दक्षिण पूर्व।

४०१ तीर भुक्ति—तिरहुत।

४०२ तीर्थ पुरी—कैलाश के पश्चिम में एक स्थान।

४०३ तीर्थराज—प्रयाग या इलाहाबाद।

४०४ तुखार—१—बलख और बदख़्शाँ: २—यूहेशी।

४०५ तुङ्गनाथ—ऊखीमठ के दक्षिण, कुमायूँ में एक तीर्थ स्थान।

४०६ तुंगवेणी—तुंगभद्रा नदी।

४०७ तुरुष्क – पूर्वी तुर्किस्तान।

४०८ तुलजाभवानी—तुलजापुर, खन्दवा के पास।

४०९ तैलिङ्गना या,

४१० तैलङ्ग —गोदावरी और कृष्णा के बीच का देश।

४११ तैलपर्णी—पेन्नेरनदी, मद्रास में।

४१२ तोसली—धौली, उड़ीसा में।

द

४१३ दण्डकारण्य—महाराष्ट्र व नागपुर। जनस्थान इसका एक भाग था।

४१४ दन्तपुर या

४१५ दन्तुर—जगन्नाथपुरी

४१६ दन्तुरा नदी—वैतरणी, वेसीन के उत्तर में।

४१७ दर्भवती—दभोई, बड़ोदा से २० मील दक्षिण पूर्व।

४१८ दर्शनपुर—दिस, बनास नदी के किनारे गुजरात में।

४१९ दशान या

४२० दशार्ण—मालवा का पूर्वी भाग व भूपाल पश्चिमी दशार्ण थे, और मध्यप्रान्त का छत्तीस गढ पूर्वी दशार्ण था।

४२१ दक्षिण कोशल — गाडवाना, मध्य प्रान्त में।

४२२ दक्षिण गिरि—१—साँची और उसके आस पास का प्रदेश : २—भोपाल राज्य।

४२३ दक्षिण गोकर्ण नाथ—वैद्यनाथ, उड़ीसा में।

४२४ दक्षिण गंगा—गोदावरी नदी।

४२५ दक्षिण मथुरा—मदुरा, मद्रास में।

४२६ दक्षिण वनखण्ड—वैद्यनाथ, उड़ीसा में।

४२७ दक्षिण सिंधु—चम्बल का सहायक नदी।

४२८ दारुवन या

४२९ दारुकावन—औंढ़, हैदराबाद में।

४३० दालभ्य आश्रम—दलमऊ, जिला रायबरेली में।

४३१ डाहल—बुन्देलखण्ड और मध्य प्रान्त का एक भाग जो चेदि राज्य था।

४३२ दीपवती—दिवर टापू, गोवा के उत्तर में।

४३३ दीर्घपुर—डिग, भरतपुर में।

४३४ दुर्वासाश्रम—१—खली पर्वत पर जिला भागलपुर में : २—दुवाउर की पहाड़ी पर गया जिले में . ३— गोलगढ़, काठियावाड़ में।

४३५ दूधगंगा—दौली नदी, गढ वाल में।

४३६ दृषद्वती—घग्घर नदी जो अम्बाला और सरहिंद के बीच बहती थी।

४३७ देवगिरि या

४३८ देव पर्वत—१—दौलताबाद, हैदराबाद में . २—अरावली पर्वत का एक भाग · ३—देवगर पहाड़ी, मालवा में।

४३९ देवराष्ट्र—महाराष्ट्र।

४४० देवीका—१—सरयू नदी, अवध में २—पंजाब की एक नदी।

४४१ देवी कोट—१—शोणितपुर, कुमायूँ में २—देवी कोट, कावेरी तट पर मद्रास में।

४४२ देवीपाटन—तुलसीपुर, बलराम पुर से उत्तर, गोंडा जिला में।

४४३ द्राविड देश —मैसूर से कन्या कुमारी तक का देश।

४४४ द्रोणाचल—दूनागिरि पर्वत, कुमायूँ में।

४४५ द्वारावती—१—द्वारिका : २—स्याम देश : ३—डोरसमुद्र, मैसूर में।

४४६ द्वारसमुद्र—हुलावीड, जो बारहवीं शताब्दी में मैसूर की राजधानी था।

४४७ द्वारिकेश्वरी—दलकिसोर नदी, बंगाल में।

४४८ द्वितवर कूट—सम्मेद शिखर।

४४९ द्वैतवन—देवबन्द, जिला सहारनपुर में।

४५० द्वैपायनहृद—थानेश्वर के समीप उत्तरी भाग में एक झील।

## ध

४५१ धनकटक—धरणीकोट, कृष्णा नदी के तट पर जिला गुन्टुर में।

४५२ धनपुर—जौहरगंज, जिला गाजीपुर में।

४५३ धनुतीर्थ या

४५४ धनुष्कोटी तीर्थ—रामेश्वर से १० मील एक तीर्थ।

४५५ धर्मरत्न — १—सहेट महेट, बलरामपुर से ६ मील : २—कालीस्ट।

४५६ धर्मपुर — धरमपुर, नासिक के उत्तर में।

४५७ धर्मक्षेत्र—कुरुक्षेत्र।

४५८ धर्मारण्य—कण्व आश्रम, कोटा से ४ मील दक्षिण पूर्व राजपूताना में।

४५९ धवलकूट या

४६० धवलगिरि — धौली पहाड़ी, उड़ीसा में।

४६१ धारानगर या

४६२ धारापुर—धार या धाड़, मालवा में।

४६३ धुंधरा—आमेर, जयपुर में।

४६४ धूतपाप—धोपाप, सुलतानपुर से १८ मील दक्षिण पूर्व।

४६५ ध्रुवघाट या

४६६ ध्रुवतीर्थ—मथुरा में एक तीर्थ।

## न

४६७ नगर कोट— काँगड़ा या कोट काँगड़ा।

४६८ नन्दनस्थान—पुष्कर में एक स्थान।

४६९ नन्दगिरि — नन्द दुर्ग पर्वत, मैसूर में।

४७० नरनारायणाश्रम—बद्रीनाथ।

४७१ नलपुर—नरवर, ग्वालियर से ६० मील दक्षिण पश्चिम।

४७२ नलिनी—ब्रह्मपुत्रा नदी।

४७३ नवऊखल—१—रेणुक, आगरा के समीप : २—सोरों : ३— काशी : ४—कड़ा (इलाहाबाद के पास) : ५—गटेश्वर : ६—कालिंजर : ७ उज्जैन : ८ काली।

४७४ नगरहार—नन्धार।

४७५ नव देवकुल—नेवाल, उन्नाव से ३१ मील दक्षिण पश्चिम।

४७६ नवद्वीप—नदिया, बंगाल में।

४७७ नवराष्ट्र—नौसरी, भड़ौच जिला में।

४७८ नागतीर्थ—पुष्कर में एक तीर्थ।

४७९ नागपर्वत—पुष्कर में एक तीर्थ।

४८० नागपुर — हस्तिनापुर, मेरठ जिला में।

४८१ नाटक—दक्षिणी गुजरात व खानदेश का वह भाग जो माही और ताप्ती नदियों के बीच है।

४८२ नारायणक्षेत्र — त्रियुगी नारायण, गढ़वाल में।

४८३ नारायणी—गण्डकी नदी।

४८४ नालन्द—नालन्दा, बिहार में।

४८५ निगमबोध तीर्थ वा

४८६ निगमबोध घाट—पुरानी दिल्ली में एक तीर्थ।

४८७ निचुलपुर—त्रिचनापल्ली, मद्रास में।

४८८ निषध—नरवर, ग्वालियर से ४० मील दक्षिण पश्चिम, और नरवर के पास का प्रदेश।

४८९ निषाध भूमि— प्रथम मारवाड़, और बाद में विंध्य और सतपुडा के पास का भूभाग जब निषाध (भील) मारवाड़ से नीचे हटा दिये गये थे।

४९० नीलकंठ तीर्थ — अहमदाबाद में एक तीर्थ।

४९१ नीलगिरि,

४९२ नील पर्वत वा

४९३ नीलाचल— १— जगन्नाथपुरी में एक ऊंची भूमि इसी पर जगन्नाथ जी का मन्दिर है: २— गौहाटी की एक पहाड़ी जिस पर कामाख्या देवी का मन्दिर है: ३—हरद्वार की एक पहाड़ी।

४९४ नैमिषकुञ्ज वा

४९५ नैमिषारण्य—नीमसार, सीतापुर जिला में।

## प

४९६ पञ्चतीर्थ—हरद्वार के पश्चिम में पाँच सरोवरों का एक समूह।

४९७ पञ्चनद—पंजाब।

४९८ पञ्चनदतीर्थ—हरद्वार के पश्चिम में ५ सरोवरों का एक समूह।

४९९ पञ्चवटी—नासिक।

५०० पद्मपुर —१ नरवर, ग्वालियर राज्य में: २ विजयनगर, नरवर से २५ मील दक्षिण: ३-अमरावती के पास चन्द्रपुर।

५०१ पद्मक्षेत्र—कोनारक, पुरी से २४ मील उत्तर पश्चिम—उड़ीसा में।

५०२ पद्मावती—१ नरवर, ग्वालियर में: २ विजयनगर, नरवर से २५ मील दक्षिण: ३ चन्द्रपुर, अमरावती के पास।

५०३ पम्पा—तुंगभद्रा की सहायक नदी।

५०४ पम्पापुर—विंध्याचल, मिर्जापुर से ५ मील पश्चिम।

५०५ पम्पासर या

५०६ पम्पाक्षेत्र—अनागंदी, तुंगभद्रा के दक्षिण में विलारी जिले में। वहाँ ऋष्यमूक पर्वत और पंपासर सरोवर हैं।

५०७ पयस्विनी नदी—पापनाशिनी, त्रावणकोर में।

५०८ पयोष्णी नदी—१-पैन गंगा, मध्यप्रदेश में : २-पूर्णा, त्रावणकोर में : ३ पूर्णा, तापी की सहायक : ४-तापी।

५०९ परलोक—त्रावणकोर।

५१० परशुरामपुर—परशुरामपुर, अवध के प्रतापगढ़ जिला में।

५११ परशुरामक्षेत्र—कोंकण : सूरत और गोआ के बीच का प्रदेश।

५१२ परुष्णी—रावी नदी।

५१३ पर्णाशा—बनास नदी, राजपूताने में।

५१४ पलक्क देश—नेलोर जिला, मद्रास प्रान्त में।

५१५ पश्चिमोदधि—अरबसागर।

५१६ पाञ्चाल—रुहेल खण्ड और गमाव का प्रदेश। आरम्भ में पाञ्चाल देश हिमालय से चम्बल नदी तक फैला था।

५१७ पाटलिपुत्र—पटना।

५१८ पाणिप्रस्थ—पानीपत, पंजाब में।

५१९ पाण्ड्य राज्य—तिन्नवली और मदुरा के जिले।

५२० पाण्डुपुर—पण्ढरपुर, शोलापुर जिले में।

५२१ पाताल—१-तत्ता, सिंध में। २—हैदराबाद ( सिंध ) यहाँ नागोंका राज्य था।

५२२ पातालपुर—१-बलख : २—अक्षु बलख के उत्तर पूर्व।

५२३ पातालवती नदी—चम्बल नदी की एक शाखा।

५२४ पानारसिंह—मंगलगिरि, मद्रास प्रान्त के कृष्णा जिला में।

५२५ पापनाश या

५२६ पापविनाशन—कर्नाटक के चित्रलदुर्ग जिले में एक तीर्थ।

५२७ पापा—बिहार से ७ मील दक्षिण पूर्व एक गाँव, बिहार प्रान्त में।

५२८ पारद—ईरान।

५२९ पारलिपुर—देवगढ़, बंगाल में।

५३० पारसमुद्र—लंका।

५३१ पारसिक या

५३२ पारस्य—ईरान।

५३३ पालिबोथा—पटना।

५३४ पावनी—घग्घर या सरस्वती नदी, कुरुक्षेत्र में।

५३५ पावा या

५३६ पावापुर—पडरौना, कसिया से १२ मील उत्तर पूर्व, देवरिया जिला में।

५३७ पावापुरी—बिहार से ७ मील दक्षिण पूर्व एक गाँव।

५३८ पिण्डारक तीर्थ—गोलगढ़ के समीप, द्वारका से १६ मील पूर्व एक तीर्थ।
५३६ पितृ तीर्थ—गया।
५४० पिठपुर — पीठापुर, गोदावरी जिले में।
५४१ पुण्डरीय — शत्रुंजय पहाड़ी, गुजरात में।
५४२ पुण्ड्रदेश — गौड, पश्चिमी बंगाल।
५४३ पुण्ड्रवर्धन—पाण्डुआ, माल्दा से ६ मील उत्तर।
५४४ पुनर—पूना।
५४५ पुराली—नानगण कोर।
५४६ पुरुषपुर—पेशावर।
५४७ पुरुषोत्तम पुरी वा
५४८ पुरुषोत्तम क्षेत्र—जगन्नाथ पुरी।
५४६ पुलग्राम—रामेश्वर में एक तीर्थ।
५५० पुष्कर तीर्थ वा
५५१ पुष्कर समिति—पुष्कर, अजमेर से ६ मील।
५५२ पुष्करावती वा
५५३ पुष्कलावती—चारसद्दा, गांधार की प्राचीन राजधानी, पेशावर से १७ मील उत्तर-पश्चिम
५५४ पुष्पपुर—पटना।
५५५ पुष्पवती—बनारस।
५५६ पुष्पवती नदी—पाम्बाई नदी, नानगणकोर में।
५५७ पूर्णतीर्थ—हृषीकेश, सहारनपुर जिला में।
५५८ पूर्ण दर्व—कालिंजर, बुंदेलखण्ड में।
५५९ पूर्व गंगा—नर्मदा नदी।
५६० पृथूदक—पेहोवा, कर्नाल जिले में।
५६१ पृष्ठ चंपा—बिहार।
५६२ पौंड्र देश—गौड़ : पश्चिमी बंगाल।
५६३ प्रजापतीक्षेत्र—इलाहाबाद में झूसी से लेकर वासुकी ह्रद तक की भूमि।
५६४ प्रतिष्ठान—बिठूर, कानपुर के पास।
५६५ प्रतिष्ठान दुर्ग वा
५६६ प्रतिष्ठानपुर—झूसी, इलाहाबाद के समीप।
५६७ प्रतिष्ठानपुर दक्षिण—पैठन, हैदराबाद में।
५६८ प्रद्युम्न नगर—पाण्डुआ, हुगली जिला में।
५६६ प्रभावती—काल्पी, जालौन जिला में।
५७० प्रभास—१—सोमनाथ, कठियावाड़ में. २—पभोसा, इलाहाबाद से ३२ मील दक्षिण पश्चिम।
५७१ प्रभासकूट—सम्मेद शिखर।
५७२ प्रमाद वन—चित्रकूट में एक स्थान।
५७३ प्रयाग—इलाहाबाद।

५७४ प्रलम्ब—मदावर, बिजनौर से ८ मील उत्तर।

५७५ प्रवरपुर—श्रीनगर ( कश्मीर )।

५७६ प्रागजातिपपुर—गौहाटी, असाम में।

५७७ प्रागदेश—आसाम।

५७८ प्राची सरस्वती नदी — १-सरस्वती, कुरुक्षेत्र में २-पूर्ववाहिनी गंगा, बिठूर में।

५७९ पौण्डरीक—पढरपुर, शोलापुर जिले में।

५७० पौरव—झेलम और गुजरात के जिले।

फ

५८१ फलकीवन—कुरुक्षेत्र में थाने सर से १७ मील दक्षिण पूर्व एक स्थान जहाँ शुक तीर्थ है।

५८२ फल्गु—गया के पास नीलाँजना और मोहना की सम्मिलित धार।

५८३ फुल्ल ग्राम—चटगाँव, पाकिस्तानी बंगाल में।

५८४ फेनगिरि—सिंधु नदी के मुहाने के पास एक स्थान।

५८५ फेना—गोदावरी की सहायक नदी।

ब

५८६ बकुलवन — मथुरा में एक स्थान।

५८७ बक्रेश्वर—वक्रनाथ, बीरभूमि जिले में।

५८८ बक्रेश्वरी—बाका नदी, बर्दवान जिले में।

५८९ बङ्ग—बंगाल के चार भाग थे—

१—वरेन्द्र – महानदी, ब्रह्मपुत्र, गंगा और कुचबिहार के बीचः

२—बंग — ब्रह्मपुत्र, गंगा, मेगना और खासिया पर्वत के बीच :

३—र ढ़—गंगा, जालिंध, बराकर औरराजमहल पर्वत के बीच :

४—बागड़ी गंगा और ब्रह्मपुत्र की जमा की हुई मिट्टी की भूमि से समुद्र तक।

५९० बड़ता तीर्थ वा—

५९१ बड़वा—काँगड़ा से २२ मील दक्षिण एक स्थान।

५९२ बचमती—बाग्मती नदी, नैपाल में।

५९३ बद्रिकाश्रम—बद्रीनाथ।

५९४ बनवासी—बनौसी, उत्तरी कनाडा में।

५९५ बनायु—अरब।

५९६ बन्जुला—मंजेरा, गोदावरी की सहायक नदी।

५९७ बन्नू—बन्नू, उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त पाकिस्तान में।

५९८ बल्लपुरी - विक्रमपुर, ढ़ाका जिले में।

५९९ बस्या—बसीन, बम्बई प्रान्त में।

६०० बाङ्गरदेश—बीकानेर व भावलपुर राज्य।

६०१ बाणपुर—१-शोणितपुर,कुमायूँ

में: २-बियाना, जयपुर में: ३-महाबलीपुर, कारोमण्डल कोस्ट में।
६०२ बामरी—बेबोलिन।
६०३ बालु वाहिनी—बागिन नदी, बुन्देलखण्ड में।
६०४ बालोक्ष—बिलोचिस्तान।
६०५ बावेरू—बेबोलिन।
६०६ बाहिष्मती—बिठूर, कानपुर के पास।
६०७ बाहीक—व्यास और सतलज के बीच का प्रदेश-कैकय के उत्तर में।
६०८ बाहुदा—धुमेला, बुद्ध राती (राप्ती की पुरानी धारा)।
६०६ बिभावरी—बेबोलिन।
६१० बिन्दुसर—१ रुद्र हिमालय पर गंगोत्री से दो मील दक्षिण एक सरोवर:
२-अहमदाबाद के उत्तर पश्चिम सिद्धपुर में एक सरोवर:
३-भुवनेश्वर (उड़ीसा) में एक सरोवर।
६११ बुद्धकाशी—सारनाथ, बनारस के पास।
६१२ वैजयन्ती—बनवासी, उत्तर कनाड़ (कनारा) में।
६१३ बोध—इन्द्रप्रस्थ (इन्द्रपाथ) के आसपास का प्रदेश।
६१४ ब्रज मण्डल—मथुरा के आस पास की पवित्र भूमि।
६१५ ब्रह्म—बर्मादेश।
६१६ ब्रह्म कुण्ड—१-वह कुन्ड जिस से ब्रह्मपुत्रा नदी निकली है: २ रामेश्वर में एक कुन्ड।
६१७ब्रह्मगिरि—त्र्यम्बक, नासिक से २० मील।
६१८ ब्रह्मतीर्थ—१-पुष्कर मे एक तीर्थ: २ देव प्रयाग में एक तीर्थ स्थान।
६१६ ब्रह्म देश—बर्मा देश।
६२० ब्रह्मनद—ब्रह्मपुत्रा नदी।
६२१ ब्रह्मपुर—गढ़वाल और कुमायूँ।
६२२ ब्रह्मपुरी—मान्धाता, इन्दौर से ४० मील दक्षिण।
६२३ ब्रह्मर्षि देश—ब्रह्मावर्त और यमुना के बीच का देश।
६२४ ब्रह्मसरतीर्थ—१-गया में एक तीर्थ: २—पुष्कर में एक तीर्थ स्थान।
६२५ ब्रह्मावर्त—सरस्वती और दृषद्वती के बीच का भूभाग। यहीं आर्य्य पहले बसे थे।
६२६ ब्रह्मावर्त तीर्थ—बिठूर, कानपुर के पास।
६२७ ब्राह्मणी—बह्मनी नदी, उड़ीसा में।

## भ

६२८ भक्तपुर—भाटगाँव, नैपाल में।
६२६ भद्दिय वा—
६३० भद्दिय नगर—भदरिया, भागल-

पुर से ८ मील दक्षिण।

६३१ भद्रवन—मथुरा में एक वन।

६३२ भद्रा—यारकन्द नदी।

६३३ भद्रावती—भटल, चांदा जिला मध्यप्रान्त में।

६३४ भद्रिकापुरी—भदरिया, भागलपुर से ८ मील दक्षिण।

६३५ भरुकच्छ—भड़ौंच।

६३६ भलानसः—बोलन दर्रा।

६३७ भवानी नगर — तुलजापुर, खड्या से ४ मील।

६३८ भविष्य बद्री—गढ़वाल में एक स्थान।

६३९ भागप्रस्थ—बागपत, मेरठ से ३० मील पश्चिम।

६४० भागानगर—हैदराबाद (दक्षिण)।

६४१ भाण्डीर वन—मथुरा में एक वन।

६४२ भारतवर्ष—हिन्दोस्तान।

६४३ भार्गव—पश्चिमी आसाम। भरों का देश।

६४४ भार्गवी—पुरी के पास उड़ीसा में डंटामङ्गा नदी।

६४५ भास्कर क्षेत्र—इलाहाबाद।

६४६ भीमतीर्थ—भीमताल, नैनीताल जिला में।

६४७ भीमनगर—कांगड़ा, पंजाब में।

६४८ भीमपुर — बीदर, हैदराबाद में।

६४९ भीमास्थान—तख्तेभाई, पेशावर से २८ मील उत्तर पूर्व।

६५० भीमरथी—भीमा, कृष्णा की सहायक नदी।

६५१ भुरुकार—बुखारा।

६५२ भृगुआश्रम—१-बलिया: २-भड़ौंच।

६५३ भृगुतीर्थ—भेड़ाघाट, जबलपुर से १२ मील पश्चिम।

६५४ भृगुतुंग—गंडकीनदी के पूर्वी तट पर एक पहाड़ी नैपाल में।

६५५ भृगुपुर या

६५६ भृगुक्षेत्र—भड़ौंच।

६५७ भोजकटपुर—भोजपुर, भिलसा से ६ मील दक्षिण पूर्व।

६५८ भोजपाल—भोपाल।

६५९ भोजपुर—भोजपुर, भिलसा से ६ मील दक्षिण पूर्व।

## म

६६० मगध—दक्षिण विहार जिसकी राजधानी राजगृह थी। कुल विहार भी मगध कहलाने लगा था।

६६१ मङ्गलतीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

६६२ मछेरी—अलवर।

६६३ मञ्जुपाटन—काठमाण्डू के पास एक गाँव।

६६४ मञ्जुला—मंजेरा, गोदावरी की सहायक नदी।

६६५ मणिनागतीर्थ — राजगिरि में एक स्थान।
६६६ मणिपुर — १-मन्नर बन्दर, चिकाकोल के दक्षिण में। २-मनालुर,मदुरा के पास। ३-रतनपुर, मध्यप्रांत में।
६६७ मणिमतिपुरी—एलोरा, हैदराबाद में।
६६८ मण्डपपुर—माण्डू, मालवा में।
६६९ मतिपुर—मदावर, बिजनौर से ८ मील उत्तर।
६७० मत्स्यतीर्थ—तुंगभद्रा के समातिरुपानन्दुद्रम के पश्चिम एक छोटी झील।
६७१ मत्स्य देश—जयपुर, अलवर और भरतपुर का कुछ अंश।
६७२ मद देश—व्यास और सिन्धु नदी के बीच का भूभाग।
६७३ मदन तपोवन — कारों, कुरथाडीह से ८ मील उत्तर, बलिया जिले में।
६७४ मदन बनारस—जमानियाँ,गाजीपुर जिला में।
६७५ मद्र था।
६७६ मद्रदेश—रावी व चिनाव के मध्य का देश।
६७७ मधुपुरी—महोली, मथुरा से ५ मील दक्षिण पश्चिम।
६७८ मधुवन—मथुरा।
६७९ मधुरा था
६८० मथुरानगरी—मथुरा।
६८१ मध्यदेश — सरस्वती, प्रयाग, हिमालय और विंध्याचल के बीच का देश।
६८२ मध्यद्वीप—माझी, छपरा जिला में घघरा नदी पर।
६८३ मध्यपुष्कर—पुष्कर में एक सरोवर।
६८४ मध्यमिका—नागरी, चित्तौड़ के पास।
६८५ मध्यमेश्वर—केदारनाथ से १२ मील दक्षिण एक क्षेत्र।
६८६ मध्येम—माझी, छपरा जिला में घाघरा नदी पर।
६८७ मन्दराचल—बद्रीनाथ।
६८८ मन्दाकिनि—काली नदी, गढ़वाल में।
६८९ मन्दारगिरि—१-भागलपुर की एक पहाड़ी। २—बद्रीनाथ और उसके उत्तर के पर्वत।
६९० मयराष्ट्र—मेरठ।
६९१ मयूर—माया, हरद्वार के पास।
६९२ मरु—राजपूताना।
६९३ मरुधन्य—मारवाड़। प्राचीन काल में कुल राजपूताना भी मरुधन्व कहा जाता था। यह हस्तिनापुर और द्वारिका के रास्ते में था।
६९४ मरुस्थली—राजपूताना।
६९५ मरुद्वृध नदी—१—चन्द्रभागा, झेलम और चिनाव का संयुक्त प्रवाह। २—चिनाव की एक

सहायक नदी।

६६६ मलकूट—चोलराज्य, तंजोर के चारों तरफ।

६६७ मलयगिरि —ट्रावणकोर की पहाड़ियाँ, पश्चिमी घाट का दक्षिणी हिस्सा।

६६८ मलयालम—मलाबार, कोचिन व ट्रावणकोर का देश।

६६६ मल्लदेश—१—मुलतान का जिला : २—हज़ारी बाग और मानभूम के ज़िलों का कुछ भाग: ३—गोरखपुर ज़िले में। अनिरूधवा गाव, कसिया के समीप।

७०० मल्लपर्वत—पारसनाथ की पहाड़ियाँ, छोटा नागपुर में।

७०१ मल्लार देश—मलाबार।

७०२ मही—माहीनदी, चम्बल की एक शाखा।

७०३ महाकाल तीर्थ,

७०४ महाकालपुरी वा

७०५ महाकाल वन—उज्जैन।

७०६ महाकोशल—अमरकंटक, महानदी, वैनगंगा व हरदा नदियों के बीच का देश व मध्य प्रान्त का पूर्वी भाग। इसे दक्षिण कोशल भी कहते थे।

७०७ महाशाल्म — बंगाल का एक भाग।

७०८ महाप्रस्थान यात्रा—केदारनाथ।

७०९ महावन—मथुरा में एक स्थान।

७१० महाम्य तीर्थ —नर्मदा नदी पर, इन्दौर से ४० मील।

७११ महाश्मशान—बनारस।

७१२ महासार—मसार, आरा से ६ मील पश्चिम।

७१३ महात्रिप्र—बद्रीनाथ।

७१४ महिष—खानदेश, औरंगाबाद वा दक्षिणी मालवा के भाग।

७१५ महीधर—महियर, बुंदेल खण्ड में।

७१६ महेन्द्रपर्वत—उड़ीसा से मद्रास तक की पर्वत शृंखला।

७१७ महेश वा

७१८ महेश्वर—चुली महेश्वर, नर्मदा के तटपर इन्दौर से ४० मील दक्षिण, मान्धाता से मिला हुआ।

७१९ महोत्सव नगर—महोबा, बुंदेल खण्ड में।

७२० महोदधि—बंगाल की खाड़ी।

७२१ महोदय—कन्नौज, फर्रुखाबाद ज़िला में।

७२२ माणिकनगर वा

७२३ माणिकपुर — माणिक्याला, रावलपिण्डी ज़िला में।

७२४ मातङ्ग—आसाम का दक्षिण पूर्वी भाग।

७२५ मातङ्ग आश्रम—गयहस्तीस्तूप या मातगी, गया ज़िले में।

७२६ मातृतीर्थ—सिद्धपुर, गुजरात में अहमदाबाद से ६४ मील।

७२७ मानसतीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

७२८ माध्यमिक—नागरी, चित्तौड़ के पास।

७२९ मानसरोवर — कैलाशपर्वत पर एक झील, तिब्बत के दक्षिण पश्चिम।

७३० मायापुरी — माया, हरद्वार के पास।

७३१ मारपुर—गाँडुआ, हुगली जिले में।

७३२ मार्कण्डेय तीर्थ या

७३३ मार्कण्डेय-क्षेत्र—१—गंगा व सरजू के संगम पर एक तीर्थ २—गंगा व गोमती का संगम ३—तिरुकडपुर, तंजोर जिले में।

७३४ मार्तिकावत — मेरता, मारवाड़ में।

७३५ मार्तिकावत देश — जोधपुर, जयपुर और अलवर के कुछ भाग।

७३६ मालव—मालवा।

७३७ माला—छपरा जिला और उसके पास का देश जो गंगा के उत्तर, विदेह के किनारे और मगध के उत्तर पश्चिम में था।

७३८ मालिनी—१ मन्दाकिनी नदी. २ घाघरा नदी की सहायक मालनी नदी। ३ चम्पानगर, भागलपुर से ४ मील पश्चिम।

७३९ माल्यवान—तुंगभद्रा के तट पर अनागन्दी पहाड़ी, मद्रास के [illegible] जिला में।

७४० माहिष्मक—१ नर्मदा के किनारे का भूभाग जिसकी राजधानी माहिष्मती (मान्धाता) थी; २ मैसूर राज्य।

७४१ माहिष्मती—मान्धता व महेश्वर नर्मदा नदी पर, इन्दौर से ४० मील दक्षिण।

७४२ माहिष्मवापुर—मैसूर।

७४३ मिथिला—१ तिरहुत: २ जनकपुर, नैपाल राज्य के दक्षिण भाग में।

७४४ मिनधरकूट—सम्मेद शिखर।

७४५ मित्रवन—१ मुलतान. २ कनारक, उड़ीसा में।

७४६ मीनाक्षी—मदुरा, मद्रास में।

७४७ मुक्तवेणी—हुगली के उत्तर में त्रिवेणी नदी।

७४८ मुद्गल आश्रम,

७४९ मुद्गल गिरि या

७५० मुद्गल:पुरी—मुंगेर, बिहार प्रान्त में।

७५१ मुचकुन्द—धौलपुर से २ मील पश्चिम एक स्थान व गुफा।

७५२ मुरला—नर्मदा नदी।

७५३ मूलतापी—ताप्ती नदी।

७५४ मूलस्थान—मुलतान, पश्चिमी पंजाब में।

७५५ मूषिक—१ सिंध का ऊपरी भाग. २ कोंकण. ३ मलाबार का समुद्री किनारा।

७५६ मेकल — अमरकण्टक, नर्मदा का उद्गमस्थान, बघेलखंड (रीवां) में।
७५७ मेकलानन्दिनी — नर्मदा।
७५८ मैनकप्रभा — शान नदी।
७५९ मैनेय — तामेश्वर, महास्थान डीह से ४ मील दक्षिण पश्चिम, बस्ती जिले में।
७६० मैलेय — मलयगिरि, पश्चिमी घाट पर्वत श्रेणी का कावेरी नदी से दक्षिण का भाग।
७६१ मृगदाव — सारनाथ, बनारस के पास।
७६२ मोहनकूट — सम्मेद शिखर।
७६३ मौलिस्थान — मुलतान, पाकिस्तानी पंजाब में।

## य

७६४ यमुना तीर्थ — रामेश्वर में एक तीर्थ।
७६५ ययाति नगर — कटक, उड़ीसा में।
७६६ ययातिपुर — १ — मकनपुर, कानपुर से ३ मील।
२ — जाजपुर, उड़ीसा में।
७६७ यवद्वीप — जावा द्वीप।
७६८ यवन नगर — जूनागढ़, गुजरात में।
७६९ यवनपुर — जौनपुर, संयुक्त प्रान्त में।
७७० यवनान — यूनान।
७७१ यशोवर्मनपुर — बिहार, बिहार प्रान्त में।
७७२ यष्टीवन — जेठीयन, गया जिले में।
७७३ यज्ञ पर्वत — १ त्रियुगीनारायण (गढ़वाल) में एक पहाड़ी : २-पुष्कर में एक स्थान।
७७४ यज्ञ पुर — जाजपुर, उड़ीसा में।
७७५ यामुन तीर्थ — प्रयाग में एक तीर्थ।
७७६ येसवले — अहमदाबाद।
७७७ योगबद्री — पाण्डुकेश्वर में योगबद्री तीर्थ, गढ़वाल में।

## र

७७८ रघुनाथ पुर — सुलतानपुर, कपूरथला में।
७७९ रङ्गनगर — श्रीरंगम्, मद्रास के त्रिचनापल्ली जिले में।
७८० रथस्था — राप्ती नदी, अवध में।
७८१ रत्नद्वीप — लंका
७८२ रत्न नगर या
७८३ रत्नपुर — रतनपुर, बिलासपुर से १५ मील उत्तर, मध्य प्रान्त में।
७८४ रत्नपुरी — नौराही, फैजाबाद जिला में।
७८५ रमण्य — पेगू तथा इरावदी नदी का डेल्टा।
७८६ रसातल — तुर्किस्तान व पश्चिमी तातार तथा केसपियन समुद्र का उत्तरी भाग। यह हूण देश था।

७८७ रत्नवन्तपुर—पाँडुआ, बंगाल में।

७८८ राजगृह—राजगिरि, पटने के पास बिहार में।

७८९ राजनगर—अहमदाबाद।

७९० राजपुर—राजमहेन्द्री, कलिंग की राजधानी, मद्रास में।

७९१ राढ़—बंगाल में गंगा के पश्चिम का प्रदेश, गंगा, भागीरथी, बराकर और राजमहल पर्वत के बीच।

७९२ रामगढ़ गौड़ा—बलरामपुर, अवध में।

७९३ रामगिरि—१-रामटेक, नागपुर से २४ मील उत्तर : २-गिरिनार, काठियावाड़ में।

७९४ रामग्राम—रामपुर देवरिया, बस्ती जिले में।

७९५ रामतीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

७९६ रामदासपुर—अमृतसर।

७९७ रामह्रद—थानेश्वर के उत्तरी भाग में एक झील।

७९८ राहुग्राम—रैल, हरद्वार से ४ मील।

७९९ रुतविज—बनेरा, जयपुर में।

८०० रुद्रगया—कोल्हापुर में तीर्थ स्थान।

८०१ रुद्रतीर्थ — कश्मीर में एक तीर्थ।

८०२ रुद्रप्रयाग—रुद्रप्रयाग, ऊषामठ से दक्षिण कुमायूँ में।

८०३ रुद्रमहालय—सिद्धपुर, गुजरात में अहमदाबाद से ६४ मील।

८०४ रुद्रक्षेत्र—बनारस और रुद्र-प्रयाग।

८०५ रुद्रालयक्षेत्र—केदारनाथ।

८०६ रेवतीतीर्थ—बनारस में एक तीर्थ।

८०७ रैवतक,

८०८ रैवतक गिरि,

८०९ रैवतगिरि या

८१० रैवत पर्वत—गिरिनार पहाड़, काठियावाड़ में।

८११ रोहिणी नदी—रोहिन, नैपाल की तराई में।

८१२ रोहित—रोहितास, शाहाबाद जिले में।

८१३ रोहितक—रोहतक, दिल्ली से ४२ मील उत्तर पश्चिम, पंजाब में।

८१४ रोहिताश्व—रोहितास, शाहाबाद जिला में।

## ल

८१५ ललितकूट—सम्मेद शिखर।

८१६ लवपुर—लाहौर।

८१७ लवना—लूनी नदी।

८१८ लक्ष्मणतीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

१९ लक्ष्मणपुर—लखनऊ।

८२० लक्ष्मणावती—लखनौती, बंगाल प्रान्त के मालदा जिला में।

८२१ लक्ष्मी तीर्थ— रामेश्वर में एक तीर्थ।

८२२ लाट—दक्षिणी गुजरात और खानदेश का वह भाग जो माही और ताप्ती नदी के बीच में है।

८२३ लुम्बिनी—रुमन-देई, नैपाल की तराई में।

८२४ लोकापुर—चाँदा, मध्य प्रान्त में।

८२५ लोध्रकानन — लोधपूसावन, कुमायूँ में।

८२६ लोमश आश्रम – लोमसगिरि, गया जिले में।

८२७ लोहवन—मथुरा में एक स्थान।

८२८ लोहा—अफगानिस्तान।

८२९ लोहित सरोवर — रावण हृद झील, तिब्बत के दक्षिण में।

८३० लोहित्य—ब्रह्मपुत्रा नदी।

८३१ लोहित्य सरोवर—चन्द्र भागा झील, तिब्बत में जहाँ से चिनाव नदी निकलती है।

व

८३२ वँक्षु—काबुल नदी।

८३३ वटपद्रपुर—बड़ौदा।

८३४ वत्स था

८३५ वत्सपट्टन—कौसम, इलाहाबाद के पास।

८३६ वनिष्ठांत—गढ़वाल में, श्रीनगर के पास एक स्थान।

८३७ वरदा—वर्धा नदी, मध्यप्रान्त में।

८३८ वरुण हृद—कैस्पियन समुद्र।

८३९ वलभी—वामिलपुर या वल, गुजरात का एक बन्दरगाह।

८४० वरुणा—वरना नदी, बनारस में।

८४१ वसतक क्षेत्र—विन्ध्य वासिनी, जिला मिर्जापुर में।

८४२ वसिष्ठाश्रम—१—अयोध्या से एक मील उत्तर: २—अबू पर्वत पर, : ३—मध्याचल पर्वत पर आसाम में।

८४३ वसुधारा तीर्थ — बद्रीनाथ में एक तीर्थ।

८४४ वाटधान—सतलज नदी के पूर्व का प्रदेश, फीरोजपुर के दक्षिण में।

८४५ वातापिपुर — बादामी नगर, बम्बई प्रान्त के बीजापुर जिले में।

८४६ वारणावत क्षेत्र —१— उत्तर काशी, गढ़वाल में : २—बरनवा मेरठ से १६ मील उत्तर पश्चिम

८४७ वाराणसी—काशी।

८४८ वाराहपर्वत —राजगिरि में एक पर्वत।

८४९ वाराहक्षेत्र— १ —वाराभूला, कश्मीर में : २ —सोरों, जिला एटा में ३ [illegible], नैपाल में: ४—वाराहक्षेत्र, बस्ती जिले में :

५ — बागेरा, जयपुर में
६—नागपुर, पुर्निया जिले में।

८५० वाहणिका — देव बरनारक, शाहाबाद जिले में।

८५१ वाल्मीकि आश्रम—१—बलेनी, मेरठ से १५३ मील दक्षिण : २ — चित्रकूट : ३ — बिठूर, कानपुर के पास : ४—रामनगर, बांदा जिले में : ५—बलिया।

८५२ वाहिष्मती पुर—बिठूर, कानपुर के पास।

८५३ विंगर—अहमद नगर, बम्बई में।

८५४ विजय नगर—विजयानगरम्, मद्रास में।

८५५ विजयवाड़ा वा

८५६ विजिवद—बेज़वाडा, मद्रास में।

८५७ विटभय पट्टन—भिटा, इलाहाबाद से १० मील।

८५८ विदर्भ देश—बरार, खानदेश और कुछ हैदराबाद और मध्य प्रान्त का भाग।

८५९ विदर्भपुर—बीदर, हैदराबाद में। यह एक समय विदर्भ की राजधानी था।

८६० विदिशा—भिलसा।

८६१ विदेहा—तिरहुत • कोसी, गण्डक, गंगा नदियां व हिमालय के बीच का देश।

८६२ विद्यानगर—विजयनगर, तुंगभद्रा नदी तट पर बिलारी से ३६ मील उत्तर पश्चिम।

८६३ विनायक द्वार—त्रियुगी नारायण (गढवाल) में एक स्थान।

८६४ विनाशिनी — बनास नदी, गुजरात में।

८६५ विनीतपुर—कटक, उड़ीसा में।

८६६ विन्ध्यगिरि वा

८६७ विन्ध्यपर्वत—१—विंध्याचल. २ — श्रवणबेल गुल के पास दक्षिण मैसूर में पर्वत श्रेणी।

८६८ विन्ध्यपाद पर्वत — सतपुड़ा पहाड़ी।

८६९ विन्ध्याटवी — खानदेश और औरंगाबाद के कुछ भाग।

८७० विपाशा—व्यास नदी।

८७१ विरजाक्षेत्र—जाजपुर के चारों ओर दस मील तक का क्षेत्र, वैतरणी नदी के किनारे, उड़ीसा में।

८७२ विराट—अलवर और जयपुर का प्रदेश।

८७३ विल्वक—हरद्वार में एक तीर्थ।

८७४ विविक्त पर्वत—भविष्य बद्री, गढवाल में।

८७५ विशल्या — नर्मदा की एक शाखा।

८७६ विशाख —१— अवध प्रान्त • २ — साकेत की राजधानी, अयोध्या ३ — पासा गोंडा जिले में, सरयू और घाघरा के संगम पर ४—लखनऊ।

८७७ विशाखपत्तन — विजिगापट्टम मद्रास में।

८७८ विशाखा—उज्जैन।

८७९ विशाला—१—विसाढ, मुज़फ्फरपुर ज़िला में : २—उज्जैन।

८८० विशाला छत्र— हाजीपुर के समीप का देश, विहार में।

८८१ विश्व नगर — बेस नगर, भिलसा से तीनमील उत्तर, भोपाल में।

८८२ विश्वामित्र आश्रम — बक्सर, शाहबाद जिला में।

८८३ विष्णु गया—लोनर, बरार में।

८८४ विष्णु गृह — तमलुक, बंगाल में।

८८५ विष्णु तीर्थ — श्रीनगर (गढ़वाल) में एक तीर्थ।

८८६ विष्णु पुरी—मान्धाता, इन्दौर से ४० मील दक्षिण।

८८७ विष्णु प्रयाग—जोशीमठ।

८८८ वीणा—कृष्णा नदी।

८८९ वृन्दावन—वृन्दावन।

८९० वृषदर्भा — पंजाब का एक भाग।

८९१ वृषपर्वत—मलाबार में कटला के समीप एक पर्वत।

८९२ वृषभ पर्वत—राजगिरि में एक पहाड़ी।

८९३ वृषभानुपुर— बरसाना, मथुरा जिला में।

८९४ वेकएठक—, वारंगल, तेलगना की राजधानी।

८९५ वेगवती —वैगनदी, मदुरा जिले में।

८९६ वेङ्कटगिरि वा

८९७ वेङ्कटाचल—बालाजी, मद्रास प्रान्त के उत्तरी अर्काट जिला में।

८९८ वेणा—वेनगंगा नदी, मध्य प्रान्त में।

८९९ वेणी — कृष्णा नदी की एक शाखा।

९०० वेणुवन विहार—राजगिरि के पास वेणु उद्यान में बनवाया हुआ एक विहार।

९०१ वेतालवरद—रामेश्वरम् में एक तीर्थ।

९०२ वेदगर्भपुरी—बक्सर, शाहाबाद जिला में।

९०३ वेदवती—हगरी, तुंगभद्रा की सहायक नदी।

९०४ वेदश्रुति—अवध की वैता नदी, टोंस और गोमती के बीच में।

९०५ वेदारण्य — तंजोर में एक जंगल।

९०६ वेसनगर — बेसनगर, भिलसा से २ मील, भोपाल में।

९०७ वेत्रवती—बेतवा नदी।

९०८ वैदूर्यपत्तन—बीदर, हैदराबाद में।

९०६ वैदूर्यपर्वत — १ — मांधाता, नर्मदा नदी पर इन्दौर से दक्षिण: २— पश्चिमी घाट का उत्तरी भाग : ३—सतपुड़ा पहाड़ी।

९१० वैदूर्यमणि पर्वत — मान्धाता, इन्दौर से ४० मील दक्षिण।

९११ वैभारपर्वत—राजगिरि की एक पहाड़ी।

९१२ वैशाली — बिसाढ, मुजफ्फरपुर जिले में।

## श

९१३ शङ्करतीर्थ — पाटन के नीचे वागमती और मणिमती के संगम पर नैपाल में एक तीर्थ स्थान।

९१४ शक्ति भेदनतीर्थ — उज्जैन में एक तीर्थ।

९१५ शतद्रु—सतलज नदी।

९१६ शतशृंग पर्वत — पाण्डुकेश्वर, गढ़वाल में।

९१७ शपस्थली—गंगा और यमुना के बीच का दोआब।

९१८ शम्बूक आश्रम—रामटेक, मध्य प्रान्त के नागपुर जिला में।

९१९ शाक द्वीप—मध्य एशिया या तुर्किस्तान।

९२० शाकम्भरी क्षेत्र—त्रियुगी नारायण (गढ़वाल) से १½ मील पर एक स्थान।

९२१ शाकल — स्यालकोट, पाकिस्तानी पंजाब में।

९२२ शाकम्भरी—सीमर्ता।

९२३ शार्दूल कूट—सम्मेद शिखर।

९२४ शागल—स्यालकोट, पाकिस्तानी पंजाब में।

९२५ शान्त तीर्थ — गुह्येश्वरी घाट पर नैपाल में एक तीर्थ।

९२६ शान्ति—साँची, भोपाल में।

९२७ शान्तिपुर— १ — शोणितपुर, कुमायूँ में : २—बियाना, राजपूताना में।

९२८ शान्तिप्रदकूट—सम्मेदशिखर।

९२९ शारदा—सरदी, कामराज के पास कश्मीर में।

९३० शार्ङ्गनाथ— सारनाथ, काशी के पास।

९३१ शालातुर—लाहुर, पाकिस्तानी पंजाब में।

९३२ शालिग्राम क्षेत्र — मुक्तिनाथ, नैपाल में।

९३३ शालिग्रामी—गण्डकी नदी।

९३४ शालिवाहनपुर— पैठन, गोदावरी तट पर औरंगाबाद जिले में, हैदराबाद में।

९३५ शाल्वदेश — अलवर, जयपुर और जोधपुर के कुछ भाग।

९३६ शाल्वनगर दे०

९३७ शाल्वपुर — अलवर।

९३८ शिवि —१— मेवाड़, नागरी, इसकी राजधानी थी जो चित्तौड़ से ११ मील है : २—स्वात

देश, जहां यूसुफजाई रहते हैं, अफगानिस्तान में।

९३९ शिगेरन—तलखाड़, मैसूर से ३० मील दक्षिण पूर्व।

९४० शिवतीर्थ—रामेश्वर में एक तीर्थ।

९४१ शिवपुरी—काशी।

९४२ शिवालय—घुसमेश्वर, एलोरा (हैदराबाद) में।

९४३ शुद्धपुरी—तेरुपर नगर, त्रिचनापल्ली जिला में।

९४४ शूकरक्षेत्र—सोरों, एटा जिला में।

९४५ शूद्रक—सिंधु और सतलज के बीच का देश।

९४६ शूरसेन—मथुरा के पास का देश जिसकी राजधानी मथुरा थी।

९४७ शूर्पारक — सोपारा, थाना जिला, बम्बई प्रान्त में।

९४८ शृंगवेर पुर या

९४९ शृंगीवीरपुर—सिंगरौर, इलाहाबाद के पास।

९५० शैव—१—कानपुर, अजमेर से दक्षिण पूर्व। २ — उत्तर मलवा।

९५१ शैवलगिरि—रामगिरि या रामटेक, नागपुर के पास।

९५२ शोणनद—सोन नदी।

९५३ शोणप्रस्थ— सोनपत, गुड़गांव (पंजाब) में।

९५४ शोणितपुर—१—शोणितपुर, ऊखामठ से ६ मील, कुमायूँ में. २—बियाना, राजपूताना में।

९५५ शोभावती नगर—१—खुपुवा डोह, जिला बस्ती में: २—अरौरा, नैपाल में।

९५६ श्वेती—स्वात नदी, पाकिस्तान सीमा प्रान्त में।

९५७ श्येनी—केन नदी, बुन्देलखण्ड में।

९५८ श्रमणाचल—सोनगिरि, बुंदेलखण्ड में।

९५९ श्रवण आश्रम—दोहरी, फैजाबाद जिले में।

९६० श्रावस्ती—सहेटमहेट, बलरामपुर से ६ मील, जिला बहराइच में।

९६१ श्रीकाकुली—शिकाकोल, मद्रास प्रान्त के उत्तरी सरकार जिला में।

९६२ श्रीकण्ठ—कुरुवन, सहारनपुर के उत्तर पश्चिम का प्रदेश।

९६३ श्रीमाल—भीनमाल, अबू पर्वत से ५० मील पश्चिम।

९६४ श्रीवर्धनपुर — कान्डी नगर, लंका में।

९६५ श्रीशैलतीर्थ या

९६६ श्रीशैलपर्वत — मल्लिकार्जुन, मद्रास के कृष्णा प्रान्त जिला में।

९६७ श्रम्भानक — थाना, बम्बई प्रान्त में।

६६८ श्रीहट्ट—सिलहट, आसाम में।
६६६ श्रीक्षेत्र— १ — जगन्नाथपुरी, उड़ीसा में : २—प्रोम, बर्मा में।
६७० श्रुघ्न—सुघ, कालसी के पास पंजाब में।
६७१ श्लेष्मान्तक वन — गोला गोकर्ण नाथ, खीरी ज़िला में।

**ष**

६७२ षष्ठी — सालसट का टापू, बम्बई से १० मील उत्तर।

**स**

६७३ सङ्कल कूट—सम्मेदशिखर।
६७४ सङ्कर्षण पर्वत — चित्रकूट के पास एक पर्वत।
६७५ सङ्काश्य — संकिस्सा, जिला फर्रुखाबाद में।
६७६ सक्तिमती नदी—सकरी नदी, बिहार प्रान्त में।
६७७ सदानीरा—१—करतोया नदी, रंगपुर में : २ — राप्ती नदी, अवध में।
६७८ सन्निहित — कुरुक्षेत्र में एक सरोवर।
६७९ सप्तगंगा—( १ ) हरद्वार में एक तीर्थ। ( २ ) सात पवित्र नदियाँ मिलकर सप्त गंगा कही गई हैं—१-गंगा २-गोदावरी ३-कावेरी ४-ताम्रपर्णी ५ सिंधु ६-सरयू ७ नर्मदा।
६८० सप्तगोदावरी — सोलंगीपुर, गोदावरी जिले में।
६८१ सप्तपुरियाँ — १-अयोध्या २-मथुरा ३ माया, हरद्वार के पास ४-काशी ५ काञ्ची (काञ्जीवरम्) ६-उज्जैन ७ द्वारिका।
६८२ सप्तर्षि—सतारा, बम्बई प्रान्त में।
६८३ *सप्तसिन्धु—पञ्जाब।*
६८४ *समतट*— १ — पूर्वी बंगाल : २ - गंगा व ब्रह्मपुत्रा का डेल्टा: ३ — कोमिला, नौखाला और सिलहट के जिले।
६८५ समन्तकूट—एडम्स पीक, लंका में।
६८६ समन्त पञ्चक—कुरुक्षेत्र।
६८७ सम्मेदगिरि — सम्मेद शिखर, पारसनाथ की पहाड़ी बिहार के हजारीबाग जिले में।
६८८ सरस्वती नदी - १—प्राची सरस्वती, कुरुक्षेत्र में जो सिरमुर की पहाड़ियों से निकलती है। वेद-काल में यह समुद्र में गिरती थी: २—गुजरात की रौनाक्षी नदी जो प्रभास सरस्वती नाम से सोमनाथ के पास बहती है: ३—हेलमण्ड नदी, अफगानिस्तान में।
६८९ सरावती — १ — बाणगंगा, रुहेलखण्ड में बदायूं के पास . २—राप्ती नदी, अवध में।

९९० सलिलराज तीर्थ — सिंधुनदी तथा समुद्र का संगम स्थल।
९९१ सहस्राम्रवन — गिरनार पर्वत, काठियावाड़ में।
९९२ सहस्रार्जुनपुर — मान्धाता, इन्दौर से ४० मील दक्षिण।
९९३ सह्य पर्वत या
९९४ सह्याद्र पर्वत — पश्चिमी घाट का उत्तरी भाग।
९९५ सह्याद्रिजा—कावेरी नदी।
९९६ साकेत—अयोध्या।
९९७ साध्यामृततीर्थ — रामेश्वर में एक तीर्थ।
९९८ साम्बपुर—मुलतान।
९९९ सालकूट—सम्मेदशिखर।
१००० सालग्राम—मुक्तिनाथ, नैपाल में गण्डक नदी के उगम स्थल पर।
१००१ सिद्धनगर — बड़वानी, मध्य भारत में।
१००२ सिद्धपद—सितपुर या सिद्धपुर अहमदाबाद जिले में।
१००३ सिद्धपुर — १ — सितपुर, जिला अहमदाबाद में : २— सिहोर, भावनगर जिले में।
१००४ सिद्धवर कूट - सम्मेदशिखर।
१००५ सिद्ध क्षेत्र—मुक्तागिरि, मध्य प्रान्त के एलिचपुर जिला में।
१००६ सिद्धाश्रम—१—बक्सर, शाहाबाद जिले में : २ — अच्छोद नगर, कश्मीर में : ३—द्वारिका के पास एक स्थान।
१००७ सिन्दुरगिरि—रामटेक, मध्य प्रान्त में नागपुर के पास।
१००८ सिन्धु — १ — सिंधु नदी : २—सिंध देश।
१००९ सिरिन्ध्र—सरहिंद, पंजाब में।
१०१० सिंहपुर — कटास या कटाक्ष, झेलम जिले में।
१०११ सिंहपुरी—सारनाथ, बनारस के पास।
१०१२ सिंहल या
१०१३ सिंहल द्वीप—लंका।
१०१४ सीतासर — रामेश्वर में एक तीर्थ।
१०१५ स्त्री राज्य—कुमायूं गढ़वाल।
१०१६ सुगन्धा—नासिक, बम्बई में।
१०१७ सुचक्षु—काबुल नदी।
१०१८ सुतुद्रि—सतलज नदी।
१०१९ सुदामापुरी — पोरबन्दर, काठियावाड़ में।
१०२० सुधन्य कटक— धरणी कोट, मद्रास प्रान्त के कृष्णा जिले में।
१०२१ सुन्धदेश—त्रिपुरा और अराकान।
१०२२ सुप्रभकूट—सम्मेद शिखर।
१०२३ सुभ— —रावदा नदी।
१०२४ सुमन कूट—श्रीपद, एडम्स पीक, लंका में।
१०२५ सुमागधी—सोन नदी।
१०२६ सुमेरु पर्वत — रुद्रहिमालय, गढ़वाल में।

१०२७ सुरभी— सोगार, मेसूर में। मैसूर के पास का प्रदेश सुरभी था।
१०२८ सुरभी पट्टन—श्रीरंगपत्तन, मैसूर में। यह सुरभी की राजधानी थी।
१०२९ सुरथाद्रि — अमरकण्टक पहाड़।
१०३० सुर सागर—कैस्पियन समुद्र।
१०३१ सुराष्ट्र—गुजरात और काठियावाड़।
१०३२ सुलक्षिणी—गोगा गंगा की सहायक नदी।
१०३३ सुलोचना — बनास नदी, गुजरात में।
१०३४ सुवर्णगिरि — मस्की, मैसूर राज्य में। यह उन चार स्थानों में से है जहाँ अशोक के वाइसराय रहते थे। बाकी तीन हैं— तक्षशिला, उज्जैन, और तोसली (कलिंग) में।
१०३५ सुवर्ण गोत्र — कुमायूँ गढ़वाल।
१०३६ सुवर्ण ग्राम — सोना गाँव, ढाका जिले में।
१०३७ सुवर्ण भूमि—बर्मा देश।
१०३८ सुवर्ण म नस — सोनाकोसा नदी।
१०३९ सुवर्ण मुखरी — स्वर्णमुखी नदी, मद्रास के उत्तरी अर्काट जिला में।
१०४० सुवर्ण रेखा—१—पलाशिनी नदी गिरनार के पास गुजरात में। २—सुवर्ण रेखा नदी, उड़ीसा में।
१०४१ सुवर्ण शिखर— पाण्डुकेश्वर, गढ़वाल में।
१०४२ सुवस्तु—१—स्वात देश जहाँ यूसुफजाई रहते हैं, अफगानिस्तान में: २—स्वात देश की स्वात नदी।
१०४३ सुवाहा—बनास नदी, राजपूताने में।
१०४४ सुशामा—रामगंगा नदी।
१०४५ सुशर्मापुर—कोट काँगड़ा।
१०४६ सुशोमा—सिंधु नदी।
१०४७ सुस्तवरकूट—सम्मेदशिखर।
१०४८ सूरजपुर घा
१०४९ सूरपुर — बटेश्वर, आगरा जिला में।
१०५० सूर्यतीर्थ — मथुरा में एक तीर्थ।
१०५१ सूर्यनगर—श्री नगर (कश्मीर)
१०५२ सूर्यपुर—सूरत।
१०५३ सूर्य क्षेत्र—कनारक, उड़ीसा में।
१०५४ सेतव्या—बाँसेडीला, बलरामपुर से ६ मील, गोंडा जिला में।
१०५५ सेतु,
१०५६ सेतुबन्ध वा
१०५७ सेतु मूल—रामेश्वर।
१०५८ सोमतीर्थ — १ — सोमनाथ पट्टन (काठियावाड़) २—मथुरा

में एक तीर्थ : २—कुरुक्षेत्र में एक स्थान जहाँ कार्तिकेय ने तारकासुर को मारा था।

१०५९ सोना प्रान्त—बर्मा देश

१०६० सौराष्ट्र—गुजरात व काठियावाड़।

१०६१ सौवीर—मुलतान जिला और पास का देश।

१०६२ स्तम तीर्थ — कैम्बे, गुजरात में।

१०६३ स्थाणुतीर्थ—कुरुक्षेत्र में एक तीर्थ स्थान।

१०६४ स्थानेश्वर—थानेसर, पंजाब में।

१०६५ स्यम्भुकूट—सम्मेद शिखर।

१०६६ स्यन्दिका—सई नदी, जौनपुर के पास।

१०६७ स्वर्णभद्रकूट—सम्मेद शिखर।

१०६८ स्वामीतीर्थ — मद्रास प्रान्त के कृष्णा जिला में मल्लिकार्जुन से १२ कोस दूर एक तीर्थ स्थान।

ह

१०६९ हनुमत्कुण्ड—रामेश्वर में एक तीर्थ।

१०७० हरमुक्त — हरमुक पहाड़ी, कश्मीर में।

१०७१ हरक्षेत्र—भुवनेश्वर, उड़ीसा में।

१०७२ हरिवर्ष — इसमें तिब्बत का पश्चिमी भाग, हूण देश व उत्तरी गढ़वाल सम्मिलित थे।

१०७३ हरिहरनाथपुर या

१०७४ हरिहर क्षेत्र—१—हरिहर छत्र या सोनपुर, गंगा और गण्डक के संगम पर, बिहार में : २—हरिहर, तुंगभद्रा व हरिद्रा के संगम पर, मैसूर में।

१०७५ हास्तिनापुर — हस्तिनापुर, मेरठ जिला में।

१०७६ हस्तिसोमा—हस्तु नदी, महानदी की सहायक नदी।

१०७७ हाटक—१—हूण देश जिसमें मानसरोवर झील है : २—गुजरात में एक क्षेत्र जिसमें आनर्त देश की राजधानी चमत्कारपुर बसी थी।

१०७८ हारहूण — इरटस व मेलम नदियों और गंदगढ़ व माल्टरेंज पहाड़ों के बीच का देश।

१०७९ हारित आश्रम — एकलिंग, मेवाड़ में।

१०८० हिंगुला— हिंगलाज, बिलोचस्तान में।

१०८१ हिडम्ब—कछार, आसाम में।

१०८२ हिमवन्त—१—नैपाल : २—तिब्बत।

१०८३ हिमवान—हिमालय।

१०८४ हिरण्य पर्वत—मुंगेर, बिहार में।

१०८५ हिरण्यपुरी—हिंडौन, जयपुर में।

१०८६ हिरण्यवती नदी — छोटी गण्डकी नदी।

१०८७ हिरण्यबाहु—सोन नदी।

१०८८ हूण देश—इण्डस व झेलम नदियों और गढ़वाल व साल्टरेंज पहाड़ों के बीच का देश।

१०८९ हृषीकेश—हृषीकेश, सहारनपुर जिला में।

१०९० हेमकूट या

१०९१ हेम पर्वत — कैलाश पर्वत, तिब्बत के दक्षिण पश्चिम २—सुन्दरपृष्ठ का पर्वत श्रेणी। यहाँ से गंगा और यमुना निकली हैं।

१०९२ हेमवतवर्ष — भारतवर्ष का प्राचीन नाम।

१०९३ हेमवती—रावी नदी, पंजाब में।

१०९४ हैहयदेश—खानदेश, औरंगाबाद और दक्षिण मालव का भाग।

१०९५ हंसवती—पेगू, बर्मा में।

### क्ष

१०९६ क्षत्रिय कुण्ड—बिसाद, मुजफ्फरपुर जिला में।

१०९७ क्षीरसागर—कैस्पियन समुद्र।

१०९८ क्षेमवती—गुटीवा, नैपाल की तराई में।

१०९९ क्षेत्र उपरिसम — श्रापयन, काबुल से २७ मील उत्तर।

### त्र

११०० त्र्यम्बक — नासिक से १८ मील एक तीर्थ क्षेत्र।

११०१ त्रिऋषि — नैनीताल का तालाब।

११०२ त्रिकलिङ्ग—तैलंगाना, गोदावरी और कृष्णा के बीच का देश।

११०३ त्रिगङ्ग — हरद्वार में एक तीर्थ।

११०४ त्रिगर्त देश — जालंधर और लाहौर जिले का एक भाग तथा कांगड़ा। तीन नदियों (सतलज, बियास, और रावी) से सेवित भूमि।

११०५ त्रिपुरा—१—तेवर, जबलपुर के पास २—त्रिपुरा राज्य।

११०६ त्रिपुरी—तेवर, जबलपुर के पास।

११०७ त्रिवेणी या

११०८ त्रिवेणी क्षेत्र—प्रयाग में गंगा यमुना और सरस्वती का संगम स्थल।

११०९ त्रिशिरपल्ली — त्रिचनापल्ली, मद्रास में।

१११० त्रिस्रोता —१— तिस्ता नदी, रंगपुर जिले में २— गंगा नदी।

### ज्ञ

११११ ज्ञानधर कूट—सम्मेदशिखर।

# श्री रामगोपाल जी मिश्र की अन्य रचनायें

## १ माया

( द्वितीय संस्करण—साहित्य मन्दिर प्रेस, पुल भाऊलाल, लखनऊ, से प्राप्त )

माया—यह १०८ पृष्ठों का एक शोकान्त उपन्यास है। गोरखपुर के डिपुटी कलेक्टर, प० रामगोपाल मिश्र बी० एस सी० ने इसकी रचना की है। इसका नायक है चन्द्रमणि और नायिका है तारा। चन्द्रमणि अपने पूर्व वयस में—कुमारावस्था में—' संसार के उपकार" व्रत की प्रतिज्ञा करता है परन्तु तारा—माया—के फेर में पड़कर अपनी प्रतिज्ञा को भूल जाता है—माया के पाश का बधुआ होकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी किये बिना ही संसार से सदा के लिये विदा हो जाता है। उसके वियोग में तारा भी कोई दो हफ्ते में "शिशु कुमार" अपने इकलौते बेटे को अकेला छोड़ प्राण त्याग कर देती है। इसी कथानक के आधार पर लेखक महाशय ने यह दिखलाया है कि होनहार मनुष्य भी घटना वश माया के मोह जाल में फँस जाता है। फल यह होता है कि उसकी उच्चाकांक्षाएँ अपूर्ण रह जाती हैं। पुस्तक मनोरञ्जक और शिक्षा प्रद है। भाषा सरल है। पुस्तक की छपाई अच्छी है। कागज भी अच्छा है। मूल्य ।||)

"सरस्वती"

माया—यह एक शिक्षा पूर्ण उपन्यास है। हम उपन्यास बहुत कम पढ़ते हैं, क्योंकि उपन्यासों में प्रायः हमारा चित्त नहीं लगता।..... पर यह उन इने गिने उपन्यासों में से है जिन हमारे चित्त ने भी पसन्द किया है।

"शान शक्ति"

## २ चन्द्र भवन

( द्वितीय संस्करण—'उदयन', २७१ विट्ठल भाई पटेल रोड, गिरगाउ, बम्बई, से प्राप्त )

चन्द्रभवन—यह एक उच्च चरित्र मानक करुणा पूर्ण उपन्यास है। उपन्यास साहित्य का एक मधुर अंग है सब तरह स्वाभाविकता ही

उपन्यास की जान है। इस उपन्यास में कहीं कोई घटना फ़ाज़िल नहीं है। इसमें न शब्दाडम्बर है न घटनाओं का तूमार है। जो कुछ है सो सब तुला हुआ; इधर उधर छलकने वाला कहीं कुछ नहीं।......................

समाज की परम्परा के दुस्सह पीड़न में प्राणियों का जो विधान होता है वह इसके पन्ने २ में भरा हुआ है। उसका यह चन्द्र भवन जीता जागता फोटो है।......हम अपने पाठकों से अनुरोध करते हैं कि इस चन्द्र भवन को एक बार मंगाकर पढ़ें और पढ़ी लिखी हिन्दू नारी, हिन्दू बालिका और बहू बेटियों को पढ़ने के लिये दें तो उनका और अपना बहुत कुछ सुधार साधन कर सकेंगे। मूल्य केवल १) है।

"जासूस"

"An open Letter to the author of The Hindi Novel

CHANDRA BHAWAN"

(Appeared in the "Leader", Allahabad)

Sir,

I am a stranger to you, but am one of those who have learnt to appreciate your literary productions. Just yesterday I closed reading your Novel CHANDRA BHAWAN. I simply cannot tell you how immensely I enjoyed it. The Novel is extremely illuminating and instructive. Let me offer you my sincerest thanks, and congratulate you most warmly on your ability to write such a story. I must tell you at once that I am a christian. As such, I am merely following the heavenly gleam which is leading me along the path of eternal life. This brief statement of my religious belief and experience embraces a large meaning which is not my intention to set forth in this letter I wish to say, however, that but

for my religion, which is a matter of eternal interest to me, I am every inch a Hindu. Writings such as yours fill my heart with a peculiar joy by transporting me into the realm of the inner life of the Hindu home for which I have sincerest regard and admiration. I shall try to get hold of every line that you write, and read it. Your language is chaste, your delevation of characters is extremely vivid and your technique is almost perfect. I shall advise my chrisitan brothers and sisters to read it and other books from your pen.

I wish, however, with your permission, to point out a sad mistake in the book which leaves a blemish on the beautiful story. In following the course of events connected with the life of Hemlata after she has left her widowed mother and her home abruptly just on the eve of her *marriage*, you make her go out with the christian girls of the boarding school, and on the road you make the christian boys meet the girls and repeat audibly all sorts of low and vulgarly significant couplets. In fact in that scene, you make the christian girls as well as boys behave in a most objectionable manner. Now, may I in all earnestness beg leave to assure you that this is not a true picture. I have lived some years in *life and can claim to have made some study of the morality of the youths of the Indian christian* community. I am conscious of the many faults in them, but I am absolutely sure, as sure as I know that day follows night, that in no city

will you be able to find groups of young boys and girls, kept and taught in mission boarding schools, indulging in such vulgarities. I am mentioning this merely because I wish sincerely that in the great service to the country which you will live to render you may not impart into your writings anything which deviates from truth, which alone can help us to win under all circumstances and in all spheres. You are putting some excellent words into the mouth of Kanak Prabha who, by the way, when she speaks them becomes too wise and erudite for her age and upbringing, to indicate that the various religious leaders, such as Christ, Mohammad, Zoroaster etc., are all equally worthy of worship to her, and so on. I believe this is your own creed. With such a liberal and catholic attitude of mind, please do not let your readers associate any bitterness on your part towards members of another religion.

My own conviction is that christianity, as professed and preached, in spite of its many faults, has really served to do great good, at any rate far greater good than evil, to the people of India. We who are called christians are your own brothers and sisters. Sadly, we have become estranged from your beautiful traditions of family and social life for which, however, your own prejudice, I mean the prejudice of those who are not Christians, is very largely to blame, but we carry in our bosom a heart which throbs

as warmly with love for our motherland as the heart of any true son of soil.

Bareilly,
November 1924.

J. Devadson,

[ I set the doubts of my still stranger friend at rest by a reply in "The Leader" that followed a week later, by pointing out that the boys that figure in the book are not X'ian boys but ordinary school lads of low breeding. Paras 2 and 3 of the letter above have no bearing on the subject, but on deciding to reproduce the letter, I did not like to keep back any portion.

Author ]

नागरी प्रचारिणी सभा—काशी, ने दोनों पुस्तकों, माया व चन्द्रभवन, को उनके प्रकाशित होने के साल में प्रथम स्थान दिया था। मध्य प्रदेश के शिक्षा विभाग ने उपन्यास होते हुये भी उन्हें अपने पुस्तकालयों में रखने का निश्चय किया।

## ३ भारतोदय

(द्वितीय संस्करण—'आदर्श कार्यालय, बनारस, से प्राप्त )

भारतोदय—यह तीन अङ्क—२१ दृश्य—का एक शिक्षाप्रद अनुपम नाटक, हिन्दू मुसलमान जाति सङ्गठन के विषय में लिखा गया है। किस प्रकार यथार्थ में मेल हो सकता है, कौन बातें विघ्न बन कर बाधक होती हैं, यथार्थ समस्या क्या है, सारी बातें इस रोचक नाटक को पढ़ते २ स्वयं दृष्टि के आगे घूमने लगती हैं। जाति हितैषी कविताओं ने इस नाटक को अद्वितीय बना दिया है। सब स्थानों में मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा हुई है। "जागृत" ने तो अपने सारे ग्राहकों को इसे बांटा है। मूल्य १) है।

## ४ बाल शिक्षा माला

( तृतीय संस्करण—'शिशु' ज्ञान मण्डल, कटरा, प्रयाग, से प्राप्त )

बाल शिक्षा माला—इस पुस्तक की मांग बहुत हुई जिससे ऑर्डर्स को महीनों इन्तज़ार करना पड़ा। पुस्तक में महाभारत की शिक्षाप्रद कथाएँ बालकों के लिये सरल भाषा में लिखी गई है और प्रत्येक के नीचे उसकी शिक्षा रामायण की चौपाइयों में दी गई है। तृतीय संस्करण में यथा स्थान रंगीन चित्र भी लगाये गये हैं। पुस्तक का हिन्दी संसार में बहुत ही आदर हुआ है। संयुक्त प्रदेश की टेक्स्ट बुक कमेटी (United Provinces Text Book Committee) ने इसे वर्नैक्युलर स्कूलों में पुस्तकालयों व पुरस्कार के लिये चुना, डाइरेक्टर ऑफ पबलिक इन्स्ट्रक्शन सेंट्रल प्राविन्सेज व बिहार (Director of Public Instructions C P & Berar) ने हाई, मिडल व नॉर्मल स्कूलों के पुस्तकालयों के लिये उसे चुना, सेन्ट्रल टैक्स्ट बुक कमेटी बिहार व उड़ीसा (Central Text Book Committee Behar and Orissa) ने उसे समस्त स्कूल पुस्तकालयों के लिये चुना। सब पत्र और पत्रिकाओं ने उसकी उत्तम समालोचनाएँ कीं। उदाहरणार्थ "सरस्वती" की समालोचना दी जाती है।

"माहाभारत में अनेक अच्छी २ कथाएं हैं। शिक्षाप्रद उनका संग्रह इस (बाल शिक्षा माला) में है। उनसे सदुपदेश भी मिलता है और महाभारत के कथांश का ज्ञान भी प्राप्त होता है। बालक बालिकाओं के लिये यह संग्रह सरल भाषा में तैयार किया गया है और उनके बड़े काम का है। सब मिला कर छोटे छोटे ५६ पाठ इसमें हैं। पाठों से मिलने वाली शिक्षा का सारांश प्राय पाठान्त में दे दिया गया है और उसके पोषक हिन्दी पद्य रामायण आदि से उद्धृत हैं। कुछ पाठ देश ... सूचक हैं और कुछ में भारत का भौगोलिक वर्णन भी है। इस प्रकार ... छोटी सी पुस्तक में अनेक गुण हैं। मूल्य केवल ।)

"सरस्वती"

अन्य २ पत्रों की समालोचनाओं तथा बाबू श्यामसुन्दर दास, सभापति नागरी प्रचारिणी सभा, पं० अयोध्या सिंह जी उपाध्याय, सभापति हिन्दी साहित्य सम्मेलन इत्यादि बड़े २ विद्वानों के प्रशंसित पत्रादि ने इस सब

पुस्तकों के सम्बन्ध में प्राप्त हुए हैं, उनका उल्लेख करने से यह विषय बहुत बढ़ जायेगा।

## ५ सख़ुनिस्तान

( 'किताबिस्तान' इलाहाबाद, से प्राप्त )

सख़ुनिस्तान—([illegible])इस पुस्तक में भारतवर्ष के समस्त वर्तमान उर्दू शायरों की जीवनी व एक ही ज़मीन में सब के कलाम हैं। ऐसा ग्रंथ उर्दू ज़ुबान में अब तक नहीं लिखा गया था। यह पुस्तक हमेशा के लिये इस फ़न के शायरों पर एक Book of Reference है। २० चित्र हैं, आर्ट पेपर पर कुल पुस्तक छापी गई है, और जो उर्दू छपाई अच्छी से अच्छी भारतवर्ष में हो सकती है वह की गई है। इन चीज़ों ने इस पुस्तक में और भी चार चाँद लगा दिये हैं। जनाब सीमाब अकबराबादी ने भूमिका लिखी है। विशेष कर पुस्तकालय और संस्थाएँ अपने यहाँ रेफ़रेन्स के लिये इसे रख रही हैं। मूल्य ५), शायरों से २॥)।

गोरखपुर के अखिल भारतीय मुशायरा (All India Mushaira) ने, जिसकी जोड़ का हिन्दुस्तान में कभी किसी काल में मुशायरा नहीं हुआ कहा जाता है, इस पुस्तक के तैयार करने में अच्छी सहायता दी थी। "लीडर" ("The Leader") इलाहाबाद, ने इस मुशायरे पर जो समालोचना छापी थी वह नीचे दी जाती है:—

### "ALL-INDIA MUSHAIRA"

AT

GORAKHPUR

( The "Leader", Allahabad, 22nd. July 1932 )

The All-India Mushaira started its session at Gorakhpur at 8-30 p m. on July 16 under the presidentship of Mr. Hobart, Commissioner Gorakhpur Division, in the Cinema Palace which had been converted into a most tastefully decorated spacious hall. All the renowned

poets of the country, except a few who were unavoidably absent, were present Among those present were Maulana Hasrat Mohani from Cawnpore, Nawab Mirza Sirajuddin Ahmad Sa-yal from Delhi, Nawab Babban Saheb from Lucknow, Nuh Narwi from Nara (Allahabad), Syed Majid Ali Majid, Government Pleader Allahabad, Munshi Sukhdeo Prasad Bismil from Allahabad Sagher Nizami from Muzaffarnagar, Munshi Nanak Chand Ishrat from Balrampur Ayan from Meerut, Wasl Bilgrami from Lucknow, Kokab Shahjahanpuri from Shahjahanpur, Munshi Jagat Mohan Lal Ravan from Unao, Khan Bahadur Syed Aulad Hyder Fauk from Arrah, Basit from Biswan, Jamil from Benares. Messages wishing success for the Moshaira were read from Babu Bhagwati Sahai Bedar, Shahjahanpur Mulla Ramozi, Bhopal, Hafiz Jallundhari, Lahore, Ashik Siddiki, Assam, Khan Bahadur Raza Ali wahshat, Calcutta, M Wasiul Hasan, Banda and Hazrat Zarif and Shaukat Thanwi, Lucknow Many poets who could not reach sent their poems to be read in the Mushaira and these included Asghar (Allahabad), Shatir (Bombay), Rahat (Bijnor), Wahshat (Calcutta) Azad (Dehradun) and Sharik (Khilda bad, Deccan)

Admission to the hall was by complimentary tickets but visitors had come from Delhi, Lucknow, Allahabad Basti, Azamgarh Benaras and numerous other places of Behar and the U P and the hall was full to overflowing The audience was over 2000 and several thousand persons who had applied for passes were unable to procure them for want of accomodation Among those present in the audience were Mr Hallowes I C S District Magistrate

Gorakhpur, the Rev Mr Pelly, Mr Slane I C S, Pt Tej Narain Mulla, district and session Judge Allahabad, (later Hon'ble, Justice), Munshi Asghar Husain, district and session Judge Gorakhpur, Major J B Vaidya civil Surgeon, Mr Shivdasani, I C S, the Raja Bahadur of Padrauna, Raja Saheb Unwal, the Raja Saheb of Rudrapur, Mr Ayodhya Dass, M L A, Khan Bahadur Mahomed Ismail M L A (later, Hon'ble Justice) Babu Adya Prasad, M L C, and Mr Nesrullah, M L C Europeans and Indians all took their seats on the farsh The president was seated under a golden canopy The proceedings *began with the secretary's welcome to the poets of* all India fame Ghazal after ghazal was read in an atmosphere full of enthusiasm and when Maulana Hasrat Mohani rose to read cheers rang from all sides of the house Bismil and Saghar thrilled the audience, and Sayal, Nooh Asi Ishrat and many others were highly appreciated The first sitting concluded at 3 a m Ghazals were *said in Tarah* 'Bas Nahin chalta ki Phir Khanjar Kafe Qatil Men Hai' (बस नहीं चलता कि फिर खंजर कफ कातिल में है )

The next day the Mushaira was held under a Shamiana in the open from 11 a m to 5 p m, primarily for those who were otherwise unable to avail of it The tarah was Zamin Lakra Rahi hai Asman se ( जिमीं टकरा रही है आसमां से ) It was warm but the function was well enjoyed by all At 5 p m a group photograph of the poets *workers, and donors* was *taken at the commissio*ner's bungalow, and the main sitting of the Mushaira again commenced at 8 30 p m in the cinema Palace amidst great enthusiasm cries of Wah wah rang from

the whole house The misra tarah was 'Sharm Bhi Jae to Main Janoon ki Tanhai hui (शर्म भी जाय तो मैं जानू कि तनहाई हुई) The Mushaira terminated at 1 30 a m on July 18 amid great applause The show was a function the like of which had not only never been seen by Gorakhpur before but the great poets who attended declared that never a Mushaira was held on such a grand scale anywhere It was an equally grand success Great credit is due to Pandit Ram Gopal Misra Deputy Collector who conceived the idea of an All India Mushaira organized the entire show and was its secretary '

## ६ आगार

( बिक्री के लिये नहीं )

आगार—पुस्तक के "पुष्पाञ्जली' भाग में लेखक ने पत्र में अपने इष्ट श्री कृष्ण मूर्ति जी के गुण गाये हैं, और "हृदय-तरंग" भाग में छोटी छोटी अद्भुत कहानियाँ हैं। पुस्तक आर्ट पेपर पर छापी गई है। और अति सुन्दर है पर बिक्री के लिये नहीं है। लेखक जिन्हें चाहे प्रदान करते हैं।

## ७ इकरिया पुराण

( 'शिशु' ज्ञान मण्डल, कटरा, प्रयाग, में प्राप्त )

इकरिया पुराण—पुस्तक में बालकों के लिये हास्यप्रद व मनोरञ्जक कहानियाँ सचित्र लिखी गई हैं। बड़ों को यह कहानियाँ बालकों से भी अधिक मनोरञ्जक लगेंगी। एक बार पुस्तक हाथ में ली तो बिना समाप्त किये नहीं छोड़ी जायेगी। अभी छप रहा है।

## ८ छत्रपति महाराज शिवाजी

(बम्बई टाकीज, Bombay Talkies बम्बई, में प्राप्त)

यह पुस्तक सिनेमा (cinema) के लिये लिखी गई है और बम्बई टाकीज (Bombay Talkies) के पास है। अभी छप रही है।

## ९ हिन्दू चित्रावली (एलबम)

हिंदू चित्रावली में देवताओं, अवतारों, महापुरुषों व महात्माओं के अच्छे से अच्छे चित्र जो मिल सकते हैं संग्रह किये गये हैं।

विश्व महायुद्ध के कारण आर्ट पेपर न मिल सकने से अब तक पुस्तक छपकर तैयार नहीं हो सकी। इसके बाद चित्रों के छपने में समय लगेगा। पर जहाँ तक हो सकेगा शीघ्रता की जायगी। यह कहा जा सकता है कि इससे अच्छा हिन्दू देवताओं व महात्माओं का एलबम देखने में नहीं आवेगा। प्रकाशन नहीं किया जा सका है।

## १० व्रतावली

व्रतावली में हिन्दुओं के कुल व्रतों की उत्पत्ति, गूढ़ मर्म, व विधि का विस्तार पूर्वक वर्णन है। पुस्तक अभी लिखी जा रही है।

---